# पचपन कहानियाँ

कर्तारसिंह दुग्गल

*

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक ३२४
सम्पादक एवं नियामक
लक्ष्मीचन्द्र जैन

प्रथम संस्करण फरवरी १९७२
मूल्य चौदह रुपये

पचपन कहानियाँ
(कहानी संग्रह)
करतारसिंह दुग्गल

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०/२१ नेताजी सुभाष मार्ग दिल्ली-६

मुद्रक
सन्मति मुद्रणालय
दुर्गाकुण्ड मार्ग वाराणसी-५



Price Rs 14 00

PACHAPAN KAHANIYAN STORIES KARTARSINGH DUGGAL

# अपनी निगाह मे

जब पीछे की ओर मुड कर मै देखता हूँ, मुझे दो बाते अपने स्वभाव की विशेष तौर पर कचोटती ह एक हठ, और दूसरी मुश्किल-पसन्दी। अब जिन्दगी की चोटें सह सह कर शायद आहत हो गया हूँ, पर कोई समय था, मैं अपनी मनमरजी करवा कर रहता था, चाहे कोई कीमत देनी पडे।

एक बार एक अल्मारी को ताला लगा हुआ था और अलमारी में से मुझे कोई चीज बडी जरूरी निकालनी थी। ताला खुल जाये, ताला खुल जाये, मैं ने अपने पूर मनोबल से चाहा और उस कमरे के गिर्द दीवाना की तरह घूमने लगा। वह कमरा, बरामदा, सोने का कमरा कोठरी, फिर वह कमरा फिर बरामदा एक चक्कर, दो चक्कर तीन चक्कर, पता नहीं कितने चक्कर यों म ने काटे होगे, एक ही धुन कि ताला खुल जाये। और फिर म ने देखा, ताला खुल गया था। ताला कौन खोल गया, ताला कसे खुला, मुझे अभी तक नहीं मालूम। किन्तु मै ने चाहा और ताला खुल गया।

हमारे गाँव में पचायती गुरुद्वारे का ग्रन्थी बहुत बढिया गाता था। कितनी सुरीली, कितनी मीठी उस की आवाज थी! और कितनी ऊँची! तोबा, तोबा! हारमोनियम के सुर भी जैसे जवाब दे जाते। और लोग उस का कीतन सुनने के लिए टूट-टूट पडते। कोई कहता, गाँव की सब से सुन्दर औरत मुँह-अँधेरे उसे कटोरा दूध पिलाने जाती थी। शाम के झुटपुटे में उस के पाँव दबाते भी किसी ने उसे देखा था। और मैं, आठ दस साल का लडका, मेरा जी चाहता कि वह रागी मुझे अपने जसा गाना सिखा दे अपने जसा बाजा बजाना सिखा दे। एक सप्ताह, दो सप्ताह तीन सप्ताह, मैं जब कीतन सुनता जसे मुझे कुछ ही हो जाता। मुझे तो बस उस तरह का गाना सीखना था, उस तरह का हारमोनियम बजाना था। अजीब जिद थी। मुझे खाना, पीना, पढना, खेलना कुछ अच्छा न लगता। और फिर हमारी गली में बैठी कसीदा काढ रही औरतें दख कर अवाक सी रह गयी कि वही 'भाई जो' जिन का कीतन सुनने के लिए लोग मजिलें तय कर के जाते थे, एक दोपहर हमारे आँगन में आन दिखाई दिये। मैं ने एक तर्ज हारमोनियम पर उन से सीखी और फिर मेरा मन भर गया। शायद मेरी जिद पूरी हो गयी थी।

एक लडकी थी। गोरी नही। ऊँची लम्बी नही। गज गज लम्बे बाल नही। पर मुझे बडी अच्छी लगती थी। किन्तु वह तो जैसे पाँचवी मजिल पर कोई रहता हो। कहाँ वह, कहाँ मैं। पर नही। एक सप्ताह, एक महीना, एक वर्ष कई वर्ष मैं उस की मोहब्बत को सीने से लगाये रहा। और कोई लडकी मुझे अच्छी न लगती। कई लडकियाँ मेरी राह में आयी, गोरी भी, ऊँची लम्बी भी, रेशम के लच्छे बालो वाली। पर मुझे कोई भी अच्छी न लगती। और फिर एक दिन वह मेरी हो गयी। जब हम मिले, यो लपक कर मेरे गले से आन लगी जसे जन्म जन्मा तर से मेर इ त जार में हो।

मेरा लिखना भी इस तरह की एक जिद का परिणाम था। यो ही बठे-बठे, एक दिन मैं कुछ गुनगुनाने सा लगा। जब उस 'कुछ' को कागज पर उतारा मैं हरान रह गया, जो कुछ मैं ने लिखा था, वह तो कविता बन गयी थी। और जिस किसी से मै अपनी रचना का जिक्र करता, कोई न मानता कि वह कविता मैं ने लिखी थी। गाँव में मेरे हमउम्र और मुझ से बडे लडके मेरा मजाक उडाने लगे। 'चोर-कवि!' चोर कवि! वह कह कर मझे चिढाते। अनपढ लोग, कोई किस तरह उन्हें विश्वास दिलाये कि जो कुछ मैं ने लिखा था वह मेरी अपनी, स्वय की कृति थी, किसी की नक़ल नही। और फिर मैं ने और और लिखना शुरू कर दिया। नित्य नयी कविता लिखता डर के मारे किसी से बात न करता बस एक बढिया सी नोटबुक में लाल नीली सियाही से उसे उतार कर, सँभाल रखता। फिर 'पजा साहब' (हसन अब्दाल) में एक अखिल भारतीय कवि दरबार हुआ। मैं ने अपनी कविता भेजी। कवि दरबार में शामिल होने के लिए मुझे निमन्त्रित किया गया। मैं ने कविता पढ़ी। लोगो को बहुत पसन्द आयी। मेरी इस कविता को इनाम दिया गया। इनाम की खबर अखबारो में छपी। वह कविता भी अखबार में छपी। अब मेरे गाँव वालो ने जसे मुझे सिर पर उठा लिया। तब मेरी आयु ग्यारह साल की थी।

अपना साहित्यिक जीवन म ने एक कवि के रूप में शुरू किया। कविता में नये प्रयोग विषय-वस्तु में नये दृष्टिकोण, प्रेम जसे पिट चुके विषय के अछूते पहलू, मनोविश्लेषण और अन्तरचेतना की नवीन धाराएँ। कुछ इस तरह का अन्दाज था मेरी कविता का। अब भी मैं कविता कहता हूँ। साल छमाही में कोई दिन आते हैं जब मैं केवल कविता ही लिख सकता हूँ और कुछ नही। इस तरह का जब बुखार चढ़ता है, एकसाथ चार-छह कविताएँ हो जाती हैं। इन को मैं सँभाल रखता हूँ— उन दिनों की स्मृति के रूप में जब कलाकार के रूप में मेरी प्रतिभा अभी विकसित हो रही थी। पजाबी में कविता के मेरे दो सग्रह हैं— 'कण्डेकण्ड' (किनारे किनारे) और 'बन्द दरवाजे'।

अभी कविता के साथ छूट रहे थे कि मैं कहानियो की ओर मुड गया। उन दिनों कहानी की कला लोकप्रिय हो चली थी। उर्दू में कृश्नचन्दर राजेन्द्रसिंह बेदी

मण्टो, 'अश्क' की कहानियाँ बहुत पसन्द की जा रही थी। ये सब लाहौर में थे। नयी नयी पत्रिकाएँ निकल रही थी जिन में कहानियों की प्राय माँग रहती थी। उन्ही दिनो प्रोफ़ेसर मोहनसिंह ने खालसा कालेज की नौकरी छोड कर 'पचदरिया' नामक मासिक पत्रिका निकाली। ज्यां-ज्यों मैं कहानियाँ पढ़ता, मुझे लगता कि नयी कहानी के लिए कविता की सूक्ष्मता, कविता की कोमलता, कविता की तीक्ष्णता जसे गुण जरूरी है। मेरी कहानियों का पहला सग्रह 'सवेर सार (सुबह सवेरे) १९४१ में प्रकाशित हुआ। तब मेरी आयु २३ वर्ष की थी।

अब तक मेरी कहानियो के सत्तरह सग्रह प्रकाशित हो चुके है। इन में ३०० कहानियाँ ह।

कविता से कहानी कहानी स नाटक, नाटक से उपन्यास यह तबीयत की मुश्किल-पसन्दी थी जो साहित्य के नये क्षेत्र को ओर मुझे अग्रसर कर रही थी। जो चीज आसान हो गयी, उस से हट कर, मुश्किल राह चलना मुझे अच्छा लगता ह। नाटक लिखते समय मैं अजीब-अजीब बन्धनों में अपनेआप को बाँध लेता हू। कितने ही एकपात्रीय (मोनोलाग) मैं ने लिखे। कुछ लघु लिखे, जिन में सारी की सारा कहानी एक सेट में खत्म हो जाती ह। कम से कम पात्रो द्वारा लम्बी से लम्बी कहानी कहने का प्रयास किया। और फिर जब अधिक से अधिक पात्रो और ज्यादा से ज्यादा दृश्यो की माँग हुई तो मैं ने 'शेरे पजाब' नामक नाटक लिखा जो दश्यावली और पात्रा की विविधता लिये हुए ह। अब तक मेरे छह फुल ऊथ और ३५ एकाकी प्रकाशित हो चुके हैं।

छह मेरे उपन्यास हैं। मेरे कुछ पाठका का विचार है कि वास्तव में मेरे उपन्यास, कहानियाँ होती हैं जिन्हें जसे एक लडी में पिरोया गया हो और बस। शायद यह फ़तवा ठीक ह। प्राय कहानीकार जब उपन्यास लिखने की कोशिश करते हैं तो उन्हें इस तरह की कठिनाई पेश आती है। कहानीकार को एक सीमित से कनवस पर काम करने की आदत पड जाती है।

कविता कहना, जो कभी एक जिद सी था कविता स कहानी, कहानी से नाटक, नाटक से उपन्यास, जो तबीयत की मुश्किल-पसन्दी का एक खेल सा था—ये सब कुछ अब जिन्दगी का सहारा बन गया ह—दिल की धडकन, रूह की खुराक़।

मैं क्यों लिखता हूँ ?

पैसे के लिए ? नही। हमारे देश में पैसे के लिए लिखने वाले कभी के भूखे मर चुके हैं।

मैं क्यों लिखता हूँ ?

पजाबी भाषा का प्रेम ?

शायद, शायद नही। इस तरह के प्यार मैं ने कभी नही पाले। उर्दू में, हिन्दी में, अंगरेजी में अपनी चीज़ों का अनुवाद कर के मैं खुश होता हूँ। लेकिन मुझे इस

बात का विश्वास है कि एक लेखक, सब से अच्छा अपनेआप को अपनी मातभाषा में व्यक्त कर सकता ह। मैं यह मानता हूँ कि लेखक के रूप में जो कुछ मैं दे पाया हूँ उस का एक तिहाई भी न दे पाता यदि म पजाबी में न लिखता होता वह भाषा जो मुझे माँ के दूध के साथ मिली ह, बरसो जिस की प्रतिध्वनियाँ मेरे कानो में गूजती रही ह।

म लिखता हूँ, क्योकि दिल के इस कोने में एक दुल्हन छिपी बठी ह। इस हसीना को आकार करना ह। इस के जोवन की एक झलक दिखाना है यह मेरा ईमान है। सकडो कलमो की सियाही सूख सूख गयी हैं अभी तक इस का रूप नही चित्रित हो सका, अभी तक इस की छवि मेरी पकड में नहा आयी। इस के साने का राज, जो कभी से यह दिल पहचान रहा ह अभी इस को वाणी नही मिली। एक छलना सी, कभी वह पहचानी-पहचानी लगती ह, कभी अजनबी-अजनबी। दूर क्षितिज पर खडी मुसकरा रही, और मेरी अक्ल की दौड, दौड कर एडियाँ घिस गयी ह।

म लिखता हूँ, क्योकि दिल के इस महल में चमली के फूलो से पिरोयी हुई जहाँगीरी जजीर लटक रही ह, जिस पर दिन रात, दिन रात चोटें पडती रहती ह।

मैं लिखता हूँ, क्याकि इन आँखो ने एक सपना दखा ह वह सपना जिस में अपने पडोसी को भी साझी बनाना ह।

मैं जिस ने कभी चाहा और बन्द ताला खुल गया।

—करतारसिंह दुग्गल

# अनुक्रम

# म्हाजा नहीं मरा

म्हाजा अपने घाडे से बातें कर रहा ह

"चल बेटा ! तेरा साज फिट हो गया ह। आज एक छेद और तगदस्त में कसना पडा ह। तरा यह साज ढीला पड रहा ह या तू आप ही ढीला हो रहा ह। यार ! यों दगा न द जाना कही। पिछले साल करमी अल्ला को प्यारी हो गयी थी और मैं ने परवाह नही की। मैं ने सोचा, जब तक तेरा साथ कायम ह, मुझे और किसी की जरूरत नही। सुसरी हर चौथे रोज बहू-बेटे क पास चल दती थी। कोई बात भी हुई। चल बेटा ! तेरे चारे-दाने का भी फिक्र करना ह। इशा अल्ला आज तुझे मसाला जरूर खिलाना ह। कल भी वादा किया था। मुझे याद ह। कल झूठा होना पडा। परसो, अतरसा ता मैं ने वादा नही किया था। और उस से पहले दिन भी नही। पर आज वादा पूरा करूँगा। अल्ला ने चाहा तो। इस सब्जे में जान वान कुछ नही। मिट्टी ज्यादा और चारा कम। आज तुम्हे मसाला खिलाना ह। मसाला भी चाहे आजकल खाक हाता ह। मसाला ता उन दिनों हाता था।

'उन दिना की क्या बात ह। बेटा ! तेरी मा के जमाने की बात कर रहा हूँ। उन दिनों की क्या बात ह। तरी मा को मसाला खिलाते हुए, कई बार म आप उस में से फक्की मार लता था। मसाला तेरी माँ खाती थी, और उस की खुशबू सूँघ कर भूख मेरी चमक उठती थी। सारा दिन तेरी माँ के पसीने में से खट्टी-खट्टी खुशबू आती रहती थी। और शाम का उस की मालिश करते हुए म उस की पसलिया में नथुने जोड कर सूँघा करता था। मेरी नीलम परी। नीलम परी नाम था तेरी माँ का। तुझे पहले भी बताया था शायद ! बदन पर मक्खी नही बठने दती थी। और अब मक्खिया सुबह से तुझ साँस नही लेने दे रही ह।

चल बेटा, अल्ला का नाम ले कर चल पड। सुना ह, आज बडे बडे फिरगी बाहर से आये ह। देख, मैं ने गद्दिया पर नये घुले हुए उछाड चढाये ह। और टाँगे का रग देख, कसा चमचम कर रहा ह। कल पहलवान कह रहा था—तेरा माँझा ढीला नही हुआ, बाकी सब की फूँक निकल गयी। तेरे टाँगे की चाल-ढाल वसी की वसी ह। देख बटा घण्टी ही दख, कसे बजती ह। एक दफा तो आदमी बिदक कर औंधा जा गिरता ह।

"देखा तू ने, सरदार जी कैसे ठिठक कर रुक गये हैं और मुड़ मुड़ तेरी तरफ़ देख रहे हैं। भाई आजकल भी घण्टी की ऐसी टन टन। भई आजकल भी ऐसा रबड़ टायर पिशावरी टाँगा। हवा से बातें करता, उड़ता चला जा रहा है। साइकिल रिक्शा वालों को तो मैं ने कभी मुंह नहीं लगाया। बेचारे ताँग चला चला कर बेहाल होते रहते हैं। मैं तो बड़े बड़ स्कूटरों को पीछे फेंक देता हूँ, असली सड़क पर कोई मेरे साथ स्कूटर दौड़ा कर देखे।

'ले बेटा चौक पर लाल बत्ती है। ज़रा रुक जा। यह लाल बत्तियाँ भी सरकार का नया चोंचला है। चाहे कोई उधर से गुज़रे न गुज़रे, लाल बत्ती इधर अपनी बारी से जल जाती है। कोई बात भी हुई। रुक जा बेटा जल्दी मत कर।

"लाल बत्ती, पीली बत्ती और फिर हरी बत्ती! फिर हम चलेंगे। बंगला साहब के सामने से हो कर, नुक्कड़ वाले पीर के मज़ार पर सलाम के बाद फिर कर्ज़न रोड। इन गोरों को तांगे पर बैठने का बड़ा शौक होता है, खासकर मेमों को। आज तर सब गिले धो दूँगा। अपना क्या है, मलंग के मलंग, एक तू और एक मैं। बेटा! आज तुझे मैं नहीं टोकूँगा—चाहे दस टापे मसाला तू खा ले!

'पीली बत्ती हो गयी अब तो निकल चल नहीं तो मोटरों वाले शुरू हो गया तो बारी नहीं आयेगी। निकल चल बेटा निकल चल! बजाने दे उन को हारन। यह ताँगा नहीं यह राल्ज़ रैस है। लो हो गये पार। तू आलस कर जाता तो वहीं टापते रह जाते और फिर लाल बत्ती हो जाती। कई बार ऐसे हुआ है। एक तरफ की कतार अभी खत्म नहीं होती कि लाल बत्ती फिर हो जाती है। कनाट प्लेस में तो अकसर होता है। इसी लिए तो मैं उधर कभी जाता नहीं। कौन इन लाल बत्तियों का मुँह लगाये। न अक्कल न मौत।

बंगला साहब को सलाम कर। हाँ, यूँ। बड़ी बरकत है इस सलाम में। इस दर पर आया कोई खाली नहीं जाता। शाम को देखा है कितनी मोटरें यहाँ खड़ी होती हैं। जहाज़ जितनी बड़ी मोटर और उन में सोने से लदी सेठनियाँ निकल कर अन्दर माथा रगड़ती हैं। झोलियाँ भर भर कर जाती हैं। ले अब नुक्कड़ वाले पीर का मज़ार पर भी सलाम कर ले! शाबाश! कोई कहता है बंगला साहब में बड़ी बरकत है कोई कहता है पार के मज़ार में बड़ी करामात है! हम तो बेटा आज दोनों जगह हो आये। ले बेटा अब तुम दुल्की दिखाओ और अपने ठिकाने पर पहुँचो। नंगी टाँगों वाली मेम तेरा रास्ता देख रही है।

तुझे पता है बेटा एक बार हाय वो दिन! यह बात मैं ने तुझ कभी नहीं बतायी। बहुत दिनों की बात है। तब लाम लगी हुई था। तू तो अभी पैदा भी नहीं हुआ था। उन दिनों की बात है। रात का मैं घर लौट रहा था। घुप अँधेरी रात थी। हाथ को हाथ दिखाई नहीं देता था। जाने का घुप अंधेरी रात। यहाँ इस मोड़ पर जहाँ जयसिंह और अशोक रोड मिलती है एक क्राप्टिन ने मेरा ताँगा रोक लिया।

मटी टाँगें, शराब में बदमस्त, सिगरेट के कश पे कश लगाये जा रही थी। कहने लगी—तुम मुझे ले चलो। मैं ने कहा—मैं घना हारा अपने डेरे जा रहा हूँ। पर वह तो कूद कर ताँगे में आ बैठी और वह भी अगली सीट पर। और फिर उस ने घोड़े की बाग मुझ से छीन ली। कम्बख्त ग़जब का ताँगा चलाती थी जैसे सारी उम्र उस का यही कसब रहा हो। तेरी माँ भी खुदा की एक अनथक बन्दा थी। और फ्राटिन ताँगे को 'बिरला मन्दिर' के पीछे पहाड़ी पर चढ़ा कर ले गयी। तौबा-तौबा, किस तरह की औरत थी! और फ़जर हो जब मैं उस ऊपर कर डरे पर पहुँचा तो छोटू की माँ एक जूती उतारे और एक पहने। बार-बार कहती—तुम्हारे कपड़ा में से खुशबू कसी आ रही ह? मैं इतनी बातें बनाता हूँ पर उस दिन मेरे मुँह में जस जबान न हो। वह जूतियाँ मारती रही और मैं जूतियाँ खाता रहा। चल बेटा चल, बाबूआइन ताँगे में नहीं बैठेगी। यूँ ही देखे जा रही ह। यह लोग घण्टा घण्टा भर बस का इतजार करेंगे लेकिन ताँगे में नहीं बैठेंगे। यूँ किफायत कर के चार पैसे बचाते हैं और फिर चाँदनी चौक में जा कर सुर्खी, पाऊडर पर डुबो आते हं। इन्होंने ताँगे का कभी मुँह नहीं देखा। या फिर फशन के मारे स्कूटर पर बठेंगे। कभी बीबी उछल कर खाविन्द की गोद में, कभी खाविन्द उछल कर बीबी की थोली में। बुरा हाल करता ह यह स्कूटर। आँते हिला देता ह। एक बार मैं बठा था, दस क़दमा के बाद स्कूटर को रोक कर नीचे उतर आया। पैदल चलना मजूर लेकिन स्कूटर की सवारी बुरी।

"पुरानी दिल्ली में साइकिल रिक्शा भी चलते हैं। तौबा-तौबा। रिक्शा पर बठना तो यूँ ह जसे आदमी, आदमी के कन्धों पर चढ जाये। अगले का पसीना चू रहा होता ह और सवारी पसर कर बठी रहती ह। मैं तो कभी साइकिल रिक्शा पर न बैठ सकूँ। इस से तो आदमी चल ले।

'बेचारे रिक्शा चलाने वाले का भुरक्स निकल जाता ह। चार पैसे कमाने के लिए आदमी को क्या-क्या करना पडता ह। सुना ह रिक्शा चलाने वालों का बवासीर बहुत होती ह। बवासीर न हो तो क्या हो? बेचारे टाँगें कसे हिलाते हं। साइकिल की काठी पर कूल्हे छिल जाते ह।

' सवारी तो ताँगे की ह। शाही सवारी। तेरी माँ के जमाने की बात है। एक बार बाली रण्डी मेरे ताँगे पर बैठ कर बाहर निकली। लोग सडक पर औंधे आ जा गिरे। तू ही बता बेटा टक्सी में कभी ऐसा हो सकता ह? स्कूटर में कभी ऐसे हो सकता ह? शाम का सर कर के जब लौटी तो कहने लगी—म्हाजा! तेरे ताँगे से उतरने को जी नहीं चाहता और मेरी मुट्ठी में दस का नोट थमा कर चली गयी।

"लो बेटा, बातें करते-करत हम ठिकाने पर आ पहुँचे। मैं तुझ से बातें न करूँ तो मेरा जी नहीं लगता। बातें तो मैं तेरी माँ के साथ किया करता था, बात अभी मेरे होंठों पर होती कि वह मेरा मतलब जान जाती। मेरे इशारे को समझती थी। मैं उदास तो वह उदास मैं खुश तो वह खुश। एक बार मैं बीमार पडा, एक दिन दो

दिन, उस ने चारे को मुँह लगाना छोड दिया। मैं भी उस पर जान देता था। मालिश तेरी भी करता हूँ लेकिन उस के मालिश जसे होती थी, कुछ न पूछ। छोटू की माँ कहा करती थी कि यह घोडी नही मेरी सौत ह। हमेशा उसे सौत कह कर बुलाती। छोटू की माँ और तेरी मा की कभी नही बनी।

"देख, सामने सवारी आ रही है। मैं ने तुझे नही कहा था। आज तू दम नही ले पायेगा। दस दिन यह फिरगी जो यहाँ पर ह, चाहे इस साल भर की रोटियाँ बना लें, उस ने तो इशारे कर के टक्सी को रोक लिया ह। एक तो यह टैक्सी वाले नही जीने देते। लेकिन टैक्सी से मेरा कोई बर नही। टक्सी की सवारी शरीफाना सवारी है। टक्सी वाले आदमी के कपड भी तो अच्छी तरह उतारते हैं। जो इस तरह अपनी खाल उतरवाना चाहें बेशक टक्सी में बैठें।

"इस नीम के नीचे रुक्ते हैं। जब तक कोई सन्तरी नहीं आता तो इस नीम तले सुस्ता लें। सन्तरी भी क्या करेगा। चार पैसे उस की हथेली पर धर दिये तो उस का मुँह बन्द हो जायेगा। बडे-बडे सन्तरी म्हाजा ने देख रखे ह बेटा! हर किसी का भाडा होता ह। भाडा दिया और चाहे कोइ दिन दहाडे डाका मार कर चलता बने। ले सन्तरी की बात ही की और वह सामने आ धमका। आने दो उसे, म्हाजा ने कभी निगोड सन्तरियो की परवाह नही की। लेकिन बेटा, बुतू ने यह पान क्यों टेढा रखा हुआ ह? कही तेरा नाल तो मुझे तग नही कर रहा? ले नाल तो तेरा उतर ही गया ह। पता नही कहाँ फक आये ह। पहले तो तेरे नाल लगवा लें, नही तो तरे सुम में चोट आ जायेगी। चल बटा, तेरा नाल लगवा आयें।'

'क्या म्हाजा, हमें देख कर मुँह मोड लिया?'

'नही हवालदार साहब! घोडे का नाल पता नही कहाँ गिर गया ह। अच्छा हुआ, मेरी निगाह पड गयी नही तो बेचारे का सुम जब खा जाता।"

'तू यार, कभी काम नही आया। मैं न सोचा, तुझे कहूगा कि चौकी तक छोड आओ।"

'उधर ही स ता आ रहा हूँ हवालदार साहब! गोली किस की और गहने किस के। मैं तो कभी इनकार न करता, अब ता म इस का नाल लगवाने जा रहा हूँ। सुबह-सुबह यह फ़ालतू खरच आन पडा ह।"

'नाल तो पहाडगज में ही जा कर लगेगी, रास्ते में मुझे भी उतार देना। बीच में ही तो थाना पडता ह।'

'तो फिर बठ जाओ सन्तरी जी। होले होले चलेंग। मेरा घोडा आजकल जरा ढीला हो रहा ह। आज बोहनी आप की ही सही।'

"म्हाजा! तू अपनी उस्तवाजी से बाज नहीं आता। अगर हम भी तरे घालान से बोहनी करत तो नीम के नीचे अड्डा बना कर तू गडा था।'

"ओ करयाहो। आप तो नाराज ही हो गये। हम आप से ठट्टा न करें तो और

किस से करें ? इन स्कूटर वालो से करें तो टिटहरी की तरह उडते फिरते ह ?'

"सब को हम ने सीधा कर रखा है—सब का तेल बना कर कान में डाल लिया है।"

"हवालदार जी ! यह बताओ, ये टैक्सी वाले भी कभी आप के क़ाबू आते हैं ?"

"पुलिस के हाथ चढा, कपडे उतरवा कर जाता है—चाहे टैक्सी वाला हो चाहे तांगे वाला।"

"तांगे वाले तो बेचारे अब रही ही गये।"

'एक हज़ार और टक्सी के लाइसेंस मजूर हुए हैं, दिल्ली शहर के लिए। हज़ारों आदमी बाहर से उस मीटिंग के लिए आ रहे हैं, जिस के लिए कजन रोड पर सतमंज़िला बनी ह। अपनी तो डयूटी कजन रोड पर लगी है।"

"फिर ता चादी ही चादी ह आप की। एक तो नगी टाँगें देखो, दूसरे टैक्सी वालों की हजामत करो।"

"अपन के लिए टैक्सी तांगा बराबर ह। बे म्हाजा, हमें यही उतार दे ! मैं सामने चौकी पर पैदल चला जाऊँगा।"

'जसी मर्ज़ी आप की।"

"लेकिन म्हाजा ! तुझे हो क्या गया ह। आज बीडी तक नही पिलायी तुम ने ?"

'माफ करना हवालदार जा। मेरी तो मति ही मारी गयी है। लो बीडी पियो । आप लोगा के लिए ही तो ले कर रखते हैं।"

'अच्छा म्हाजा, खुश रह। हा देख, सडक पर तांगा न खडा किया कर, आजकल इसपेक्टर लोग लेंडो कुत्तों की तरह फिरते रहते है।"

●

"देखा बेटा ! हरामखोर चडडो मुफ्त को ले गया, बीडी भी पी गया और अहसान वहीं का वही रहा कि नीम के नीचे तांगा न खडा किया कर। नीम के नीचे नही तो तुम्हारी माँ को टागा में तांगा खडा करे कोई। टैक्सी वालों के लिए स्टैण्ड बनाते है टेलीफ़ोन लगवा कर देते हैं, तांगे वालो को कोई पूछता ही नही। इस लिए न कि आजकल तांगे में बैठने का रिवाज कम होता जा रहा है। तांगे में बैठना लोग अपने वक़्त की बरबादी समझते हैं। मैं पूछता हूँ बेटा ! यह आजकल लोग इतना दौड-दौड कर वक्त बचाते है, तो फिर क्या करते हैं अपने वक्त का ? सिनेमा का टिकट लेने के लिए घण्टा लाइन में लगे रहते ह। डाकखाने टिकट लेने के लिए लाइन लगती ह सुबह दूध लेने जाओ—लाइनों में खडा होना पडता है। छोटे-बडे सब लाइन में लगते ह। इधर वक़्त बचाते ह उधर लाइन में खडे हो कर वक्त की बरबादी करते हैं। सारा दिन दौडते ह और सारी शाम होटल-क्लबों में बठ कर बरबाद करते ह। मैं भी क्या किस्सा ले कर बठ गया ! शहर का अन्देशा काज़ी को ! चल बेटा, पहलवान की दुकान आ गयी तेरा नाल लगवा ले।'

•

"सलाम ह पहलवान जो !"

"खालैक्म म्हाजा ! क्यों मेरी बात सच्ची निकली न !"

"पहलवान जी, आप को उस्ताद जो माना ह, तो बात तो आप की ही सच्ची होगी।"

"मैं ने तुझे कहा था न कि एक नाल उखड़े तो चार नाल बदलवा लो।"

"आप की मान ली पहलवान जी !'

"आदमी की उम्र भी वैसी होती ह। एक नाल गया तो समझो, बाकी भी जायेंगी।"

"पिछले हफ्ते एक उतरा। आज दूसरा उड़ गया।"

"अब बाकी दो भी नये लगवा ले।'

'काम की सवारी तो कोई तांगे की तरफ मुँह नही दती, नाल घिसते रहते ह।"

"हमारी भी तो रोजी चलानी ह अल्ला को।'

'एक म्हाजा ने पता नही क्या बिगाड़ा ह परवरदिगार का।"

"अरे म्हाजा, तुझे कौन सी परवाह ह। तरा बटा जीता रहे तुझ क्या फिक्र ह !'

o

'कहता था म्हाजा तुझ क्या परवाह है ?' —म्हाजा फिर अपने घोड़े स बातें कर रहा है—"क्या बटा ! मुझ परवाह नही, आज कितने दिना स तुझे मसाला नही मिला। मुझे परवाह नही। नाल लगाते लगाते पहलवान ने दोपहर कर दी। लेकिन काम पक्का करता ह। मजा आ जाता ह। ले बेटा ! सामने बस के अड्डे पर खडी सवारियों के पास से गुजरते हैं। शायद कोई ऊब कर तेरे ताग में ही आ बैठे ! नाल लगवायी ही खरी हो जाये शायद। नही। टस से मस नही होती सवारी आजकल। ये बबुआइनें चाहे खडी खडी सूख जायें। आँख उठा कर तागे की तरफ नही देखेंगी। अब मुझ से आवाज नही दी जाती। घण्टी तो म ने बजायी थी। तेरी घण्टी सुन कर जो कोई नही आया तो फिर कोई नही आयेगा। तू चलता चल। गोल मार्केट में कभी-कभी कोई सवारी निकल आती ह। इस वक्त अफसरा की बीवियाँ सौदा सुल्फ खरीद कर लौट रही होती हैं। बगालिनें होती ह रसगुल्ला और गुलाब जामुन के दोन दोनों हाथा में उठाये हुए। जितना मीठा खाती ह उतना मीठा बोलती ह जसे कोई मीठा मिसरी घोल रहा हो। उस पेड के नीचे मुझे एक बार एक बगालिन मिली। तौबा तौबा कितनी मोटी थी ! कोई ढाई मन की लाश होगी। कहन लगी कि अशोका रोड की म अठन्नी दूँगी। म कभी उस की लाश की तरफ दखू, कभी तांग की तरफ। और वह बार बार कह जा रही थी, मैं तो हमेशा अठन्नी ही देती ह। फिर म न उसे धीर से कहा, बाई,

मेरी घोडी से आँख बचा कर चुपके से बठ जा।' उस ने तांगे में पाव ही रखा कि तांगा 'उलार' हो गया और मुझे सारा वक्त, बम पर ही बठना पडा। बम पर टँगा हुआ मैं अशोका रोड तक गया। सवारियां के लिए कभी-कभी बडी जान मारनी पडती ह।

"ले, यहा ता हर पड के नीचे स्कूटर खड़े हैं। स्कूटर और टोकरिया उठाये छोकरे। चार पैसे दो और 'कजर' कोस भर पूरे महीने का राशन उठा कर ले जाते ह। बेटा! यहा तेरी दाल नही गलने की। वह देख! सामने से सवारी निकली और सीधा स्कूटर में जा बठी ह। मीटर का नम्बर देख रहा ह। एक तरह से तो ये लोग सच्चे ह। मीटर देखा और चल दिये। मीटर देखा और पसे गिन कर दे दिये। तांगे वालों से तो कितनी कितनी देर लोग भाडा त करते रहते ह।

'चल बेटा, यहा से चलता बन। अपने अडडे पर ही चलते हैं। देख, एक और बाबू निकला ह और स्कूटर को इशारा कर के बुला रहा ह। तांगे में बठना तो यह लोग अवस समझते हैं। खायें अपने खसम को, हमारी रोजी कोई नही मार सकता। चल बेटा, अपने अडडे की तरफ चला चल।

'मैं भाडा त करने की बात कर रहा था। आजकल तो यह भी किसी को नही आता। बात करते ह जसे कोई लट्ठ मार रहा हो—डेढ रुपया मिलेगा चलना ह तो चलो! कोई बात भी हुई। उन दिना, जिस डेढ देना होता वह एक से शुरू करता। हमें भी पता होता था कि इसे आखिर डेढ रुपये तक आना ह, हम दो रुपए से बात चलाते और फिर करते करते फसला डेढ रुपये पर हो जाता। और यूँ उधर एक रुपये से डेढ रुपये तक चढने में और इधर दो रुपये स डेढ रुपये तक आन में, जमाने भर की बातें होती। मण्डी के भाव, अखबारों में छपी खबरें, मौसम का हाल, हिन्दू मुसलिम इत्तहाद की चर्चा। भाव त करने के भी लोगो के अलग-अलग ढग होते हैं। कई सवारियां तो अपनी जगह खडी दूर से ही बात करती ह। कई तांगे के पास आ कर, छत की कमानी पकड कर बात करते ह। कई तांगे की सीट पर बठ कर भाडा तै करते ह। कई तांगा चलने पर सौदा शुरू करते हैं। कई ठिकाने पर पहुँच कर अपना मन मर्जी के पैसे तांगे वाले की हथेली पर रखते ह और फिर पाँच पाच दस-दस पसे कर के, जेब में से निकालते जाते ह। तांगे वाले की हमेशा कोशिश होती ह कि वह चार पसे ज्यादा बटोर ले सवारी की कोशिश होती ह कि वह चार पसे बचा ले।

क्यों बेटा! पानी पियेगा? तुझे प्यास लग रही होगी। आजकल हौज ढूंढने के लिए भी कोस भर चक्कर काटना पडता ह। पहले तो हर सडक पर हर कोने में हौज बने रहते थ। अँगरेज के राज में तो तांगे वालों के लिए क्वाटर बने थे। सब के लिए न सही पर अँगरेज को हमारी फिक्र तो थी। अब तो तांगे की कोई पूछ ही नही। इन स्कूटर वालों ने बटाढार कर दिया ह। रावलपिंडी के 'भापे' मौज में आ जायें तो सवारी को मुफ्त बिठा कर ले जाते हैं और रास्ते में परायी औरत से मीठी मीठी बातें कर लेते हैं या फिर सामान उतार रही सवारी की कोई चीज खिसका लेंगे।

"अल्ला गुट न भुलवाये ! म्हाजा ने कभी यूँ नही किया। एक सवारी, नोटों से भरा बटुआ पिछली सीट पर गिरा गयी। मुझे सारी रात नींद नही आयी। अगली फ़जर, पहली बात, मैं ने उस का बटुआ उसे जा लौटाया। बाबू जसे घास बेच कर सो रहा था। यह जान कर कि सारी रात उस का बटुआ गुम रहा, बाबू को गश आ गया। बाबू सामने बेहोश पड़ा था और मेरी हँसी नहीं रुक रहा थी। एक मौलाना अपना सदूकची भर तांगे में भूल गया। उस की बेटी का ब्याह हो रहा था। नये कपड़े के थान, आटे दाल की बोरियाँ, दहेज के बरतन, स्टोर लाट और थालियाँ, सारा सामान उतार कर ले गये, बस गहना की सन्दूकची छोड़ गये। रात हो रात मैं ने जा कर सन्दूकची उन के हवाले की। मैं ने सोचा, जब मौलाना को पता चलेगा कि गहना की सन्दूकची खो खो बैठे हैं तो उन के घर कोहराम मच जायेगा। और वही बात हुई, जब मैं उन के यहाँ पहुँचा तो उन के यहाँ मातम छाया हुआ था। मौलाना के दस्त छूट रहे थे। और तो और, एक बार एक ब्राटिन मेरे तांगे में बैठी। शाम का वक्त था। ढेर सारे उस के बच्चे थे। पिल्ला की तरह चूँ चूँ कर रहे थे। तांगे में बैठते हुए, ब्राटिन ने गोदी के बच्चे को अगली सीट पर सुला दिया। उतरते वक्त अपने सारे बच्चों को साथ ले गयी लेकिन गोद वाले बच्चे को भूल गयी। मैं ने तांगे से उतर कर पैसे लिये और फिर पान बीडी लेने सामने पूरबिया के यहाँ जा खड़ा हुआ। कितनी देर मैं पान खाता रहा बीडी पीता रहा। जब लौटा तो मैं ने देखा कि ब्राटिन का गोदी का बच्चा मज़े से अगली सीट पर सोया पड़ा है। ले बेटा, बातें करते करते हम अड्डे पर आन पहुँचे। सवारी बस आयी कि अब आयी। इतनी देर तू ज़रा चारे में मुह मार ले। मसाला आज शाम से पहले पहले तुझे जरूर खिलाना है। यह वादा है। मर्द की ज़बान होती है। तू घास चारे में मुँह मार ले, तुझे भूख लगी होगी। तीसरा पहर होने को है। मैं इतने में बीडी पी लेता हूँ।

" नहीं कोई सवारी आयी ? बैठे बैठे शायद मेरी आँख लग गयी थी। आज कल मौसम ही कुछ ऐसा है। गर्मी जा रही होती है जाड़ा अभी आया नहीं होता— तब मुझे नींद बहुत आती है। चाहे कोई सवारी आयी भी हो। मुझे सोता देख कर चली गयी होगी। ज़रूर कोई सवारी आयी होगी। इतनी देर हमें इन्तज़ार करते हो गयी है। सवारी जरूर आयी होगी।

"अगर पहले आयी थी, तो अब भी आयेगी। देख सामने कचहरी में से कई लोग निकले हैं। तांगे की सवारियाँ लगती हैं। सालिम तांगा कर लेंगे। ये तो शाहदरा या महरौली की सवारियाँ हैं। एक चक्कर, और समझो कि सारे दिन की रोटियाँ निकल आयी। सुनार की खट खट और लुहार की एक ही चोट। लो, ये तो बस के अड्डे की तरफ़ हो लिये। और बस भी तो सामने आ रुकी। दौड़ कर बस में जा बैठे हैं। वैसे सवारियाँ लदी हुई हैं बस में। आदमी पर आदमी चढ़ा हुआ है। लेकिन ये लोग बस में ज़रूर बैठेंगे। मैं कहता हूँ, उतने ही पैसे मुझे देते मैं इन्हें आराम से ठिकाने पर

पहुचा आता। बस तो अड्डे से लेती और अड्डे पर छोडती हैं। तांगा तो तग से तग गली में घुस जाता ह। सवारी के घर के सामने उसे उतार कर आता हैं।

"        खडे-खडे तुम ऊब गये हो बेटा ? तुम भी सच्चे हो। परछाइयां ढल रही ह। आज भी कोई सवारी नही आयी। ये काले लोग आजकल तांगे में नहीं बठते। कोई गोरी चमडी वाला ही आयेगा और सारी कसर पूरी कर देगा।

"देखा तू ने ? ये बसें कैसा धुआं छोडती हैं ? जैसे कि पिचकारी मार कर गयी हो। बेटा, तेरी मां ने कभी काली सडक पर लीद नही की थी। तांगे की इन बेकद्रों को क्या काम ? मैं अब किसी काले आदमी को अपने तांगे में नहीं बैठने दूंगा। कोई काला आदमी इस तांगे में नही बठ सकेगा।

"परछाइयां ढल रही हैं।

"आज मैं थका थका क्यो लग रहा हूं ? बेटा! तुम भी मुझे उदास-उदास लगते हो। खडे-खडे तुम्हारी टागें दुखने लगी हैं ? चलते-चलते, दौडते दौडते कोई इतना नहीं थकता, जितना खडे खडे इतजार करते-करते कोई थक जाता है। तुम सोच रहे हो बेटा कि मैं बीडी पर बीडी पिये जा रहा हूं। यह बुरी लत मुझे लगी हुई ह। लेकिन मैं बाकी कोचवाना की तरह सुल्फ़ा तो नही पीता, गांजा तो नही पीता। तुझे पता ह, तांगे वाले कौन-कौन सा नशा करते ह। तुझ से कौन सी बात छुपी है। मैं ने कभी भांग का नही छुआ। दारू को मुंह नहीं लगाया। अफ़ीम से मुझे नफ़रत हैं। बस, एक बीडी पीता हूं, वो भी सब से सस्ती। जो भी सस्ती बीडी बाजार में निकलती वही पीना शुरू कर देता हूं। पहलवान कह रहा था कि इस बीडी में घोडे की लीद भरी होती ह। हो। घोडे की लीद तांगे वाले नही पियेंगे तो और कौन पियेगा। टक्सी वाले तो दारू पीते ह जिस में बकरे का खून निचोडा होता है। एक बार मैं ने भी दारू पिया था, अल्ला झूठ न बोलाये। बस एक ही बार। तब मैं जवान था। नौजवान लडकों के साथ मिल कर एक दिन मैं ने बोतल चढ़ायी थी। तेरी मां के जमाने की बात ह, बेटा! आप भी चुस्की लगायी थी और रूई के फाहे के साथ तेरी मां के नथुनो को भी गीला किया था। पहले तो जैसे वह बिदक सी गयी। फिर नशे-नशे में उस ने आंखें मूंद ली। तेरी मां की क्या बात थी। अपने मालिक की रजा में राजी। छोटू की मा मुझ से दुई कर सकती थी, लेकिन तेरी मां ने कभी ऐसा नही किया।

"लो, परछाइयां ढल भी गयी। आज-कल उधर परछाइयां ढलीं, इधर रात हो गयी। बत्ती का फ़िक्र करो। तेल तो अभी कल ही मैं ने डलवाया था। जब सवारी आये, तो बत्ती जलाने में वक्त बरबाद हाता ह। सवारी और मौत का कुछ पता नही, कब आ जाये।

"देख! सवारी आ रही हैं!

"नहीं, टैक्सी वाले ने उसे उडा लिया है।

"वो मेम आयेगी !

"नही, उसे तो पीछे से आ रहे किसी साहब ने अपनी मोटर में बिठा लिया है।

"हजूम-दर हजूम सामने गेट से निकल रहे हैं। हर कोई टैक्सी स्टैंड की तरफ जाता है। या उन की अपनी मोटरें इन्तजार कर रही होती हैं।

"वो आयेंगे। माँ-बेटा अकेले निकले हैं। इधर ही आ रहे हैं।

"नही उन्हांने तो स्कूटर को रोक लिया है। सारे ही आज कल बंगाल हो गये हैं। स्कूटर पर बैठना बंगालो की निशानी है बेटा, बंगाली की निशानी!

"मैं उस तरफ पीठ करता हूँ—तो फिर सवारी आयेगी। मैं ने आजमा कर देखा है, जब मुँह उठा कर इन्तजार करो तो सवारी कभी नही आती।

"बेटा आज तू उदास है! आज तू सफ़ा-चट्टा लगता है रुआँसा रुआँसा। तुझे मसाला जरूर खिलाना है, मैं ने वादा किया है। आज तुझे मसाला "

"ले सवारियाँ आ बैठी हैं! मैं ने कहा था न। उधर देखना बन्द करूँगा तो सवारी आ जायेगी। चल बेटा!'

'क्यों साहब, कनाट प्लेस ?"

"नही हमें सीधी गार्डन जाना है।"

'चल बेटा, उड़ कर ले चल साहब को और "

'हमें कोई जल्दी नही, बेशक मजे मजे चल ताँगे वाले।" साहब तो बोली नही जानता था उस के साथ सट कर बैठी देखी लड़की ताँगे वाले को हिदायत कर रही थी।

ताँगा अभी चार कदम ही चला होगा कि ताँगे वाले ने मुड़ कर सवारियों की ओर देखा। यूं उस ने पहले कभी नही किया था। उसे लगा जैसे उस ने लड़की को पहले भी कहीं देखा हो।

नही, आज-कल कटे बाल, सब लड़कियाँ एक सी लगती हैं। एक सी होठों पर सुर्खी, गालों पर लाली माथे पर, कंधों पर कन्धा वाला पर। घोड़ा दुल्की पर था। ये सुबह से पहली सवारी आयी थी। अँधेरा था तो क्या। ताँगा अपनी पूरी शान से घंटी बजाता तेज हो रहा था।

'भई, ताँगे वाले भाई! हमें कोई जल्दी नही। रात अपने में "

यह आवाज तो उस की पहचानी हुई थी। ताँगे वाले ने कनखियों से उस लड़की को देखा। फिरंगी ने उसे अपनी बाँहों में लिया हुआ था। कजरारी आँखें, तिरछी भवें, गालों पर जुल्फों के सवालिया निशान। म्हाजा सोचता यह आवाज तो उस की पहचानी हुई थी।

और फिर वह चौंक गया। हाय अल्ला! कहीं पर राय साहब की बेटी तो नही है? इतने में वह लड़की बोली—"ताँगे वाले भाई! ताँगा बेशक आराम से

चलाओ। हमें तांगा सारी रात रखना है। जो माँगोगे सो किराया मिलेगा।"

यह तो वही है। और तांगे वाले के हाथ से लगाम छूट गयी। म्हाजा पसीना पसीना हो रहा था। और कांपते होठों से उस ने लड़की से पूछा—"बेटी! तुम दिल्ली की रहने वाली हो?"

"हाँ तो।"

"होली रोड में तो नही रहते?"

"हाँ, तो।"

"तुम राय साहब किशोरी लाल की "

"हाँ, मैं राय साहब की बेटी हूँ।"

शराब में बदमस्त लड़की अपने अँगरेज साथी का सिगरेट ले कर कश लगा रही थी। म्हाजा ने लगाम खींच कर तांगा एकदम रोक लिया।

"आप उतर जाइए तांगे में से।"

"क्या?"

"शराफ़त इसी में है कि आप उतर जायें तांगे में से।" म्हाजा की आँखें लाल हो रही थी।

"इस वीरान सड़क पर?"

"मैं कहता हूँ, मैं तुम्हें अपने तांगे में नही ले जाऊँगा।"

और इस से पहले कि म्हाजा कुछ और बोलता, वह लड़की अपने साथी के साथ गिटमिट करती तांगे में से उतर गयी। बाँह में बाँह डाले, वे टैक्सी स्टण्ड की तरफ जा रहे थे। कुछ देर, और अँधेरे में उन दोनों के बुत खो गये।

म्हाजा कितनी देर वैसे का वैसा स्तब्ध सा, अँधेरे में उस ओर देखता रहा। फिर घोड़े की बाग मोड़ कर वह अपने घर की ओर चल दिया।

म्हाजा फिर अपने घोड़े से बातें कर रहा है

"बेटा! तुझे पता है कि यह लड़की कौन थी? तुझे क्या पता? तेरी माँ होती तो एकदम पहचान जाती। राय साहब किशोरी लाल की बेटी थी। पुलिस कप्तान होते थे। इसे मैं स्कूल ले जाया करता था। सुबह स्कूल छोड़ आता, शाम को ले आता। स्कूल कौन सा नजदीक था। बिरला मन्दिर वाले स्कूल में यह पढ़ती थी। कच्ची कोंपल सी। पक्की पहली से दस जमात तक, मैं इसे स्कूल ले जाता रहा और लाता रहा। मजाल है, एक से दूसरी बात कर जाये। कभी आँख उठा कर इस ने आगे-पीछे नही देखा था। जब जरा बड़ी हुई तो राय साहब कहने लगे—म्हाजा! तू तांगे में परदा लगवा ले। मैं ने कहा—राय साहब! किसी की मजाल नही जो म्हाजा के तांगे की तरफ आँख उठाये! हाय, कमबख्त यह लिली थी? लवलीन! जमाने को क्या से क्या होता जा रहा है! आग लग गयी है! आग लग गयी है "

और यूँ तड़पते हुए म्हाजा ने तांगे को अपने डेरे पर ला खड़ा किया। खाली हाथ—भूखा-प्यासा।

"बेटा! आज भी इकरार नहीं पूरा हुआ। आज भी म्हाजा को झूठा होना पड़ा।" घोड़े का साज उतारते हुए म्हाजा ने अपना हाथ घोड़े के दाँतों में दे दिया। और घोड़ा आहिस्ता-आहिस्ता अपने मालिक के हाथ को चाटने लगा।

●

# चाँदनी रात का एक दुखान्त

कोई नहीं कहता था, मालिन और मिस्री माँ-बेटी है। जहाँ से गुजरती, लोग यही समझते कि दो बहनें है। मिस्री बालिश्त भर ऊँची थी अपनी माँ से। "अरी मालिन, अटूट यौवन उतरा है तेरी बेटी पर।" पडोसिनों-पडोसिनों की उस की ओर देख-देख कर भूख न मिटती। और लडकी जैसे सच्चा मोती हो। जितनी सुन्दर, उतनी सुशील। मालिन अपनी बेटी के मुँह की ओर देखती और उसे लगता जैसे हूबहू वो खुद हो। अभी तो कल की बात थी, वो स्वयं वैसी की वैसी थी। और वो सोचती, अब भी उस का क्या बिगडा था। अब भी—अब भी कोई पहाड़ काट कर उस के लिए नहर निकालने के लिए बेताब था। अब भी—अब भी कोई सात समुंदर तैर कर उस तक पहुँचने के लिए बेकरार था।

ये कौन उसे आज याद आ रहा था? मोतिया का व्यापारी।

ये क्यों उस की पलकें आज भीग भीग जा रही थीं? उस की बेटी अब जवान हो गयी थी। अब उसे ये कुछ नहीं शोभा देता था। सारी आयु सम्हल-सम्हल कर चली, आज ये कैसे ख्यालों में वो खोई चली जा रही थी? नहीं, नहीं। अगले हफ्ते मिस्री, अपनी बेटी का उसे काज रचाना था। नहीं, नहीं, नहीं।

"पास मेरी परम प्यारी, एक पल न बिसारी "

कल उस ने चिट्ठी लिखी थी। हर बार वो आता, ये उसे वैसे का वैसा लौटा देती। आँखें मींच कर अपना द्वार बन्द कर लेती। लेकिन वो था कि एक पल भी इसे उस ने नहीं बिसारा था। मालिन उस की जान थी। एक क्षण उसे चैन नहीं था इस के बिना और सारी उमर उस ने काट ली थी किसी की प्रतीक्षा में, फफक फफक कर, सिसक सिसक कर, तडप-तडप कर—सारी उमर। और अब परछाइयाँ ढल रही थीं। चाहे कभी पछी उड जाये।

मालिन सोचती, आज रात वह जरूर आयेगा। शरद् पूनम की रात वो जरूर इस का द्वार खटखटाता था। वर्षों से खटखटाता आ रहा था। कभी भी तो इस ने अपना पट उस के लिए नहीं खोला था।

और फिर मालिन को कई वर्ष पहले शरद पूनम की वो रात याद आने लगी, जब अमराई के तले नाचती इस की चुनरी उस की बाँहों के साथ लिपट गयी थी और

सर से नगी ये उस के सामने दुहरी हा-हा गयी थी, और फिर उस ने इस की चुनरी इस के कन्धों पर ला रखी थी।

हूं! इस बिन पसे ही अपना दुपट्टा आज इस ने अपने कन्धे पर रखा हुआ था! —और मालिन सर से ले कर पाँव तक लरज गयी।

सामने गली में मिस्रो आ रही थी, जसे सरो का पेड हो। ऊँची, लम्बी और गोरी। हाथ लगाने से मली होती। मुँह-सर लपेटे, आँखें नीचे डाले। मजाल ह किसी ने उस का ऊचा बोल भी कभी सुना हो। मन्दिर से लौट रही थी भगवान के आगे हाथ जोड जोड कर, उस के मन की मुराद पूरी हो। भगवान् सब के मन की मुराद पूरी करे! और मालिन आप ही आप मुसकराने लगी। जैसे किसी के गुदगुदी हो रही हो। उस क मन की क्या मुराद थी?

"माँ तहेजी आज नही आये?" मिस्रो माँ से पूछ रही थी।

"तेर तहेजी आज नही आयेंगे। वो तो कही कल भी आ जायें तो लाख शुक्र। कितनी सारी बजाजी और कितना सारा अनाज उसे खरीदना है। ब्याह शादी में चीज बच जाये तो अच्छी, कम पड गयी का बडा झंझट होता ह।" मालिन बटी को समझा रही थी। मिस्रो चूल्हे चौके में व्यस्त होने से पहले घर से आयी और अपनी मुकेश वाली चुनरी माँ के कन्धा पर रख उस का दुपट्टा उतार कर ले गयी। कही उस की रेशमी चुनरी मली न हो जाये!

कितनी महीन मुक्कश उस ने टाँकी थी अपनी चुनरी पर। धुँधलका हो रहा था। अकेली आँगन में बठी मालिन कल्पनाओ में खो गयी थी। कई चक्कियाँ बडा महीन आटा पीसती है। मालिन सोचती, वो भी तो एक चक्की की तरह थी जो सारी उमर अपनी धुरी पर चलती रही। कभी भी तो उस की चाल नही डगमगायी थी। अपनेआप को उस ने मलीदा कर लिया था। रोक रोक कर, भींच भींच कर खत्म कर दिया था अपनेआप को।

पूरे चाँद की चाँदनी अमराई में से छन छन कर उस के ऊपर पड रही थी। ये कसे विचारो में वो बहती जा रही थी आज। मालिन को लगता जसे एक नशा नशा सा उस को चढ रहा हो। पूरे चाँद की चाँदनी हमेशा उस पर एक जादू सा कर दिया करती थी।

चार दिन और और फिर इस आँगन में गीत बठेंगे। मालिन सोच रही थी। और फिर मेंहदी रचायी जायेगी। और फिर मिस्रो दुल्हन बनेगी। सिर से ले कर पाँव तक गहनो से सजी हुई, लाल जोडे में कसी लगेगी मिस्रो? और फिर कोई घोड पर चढ कर आयगा और डोले में डाल कर उसे ले जायगा अपने घर, अपनी अटारी में। और उस की हथेलियो को चूम चूम कर उस की मेंहदी का सारा रग पी लेगा।

मालिन सोचती, अभी तो कल की बात थी, उस ने भी मेंहदी लगायी थी। पर मिस्रो के तहजी ने तो एक बार भी उस की हथेलियो को उठा कर अपने होठो से

नही लगाया था, एक बार भी उस ने कभी इस के हाथों को उठा कर अपनी आँखों से नही छुआ था। थका हारा वो काम से लौटता, खाना खाता और खा कर सो जाता। एक बेटे की लालसा में कभी कभी आधी रात को उस की आँख खुल जाती—तब, जब मुश्किल से कहीं तारे गिन गिन कर मालिन को नींद आयी होती। और फिर हर वर्ष हर दूसरे वर्ष इन के एक न एक बेटी आ जाती। बिना बुलाई लडकियां। आप ही आप आती, आप ही आप जाती रही। बस एक मिन्नी बची थी। एकलौती। मोटी मोटी, काली काली आँखें। मालिन की आँखें। गोरे गोरे गालों के नीचे तिल। मालिन का तिल। गज गज लम्बे बाल। मालिन के बाल। मालिन सोचती जैसे इस जीवन को उस की सारी भूख ने उस की बेटी में पुनर्जन्म ले लिया हो, अपनी पूर्ति करने के लिए। मालिन सोचती, उस का हुस्न जैसे फिर साकार हो गया था अपनी कोखजाई में अपना मूल्य चुकवाने के लिए। मालिन को हमेशा महसूस होता जैसे उस के अंग अंग, पोर पोर में एक भूख बसी हुई है। एक प्यास में उस के होंठ बेकरार हो रहे थे।

पूरे चांद की रात मालिन से कभी कुछ खाया नहीं जाता था। और मिन्नी कब की चूल्हा चौका सम्भाले, सामने ड्योढी के दरवाजे को कुण्डी लगा अन्दर कमरे में सो गयी थी।

रात भी कितनी हो रही थी। चांद जैसे सारे का सारा उस के आंगन में आन उतरा हो। रात ठण्डी थी। अभी ठण्ड कहां! यों ही हलका हलका जाडा था। पूरे चांद की रात, अकेला आंगन, मालिन सोचती—वो क्यूँ यूँ बैठी थी? किस के इन्तजार में? मिन्नी अन्दर सो चुकी थी। मिन्नी के सहेली को आज ही क्यों शहर जाना था। पूनम की रात तो वो अपनेआप को बांध-बांध कर रखती थी। और मालिन ने मुक्कश वाली मिन्नी की चुनरी के साथ अपना मुँह सर लपेट लिया। चांद की चांदनी में दमक दमक पडते मुक्कश के दाने। उसे लगा जैसे आसमान के तारे उस के बालों में उतर आये हों—उस के गालों पर, उस के कन्धों पर आ कर खेलने लग गये हों। सामने अमराई पर फिर कोई पंछी आ कर बोल रहा था। हुक हुक, हुक। सारी रात पुकारता रहेगा—पूनम को सारी रात। सारी आयु यों ही पुकारता रहा था और जिस ने आना था वह नही आया था।

ये किन विचारों में वो आज बहती जा रही थी? मालिन सोचती, शायद इस लिए कि वो अकेली थी। अकेली क्यों थी? अन्दर मिन्नी उस की जवान जहान बेटी सोयी थी। अगले हफ्ते, जिस का उस ने काज रचाना था। सात दिन और, और वो चली जायेगी। और फिर मालिन अकेली रह जायेगी। इतना बडा आँगन और वो अकेली। मालिन का अंग-अंग लरज गया। ये आँगन उसे खाने को दौडा करेगा। मिन्नी क्यों इस के यहाँ आयगी? वो तो अपना घर बसायेगी। गांव के चौधरी की बहू, वो तो अपने सहन का सिंगार बनेगा। और मालिन सोचती, वो अकेली रह जायेगी, बिल्कुल अकेली। मिन्नी के दहेज को तो सारी उमर सूद सौदे में कट गयी थी। एक अटट

दौड। घर का मर्द, शाम को हर रोज हार कर जैसे वो आता था और निढाल अपनी चारपाई पर ढेरी हो जाता था। कई बार उसे ये कहती—आखिर इतने झमेल किस लिए? काहे को उस ने इतने झंझट पाल लिये थे? लेकिन उसे कोई बात नहीं समझ आती थी।

मालिन घडी की घडी के लिए अन्दर कोठे में गयी। मिन्नी सचमुच सो गयी थी। अल्हड जवानी की नींद में बेसुध सोयी पडी थी। लाल चूड़ियों को उतार, सिरहाने रख सो गयी थी। कहाँ चूडियाँ रखी थी उस ने? ज्यों ही करवट लेगी, कच-कच टूट जायेंगी। और मालिन ने सोचा था उठा कर चूड़ियों को सामने ताखे में रख दे। लेकिन उस ने तो चूडिया पहन ली थीं। ताखे में सम्हालने की जगह उस ने तो चूड़ियाँ अपनी कलाइयों में सजा ली थी। छह एक ओर और छह दूसरी ओर। चमक-चमक करती चूडियाँ, अभी तो कल ही मिन्नी ने गली में बैठ कर चूडी वाले से चढ़वायी थीं।

और मालिन बाहर आंगन में लौट आयी। सिर पर रेशमी मुक्कैश वाली चुनरी, बांहों में लाल लाल चूडियाँ। पूरे चांद की रात मालिन को लगा, जैसे एक ऐंठन सी उस के अंग अंग में फैलती चली जा रही हो।

और फिर उस की ड्योढी का दरवाजा किसी ने खटखटाया। वही था, वही था। धीरे से, सहमा हुआ, झिझकता हुआ—वही था। जैसे उस ने चिट्ठी में लिखा था, अपने वक्त पर आन पहुँचा था। "शरद पूनम की रात मैं तुम्हारा किवाड खट-खटाऊँगा। तुम्हारी मर्जी हो खोल देना, तुम्हारी मर्जी न हो न खोलना, तुम्हारा किवाड खटखटाने का मेरा हक बस का बसा बना हुआ है।" ठक! ठक!! ठक!!! अत्यन्त कोमल, अत्यन्त मधुर प्यारी सी ये दस्तक उसी की थी। वही था। चाँदनी रात का चोर। और सहसा चांद घने काले बादलों के पीछे हो गया। अँधेरा-अँधेरा छा गया चारों ओर। जैसे किसी ने एकदम बत्ती बुझा दी हो। घोर काले बादलों का पहाड सा चांद के सामने आ गया था। बादलो पर बादल चढे आ रहे थे।

और रात के उस अंधेरे में मालिन के क़दम ड्योढी की ओर चल दिये। अंधेरा-अँधेरा, चक्कर चक्कर, ठण्ड ठण्ट, पसीना-पसीना। कांपते हुए हाथ से धीरे से उस ने कुण्डी खोली और अपनेआप को तडप रही बाँहों में ढेरी कर दिया। और फिर होंठो पर होंठ दांतो में दांत—बीस वर्षों का रुका हुआ एक बांध जैसे फूट कर टूट पडा हो। जैसे कोई फूल की पत्ती किसी बवण्डर की लपेट में आ गयी हो।

मालिन को नहीं पता था कब चलते चलते वो गाँव के बाहर बरगद के नीचे जा खडे हुए कितनी देर वहाँ खडे रहे। मालिन को नहीं पता था कब वो बरगद के साथ लगते खेत में जा बैठे कितनी देर वहाँ छिपे रहे। तड़के मुह अंधेरे की गाडी दूर सड़क के पार चीखती चिल्लाती गुजर रही थी कि उस की आँख खुली और मालिन धीरे से उस की बाँहों में से निकल मुँह-सर लपेटे तेज-तेज क़दम अपने घर लौट आयी।

चूड़ियों को उतार कर उस ने यसो को बैसो मिन्नो के सिरहाने रख लिया। उस की रेशमी चुनरी उस की चारपाई पर धरी और अपना दुपट्टा ले कर सामने बिस्तर में जा लेटी। मालिन अपने पलंग पर आ कर पडी और उस की आँख लग गयी। यूँ तो उसे कभी भी नींद नहीं आयी थी। जैसे सारी उमर का किसी का रतजगा हो।

धूप निकल आयी थी और तब कहीं उस की आँख खुली।

"कसे अल्हड़ लड़कियों की तरह तो आज सोयी हु माँ।" मिन्नो ने उसे छेड़ा।

जवान जहान लड़की। उस ने घर की झाड पोंछ देख ली थी। चूल्हा चौका खतम कर लिया था और नहा धो कर अब मन्दिर जा रही थी—मोतियों की कलियाँ अपनी चुनरी के पल्लू के साथ बाँधे, अपने इष्ट की भेंट चढ़ाने के लिए।

मिन्नो आँख से ओझल हुई और मालिन अलसाई हुई लाख स्वप्न अपने पलकों में लिये सामने आँगन में जा बठी। मीठी-मीठी पुरवैया चल रही थी। हलकी हलकी धूप सामने मुँडेर से नीचे उतर आयी थी। एक खुमार सा था आसपास में। मालिन को लगा जैसे वो दूध की लबरेज कटोरी हो। दूध और उस पर तर रही चमेली की कलियाँ। एक उन्माद में उस की पलकें जुड़-जुड़ जातीं खुल-खुल जातीं।

"अरी मालिन, कहाँ ह तुम्हारी कोइमाँ बेटी ?" जसे उस को किसी ने आ कर चाँटा दे मारा हो। मालिन की ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह गयी।

'ये अनथ कभी नही किसी ने सुना। चार दिन इस के डोले को रह गये हैं और ये लड़की यूँ उछल पडी।" लाजो पडोसन हथेलियाँ मलती मालिन के पास आ कर बठ गयी।

'क्या हुआ ह मेरी बेटी को ? वो तो निरी गौ है।" मालिन भभक कर उसे काटने को पडी।

'तेरी गौ सारी रात कल मुँह काला करवाती रही है।"

मालिन ने सुना और उस के जैसे सोने सूख गये। काटो तो लहू नही। नीली पीली—उस का अग अग जसे मुड रहा हो।

"उधर रात हुई, इधर ये किसी गुण्डे के साथ बाहर निकल गयी। सारी रात तेरी ड्योढ़ी खुली रही ह। म ने खुद इन आँखों से देखा ड्योढ़ी के बाहर किसी की बाँहों में ये ढेरी हुई पडी थी। मैं बाहर चोकी करने निकली थी और मैं ने वसे का वसा किवाड भिडा लिया। और फिर ये हौले हौले कदम, बाँह में बाँह डाले बाहर खेतों की ओर निकल गये। सारी रात मेरी तो आँख नहीं लगी। बेटिया सब की साँझी होती हैं। यूँ पहले कभी किसी ने अपने मा बाप का मुँह काला नहीं किया। यू कभी किसी ने अपने बडे-बूढ़ों की पत नही उतारी। हम तो कहीं मुँह दिखाने के लिए नही रहे।"

और लाजो छल छल अश्रु रो रही थी। रोये जाती और हथेलियों को मले जाती।

मालिन जैसे पत्थर का पत्थर हो, उसे कुछ सुनाई नही दे रहा था।

और फिर यू बिलखती बिलखती लाजा चली गयी।

लाजो अभी गयी ही थी कि गांव का चौकीदार जुमा पिछवाडे की ओर से उतर आया।

'भाभी! अरी भाभी मालिन!" कब का वा उस के पास खडा उसे बुला रहा था।

"क्या ह जुमा?" जैसे कुएँ में से निकली आवाज हो। मालिन चौकीदार को आँगन में खड़ा देख कर सम्हलने लगी।

'भाभी! बात कहन वाली तो नही पर कल रात बडा जुल्म हुआ हैं इस गाँव में। मैं ने तो बाल सफेद कर लिये चौकीदारी करते हुए, ऐसा अन्धेर मैं ने कभी नही देखा। तेरी बेटी मिन्नी किसी के साथ बरगद क तले मुँह काला करती रही। रात चाँदनी थी लेकिन आकाश बादलो से अटा हुआ था। दो बार मैं दस कदम की दूरी पर इन के पास से गुजर गया। होठा पर होठ जमाये, एक दूसरे को चिमटे, इन को कुछ पता नही लगा। बरगद के तले खडे खडे थक गये और फिर खेत में जा छिपे। मैं तो सारी रात तेरे घर की आ कर रखवाली में बठा रहा हू। खुली ड्योढी, चार दिन इस के ब्याह को रह गय ह। ब्याह वाला घर गहना कपडा से भरा होता ह। सवेर हुई तो मैं यहाँ से हिला। पता नही, कब ये छक मार मार कर लौटी। कमजात, म ने तो इसे गोद खिला खिला कर पाला ह। मेरी बेटी होती तो म इस का गला घोट देता। मैं तो पिछली दीवार फाँद कर आया हूँ। मैं ने सोचा, कोई पूछेगा कि तुम सुबह सुबह किधर चल दिये, तो म क्या जवाब दूँगा?'

मालिन के मुह में जबान नहीं थी, बिट बिट आखें जुमा चौकीदार की ओर देख रही थी।

और जुमा जिस राह आया था उसी राह दीवार को लाँघ कर लौट गया।

जुमा गया और सामने गली में रतना जमीदार दहाड़ता फुकारता सिर जितना ऊचा लट्ठ उठाये उस के आँगन में आ धमका। क्रोध में उबल रहा था।

कहाँ ह तुम्हारी लड़की?' ड्योढ़ी में घुसत ही वो गरजा, 'कहाँ है ये बदजात छिनाल? मरा ही खत रह गया था इसे खराब करने के लिए ?' रतना उछल-उछल पड रहा था। मन मन की सलवातें सुनाता सारा मुहल्ला उस ने इकट्ठा कर लिया। अडोसी-पडोसी मुडरों पर आ खड हुए।

मैं न खुद अपनी आँखो स देखा ह। तडके मैं कुएँ की ओर जा रहा था। मैं न खुद अपनी आँखों स देखा, पहल ये निकली मेरे खेत में से मुकर्रा वाली चुनरी ओढ़ हुए। मैं न सोचा, लडकी शायद बाहर बठन आयी ह। और फिर एक क्षण गुजरा और इस का यार किसी दूसरी ओर से नीचे उतर गया।"

"क्यों झूठ बोलते हो चाचा ?" बिजली की तरह कड़क कर मिन्नी भीड़ को हटाती हुई आगे बढ़ी। देर से वो मन्दिर से लौटी हुजूम के पीछे खड़ी सब कुछ सुन रही थी।

"मैं झूठ बोलता हूँ बदजात ? मैं झूठ बोलता हूँ कुलच्छणी ? ये लाल चूड़ी किस की टूटी थी मेरे खेत में ?' और अपनी चादर के पल्लू में बँधी लाल चूड़ी उस ने मिन्नी की हथेली पर जा रखी। एक आँख झपकने में मिन्नी ने अपनी कलाइया पर चूड़ियों को गिना। ग्यारह थी। और वो ठिठक कर रह गयी। उस की आँखों के सामने अँधेरा छा गया।

और फिर महल्लेवालियाँ आँखो ही आँखो में एक दूसरे को कहने लगी उन्होंने स्वयं मिन्नी को पिछले दिन चूड़ियाँ चलाते देखा था, दस पे ऊपर दो चूड़ियां। लाल रंग चुन कर उस ने निकलवाया था।

लोगा से आंगन भर गया था। और फिर मालिन का समधी आया भीड़ को चीरता हुआ। उस के पीछे मिन्नी की होने वाली सास थी। और उन्होने सारे वो थाल, सारे वो कपड़े, सारे वो नोट, सब वो मुँदरियाँ मालिन के सामने ला पटकी। हक्के-बक्के लोग एक दूसरे के मुँह की ओर देख रहे थे। औरतें बार बार कानों को हाथ लगाती। जवान जहान लडकियाँ मुँह में उँगलिया लिये काट रही थी।

और फिर धड़ाम से किसी के पड़ोस के कुएँ में गिरने की *आवाज़ आयी।* सब की ऊपर की साँस ऊपर और तले की साँस तले रह गयी। लागा ने *आगे-पीछे* देखा, मालिन की गौ जसी सुशील बेटी कही भी नही थी। वो बेटी जिस का ऊँचा बोल किसी ने नही सुना था। सच्चा मोती। जो सुबह शाम भगवान के सामने हाथ जोड़ जोड़ नही थकती थी वो बेटी कही भी नही थी। और लोग एक सास कुएँ की ओर दौड़ पड़े।

मालिन तख्त का तख्ता, वैसी की वसी पड़ी थी। उस का आँगन भाँय भाय कर रहा था। अडोसी पडोसी अल्ले मुहल्ले वाले सारे कुएँ की ओर दौड गये थे। किसी तरह लड़की बच सके।

●

# एक किरण चाँदनी की

बीत गये दिन । पड़ोस के शिवालय में नौजवान पुजारी भजन गा रहा था। आँसुओं से भीगी आवाज में, जिस किसी ने आने का वायदा किया था, रात गुजर गयी थी और कोई नहीं आया था।

मास्टर मुक्खा ने चादर में से अपनी सूख कर तिनका हुई बाँह निकाली और बायीं ओर की कमरे की खिड़की बन्द कर दी। हर रोज मन्दिर का नौजवान पुजारी यह भजन गाता था सारे गाँव की लड़कियाँ और लड़कियों की मायें जैसे खिंची हुई सी मन्दिर आ जाती थीं। तो भी हर रोज सुबह यही भजन वह गाता था जैसे कोई सिसकियाँ ले रहा हो, आहें भर रहा हो। और मास्टर मुक्खा अपनी खिड़की बन्द कर लेता। यह दम्भ था, यह कपट था।

लोग सोचते, मास्टर मुक्खा सठिया गया है। अब उस की किसी बात की ओर कोई ध्यान न देता।

बीत गये दिन भजन बिना रे!'

क्यों?

मास्टर मुक्खा ने अपनी सारी आयु ईश्वर के भय में काटी थी। फूँक फूँक कर हर कदम रखता था। दस बार सोचा और फिर मुँह से कोई बात निकाली।

तो भी मास्टर मुक्खा सोचता, उस की जिन्दगी एक उजाड़ थी और बस! उस का भीतर वैसे का वैसा खाली था जैसा कभी उसे महसूस होता था कई वर्ष पहले। दूर स्मृति के क्षितिज से भी परे की बात है।

और अब मास्टर मुक्खा झुर्रियों की एक पोटली हो गया था। उस की पलकों के बाल पक गये थे, आँखों की नजर धीमी पड़ गयी थी। हर समय परछाइयाँ परछाइयाँ सी दिखाई देती थीं। नित्य लम्बी होती जा रही परछाइयाँ। उस के हाथ अपनेआप काँपने लगते, काँप-काँप कर आप ही आप थम जाते। अब कोई नहीं कहता था—चार दिन और मास्टर जी उठ खड़े होंगे। न डाक्टर, न हकीम और न कोई वैद्य। मास्टर मुक्खा मरने के किनारे है, लेकिन उस की हड्डियों में से जैसे जान न निकल रही हो। पिंजड़े के सारे द्वार खुले थे किन्तु पंछी उड़ने का नाम नहीं ले रहा था।

"बीत गये दिन ।"

हवा के एक झोंके से खिडकी फिर खुल गयी थी। मंदिर के नौजवान पुजारी की आवाज फिर आने लगी थी। ज्यों-ज्यों भजन आगे चलता, ज्यों ज्यों श्रोताओं की भीड बढती—त्यों त्यों मंजीरों की, चिमटा की, करतालों की लय तेज होती जाती, त्यों-त्यों नौजवान पुजारी का स्वर ऊँचा होता जाता "बीत गये दिन, बीत गये दिन"।—भजन की आवाज मास्टर मुक्खा के कानों पर हथौडों की तरह पड रही थी। लेकिन अब उस में सकत नहीं थी कि चादर में से बाँह निकाल कर खिडकी को फिर बंद कर दे।

मास्टर मुक्खा की आंखों के सामने अँधेरा अंधेरा छा गया था।

अँधेरा उस के लिए कोई अपरिचित नहीं था। उस की सारी जिंदगी एक घुप अँधेरी रात की तरह थी—काली सियाह रात। हर कदम जो उस ने उठाया अँधेरे में से अंधेरे में था। एक खाई में से दूसरी खाई में। एक कंद में से दूसरी कंद में। एक तरह के कीचड में से एक और दूसरी तरह के कीचड में। अज्ञान के अंधेरे में से अंधविश्वास के अंधेरे में, अंधविश्वास के अँधेरे में से विश्वासहीनता के अँधेरे में। अंधेरे से उस का नाता पुराना था—मास्टर मुक्खा का, मास्टर मुक्खा के बाप का, मास्टर मुक्खा के बाप के बाप का।

अंधेरा निर्धनता का। अँधेरा निष्फलता का। अँधेरा निराशा का।

"बीत गये दिन ।"

और जिन्दगी बीत गयी था। मास्टर मुक्खा सोचता और जैसे उस के मुँह पर कोई चाँटा दे मारे। उस की आँखें नीची हो जातीं। सारी आयु गाँव के प्राइमरी स्कूल की मास्टरी। एक सीढी वह ऊपर न चढ पाया। कैसे-कैसे उस ने हाथ नहीं जोडे थे। कैसी-कैसी उस ने मिन्नतें नहीं मानी थीं। पर नहीं, मास्टर मुक्खा गाँव के उस टुच्चे से प्राइमरी स्कूल का हेड मास्टर न बन सका। सारी उम्र वह तरसता रहा। यह इच्छा उस की पूरी न हो सकी कि स्कूल के लिए ऊपर से आयी डाक उस के नाम हो। सरकारी लिफाफे को पहले वह खोले, सारी चिट्ठियां पहले वह पढे। फिर कई बातें अपने मन में बस गुप्त रख ले। उस के नीचे काम करने वाला मास्टर बार-बार उस के मुँह की ओर देखे, जैसे सारी उम्र मास्टर मुक्खा अपने ऊपर लगे हेड मास्टर के मुंह की ओर देखता रहा था। कभी स्कूल में कोई विचित्र बात नहीं हुई थी तो भी हमेशा मास्टर मुक्खा को एक खुतखुती सी लगी रहती—यह जानने के लिए कि ऊपर से आये लिफाफे में क्या था! सालों-साल उस ने डाक में अपनी तरक्की के कागजों की प्रतीक्षा की थी। सालों-साल डाक खुलने के समय उस के मुंह पर ईश्वर का नाम बार बार आया था। शहर से निरीक्षण करने के लिए आये अफसरों के मुंह की ओर वह बार-बार देखता कभी कोई उस की तरक्की का जिक्र करे। पर नहीं, और सब बातें करते थे किन्तु इस एक बात को कभी किसी ने चर्चा नहीं की थी। मास्टर मुक्खा

सोचता, वह मेहनत करता था, उस के बाग की सब प्रजा मरा थे, फिर यह अन्याय क्या ? इस में अन्याय की मौन सी बात थी ! गाँव के प्राइमरी स्कूल के दो मास्टर थे—एक बड़ा, एक छोटा। जब तक बड़ा मास्टर बड़ा था छोटे मास्टर को छोटा ही रहना था। पर बड़ा मास्टर बड़ा क्या था ? उस में उस से छोटा था। अक्ल में । अक्ल को औरों छोड़े जा सकता था। और मास्टर मुक्ता जैसे बेबस हो कर रह जाता।

स्कूल में गुलामी, घर में गुलामी। क्योंकि मास्टर मुक्ता स्कूल में छोटा मास्टर था, घर में भी उस को कोई पूछ-ताछ नहीं होती थी। पड़ोस में ही तो बड़ा मास्टर रहता था। जस उस की परछाइ दिन रात उस के आँगन में पड़ रही हो। कोई अच्छा चीज पकती तो पहले पड़ोस में जाती, कोई सौगात बाहर से आती तो पहले बड़ मास्टर जी को भेंट होती। उस की पत्नी जसे बड़े मास्टर की पत्नी की जरखरीद हो। उस के बच्चे बड़ मास्टर का अपने पिता से कहीं ज्यादा सत्कार करते। बच्चों का जब समभाना होता, उन की माँ हमेशा बड़ मास्टर जी का डर बताती। बच्चे मास्टर मुक्ता के थे, हुक्म उन पर पड़ोसी का चलता था। अंधर साइ का ! कोई बात भी हुई !

अँधेरा ! अंधेरा ! ! अंधेरा ! ! !

अभी उजाला नहीं हुआ था और मन्दिर उपासकों से भर गया था। कीर्तन की ध्वनि अपने शिखर पर थी। 'बीत गये दिन बीत गये दिन' की टेक रटते श्रद्धालु दीवाने हो रहे थे !

मास्टर मुक्ता सोचता, उस के दिन कसे बीते थे। और उसे अपनी जिन्दगी एक मरुस्थल की तरह वीरान दिखाई देती। बीहड़ रेगिस्तान, कितना रास्ता वह चल कर आया था ? धूप, तपिश और धूल। और वह अकेला ! हाँ, अकेला ही तो था। उस की पत्नी ?—अभी गुड्ड गुड़ियों से खेलती थी, जब उस का विवाह हो गया। मुहल्ले की बाकी लड़कियों के साथ उसे वह बेरी से बेर ताड़ कर दिया करता था। खुंमियाँ बीनने के लिए साथ ले जाया करता था। एक बार नाले में पानी ज्यादा था और उस ने दूसरी लड़कियों के साथ उस भी उठा कर, बारी बारी से नदी पार करवायी थी। उन दिनों उस की पत्नी की नाक बहुत बहती थी—हर समय जसे लटकती रहती और मक्खियाँ उसे घेरे रहती था। फिर वह नामल की पढ़ाइ के लिए शहर चला गया ! कई कई दिन भूखा रह कर पैसे जोड़ता रहता और जब चार आने हो जाते वह बाइस्कोप देखने जाया करता था। सिनमा देख कर लौटता और घण्टों उदास उदास रुआँसा सा वह पड़ा रहता। उसे कज्जन अच्छी लगती थी। एक बार सपने में उस ने देखा कि वह कज्जन के जूते साफ कर रहा था और पसीने से तर बतर उस की आँख खुल गयी। उसे अपनी हथेलियों में से पालिश की बू आ रही थी। कभी यह सपना नहीं आया था कज्जन उस की ओर देख कर मुस्करा रही हो। कभी यह सपना नहीं आया था, उस का हाथ कज्जन के हाथ में हो जैसे फ़िल्म में बार बार किसी का हाथ वह पकड़ लिया करती थी।

हमेशा चार वक्त भूखा रहता और फिर वही सिनेमा जा सकता। लेकिन वह सपना कभी नहीं आया था। शहर से मामल पास कर के लोग और उस की नौकरी लग गयी। नौकरी लगी और फिर बच्चे होने शुरू हो गये। एक के बाद एक। बेटियाँ, बेटे। गोरे, काले, खूबसूरत, बदसूरत। दस बच्चों का वह बाप बन गया था। और फिर एक दिन गली में से गुजरते हुए मास्टर मुक्खा ने देखा—हेड मास्टर आगन में बँधी अपनी चिट्टी गाय की थूथनी चूम रहा था। जैसे कोई किसी औरत के गले में बाँह डाल कर उस के होंठो के साथ अपने होंठ जोड दे। और मास्टर मुक्खा को खयाल आया, उस ने तो अपनी औरत को कभी एक बार भी नहीं चूमा था। सारी उम्र न कभी उस ने अपनी पत्नी को चूमा, न उस की पत्नी ने कभी उसे चूमा था और वह बेटे बेटियां वाले हो गये थे। पोते पोतियों वाले हो गये थे। और मास्टर मुक्खा के मुँह का स्वाद फीका-फीका हो गया। उस की आखों के सामने चक्कर-चक्कर अँधेरा-अँधेरा छा गया।

अँधेरा जितनी देर रहता, पड़ोस में मन्दिर का पुजारी 'बीत गये दिन ...!' भजन के बोल गाता रहता। आगे आगे स्वयं गाता, उस के पीछे उस के श्रद्धालु यही बोल रटते रहते। इस में कच्ची आवाजें होती, कुँआरी आवाजें होती। जवान जहान लड़कियों की, माओं की बच्चों वाली, बच्चों की प्रतीक्षा में। और बूढ़ी आवाजें—मर्दों की, औरतों की। जिंदगी जिन के हाथ से खिसक गयी थी और अब अँधेरा-अँधेरा रह गया था। अधेरा और ठोकरें।

अँधेरा हार और थकन, कितनी देर से मास्टर मुक्खा और इन तीनों का साथ था। सारी उम्र वह सहता रहा लेकिन अब और सहने की उस में सकत नहीं रही थी। अब उस ने हथियार डाल दिये थे। कोई भी तो नहीं था। उस का बड़ा बेटा?—उस ने सोचा था, उसे पढ़ा कर हेड मास्टर बनायेगा। पर नहीं न वह पढ़ा न वह हेड मास्टर बना। शहर में आगे दाल की दुकान करता था। उस का छोटा बेटा?—उस ने सोचा, उसे पढ़ा कर हेड मास्टर बनायेगा। पर नहीं वह पढ़ा तो सही पर नालायक ने बाप की न सुनी और पटवारी बन गया। उस से अगला उस से अगला उस से अगला कई पढ़े नहीं जो पढ़े उन में से हेड मास्टर कोई भी न बन सका।

हार कर मास्टर मुक्खा ने हेड मास्टर के बेटे के साथ अपनी बड़ी बेटी की शादी की बात चलायी। पहले तो हेड मास्टर की बदमिजाज औरत परों पर पानी न पड़ने देती फिर लाख मिन्नतें करवा कर, सैंकड़ों सिफारिशें डलवा कर मानी, लेकिन बड़ी से छोटी लड़की के लिए। बड़ी लड़की का रंग जरा मैला था। यूँ बड़ी लड़की को घर बिठला कर उस से छोटी का ब्याह कर देना कोई आम की बात नहीं थी तो भी मास्टर मुक्खा मान गया। उस की गोरी चिट्टी बेटी प्रीति का ब्याह हेड मास्टर के लड़के से होना निश्चित हो गया। मास्टर मुक्खा दिन रात तैयारियों में लगा रहता। कहीं कोई कसर न रह जाये। दस दिन ब्याह को रहते थे सारा दहेज तैयार था। बारात की खातिर के लिए सारे प्रबन्ध हो चुके थे कि लड़की को एक दिन बुखार आ गया। इसके

दिन बुखार उस के सिर को चढ़ गया। तीसरे दिन लड़की खतम हो गयी। मास्टर मुक्खा ने अपनी जवान जहान बेटी की इस कहर भरी मौत पर सिर के बाल नोच लिये। उस की पत्नी लड़की की शादी के लिए इकट्ठी की हुई रसद को देखती और उस का कलेजा डूब डूब जाता।

और फिर उन्होंने लाख जतन किये, हेड मास्टर के बेटे के साथ उन की किसी और बेटी का ब्याह हो जाये। सारी तैयारी हुई पड़ी थी। लेकिन हेड मास्टर की घर वाली नहीं मानी। और सारी उम्र मास्टर मुक्खा उन के घर मातहतों की तरह जाता रहा। स्कूल में नौकरी, घर में चाकरी। एक जरा सी साध उस ने हेड मास्टरों के साथ डालनी चाही थी उस की मुँहकी खानी पड़ी।

और फिर मास्टर मुक्खा ने हार मान ली। अब मास्टर मुक्खा का कोई भी नहीं था। बेटियाँ-बेटे सब ब्याह गये थे। सारे अपने अपने घर थे। उन की माँ कभी किसी बेटे के पास कभी किसी बेटे के पास चली जाती। मास्टर मुक्खा के पास अब कुछ भी नहीं था। दवाई की शीशियाँ थीं और कुछ भी नहीं।

मास्टर मुक्खा अकेला था।

बाहर गली में हेड मास्टर की पत्नी हर रोज की तरह मुँह सिर लपेट कर मन्दिर जा रही थी। मास्टर मुक्खा उसे देख नहीं सकता था, किन्तु बदमिज़ाज औरत की पग चाप तो पहचानता था। 'बीत गये दिन भजन बिना' मन्दिर के पुजारी की आवाज़ सुन कर हर रोज सुबह तड़के कंघी पट्टी कर घर से निकल जाती।

और मास्टर मुक्खा सोचता अब तो वह मन्दिर भी नहीं जा सकता। अब यदि वह चाहे भी तो उस में ताकत नहीं थी कि चल कर शिवालय तक पहुँच सके। कोई समय था वह दोनों वक्त मन्दिर जाया करता था। सुबह शाम पूजा के लिए हाज़िर होता। सुबह मन्दिर से हो कर स्कूल जाता सांझ को मन्दिर के बाद नम्बरदार के घर उस की जवान जहान लड़की को पढ़ाने जाता। जिस लड़के के साथ लड़की की मंगनी हुई थी वह लड़का विलायत गया हुआ था। और घरवालों ने सोचा वह लड़की को चार अक्षर पढ़ा ही दें विलायत पास लड़के के साथ अनपढ़ लड़की की कैसे निभेगी। और मास्टर मुक्खा कितने अरसे उस लड़की को पढ़ाने जाता रहा। न लड़का विलायत से लौटता था न पढ़ाई खत्म होती थी। लड़का विलायत से नहीं लौटा था इधर लड़की पर अटूट यौवन उतर आया था। मास्टर मुक्खा ने चाहे लड़की को कभी देखा नहीं था—मुसलमान नम्बरदार के घर पर्दा जो होता था—किन्तु जवान-जहान लड़की की आवाज़ तो वह पहचानता था जवान जहान लड़की की खुशबू तो उसे आती रहती थी। पर्दे वाले घर में मास्टर मुक्खा और लड़की के दर्मियान एक चादर तान दी जाती। मास्टर मुक्खा इधर बैठ कर पढ़ाता लड़की चादर के उस ओर बैठ कर पढ़ती। मास्टर मुक्खा ने कभी लड़की को देखा नहीं था। हाँ एक बार घर के काम की कापी पकड़ाते हुए उस की लम्बी, गोरी नाज़ुक उँगलियों की एक झलक सी उसे मिली थी। जैसे

बर्फी की डलियाँ काटी हुई हो। मास्टर मुक्खा को सारी उम्र बर्फी अच्छी लगती रही थी। और फिर एक दिन मन्दिर में उसे कुछ देर हो गयी थी। कोई तीज-त्यौहार था। नम्बरदार के घर पत्राने के लिए वह लेट पहुँचा। आँगन में उस ने पाँव रखा ही था कि भीतर से उसे आवाज आयी—"क्या मास्टर जी मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो?" माँ अपनी बेटी को डाँट रही थी।

और फिर किसी ने जैसे धीरे से उसे कहा, मास्टर जी बाहर आये खड़े थे। और वह सहसा चुप हो गयी। मास्टर मुक्खा को उस दिन बड़ी शर्म आयी। पर्दे वाले घर खँखार कर जाना चाहिए। लेकिन वह तो जैसे हमेशा यूँ करना भूल जाता था।

कुछ दिन बाद विलायत गया लड़का लौट आया। फिर नम्बरदार की एक एक बेटी का ब्याह हुआ। दस दिन सारे के सारे गाँव में रौनक लगी रही। बाजे, आतिशबाज़ियाँ और पकवान।

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो ?

और फिर वह डोली में बैठ कर चली गयी।

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो ?'

मास्टर मुक्खा ने सुना था, विदा के समय लड़की लहू के आँसू रोयी थी।

क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो ?'

यूँ गाँव की कोई लड़की ब्याह के समय नहीं रोयी थी जैसे नम्बरदार की बेटी रोयी थी।

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो ?'

और मास्टर मुक्खा को लगा जैसे चाँदनी की एक किरण सामने झरोखे में से फूट कर उस की पलकों पर आ लगी हो।

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो !'

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो !!'

'क्या मास्टर जी, मास्टर जी हर वक्त करती रहती हो !!!'

और मास्टर मुक्खा का तकिया आँसुओं से भीग गया।

धूप निकल आयी थी तो भी मास्टर मुक्खा के कमरे से कोई आवाज नहीं आ रही थी। किसी ने अन्दर जा कर देखा, आँसू मास्टर मुक्खा के पलकों में सूख चुके थे। और पलकों के पीछे मास्टर मुक्खा नहीं था। पंछी उड़ गया था।

●

# बाप के बाप के बाप का कसूर

मैजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण उपन्यास पढ़ रहा था। पिछले कुछ सालों में एक से अधिक बार पढ़ कर, उस ने अपनी पसन्द मान ली। कभी पीठ सीधी करने लगता, कभी बदल लिया। कभी कहानी के शब्दों को आन्सुओं से धोने लगता। बार-बार मैजिस्ट्रेट उपन्यास की घटना को सोचता बार-बार हैरान होता।

अजीब बात थी।

उपन्यास के नायक की पत्नी मर चुकी थी। अकेला मन बड़ा परेशान था विशेषकर उसे खाना पकाने की बड़ी तकलीफ थी। सोच सोच कर उस ने सन्तो से कहा, उस के लिए सुबह शाम दो रोटियाँ सेंक दिया कर। सन्तो उस के यहाँ झाड़ू बुहारने आया करती थी। सन्तो ने सुना और हँसने लगी। हँसती जाए, हँसती जाये। हँस-हँस कर उस के गाल लाल सुर्ख हो गए। उस की बड़ी-बड़ी काली आँखें मिच गयीं। उस के बालों की आवारा लटें उस के मुँह पर पड़ने लगी।

"साहब! मैं अछूत आप के चौके में कैसे जा सकती हूँ?' जब उस ने ज्यादा आग्रह किया, सन्तो ने घर के मालिक को समझाया।

"पर क्या नहीं?" वह जिद कर रहा था।

"साहब! हमारी बिरादरी क्या कहेगी?' सन्तो ने अपनी मजबूरी जतलायी।

और फिर वह चुप हो गया।

अपनी बिरादरी को वह समझा सकता था। अगर वह न समझते उन की अवहेलना कर सकता था। पर सन्तो की बिरादरी को कैसे मनाए? एक अछूत को क्या एतराज हो सकता था, ऊँची जात वाले किसी को रोटी पका दे। उसे यह बात समझ में नहीं आ रही थी।

और फिर सुबह शाम जब सन्तो उस घर में आती उस की पलकों के पीछे चित्रित होता—'साहब! मैं तो आप का कहा कभी न टालूँ पर मैं मजबूर हूँ। हमारी यह बिरादरी बड़ी सख्त है।'

और सन्तो की मजबूरी को पहचान सन्तो उसे अच्छी लगने लगी। ज्यों ज्यों दिन बीतते, उसे वह और अच्छी अच्छी लगती। उस की आँखों में हमेशा एक सहानुभूति उस के लिए झांक रही होती। बेंत की तरह लचक लचक पड़ती, ऊंची लम्बी

सन्ती हँसती हँसती आती, गाती गाती अपना काम करती, काम कर के झाडू सिर पर टिकाये ठुमक-ठुमक चली जाती। उस के हाथ में हर रोज कुछ खाने के लिए होता जो उसे इस घर में से मिलता था। पिछले कई दिनों से, कुछ न कुछ बचा-खुचा जरूर उसे यहां से मिल जाता। कभी कोई मिठाई कभी कोई फल का दाना। और हर रोज काम के बाद कोई चीज ले कर सन्ती कस उस की ओर देखती थी जैसे खिली हुई ज्वार की पिटारी हो।

"साहब! तेरा आँगन बसता रहे।" हर रोज सन्ती उसे दुआएँ देती और पायल की झंकार का संगीत बिखेरती चली जाती।

फिर एक दिन उस की अजलि में खाँड की रेवड़ियाँ डालते हुए इस की नजरें जैसे उस के मोती के दानों जैसे दाँतों में गड कर रह गयी। रेवड़ियाँ उँडेल कर इस के हाथ जैसे सन्ती के हाथों में रुक कर रह गये। और फिर सन्ती का आकुल शरीर इस की तड़प रही बाँहों में ढेरी हो गया।

होठों पर होठ, पलकों पर पलकें, गालों पर गाल, इस की बाँहों में लिपटी सन्ती एक उन्माद में कूकी—"साहब! अब तुम मुझे मार डालो।" हमेशा एक नशे में बस यही कहती— साहब! अब तुम मुझे मार डालो।' जिन्दगी के उस स्वाद शिखर पर वह खत्म हो जाना चाहती थी।

किंतु उस 'पर' के लिए रोटी फिर भी सन्ती नहीं पका सकती थी। लोग क्या कहेंगे? उस की बिरादरी वाले तो उस की चमड़ी उधेड़ दें अगर उन्हें पता लग जाये कि वह ऊंची जात वाले किसी के चौके में घुसी है।

बिलकुल अकेले उस घर में सन्ती सुबह शाम आती, हर चीज को सँभालती-सँवारती, बिस्तर की चादरें, तकियों के गिलाफ बदलती, परदों की सिलवटों को ठीक करती। जो चाहता रेडियो चला देती, जो चाहता रेडियो बन्द कर देती। गुसलखाने में खुद नहाती, अपने महबूब की पीठ मल मल कर उसे नहलाती। कई बार इस के दाँतों में से बिस्कुट छीन कर अपने मुँह में डाल लेती। सब से अच्छा लगता जब खुद कुछ खा रहा होता, और अपना चम्मच वह सन्ती के दाँतों में लगा रखता। सन्ती अपने मुँह को अपने दुपट्टे से साफ़ करती, उस के नयनों में देख कर रह जाती। इतना प्यार, इतना प्यार!

लेकिन सन्ती उस के चौके में कभी पैर न रखती। ड्योढ़ी का दरवाजा बन्द होता तो भी इस के चौके की ओर सन्ती कभी न जाती। यूँ उस का जन्म वह भ्रष्ट नहीं करेगी। यूँ अपनी माँ की मां की माँ की मर्यादा वह नहीं तोड़ेगी।

मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण के मुँह का स्वाद कसैला कसैला हो रहा था। किस तरह का यह हमारा समाज था।

और इधर मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण की बिरादरी वाले कई दिनों से सरकार से लिखा-पढ़ी कर रहे थे कि उन्हें पिछड़ी हुई श्रेणियों की सूची में शामिल कर लिया

जाये। इस सूची में शामिल हो कर उन्हें कई सुविधायें प्राप्त हो जाती थीं। उन के बच्चों की स्कूल कालेज की पढ़ाई मुफ्त हो जायगी। उन को नौकरियाँ जल्दी मिल जायेंगी। मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण खुद भी चाह रहा था जज बन जाये। पुराना इतिहास खोज कर, सालों पुराने सरकारी कागज़ों को टटोल कर उन्होंने यह साबित किया था कि वे लोग वास्तव में हरिजन थे। कई वर्ष हुए किसी ने भूल से उन का नाम इस सूची में से निकाल दिया था।

सरकार कहती थी, वह अछूत नहीं। मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण की जात वाले कहते थे, वे अछूत हैं। और आखिर उन्होंने मुकदमा जीत लिया। सब रियायतें जो हरिजनों को मिलती थीं इन की जात वालों को भी मिलने लगीं। चार दिन में और मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण की तरक्की हो गयी। इस छोटी उम्र में सैशन जज! लोग सोचते वह चाहे तो सुप्रीम कोर्ट तक पहुँच जायगा। अभी तो उस का ब्याह भी नहीं हुआ था। कालेज पास करने के बाद उस ने इम्तिहान दिया और नौकरी जैसे उस को ढूंढ़ती हुई उस के पीछे-पीछे चली आयी।

और फिर सैशन जज मुरली कृष्ण ने लड़कियों के कालेज की एक प्रिंसिपल प्रोफेसर के साथ शादी कर ली। जानकी अत्यन्त सुन्दर लड़की थी—विलायत पास। जात की ब्राह्मण। लड़की के माँ बाप ने सुना और सिर पीट कर रह गये। वे चाहे पढ़े लिखे थे पर जात बिरादरी की कुछ तो मर्यादा होती है। बड़ा शोर मचा, बड़ा तूफान उठा, लेकिन लड़की अपने फैसले पर अटल रही। और आखिर उस ने अपनी मन मर्जी कर ली। इस शादी से उस के माँ बाप, बहन भाई सब छूट गये।

सुहाग रात जानकी के होठों पर होंठ रख मुरली कृष्ण ने धीरे से उस के कान में अपने मन की बात कही—"मैं ने सोचा था, मैं शादी करूँगा तो एक ब्राह्मण लड़की के साथ।"

"अपने बाप के बाप के बाप का बदला लेने के लिए!" हँसते हुए जानकी ने उसे छेड़ा और फिर उसे प्यार करने लगी।

जानकी अपने पति से अत्यन्त प्रेम करती थी। इतने वर्ष जैसे रोक रोक कर उस ने अपनी मुहब्बत को रखा। अपने प्रियतम पर उस ने सब कुछ लुटा दिया। एक एक अरमान उस का पूरा किया।

अभी साल भी पूरा नहीं गुज़रा था उन की शादी को हुए, कि उन के यहाँ एक बच्चा हुआ। गोरी चिट्टी खिलौने का खिलौना, उन की बेटी हूबहू अपनी माँ की शक्ल की थी। सड़क पर जा रहे राहगुज़र खड़े हो हो कर बच्ची को लाड करने लगते। फिर एक और बच्चा। यह लड़का था। जैसे चाँद का टुकड़ा हो। एक लड़की, एक लड़का—जानकी खुश थी। जानकी का घरवाला अत्यन्त खुश था।

एक वर्ष दो वर्ष, फिर जानकी के माँ बाप राज़ी हो गये। बेटी कैसे छोड़ी जा सकती थी। उन की बिरादरी ने भी जैसे इस रिश्ते को स्वीकार कर लिया। अब इस

विवाह का घर घर, गली गली चर्चा नही होती थी। अब जानकी के हठ का जिक्र कर के उस के साथ की लडकियाँ काना को हाथ नही लगाती थी। जिस समाज म वह बठते उठते थे, वह समाज कितनी जल्दी बदल रहा था, कितनी रवादारी उस में आ रही थी।

और जानकी का जीवन खुशी खुशी गुजरने लगा। दो बच्चों की माँ, उस ने कभी का कालेज पढाना छोड दिया था। सारा दिन उस का बच्चा की देख भाल में लग जाता, बच्चो की पिता की खातिर में गुजर जाता। सिविल लाइन में सब से प्यारा उस का बँगला था, उन के नौकर सलीके वाले, उन का बागीचा सुन्दर, मालिक खुश, हर कोई मुसकान बिखेर रहा था।

उन दिनों मुरली कृष्ण के पास एक अजीब मुकदमा आया हुआ था। जवान जहान एक हरिजन लडकी ने अपने जमीदार के बेटे का गला घोट दिया था। ऊँची लम्बी चमारिन, जसे चट्टान को काट कर किसी न उस का अग-अग गढा हा। उस के चेहरे से नजर फिसल फिसल जाती। बडी-बडी शराबी आखें, खुला चौडा माथा, मट मले से गालों में से जैसे लाला फूट पड रही थी। अटूट जवानी लडकी पर उतरी हुई थी।

नीचे हर किसी का कहती रही—"मैं ने इस लडके को हत्या की ह, पर क्या मैं ने इसे मारा, इस का जवाब म ऊपर जा कर दूँगी।"

और उस लडकी की कहानी सुन कर मुरली कृष्ण के पाव के नीचे स जमीन निकल गयी।

"म खेतो में काम कर रही थी कि जमीदार के बेटे ने मुझे पीछे से आ कर पकड लिया। हल्की हल्की फुहार पड कर हटी थी। हरी-हरी घास पर ताजी ताजी पडी वर्षा की बूदें, जसे शबनम के मोती किसी ने पिरोये हा। मैं कहती रही—सरकार, मैं चमारिन हूँ! सरकार, मैं चमारिन हूँ। पर इस ने मेरी एक न सुनी, और वैसी की वैसी मुझे घास पर गिरा दिया। जमीदार का बेटा, मै इसे इनकार भी कसे करती। पता नही कितनी देर हो गयी, हम वसे के वसे पडे हुए थे। और फिर साझ हो गयी। मुझे लगा जसे मेरी आँखें मुद मुँद जा रही ह।' एक हिलोर सी में आ कर मैं कह रही थी—'मेरे सरकार, तुम मरी दँतुलिया का भी चूम ले। मेरे सरकार अब तू मेरी दतुलियों को भी चूम ले।' मेरे होठों को जस आग लगी थी। पर यह मेरा मुँह नही चूम रहा था। बार बार म मुँह इस के मुह के पास ले जाती, अपना मुँह यह परे-परे कर लेता और फिर पता नही मुझे क्या हुआ। मरी आखा में एक वहशत सी आयी। मैं ने अपन दाना हाथो से इस के गले को पकड लिया। गले का वसे का वसा पकडे मैं इसे चूमने लगी। चूमती गयी चूमती गयी, चूमती गयी। इस के होठा को, इस के दांतों को, इस की आँखो को। जब इस का गला मैं ने छोडा, यह ठण्डा हो चुका था।"

मुरली कृष्ण ने बडे बडे मुकदमे सुने थे, किन्तु इस तरह का मुकदमा उस की

जाये। इस सूची म शामिल हो कर उन्हें कई सुविधाएँ प्राप्त हो जाती था। उन के बच्चा की स्कूल कालेज की पढ़ाई मुफ्त हो जायेगी। उन को नौकरियाँ जल्दी मिल जायेंगी। मैजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण सुद भी चाहे सैशन जज बन जाये। पुराना इतिहास खोज कर, सालों पुराने सरकारी कागजों का टटोल कर उन्होंने यह साबित किया था कि व लोग वास्तव में हरिजन थ। कई वष हुए किसी ने भूल से उन का नाम इस सूची में से निकाल दिया था।

सरकार कहती थी, वह अछूत नहीं। मजिस्ट्रट मुरली कृष्ण को जाज वाल कहते थे, वे अछूत ह। और आखिर उन्होंने मुकद्दमा जीत लिया। सब रियायत जो हरिजनों को मिलती थी, इन की जात वाला को भी मिलने लगी। चार दिन, और मजिस्ट्रेट मुरली कृष्ण की तरक्की हो गयी। इस छोटी उम्र में सैशन जज! लोग सोचते, वह चाहे तो सुप्रीम कोर्ट तक पहुँच जायेगा। अभी तो उस का ब्याह भी नहीं हुआ था। कालेज पास करने के बाद उस ने इम्तिहान दिया, और नौकरी जसे उस को ढूँढ़ती हुई उस के पीछे-पीछे चली आयी।

और फिर सशन जज मुरली कृष्ण न लड़कियों के कालेज की एक प्रिंसिपल प्रोफेसर के साथ शादी कर ली। जानकी अत्यन्त सुन्दर लड़की थी—विलायत पास। जात की ब्राह्मण। लड़की के माँ बाप ने सुना और सिर पीट कर रह गय। व चाह पढ़े लिखे थे पर जात बिरादरी की कुछ तो मर्यादा होती ह। बड़ा शोर मचा बड़ा तूफान उठा, लकिन लड़की अपने फसले पर अटल रही। और आखिर उस ने अपनी मन मर्जी कर ली। इस शादी से उस के माँ-बाप बहन भाई सब छूट गय।

सुहाग रात जानकी के होठों पर होठ रखे मुरली कृष्ण ने धीरे से उस के कान में अपने मन की बात कही—"म ने सोचा था, मैं शादी करूँगा तो एक ब्राह्मण लड़की के साथ।"

'अपने बाप के बाप के बाप का बदला लेन के लिए!" हँसते हुए जानकी ने उसे छेड़ा और फिर उसे प्यार करने लगी।

जानकी अपने पति से अत्यन्त प्रेम करती थी। इतन वष जस रोक रोक कर उस ने अपनी मुहब्बत को रखा। अपने प्रियतम पर उस ने सब कुछ लुटा दिया। एक एक अरमान उस का पूरा किया।

अभी साल भी पूरा नहीं गुजरा था उन की शादी को हुए कि उन के यहाँ एक बच्चा हुआ। गोरी चिट्टी, खिलौने का खिलौना, उन की बेटी हूबहू अपना माँ की शक्ल की थी। सड़क पर जा रहे राहगुजर खड़े हो हो कर बच्ची को लाड करने लगते। फिर एक और बच्चा। यह लड़का था। जसे चाँद का टुकड़ा हो। एक लड़की, एक लड़का—जानकी खुश थी। जानकी का घरवाला अत्यन्त खुश था।

एक वष दो वष, फिर जानकी के माँ बाप राजी हो गये। बेटी कसे छोड़ी जा सकती था। उन की बिरादरी न भी जसे इस रिश्ते को स्वीकार कर लिया। अब इस

विवाह का घर घर, गली गली चर्चा नहीं होती थी। अब जानकी के हठ का ज़िक्र कर के उस के साथ की लडकियाँ माना को हाथ नहीं लगाती थी। जिस समाज में वह बठते-उठते थे, वह समाज कितनी जल्दी बदल रहा था, कितनी रवादारी उस में आ रही थी।

और जानकी का जीवन खुशी खुशी गुजरने लगा। दो बच्चा की माँ, उस ने कभी का कॉलेज पढ़ाना छोड दिया था। सारा दिन उस का बच्चों की देख भाल में लग जाता, बच्चों की पिता की खातिर में गुजर जाता। सिविल-लाइन में सब से प्यारा उस का बँगला था, उन के नौकर सलीके वाले, उन का बाग़ीचा सुन्दर, मालिक खुश, हर कोई मुसकान बिखेर रहा था।

उन दिनों मुरली कृष्ण के पास एक अजीब मुकदमा आया हुआ था। जवान जहान एक हरिजन लडकी ने अपने ज़मींदार के बेटे का गला घोंट दिया था। ऊँची लम्बी चमारिन, जस चट्टान को काट कर किसी ने उस का अंग-अंग गढा हो। उस के चेहरे से नज़र फिसल फिसल जाती। बडी-बडी शराबी आँखें, खुला चौडा माथा, मट मले से गालों में से जैसे लाली फूट पड रही थी। अटट जवानी लडकी पर उतरी हुई थी।

नीचे हर किसी को कहती रही—"मैं ने इस लडके का हत्या की है, पर क्या मैं ने इसे मारा, इस का जवाब म ऊपर जा कर दूँगी।"

और उस लडकी की कहानी सुन कर मुरली कृष्ण के पाव के नीचे से ज़मीन निकल गयी।

"म खेतों में काम कर रही थी कि ज़मीदार के बेटे ने मुझे पीछे से आ कर पकड लिया। हलकी हलकी फुहार पड कर हटी थी। हरी-हरी घास पर ताज़ी ताज़ी पड़ी वर्षा की बूँदें, जैसे शबनम के मोती किसी ने पिरोये हो। म कहती रही— सरकार, मैं चमारिन हूँ! सरकार, मैं चमारिन हूँ। पर इस ने मेरी एक न सुनी, और वैसी की वसी मुझे घास पर गिरा दिया। ज़मीदार का बेटा, मैं इसे इनकार भी कैसे करती। पता नही कितनी देर हो गयी, हम वसे के वैसे पडे हुए थे। और फिर साँझ हो गयी। मुझे लगा जसे मेरी आँखें मुँद मुँद जा रही ह।' एक हिलोर सी में आ कर मैं कह रही थी–'मेरे सरकार, तुम मेरी दतुलियो को भी चूम ले। मेरे सरकार अब तू मेरी दँतुलियो को भी चूम ले।' मेरे होंठों को जैसे आग लगी थी। पर यह मरा मुह नही चूम रहा था। बार बार म मुँह इस के मुँह के पास ले जाती, अपना मुँह यह परे-परे कर लेता और फिर पता नही मुझे क्या हुआ। मेरी आँखो में एक वहशत सी आयी। मैं ने अपने दोना हाथों से इस के गले को पकड लिया। गले का वस का वसा पकडे मैं इसे चूमने लगी। चूमती गयी चूमती गयी, चूमती गयी। इस के होंठों को, इस के दाँतों को इस की आँखो को। जब इस का गला मैं ने छोडा, यह ठण्डा हो चुका था।"

मुरली कृष्ण ने बडे बडे मुक़दमे सुने थे, किन्तु इस तरह का मुक़दमा उस की

गुजरा से पहले कभी नहीं गुजरा था। कचहरी में, कचहरी से लौट कर घर अकसर उस के कानों में धर्मपत्नि का यह बोल गूँजने लगते—'मेरे सरकार तुम मेरी अँगुलियाँ को चूम ले। मेरे सरकार अब तू मेरी अँगुलियों को चूम ले। मेरे हाथों को जैसे आग लगी थी। पर वह मेरा मुह नहीं चूम रहा था।'

वह दिन और यह दिन, मुरली कृष्ण से अपनी पत्नी का मुँह न चूमा जाता। हर क्षण, हर पल वह उस से दूर-दूर हो रहा था। उसे कुछ समझ न आती, उस से अपने बच्चों की माँ की ओर देखा न जाता। जानकी हैरान थी उस के घरवाले को यह क्या हो गया था। हर वक्त उदास-उदास, हर वक्त गुम-गुम। न घर में कोई दिलचस्पी, न बच्चों में कोई दिलचस्पी, न बच्चों की माँ में कोई दिलचस्पी। हफ्ता-दो हफ्ता, महीना-दो महीना और फिर वर्ष बीतने लगे। जानकी हर कोशिश कर चुकी थी किन्तु उसे कोई कामयाबी नहीं मिली।

और फिर उसे पता लग गया, उस के पति का फालतू समय कहाँ बीतता था। क्या उस का मन उस से दूर दूर हो रहा था। पहले जानकी को केवल शक ही था, कुछ देर उस ने पीछा किया और फिर उस का शक यकीन में तबदील हो गया।

शहर के सरकारी स्कूल की कोई उस्तानी थी।

जानकी को चारों कपड़े आग लग गयी।

साँवला रंग उस्तानी जात की हरिजन थी।

जानकी सोचती वह अपनआप को कुछ कर लेगी।

और फिर जानकी रो रो कर थक गयी। फरियादें कर-कर के हार गयी किस मुँह से वह लौट कर माँ बाप के जाय, किन्तु उस का पति टस से मस नहीं हुआ। न उसे बच्चों का खयाल था, न बच्चों की माँ का कोई डर था। हर रोज, हर रोज वह उन से कोसों दूर हो रहा था।

जानकी सोचती उस का मन यदि उसे छोड़ दे तो वह अलग रह लेगी। फिर नौकरी कर के अपने बच्चों को पाल लेगी। लेकिन, न उसे वह छोड़ता था, न उसे मुँह लगाता था। हर शाम उस की स्कूल की उस उस्तानी के यहाँ गुजरती थी। जानकी जैसे सूली पर चढ़ी हो। जानकी सोचती, किस किस की वह सजा भुगत रही थी। आखिर उस का कसूर क्या था?

●

# टेढ़ी लकीरें

"गोनी तू सो गया ?" बाहर अपने घरवाले के पाँव की आहट सुन कर गोनी की माँ ने धीरे से उस से पूछा। गोनी सोया नही था, आँखें मूँदे निश्चल पडा था।

गोनी की माँ ने ईश्वर का लाख-लाख शुक्र किया। लडका जाग नही रहा था। हमेशा पाव की आहट से पहचान जाती जब उस का मद दारू पी कर आता था। लड-खडा रहे कदम ठक, ठिठक ठिठक, ठिठक ठक ठक। एक तो कदम डगमगा रहे, दूसरे एक पर एक गन्दी गालियाँ बक रहा होता। इधर गली में घुसता, उधर अपनी घरवाली को सलवातें सुनाना शुरू कर देता "हरामजादी, छिनाल, मैं दारू क्यों न पिऊँ ? एक को खा चुकी है डायन, अब मुझे डकारना चाहती है। दारू कोई क्यो न पिये ?" और गोबिन्दी सोचती वह कब उसे दारू पीने से रोकती थी। वह तो बस उस से बात नही करती थी। जिस दिन वह यूँ शराब पी कर घर लौटता उस से उस की ओर देखा नही जाता था। गोविन्दी को अपने मद से उस रात बडा डर लगता था, अग अग उस का कापता रहता। डर लगने वाली तो बात ही थी। जहाँ होता चाटा दे मारता। जहा होता घूँसा दे मारता। और फिर कैसी-कैसी गालियाँ बकता था। उस के भाई को बख्शता, न उस के बाप को। इतनी गन्दी गालिया इतनी गन्दी गालियाँ, वह अपने कानों में उँगलियाँ दे लेती।

गोविन्दी लाख लाख शुक्र कर रही थी, उस का बेटा सो चुका था। लडका सयाना हो रहा था। अब उस के सामने अपने मद से मार खाना उसे बडा अजीब लगता था। और फिर गोनी कैसे उस से कुरेद-कुरेद कर बातें पूछता था। छोटे छोटे सवाल करता जाता और फिर उस की मा से कोई जवाब न बन पडता।

"गोनी तू सो गया है ?" गोबिन्दी ने फिर निश्चिन्त होना चाहा। बच्चा बीर-बहूटी बना वैसे का वैसा पडा रहा।

"हम जो नही सोये, बादशाहो !" अन्दर घुसते ही उस ने हिचकी ली और बाजार के गुण्डों की तरह आँख मारते हुए गोबिन्दी को छेडा।

गोविन्दी चुप रही। उस में से आ रही दारू की बू से जैसे उस की नाक जल रही हो। लटका हुआ होठ फटे फटे डेले शूलों की तरह तीखे खडे बाल। आज तो पहले से भी कही अधिक पी कर आया था।

"तेरी माँ का मार जो अभी नही सोया।" गोबिन्दी के मद ने उसे ठोकर दे मारी। चुपचाप उठ कर अपने पाँव में चप्पल अटा रही थी कि उसे एक जोर की लात पडी। वह गरजा, 'परात के नीचे रखी रोटी निकाल कर दे।" और अचानक यू पीछे से लात पडने पर गोबिन्दी सामने चौके में औंधी जा गिरी। हमेशा की तरह उस ने आवाज नही निकाली, कहीं गोनी न जाग जाये, बराबर की खोली वाले क्या सोचेंगे। और हमेशा की तरह उस के मन को इस पर और गुस्सा आया, बोलती क्या नही थी। और फिर लातों से, घूँसा से उस ने उसे पीज कर रख दिया। गोनी ने धीरे से आँखें खाली। चौके में निढाल पडी मार खा रही अपनी माँ को एक नजर देखा और फिर वैसी की वैसी पलकें मूद ली। गोनी का दिल थर थर काँप रहा था। एक बार यूँ ही उस की माँ की पिटाई हो रही थी और वह कही बाहर से खेलता-खलता घर लौटा। खोली में उस ने पाँव ही रखा था कि उस के बाप ने उसे भी पीटना शुरू कर दिया, यूँ हक्का-बक्का क्या देख रहा था।

पर वह तो इस का पहला बापू था। इस का अपना पिता दारू नही पीता था लेकिन इस की माँ को ठीक ऐसे ही पीटता था। कभी लातो से, कभी घूँसो से। दारू नही पीता था लेकिन उसे जुए की लत थी। जिस दिन जीत कर आता उस दिन भी उस की माँ को पीटता वह खुश क्यो नही होती थी। जिस दिन हार कर आता, उस दिन भी उस की माँ को पीटता, वह मुह क्यो फुलाय हुए थी।

और फिर जिस दिन वह इस की माँ की बालियाँ उतारना चाहता था। गोबिन्दी को अपनी बालिया स बडा मोह था। उस की मर चुकी माँ की निशानी थी। एक बार उस न कहा दूसरी बार कहा तीसरी बार उस ने गोबिन्दी का अपन घुटनो के नीचे दबा कर दोनो काना की बालिया का नोच लिया। जवान-जहान गोबिन्दी के काना का मास भी नुच कर बालिया क साथ उस क हाथ में आ गया। टप टप लहू बहा था। फिर कितन दिन उस की माँ के कानों का इलाज होता रहा।

खदान के डॉक्टर का इस की माँ ने कहा था उन के घर चोर आया था। चोर उस की बालिया के साथ उस के कानो को भी चोर कर ले गया था।

और बार बार डॉक्टर कहता, तुम्हें पुलिस को खबर देनी चाहिए थी। पुलिस ढूँढ कर बालियाँ तुम्हें चाहे न देती लेकिन चोर के पास तो उन्हें न रहने देती।

अपन पहले मद के साथ हमेशा गोबिन्दी का झगडा होता—जब वह खान से कोयला चुरा कर लाता। खान के अहाते में कोयला धूल मिट्टी की तरह पडा होता। सारे खदान मजदूर कोयला चुरा कर लाते थे। खदान मालिका को भी पता था, चौकीदार भी यह जानते थे। तो भी चोरी आखिर चोरी है। गोबिन्दी कहती, उस के आँगन में उस का लाल खेलता था, वह अपने घर चोरी का माल नही घुसने देगी। और फिर उस कोयले का धुआँ कितना होता था। जिस रात उस का मद कोयला लाता उस रात उन के घर कलह मच जाती। पहले तू तू मैं मैं होती, फिर मार पिटाई

हो जाती। उस का मद उसे कोयले के ढेलों से पीटता। जहाँ-तहाँ चोट लगती या घाव हो जाते या नील पड़ जाते। एक बार गोनी ने अपनी मा को नहाते हुए देखा था—सारा बदन उस का नील-नील था।

और फिर उसे इस बात से भी चिढ़ थी कि उस की पत्नी काम करना क्या चाहती थी। सारे खदान मजदूरों की घरवालियां काम करती थीं बस एक गोनी का बाप ही अपनी पत्नी को घर बिठलाये हुए था। मेरे गाँव में किसी को पता लगा तो क्या कहेंगे? समय और का और हो गया था, वह वही का वही बैठा था जहाँ उस का बाप था, जहाँ उस के बाप का बाप था। बाक़ी खोलियों में हर मास दो पगार आतीं, इन के बस एक ही। एक पगार से घर का गुजारा मुश्किल होता था और गोनी के पिता को इस पर भी गुस्सा आता। जब उस का हाथ तंग होता, किसी न किसी बहाने अपनी पत्नी पर बरसने लग पड़ता। लेकिन उसे खदान में काम करने की आज्ञा न देता।

बराबर की दूसरी खोलियों के मजदूर भी अपनी घरवालियों को पीटते थे, लेकिन कहीं साल-छमाही में एक बार। गोनी की मा को यह भी पता था कि खदान-मजदूरों की कई औरतें उलटे अपने मर्दों को पीटती थीं। गोविन्दी सोचती और सिर से ले कर पांव तक कांप जाती। कोई अपने घरवाले पर कैसे हाथ उठा सकती है! गोविन्दी सोचती और अपने कानों को पकड़ लेती।

और फिर एक दिन जब काम से वह लौटा, उसे उल्टियाँ हो रही थीं। इधर उल्टियाँ उधर दस्त। सुबह काम पर जाने से पहले उस ने गोनी की माँ को कैसे पीटा था और अब कैसा निढाल हुआ पड़ा था। गोविन्दी उल्टियाँ साफ़ कर के हटती और उस की धोती धोने बैठ जाती। और फिर देखते-देखते उस का बुखार उस के सिर को चढ़ गया। और इस से पहले कि डॉक्टर पहुँच सकता वह ठण्डा हो गया। उस की आँखें फटी की फटी रह गयीं, उस का मुँह खुला का खुला रह गया।

गोनी के पिता की मौत पर गोविन्दी कैसे रोयी थी! माथा पीट-पीट कर उस ने बुरा हाल कर लिया था। उसे याद कर बार-बार आँसू बहाने लगती। गोनी की ओर देखती और फूट पड़ती। उस के अड़ोस पड़ोस वाले उसे धीरज बँधाते रहते।

दो दिन, चार दिन, दस दिन और फिर खदान वालों ने गोनी की मा को काम पर लगा लिया ताकि जिस खोली में वह रहती थी उसी खोली में वह टिकी रहे। जो मजदूरी उस के घर पहले आती थी, वह मजदूरी अब भी आती रहे।

खोली के अंधेरे कोने में पड़ा गोनी यूं सोच रहा था कि आधी रात हो गयी। उसे नींद नहीं आ रही थी। कभी धीरे से पलकें खोल कर क्षण भर के लिए देख लेता, फिर उस की पलकें मुँद जातीं।

उस की माँ चौके में पड़ी-पड़ी सो गयी थी। उस के बापू ने आप ही आप परात के नीचे ढकी रोटी निकाली। पड़ोसियों के यहाँ से भिजवायी गयी सब्ज़ी के साथ उसे खाया और दरवाज़े के पास चादर बिछा कर पड़ गया। गोविन्दी ने सब्ज़ी की पूरी कटोरी

उस के लिए रख छोड़ी थी, बस एक टुकड़ा आलू की सब्ज़ी का गोनी को दिया था।

चाँद की चाँदनी रोशनदान में से छन-छन कर उस की माँ के जूड़े पर पड़ रही थी। उस की माँ कैसा जूड़ा बनाती थी! असल रेशम के लच्छों जैसे बालों को लपेट कर गाँठ सी लगा देती, बचे हुए बाल बैंगे के बने लटकते रहते।

पहले उस का जूड़ा कितना भारी होता था, अब इतना भारी नहीं रहा था। उन दिनों उस के बाल चमचम चमकते थे। एक भीनी भीनी सुगन्ध आती रहती थी आठों पहर। रात को सोने समय गोनी अपनी नाक उस की किसी लट पर रख देता और उस की पलकें मुँद जातीं। हर रोज़ वह ऐसा ही करता। एक अजीब रौनक होती थी उस की माँ के मुँह माथे पर। अभी बहुत दिन नहीं हुए थे उस के बापू को मरे। उन दिनों जब यह 'चाचा' उन के घर आया करता था। जब आता गोनी के लिए कुछ न कुछ ले कर आता—कभी कोई खिलौना कभी कोई खाने की चीज़। और उस की माँ की ओर कैसे देखता था! सुबह शाम आ कर बैठा रहता था। 'दहलीज़ की मिट्टी भी इस ने चाट खायी है।' उस की माँ की एक सहेली ने एक दिन उसे कहा था और फिर वे दोनों हँस दीं। हर दूसरे रोज़ गोनी को बाज़ार ले जाता कभी सिनेमा दिखाने कभी सैर करवाने। जिस चीज़ पर गोनी हाथ रखता वही उसे खरीद देता।

फिर एक दिन उस की माँ की शाम की शिफ्ट थी और 'चाचा' कब से बैठा इन्तज़ार कर रहा था? झक सफ़ेद धोबी के धुले कपड़े पहन इन्तज़ार करता रहा, करता रहा। साँझ ढल गयी। पता नहीं, क्यों उस की माँ को उस दिन आने में देर हो रही थी? गोनी को तो नींद आने लगी थी। रात भी तो कितनी हो गयी थी। और फिर गोनी की पलकें भारी भारी होने लगीं। और फिर गोनी की पलकें मुँद गयीं। हूबहू इसी तरह की रात थी जिस तरह की आज थी। चाँद की चाँदनी रोशनदान से छन छन कर खोली में पड़ रही थी। आधी रात को कहीं गोनी की आँख खुली। खोली के बाहर उस की माँ के कदमों की आवाज़ थी। और फिर खोली का पट खुला। उस की माँ कोयला ढो-ढो कर वैसी की वैसी धूल मिट्टी में सनी हुई थी। काम करती को आज देर हो गयी थी और नहाये बिना ही घर लौट आयी थी। पीछे गोनी जो अकेला था। खोली का किवाड़ खोल कर वह अन्दर घुसी ही थी कि उस ने लपक कर उसे अपनी बाँहों में ले लिया। कब का पीढ़ी पर बैठा उस की राह देख रहा था। "अरे नेकबख्त मुझे कपड़े तो बदल लेने दो। न धूल मिट्टी से सनी हूँ।" पर नहीं, वह तो उसे वैसे का वैसा प्यार कर रहा था—मुँह पर, माथे पर, बालों पर, गले पर गरदन पर बाहों पर, कन्धों पर, हथेलियों पर। उस की उंगलियों को बार बार अपने दाँतों तले ले कर चबाने लगता। धोबी के धुले उस के दूध से सफ़ेद कपड़े कालिख से लथपथ हो गये थे। उस के मुँह पर, माथे पर कालिख ही कालिख लग गयी थी। और उस की माँ कैसे उस की बाँहों में मचल मचल पड़ रही थी। गोनी को लगा जैसे उस की माँ एकदम लम्बी हो गयी हो—कोठे जितनी ऊँची। और फिर एक नशे से मैं गोनी की

पलकें जुड़ गयी। वह गहरी नींद सो गया। अगले दिन उस ने उस की माँ को 'चादर' डाल ली थी। और इस की माँ ने गोनी को समझाया था, अब यह उसे चाचा न बुलाया करे, बापू कहा करे। ब्याह के बाद दो दिन, चार दिन, दस दिन, कसी कसी वह उस की माँ की खातिर करता था। उस के पाँव तले पलकें बिछाये रहता।

और फिर एक दिन वह दारू पी कर आया। उस की माँ ने उसे देखा और हक्की बक्की रह गयी। उस ने तो उसे कभी नहीं बताया था कि वह दारू पीता था। और यूँ उसे शशोपज मे पड़ी देख शराब में बदमस्त उस ने गोबिन्दी को चाँटा दे मारा था। हैरान गोबिन्दी उस के मुँह की ओर देख रही थी कि उस ने एक और जड़ दिया, और फिर घूँसे और फिर लातें।

वह दिन और आज का दिन। हमेशा वह दारू पी कर आता। दारू पी कर आता और हमेशा अपनी घरवाली को पीटता। गोनी की माँ चुपचाप हर बार मार खा लेती, कभी शिकायत न करती।

आज की रात वह पहले से कहीं अधिक नशा कर के आया था, पहले से कहीं अधिक उस ने उस की माँ को पीटा था। जैसे चौके में जा कर औंधी गिरी थी वैसी की वसी पड़ी थी। गोनी सोचता, उन दिनों उस का बापू कसे उस की मा की खातिर किया करता था और अब कैसे कसाइयों की तरह उसे पीटता था। यूँ ही उस का पहला बापू उस की माँ को मारा करता था। आखिरी दिन तक उस को पीटता रहा। जिस दिन मरा उस दिन सवेर भी उसे ठोकर मार कर बेहाल कर गया था।

सोचता-सोचता गोनी सो गया। अगली सुबह धूप निकल आयी थी जब कहीं उस की आँख खुली। बापू कभी का काम पर निकल गया था और उस की माँ उस के पास बठी हुई थी। हर रोज की तरह उस के हाथ को अपने दोनों हाथों में ले कर बिट बिट उस की ओर देख रही थी अपनी जान के टुकड़े को।

गोनी को आज अपनी माँ पर अटूट प्यार आ रहा था। अपनी बाँह को उस की गरदन में लपेट उस ने धीरे से उस के सिर को अपनी मुन्नी सी छाती पर रख लिया। और फिर अपनी नाक को उस के रूखे बालों में छिपा लिया।

जिस तरह उस की माँ को पिछली रात उस के बापू ने पीटा था, सारे का सारा वह दृश्य उस की आँखों के सामने घूम रहा था।

"झाई!" कुछ देर के बाद उस ने अपनी माँ को पुकारा।

उस की माँ जसे एक नशे से में पड़ी हुई थी।

'झाई!" गोनी ने अत्यन्त लाड में फिर अपनी माँ को पुकारा।

गोबिन्दी वसी की वसी आँखें मूँदे एक हिलोर से में पड़ी थी।

"झाई! " इस बार गोनी ने अपनी माँ की ओर से जवाब का इन्तजार किये बिना धीरे से उस के कानों में कहा, "झाई! अब यह बापू कब मरेगा?"

●

# गोमा भाभी

गोमा भाभी सारे गांव की भाभी थी। लुज-लुज बूढे, जवान-जहान लडके, गलियो के बच्चे सब उसे गोमा भाभी कर के याद करते थे। मद भी, औरतें भी। गोमा भाभी का पति भी उसे गोमा भाभी कह के पुकारता था। गोमा भाभी के बेटा-बेटी कोई नही हुआ था।

मुझे याद ह जब गोमा भाभी हमारे गांव में ब्याही हुई आयी थी। सारा गांव टूट कर आन पडा था किशू थोरी के घर नयी दुलहन का देखने के लिए। विवाह काहे का हुआ था किशू एक बार खच्चरें लाद अनाज मण्डी ले कर गया, जसे वह हमेशा करता था, लौटते हुए बिनोजे और खल्लो के साथ गोमा भाभी को भी बिठा लाया। और गोमा भाभी जसे चाद का टुकडा हो, हाथ लगाने से मली होती। लोगो की देख-देख कर भूख न मिटती।

'अर कम्बख्त, कहाँ डाका डाला ह ?" किशू के साथी उस से पूछते।

"पता नही कौन सा घर बरबाद कर आया है ?' औरतें हथेलिया मलती हुइ उस के आँगन से निकलती।

और किशू के धरती पर पाँव न टिकते। खच्चरो को घारा खिलाते बार-बार वो उन के थुथने को चूमने लगता।

किशू ब्याह कर के आया था—बिवाइया से फटे हुए पाँव में टूटा हुआ जूता, मला कीचड पायजामा, घुटनो पर टाकियाँ लगी हुइ, उधडे हुए पांयचे, कुरता जगह-जगह पर तुरपा हुआ, चप्पे चप्पे पर पैबन्द, मोटे-मोटे मरदाने हाथा के लगाये हुए टाँके। बस एक मलमल का साफा उस ने नया खरीदा था, ब्याह की खुशी में, किन्तु बाँधा उस को भी वसे ही था जसे वह हमेशा बांधता था। दायें-बायें लटें निकली हुइ, लटा पर रोऐं चिमटी हुई। किशू की बुचडी दाढी वैसी की वसी रूखी थी। किशू में से वैसी की वसी बू आती थी—खच्चरों की बू लम्बे सफर की धूल की बू, गरमी में चुए पसीन की बू खल्लो के चेपा की बू जिन्हें वह सिर पर रख कर लाता था, सिर पर रख कर उतारता था।

किशू का कद छोटा था। किशू कहता चल-चल के मैं घिस गया हूँ। किशू की एक आँख बेंहगी थी। किशू के साथी उस से पूछते—"ससुरे कहाँ मारी ह ?" किशू

जवाब में कहता—"यारो, मारी तो मर ही गयी।" जितना क़द म बिशू ठिगना था उतन ही उस के अग फूले हुए थे। मोटे-मोटे हाथ, मोटी मोटी उँगलियाँ, मोटे माटे पैर। एक पाँव दबा कर चलता था। पहले तो उस के पाँव में कोई तकलीफ थी, एक खच्चर ने उसे लात दे मारी थी, पर फिर उसे जैसे उस तरह चलने की आदत ही हो गयी थी। किशू के मुँह से अत्यन्त बू आती थी। मद कहते इस लिए कि कभी वह दातून न करता था, औरतें कहती, इस लिए कि उस की जुबान पर गालियाँ चढी हुई थी। बात-बात पर गाली बकता था, कभी माँ की, कभी बहन की।

और किशू की पत्नी, जसे उस के मुँह म जुबान न हो। न किसी के भले में, न किसी के बुरे में, किशू को कोई बुरा कहता वह सुन लेती। किशू का कोई चगा कहता वह सुन लेती। अपना अकेला घर, अकेला आँगन, अपनी अकेली हवेली। अपने काम से काम, ज्यादा बाहर आना-जाना उस ने नहीं रखा था। उस के यहाँ कोई आ जाता, उस की बीसियो खातिर करती। स्वय किसी के यहाँ न जाती। सुबह शाम पानी भरने के लिए निकलती। कुएँ से पानी भरने और बाहर बठने। और इस के लिए भी कभी कोई साथ न ढूँढती। जब जरूरत होती चुपके से घर की कुण्डी लगा कर चल दती। गुरुद्वारे जाती जब उस का मन मानता यही साल छह महीने में एकाध बार। तब भी लोग इतनी बातें बनाते थे। जितने मुँह उतनी बातें। कोई किसी की कभी जुबान को रोक सका ह! और फिर एक औरत के बारे में जिस का घर वाला हर दूसरे दिन बाहर चल देता हो, लोग जितनी बातें करें उतनी ही थाडी और उस औरत के बारे में जो सुन्दर थी, अत्यन्त सुन्दर, जसे तसवीर की तसवीर!

गोरी चिट्टी। मोटी मोटी काली-काली आखें। फिरगनों की तरह सुनहरी बाल, मुलायम और घुघराले। ऊँची लम्बी, जितनी बार कोठे में जाती, दरवाज़े में से उसे झुक कर गुजरना होता। कोमल कोमल हाथ, कोमल पाँव। दिन में दस बार वह मुँह धोती। सर्दियों में कक्कर तोड कर नहाती थी, लाग देखते और कितनी कितनी बातें करते।

जितनी लोग बातें करते उतनी ही गोमा भाभी मुझे अच्छी लगती थी। और वो मुझे प्यार भी कितना करती थी! जहाँ मिल जाती मुझे बेटा-बेटा कहती अपने बाहुपाश में ले लेती, मुझे हमेशा अपने घर ले जाने के लिए कहती।

जब कभी मैं गोमा भाभी के यहाँ जाता, जसे एक चाद उस क लिए चढ आया हो, वो मेरी खातिरें करती न थकती। यूँ अकेला उस के दालान में बठा, कभी कभी मेरा जी चाहता, मैं गोमा भाभी से पूछूँ—क्या ये ठीक था कि जिस दिन उसे किशू चोरी ब्याह कर लाया, उस ने गाँव के लडकों को दारू पिलाया था? दारू लडकों की मा पिलाया था, खुद भी पीया था। ढेर रात गये तक वो खच्चरा के अस्तबल में छिपे दारू पीते रहे थे। और फिर किशू इस के घरवाले ने दारू बहुत पी लिया था। और वो खच्चरों के पास ही औंधा ही पड गया था। और किशू के साथ के

लड़के, धर्मात्मा, एक-एक कर के उस की नयी ब्याही पत्नी के साथ अपना मुँह काला करते रहे थे। और इतना बड़ा घूंघट निकाले दुल्हन को पता नहीं चला था कि उस के साथ क्या अन्याय हो रहा है। वो तो जानती, ये किन्नू ही था। बार-बार मुँह मारने लगता था। और यूं जब उस की सुहाग रात गुजरी, सुबह हो कर वह उठी तो उस के पाँव तले से ज़मीन निकल गयी, किन्नू तो अस्तबल में दारू पीये बेसुध पड़ा था। और गोमा भाभी उस की दाढ़ी में उलझी सूखी लीद को अपनी उँगलियों से निकालती रही। और मेरा जी चाहता मैं गोमा भाभी से पूछूँ—क्या ये ठीक था कि एक दिन नहा-धो कर तड़के जब वो गुरुद्वारे गयी तो गुरुद्वारे के ग्रंथि ने उस की बाँह पकड़ ली थी? और गुरुद्वारे में भगवान् के सिवा और कोई नहीं था जो एक गरीब चोरी की पत्नी को बचाता। और मेरा जी करता मैं गोमा भाभी से पूछूँ—क्या ये ठीक था कि एक रात ठीकरी पहरा दे रहा, माहू चौकीदार सुलफ़ा पी कर उस के आँगन में आ टपका था और बम्बस्त ने अपनी मनमानी कर ली थी। और जब कमीनी बात की डींगियाँ मारता फिरता था, गली-गली लोगों को बताता फिरता था। और मेरा जी करता मैं गोमा भाभी से पूछूँ—क्या ये ठीक था कि जब एक बार वो नदी में नहा रही थी तो गाँव के चौधरी के बेटे ने उस के कपड़े जा कर उठा लिये थे?

और मेरा जी चाहता मैं गोमा भाभी से पूछूँ जब अड़ोस-पड़ोस की औरतों ने उस से सुहागरात वाले किस्से की बाबत पूछा, तो क्या ये सच था कि उस ने आगे से जवाब दिया था—"शायद ऐसे ही हुआ हो। उस रात मैं थकी हुई भी कितनी थी।' और मेरा जी चाहता मैं गोमा भाभी से पूछूँ जब उस से गुरुद्वारे के ग्रंथी के बारे में किसी ने बात की तो क्या ये सच था कि उस ने आगे से कहा था ग्रंथी ने बाँह जो पकड़ ली तो मैं उसे कैसे इनकार करती?" और मेरा जी चाहता मैं गोमा भाभी से पूछूँ जब गली मुहल्ले की औरतों ने माहू चौकीदार के बारे में उस से बात की थी तो क्या ये सच था कि उस ने उत्तर दिया था—"आधी रात का समय था और मैं ने सोचा कौन वावेला मचा कर सारे गाँव को इकट्ठा कर ले।' और मेरा जी चाहता मैं गोमा भाभी से पूछूँ जब नदी में नहा रही गाँव के चौधरी के बेटे ने उस के कपड़े उठा लिये थे तो क्या ये सच था कि उस ने कहा था—'तुम ऊपर जा कर झाड़ियों के पीछे खड़े हो, यहाँ मुझे शर्म लगती है।'

लेकिन गोमा भाभी से मैं कभी कुछ न पूछता। गोमा भाभी इतनी चुप-चुप, इतनी भोली भाली, इतनी मासूम मुझे लगती थी।

और फिर मुझे वो इतनी अच्छी-अच्छी बातें सिखाती थी। हमेशा सच बोलना चाहिए, जो लोग सच बोलते हैं उन के होंठों पर मीठे शहद का स्वाद रहता है। कभी लोभ नहीं करना चाहिए, भगवान् जो दे उसी पर सब्र शुक्र कर लेना चाहिए जो लोग लालच नहीं करते उन का सब से ऊँचा आकार होता है। कभी किसी पर गुस्सा नहीं करना चाहिए जिन को क्रोध नहीं आता, उन के अंग अंग में से एक सुगन्ध फूटती

रहती है। कभी अहकार नही करना चाहिए, जिन्होंने नम्रता धारण कर ली है, उन के नना में स एक नूर बरसता रहता ह।

ऐसे हा और कितना कुछ गोमा भाभी मुझे सिखाती रहती। और मुझे लगता गाँव वाले बेईमान थे। झूठ बोलते थे, गोमा भाभी ता जसे सच्चा मोती हो, मुझे किसी की बात पर विश्वास न होता।

लेकिन लोगों को जबान कौन रोक सकता था!

लोग कहते—गोमा भाभी जादूगरनी ह। एक नजर और दूसरे को मोह लेती ह। अकेली अपने सूने आगन में बठी मन्त्र जपती रहती है। उस ने परिया अपने वश में की हुई हैं। उन्ही का ही तो रूप उसे चढा ह। कोई कहते वो तो खुद परी है। आकाश से भटक कर धरती पर आ गयी। इस दुनिया की कोई चीज होती तो किशू धोरी के साथ ही ब्याह करती। धरती पर उतरी और किशू के साथ चल दी।

लोग कहते—सचमुच ये परी ह जभी ता इस की औलाद कोई नही हुई। परियाँ धरती पर अपने बच्चे नही छोडतीं। परी तो ह तभी तो जब गुल्झारे में प्रधी ने इस की बाँह पकडी थी तब आकाश नही फटा था, धरती नही उल्टी थी। और गाँव का हरेक नौजवान मन ही मन कहता, धरती की औरतें तो बहुत देखी ह, एक बार इस परी का मजा जरूर लेना है।

फिर एक दिन मैं गोमा भाभी के दालान में बठा हुआ था। इधर-उधर की बातें वो मुझ से कर रही थी। इतने में बाहर आँगन का किवाड किसी ने खटखटाया।

"शायद किशू ताऊ हैं।"

"कहा तुम्हारे ताऊ का यह कौन सा समय ह?"

और गोमा भाभी बाहर आगन में देखने के लिए गयी। कोई एक मिनट नही गुजरा था कि मुझे बाहर ड्योढी में चटाक-पटाक किसी की किसी को चाँटे मारने की आवाज आयी। म ने दौड कर बाहर देखा—गामा भाभी नम्बरदार के जवान बेटे को पीट रही थी। लडका हक्का बक्का उस के मुँह की ओर देख रहा था। फिर गोमा भाभी ने एक लात उस के पेट में दे मारी, और लडका गली में औंधा जा पडा। गोमा भाभी किवाड को कुण्डी लगा कर दालान की आर लौट आयी।

दालान में आयी और गामा भाभी वसी की वसी मुसकरा रही थी 'कम्बख्त न हो तो। अकेला औरत को दख कर मस्ताये फिरते ह। और बाकी सब कुछ गोमा भाभी ने आँखों ही आखा में मुझ समझाया—ये नही उसे पता था कि आज मेरा बेटा अन्दर बैठा ह। यदि घरवाला घर हो, और न बेटा आँगन में खेलता हो तो फिर औरत उस बेरी की तरह होती ह जिस के साये में भी लोग बठते ह और जिस के बेर भी तोड ले जाते ह।

और फिर गोमा भाभी कितनी देर मुझे अच्छी अच्छी बातें न सुनाती रही। देर रात गुजर गयी।

# शहरजाद

शहरजाद का जन्म शहर में नहीं हुआ था। पैदा जंगल में हुई, जहाँ उस की माँ पैदा हुई थी जहाँ उस की माँ की माँ पैदा हुई थी, किन्तु शहरजाद पली शहर में थी।

बात यूँ हुई। हमारे एक मित्र ने हमें शिकार के लिए निमन्त्रित किया। उन दिनों वो बेट के इलाके में तनात था। हम मियाँ-बीवी तांगा बड़ चौक से बड़ी सवारिया ले, डेढ सौ मील दूर गये। सारा दिन दाखिल होने रहे, ढेर सारा शिकार मिला लेकिन हाथ में एक आध फाख्ता से अधिक कुछ नहीं आया। हम तो भी सुन थे। शहर के शोर शराबे से दूर दो दिन सैर हो गयी। लेकिन हमारा दोस्त पुलिस अफसर बड़ा निराश था। अभी चार दिन अभी हमें घर लौटे नहीं हुए थे कि एक सिपाही आया। उस की गोद में हिरण का एक बच्चा था। कहने लगा, "कप्तान साहब ने भेजा है।"

मेरी पत्नी हिरण के बच्चे को देख कर खिल सी गयी।

और फिर सारा परिवार इस नये मेहमान की खातिर में जुट गया। मेरी पत्नी कहीं से घुँघरू निकाल लायी। मेरी माँ उस के लिए साँकल ढूँढने लगी। और मैं सोच रहा था उस का नाम क्या रखना चाहिए। कई नाम तजवीज हुए। आखिर 'शहरजाद' पर फसला हुआ।

हमारे बच्चे का नाम शहरयार है। हिरणी का नाम हम ने शहरजाद रखा। शहरयार! शहरजाद!!

शहरजाद बच्चू को अत्यन्त लाड करती थी। अपनी बड़ी-बड़ी आँखों में सारी मुहब्बत भर कर बच्चू के गालों को मुँह का, माथे को, ला कर प्यार करने लगती। उस के सामने नाचती, दौड़ती, भागती, उस को खुश करती। कभी आँखें मूँदे उस के पास आ कर लौट जाती और बच्चू उस की पीठ से सट कर बठ जाता।

शहरजाद की बेहद खातिरें होतीं। बच्चों की तरह हम उस का खयाल रखते। उन दिनों हमारे यहाँ रिफ़्यूजी बहुत आते थे। देख-देख कर वो हैरान होते रहते।

शहरजाद मेरे साथ दफ्तर चल देती उसे कोई नहीं रोक सकता था। मेरी पत्नी मोटर में अस्पताल ड्यूटी पर जा रही होती मोटर के आगे-पीछे मडरा रही शहरजाद मौका निकाल कर अन्दर गद्दों पर जा बठती और उसे देख कर हर कोई हस देता। बच्चा अपनी आया के साथ बाहर सैर के लिए निकलता, शहरजाद उन के आगे

आगे चल रही होती। बार बार बच्चे के हाथा को, बाहों को आ कर चाटने लगती।

किस खेत में कुलाचें भरनी हैं, किस खेत में कुलाचें नही भरनी, ये शहरज़ाद को पता था। रहट पर किस हद तक जाना ह, किस हद से आगे नही जाना, शहरज़ाद को इस की समझ थी। रात को गैलरी पर जिस स्थान पर उसे बाँधा जाता, उस स्थान को उस ने कभी मैला नही किया था।

मेरी पत्नी के अस्पताल में शहरज़ाद हर बीमार की दिलदादा थी। और उसे अपनी मालकिन लेडी डॉक्टर के साथ वाड में एक बेड से दूसरे बेड घूमना बडा अच्छा लगता था। हर मरीज़ से लाड करवाती, हर मरीज से अपनी पीठ थपकवाती। शुरू-शुरू में मेरे साथ दफ़्तर आया करती थी। फिर उस ने दफ्तर आना बन्द कर दिया। कई दिन बीत गये। फिर एक दिन बाहर चपरासियो को मैं ने बातें करते सुना।

"छोटे साहब की हिरणी अब कभी दफ़्तर नही आयी!"

"अच्छा ही ह।"

"क्या?"

"बडे साहब को उस का यूँ दफ्तर आना पसन्द नही था।"

मैं ने सुना और हरान रह गया। सचमुच शहरज़ाद ने कितने दिनों से दफ्तर आने के लिए कभी ज़िद नही की थी।

हमारे कोई मेहमान आते, जब घर वाले मिल चुकते, हौले हौले कदम शहरज़ाद गोल कमरे में मुलाक़ात के लिए आ जाती। हर व्यक्ति की आँखो में आखें डाल कर देखती हर व्यक्ति के हाथा को सूँघती, पीठ थपकवाती, हरेक को खुश कर के, आप खुश हो कर, चली जाती।

अब वो बडी हो रही थी। एक वर्ष से भी अधिक हो गया था शहरज़ाद को हमारे यहाँ आये। कितना उस का कद निकल आया था! कितना तेज़ दौड लेती थी! कितना ऊँचा उछल लेती थी! और आजकल उस से कई बार गलतिया भी हो जाती थी। कई बार वो पराये खेतों में चरने चली जाती। और किसान उस की शिकायत ले कर आते। घर अपना पूरा चारा खा कर शहरज़ाद का पडासियों की खेती को खराब करना, फलों फूलों के पौधो को बरबाद कर आना बडी ज़्यादती थी। और जब कोई हमें शिकायत कर रहा होता वो लज्जित सी आँखें नीचे किये मुजरिम की तरह खडी उसे सुनती रहती। फिर कुछ दिन अपनी कोठी, अपने बाग के आहाते से बाहर *न निकलती। कुछ दिन और, और फिर उस से इस तरह की कोई हरकत हो जाती।* फिर शिकायत आती, फिर शहरज़ाद अपना कसूर कबूल लेती। मेरी पत्नी, मैं, बाकी घर वाले उसे समझाते रहते।

जिस कॉलोनी में हम रहते थे, हर घर में शहरज़ाद अपनी दोस्तियाँ बनाये हुई थी। हर कोठी में उस की प्रतीक्षा होती। बारी-बारी वो सब में जाती। हर घर में उस के लिए कुछ न कुछ बचा कर ज़रूर रखा होता। और वो अपनी खातिरें

करवाती रहती। घर वालो को खुश करती रहती। हमारी कोठी शहर से बाहर थी। आगे पीछे कोई पाँच-सात और कोठियाँ थी। उन के बाद सडक। सडक के पार कचहरियाँ थी। कचहरियो के आगे कोतवाली थी। और शहर दूसरी ओर था। शहरज़ाद के घूमने की हद या ये कोठियाँ थी या इन कोठियो क साथ लगते खेत, जो चाँदमारिया तक चले गये थे। इधर सडक, उधर चाँदमारी का टीला, इस से आगे शहरज़ाद अकेली कभी नही गयी थी। इस से बाद की दुनिया से उस की अपनी तौर पर पहचान नही थी।

ज्यो-ज्यो शहरज़ाद बडी हो रही थी त्यो-त्यो वो ज्यादा नटखट होती जा रही थी। शरारती, लेकिन इस बात की समझ कि आखिर शरारत शरारत ह और उसे यूँ नहीं करना चाहिए। हर बार शरारत करती, हर बार शर्मिन्दा हो लेती, हर बार गलती करती, हर बार पछतावा जसे उस के चेहरे पर चित्रित होता।

जिस गलरी में रात को शहरज़ाद विश्राम करती थी, वो हमारे सोने के कमरे के साथ थी। एक रात हम ने महसूस किया जसे शहरज़ाद बडी बेचन हो। बार बार बठती, बार-बार उठती, बार-बार किवाड पर सिर पटकती, बार बार साँकल को तोडने की कोशिश करती।

शहरज़ाद उन दिना इतनी चचल हो रही थी कि हम ने कोई विशेष ध्यान नही दिया।

अगली सुबह उठते ही मैं और मेरी पत्नी शहरज़ाद को देखने गये। शहरज़ाद आँखें नीचे किये खडी थी और गलरी की दीवार का एक हिस्सा जसे गुलाल की पिचकारी से छिटका हुआ हो। मैं ने देखा और वही पाँव लौट आया। और मेरी पत्नी जमादारिन को बुला कर गलरी को धलवाने लगी। शहरज़ाद को खोल दिया गया। वो बाहर बागीचे की एक ओर हल्की-हल्की धूप में नारगी के पेड के नीचे जा बठी।

कुछ दिन के बाद हम ने नौकरों का एक कमरा खाली करवा कर शहरज़ाद के लिए अलग कर दिया। शहरज़ाद रात को उस कमरे में बन्द की जाती। दिन को भी यदि उस का जी चाहता अपने कमरे में जा कर सुसता लेती।

कई दिन गुजर गये।

आजकल शहरज़ाद न एक अजीब शगल बनाया हुआ था। हमार सोने के कमर में आ कर घण्टों शृगार मज के आईन के सामन खडी अपनी परछाई को देखती रहती। खडी-खडी जब थक जाती वही का वही आईने के सामने बठ जाती। यदि कही और न हो तो शहरज़ाद हमेशा शृगार मेज के सामन बठी हुई पायी जाती। दीवानों की तरह एकटक आईने में देखती जाती। कभी हौले-हौले कदम आईने से पीछे जा कर झाँकती कुछ न दिखाई देता तो फिर लौट कर सामने आ बठती, अपने आईने में देखती रहती।

यूं एक दिन आईने के सामन बठी हुई थी कि हम ने शहरज़ाद की आवाज

सुनी। पहली बार जसे वो बालो थी। अन्दर सीने की किसी अथाह गहराई में से निकली हुई आवाज। हम ने ये आवाज सुनी और हमें जैसे कुछ हो गया। जसे अश्रुआ से भीगे हुए गले में से कोई बोल्ता ह।

और हम ने आईने के ऊपर परदा डालना शुरू कर दिया। एक-दो बार शहरजाद ढूँढती हुई आयी, फिर उस ने आईने का खयाल छोड दिया। हर समय आईने पर परदा पडा रहता था।

कई दिन और गुजर गये।

शहरजाद घण्टों खामोश अकेले में बठी रहती जैसे किसी का कुछ खो गया हो। चिन्ताओं में डूबी हुई। हम उसे पुकारते, बच्चू उसे जा कर छेड़ता, आगे से जसे कह रही हो, "मुये अकेलो रहने दो।" जैसे उसे कोई याद आ रहा हो।

बाग में उदास छुप कर बैठी, कई बार सहसा वो गरदन उठा लेती और उस के कान खडे हो जाते। जसे कोई आवाज पहचानने की कोशिश कर रही हो। कई बार किसी ऊँचे स्थान पर खडी हो कर अपनी थूथनी हवा में घुमाती, जैसे किसी सुगन्ध की उसे तलाश हो। बेचन अपना माथा लान की मखमली धरती पर मसल्ती, अपने शरीर को पेडों के तने के साथ बार बार रगडती।

कुछ दिन और, और शहरजाद जस बिलकुल बेकहना हो गयी हो। जहा न बठना होता, वहाँ जा बैठती, जहाँ न खडा हाना होता, वहा जा खडी होती, जिस ओर न जाना होता, उस ओर चल देती। कान उठाये कुछ सुनने की कोशिश करती। और फिर उस के कानों में पता नही कुछ सुनाई दता, पता नही कुछ न सुनाई देता, और वो जिस तरफ उस का मुँह होता, उसी तरफ दौड पडती। दौडती-दौडती कही की कही निकल जाती, दौडती दौडती लौट आती। फूले साँस, हाँफती हुई।

फिर एक दिन बाहर बागीचे में हम टहल रहे थे, शहरजाद कान उठाये नारगी के पड के नीचे खडी कितनी देर से जसे कुछ सुनने की कोशिश कर रही हो। और फिर वो एकदम शहर की ओर चल दी। मेरी पत्नी ने उसे शहर की सडक पर जाते हुए देखा तो उस की साँस ऊपर की ऊपर और नीचे की नीचे रह गयी।

"शहरजाद!" उस ने उसे पुकारा।

'शहरजाद!' मैं ने उसे आवाज दी।

"शहर की ओर गयी तो ये लौट कर नही आयेगी। शहर के कुत्ते तो इस की बोटी बोटी नोच लेंगे।' मेरी पत्नी परीशान थी।

शहरजाद ने न मेरी पत्नी की सुनी और न मेरी परवाह की और कान उठाये बसो को बसो किसी आवाज की तलाश में वो सडक पार, शहर की ओर निकल गयी।

कोई चार घण्टा के बाद दौडती हुई, हाँफती हुई, लहू-लुहान हा लौट कर आयी। उस की गरदन जख्मी थी। उस के शरीर पर, कई स्थान पर दाँत लगे हुए थे। उस की टाँगा से रक्त बह रहा था। "वही बात हुई, ये शहर के कुत्ते ' और मेरी पत्नी

शहरज़ाद को अपनी छाती से लगाये लाड करने लगी। उस के घावों को साफ़ किया गया, उस की मरहम पट्टी की गयी और पीने के लिए उसे दूध दिया गया। थकी-हारी दर्द से निढाल शहरज़ाद सारी शाम, सारी रात यूं ही पड़ी रही।

अगली सुबह हम उसे देखने गये। शहरज़ाद ने हमें अपनी ओर आते हुए देखा और कूद कर अपने कमरे से बाहर आ गयी। पीली पीली धूप निकल आयी थी। शहरज़ाद के फिर वैसे के वैसे कान खड़े हो गये। फिर वैसी की वैसी थूथनी हवा में घुमाते, वो जैसे किसी सुगन्ध की तलाश कर रही हो। फिर उस के अंग-अंग में जैसे अटूट बल आ गया हो।

और फिर हमारे देखते देखते वो गरदन उठाये शहर की ओर चल दी। मेरी पत्नी ने देखा और वो तड़प उठी।

"शहरज़ाद!" उस ने उसे पुकारा।

शहरज़ाद ने सुनी अनसुनी कर दी।

"शहरज़ाद! शहर के कुत्ते तेरी बोटी बोटी कर देंगे।"

शहरज़ाद को जैसे रत्ती भर परवाह नहीं थी। वैसे की वैसी वो चली जा रही थी।

"शहरज़ाद तुम लौट आओ। पहले ही तुम्हारा क्या हाल उन्होंने किया है?"

शहरज़ाद वैसी की वैसी चलती सड़क पार कर गयी।

मेरी पत्नी की पलकों में से अश्रुओं के दो मोती फूट कर उस के गालों पर ढलकने लगे।

कोई दो घण्टे व्यतीत हुए थे कि शहरज़ाद वैसी की वैसी दौड़ती हुई, वैसी की वैसी हाँफती हुई वैसी की वैसी लहू-लुहान लौट आयी। किस बेरहमी से कुत्तों ने उसे काटा था! चप्पे-चप्पे से लहू बह रहा। चप्पे चप्पे पर मांस उधड़ा हुआ।

दौड़ती हुई आयी और मेरी पत्नी की छाती के साथ आन लगी। शहरज़ाद की ये हालत देख कर हम सब घबरा गये। हम ने सोचा अब ये नहीं बचेगी। कोई उस के लिए कुछ कर रहा था, कोई उस के लिए कुछ। फिर उस की मरहम-पट्टी की गयी। उसे दूध पिलाया गया। मेरी पत्नी उसे लाड कर-कर के हटती और मैं उसे पुचकारने लगता।

शहरज़ाद की पलकों में शर्मिन्दगी भी थी, बेचारगी भी थी, बेबसी भी थी।

और हम ने उसे उस के कमरे में आराम के लिए पहुँचा दिया।

दोपहर का खाना खाने के बाद हम बाहर लॉन में टहल रहे थे। बहार के दिन थे। हमारा बग़ीचा जैसे बहार का सारा फूलों से लदा हुआ हो। हर पेड़ पर बौर था। हर टहनी पर शगूफ़े थे।

हमें यूँ टहलते हुए कोई ज्यादा समय नहीं हुआ था कि हम ने देखा, सामने शहरज़ाद अपने कमरे से निकल कर सड़क की ओर जा रही थी। वैसे के वैसे अपने

कान उठाये हुए, वसी की वसी हवा में थूथनी घुमाती जैसे किसी सुगन्ध की तलाश कर रही हो।

"ये तो फिर शहर की ओर जा रही है।" मेरी पत्नी की जसे जान निकल गयी।

"शहरज़ाद!" मेरी पत्नी से रहा न गया और उस ने फिर उसे निष्फल पुकारा।

"शहरज़ाद!" मैं ने भी उसे लौट आने के लिए आवाज़ दी।

लेकिन शहरज़ाद पर कोई असर नहीं हुआ। वसे के वसे कदम वो चलती गयी। सडक पार कर के उस के कदम और तेज़ हो गये। कचहरियाँ, कोतवाली, फिर वो हमारी आँखों से ओझल हो गयी।

'इस बार ये लौट कर नही आयेगी।" मेरी पत्नी के हाथ में स क्रोशिया नीचे गिर गया।

बाद दोपहर की नीद के पश्चात हम अभी लेटे ही हुए थे कि बाहर शहरज़ाद की आवाज़ आयी। इस से पहले कि हम उठ सकते वो दौडती हुई, हाँफती हुई, सोने के कमरे में हा आ गयी। तेज़-तेज़ डग मेरी पत्नी की ओर आ रही थी कि उस की नज़र सामने श्रृंगार मज के आईने पर पडी। और वहीं के वही उस के कदम रुक गये। आईने में की परछाइ को देखते ही जसे वो खिल सी गयी। जसे उसे सात स्वग मिल गये हा। शहरज़ाद ने टूट कर अपनी थूथनी को आईने की परछाई की थूथनी पर जा रखा जसे काई तडप रहे होठ तडप रहे होठों पर जा टिकते हैं। मेरी पत्नी को भूल, मुझे भूल अपने घावों को भूल, शहरज़ाद आईने की परछाइ की थूथनी का प्यार करने लगी। कसे कसे शहरज़ाद ने उसे लाड नही किये। और फिर जसे उस की टाँगा में सक्त न रही हो, वैसी की वसी शहरज़ाद ढेरी हो गयी, वसी की वसी ठण्डी हा गयी। उस की थूथनी वसी की वसी आईने की परछाइ की ओर उठी हुई थी। उस की बेनूर पलकें वसी की वैसी आईने की परछाइ की ओर खुली हुई थी।

•

## शमा

शबनम, शमा, हुमा हुसना एक के बाद एक, चार लडकियाँ नवाब साहब के यहाँ हुइ। उन की बेगम ने एक बेटे की तलाश में चार बेटियाँ, उपर तले पैदा की। और नवाब साहब ने सब्र शुक्र कर लिया। और ये जुआ वो नही खेलेंगे—उन्होंने अपने मन को समझा लिया। जिन्दगी म हार लिखी हुई थी, उधर नवाबो वाली बात सरकार ने कोई नही रहने दी थी और इधर चार बेटियाँ हो गयी थीं। इन चारो में से ही किसी को बेटा कह कर पुकार लेते किसी को बच्चू कह कर बुला लेते। नवाब साहब ने अपने मन को समझा लिया था।

और फिर लडकियाँ जवान हुइ। भर जवान, जसे चार सरू किसी के आँगन में लगे हुए हो। ऊची लम्बी गोरी चिट्टी, हाथ लगाने से जसे मैली होती। उन की माँ मुसलमान बटिया को ढक-ढक कर, छुपा छुपा कर थकती रहती। हँसती, खलती, गाती, सजती जस आकाश से उतरी परियाँ हो। एक से एक बढ कर सुदर, एक से एक बढ़ कर कोमल, एक से एक बढ कर ऊची। सरकार जागीर छीन सकती थी, पर नवाब साहब का कद आकार तो नही छीन सकती थी उन की बटियो से। नवाब साहब की बगम का हुस्न तो कोई नही बँटा सकता था उस की जाइया से। और फिर नवाब साहब को लडकियों के लिए वर ढूँढने की चिन्ता होने लगी। बेगम लडकियो के लिए, रिश्ते तलाश करती रहती। लडकियाँ चार थी, और लडका आगे-पीछ सम्बधिया में कवल एक ही था।

फ़रीद लडकिया का चचेरा भाई था। सुन्दर सजीला जवान। खेलने में सब से जबर, पढ़ने में सब से आगे। सुघड मिठ-बोला। अपनी चच्ची लडकियों की माँ पर जान देता। फ़रीद बेगम को चच्ची नही पुकारता था वो तो बचपन से ही उसे अम्मी कह कर बुलाता था। यह बात तो शुरू स ही पक्की थी कि फरीद इस घर में सहरा बाँध कर आयगा। उधर उस की मसें भीगी इधर उस का इस घर में परदा हो गया।

परदा भी हो गया, फ़रीद अपनी चच्ची को मिलने आता था। चचा चच्ची और हुसना को। हुसना अभी इतनी बडी नहीं हुई थी। बडी तो थी, लेकिन सब से छोटी होने के कारण वो किसी को बडा नहीं लगती थी। और उस स बडा हुमा

कहती— फरीद भाईजान से परदा करे तो शबनम दीदी करे, हमें क्या मुसीबत पडी है! और यदि सीढियाँ उतरते चढते जनानखाने में आते-जाते कभी उस की भेंट फरीद भाई से हो जाती तो आँखें नीची किये शरमाने की जगह वो खिलखिला कर हँस देती। हँसती जाता और टिट बिट भाई जान की ओर देखती जाती। फरीद ने हुमा का नाम पगली रखा हुआ था। हुमा पगली थी, हुसना दोवानी थी।

'और भाई जान, शबनम दीदी ?" हुसना फरीद को छेडती।

और वो चुप हो जाता।

शमा सुनती और उसे चारो कपडे आग लग जाती। फरीद से कोई नही पूछता था कि शमा के बारे में उस की राय क्या थी। शमा तो किसी गिनती में ही नही थी। और सच भी ये था कि फ़रीद की शादी शबनम से ही होनी थी। शबनम सब से बडी थी। पहला हक़ उस का था। हा ये बात और थी कि कोई ऐसा वर मिल जाये जिसे केवल शबनम ही पसन्द हो, या लडके की आयु बडी हो और सब से बडी बहन का उस से परचाया जाना मुनासिब हो, उस हालत में, केवल उस हालत में फरीद और शमा की शादी हो सकती थी। फरीद तो घर का लडका था, उसे तो किसी एक के साथ ब्याहा जा सकता था। उस ने तो बस एक फ़िक्र, अपने चच्ची चच्चा का, कम करना था।

और शमा सोचती—काश कोई और लडका शबनम दीदी के लिए मिल जाये।

लेकिन लडके कहाँ थे।

शमा सोचती—शबनम और फरीद की उमर बराबर ह। बराबर की उमर में शादी नहीं होनी चाहिए।

लेकिन ये बात और कोई नही सोचता था।

शमा सोचती—क्या हुआ जो शबनम सब से बडी है। शमा सब से ज्यादा हसीन थी। सब से सुन्दर लडकी का यह हक होना चाहिए कि वो सब से पहले अपना मन-पसन्द लडका चुन ले।

शमा को फ़रीद से बेपनाह मोहब्बत थी।

बचपन में हमेशा फरीद शमा का साथी बनता था। इकट्ठे वो छुपते थे, इकट्ठे पकडे जाते थे। एक बार खेल ही खेल में वो राजकुमारी बनी थी, फ़रीद राजकुमार बना था और झूठ-मूठ के घोडे पर बिठा कर वो सचमुच उस बाग़ के एक कोने में ले गया था। और घास के मैदान पर दोना एक साथ लेटे थे। शमा को कितना मज़ा आया था। हलकी हलकी धूप, दायें-बायें खिली नरगिस की क्यारियाँ। उस दिन उस ने बसन्ती रग की चुनरी ली हुई थी। और फरीद ने उस की ओर देख कर कहा था—तुम भी तो एक नरगिस हो। बीमार बीमार आँखें। हाँ शमा जब फरीद को देखती, उस की आँखो में जसे बुखार घुस आता हो। गरमियो के मौसम में फरीद अमराई पर चढ कर केरियाँ तोडा करता था, सब के लिए एक एक फेंकता था और शमा के लिए

एक और अपने मैके में छुपा लाना था। शमा छुप छुप कर उस बेरी को खाती थी। उस बेरी का कितना मजा होता था। एक बार गुल्ली डण्डा खेल रहा, फरीद की गुल्ली शमा के गाल पर आ लगी थी। लहू की धारें फूट निकली, टप टप आँसू बह रहे थे, किन्तु गव टीस शमा की किसी ने न सुनी, एक बोल शिकायत का उस के मुँह से न निकला। और फिर जब फरीद पतंग उड़ाता था, वन्नी हमेशा शमा देती थी। शमा वन्नी देती और उस की पतंग झट से चढ़ जाती। फरीद पतंग उड़ा रहा होता और शमा हाथ फला फैला कर दुआएं माँगती रहती—'अल्ला फरीद भाईजान की पतंग न कटे। हे अल्ला फरीद भाईजान की पतंग ऊपर ही ऊपर चढ़ती जाये! दीवानी!

और फिर वो एकदम बड़ी हो गयी। फरीद से उस का परदा कर दिया गया। शमा को याद था वो उस रात कितना रोयी थी। छत पर ममटी के पीछे खड़ी उस की चीखें निकल गयी थी। सारी उस रात उस की आँख नहीं लगी। बार-बार उस की पलकें भीग भीग जाती। अगले दिन आईने के सामने खड़ी, गज गज लम्बे अपने बालों को कंघी कर रही उस ने सोचा था अब वह दो चोटियाँ नहीं बनाया करेगी। पर नहीं, उस का मन नहीं माना। जिस घर में फरीद आये उस घर को सुन्दर होना चाहिए, जिस दुनिया में फरीद रहे, उस दुनिया को हसीन होना चाहिए। और वो खिड़की में खड़ी रहती। वो खिड़की में खड़ी होती और उधर से फरीद आ निकलता। खिड़की में खड़ी हो कर वह आँखें मूंद कर कहती—'अल्ला फरीद आ जाये!' और सामने अभी अभी इसी घर से गया फरीद लौट कर आ रहा होता। शमा पसीना पसीना हो जाती। कभी-कभी उसे महसूस होता जसे फरीद उस की मुट्ठी में हो, चाहे कभी उस का बुला ले। और वो उस गोल कमरे का सजाती रहती, जिस में आ कर वह बैठता था उस आँगन को सँवारती रहती जिस में वह आ कर कदम रखता था, उस बरामदे को साफ करती रहती जिस में आ कर वह खड़ा होता था।

और फिर उस की नजर शबनम दीदी पर जा पड़ती। शान्त, गम्भीर बेलौस! हर बात में सलीका, हर बात में सयम त्याग की जसे मूर्ति हो। शमा सोचती—यदि वो शबनम दीदी को अपने मन की बात बता दे शबनम तो एक बार भी इनकार न करे। वो तो अपनी बहनों पर जान देती थी। शबनम तो सारी उमर कुंवारी रह ले, अपनी किसी बहन के मुखड़े पर मुसकान देखने की खातिर। नहीं नहीं, यूँ वो नहीं करगी। शबनम दीदी से वो उस का हक नहीं छीनेगी। और शमा की आँखों में मोटे-मोटे अश्रु ढुलक आते। फरीद के बिना वह कसे रह सकेगी! फरीद के बिना वह कसे जी सकेगी! जब फरीद किसी और का हो जायेगा तो वह सोचती—यह दुनिया अँधेरी-अधूरी हो जायेगी, और उसे लगता जसे सचमुच वह दीवानी हो रही हो। एक क्षण अल्लाह के आगे हाथ फलाती रहती, फ़रियादें करती रहती, मन की मुराद माँगती रहती दूसरे क्षण शबनम दीदी को देखती और सोचती वह तो अपनी बहन से अन्याय नहीं कर सकेगी। और छल छल आँसू उस के बहने लगते।

कोई और लडका नही मिला। 'अल्ला' उस की सब बाते मानता था, लेकिन उस की ये बात उस ने न सुनी। और फिर शबनम और फ़रीद की शादी निश्चित हो गयी। फरीद फ़ॉरेन-सर्विस में आ गया था, और घर वालों की मरजी थी कि परदेश जाने से पहले लडका ब्याह कर के अपनी बहू साथ ले जाये। ताकि घर वालो की चिंता खतम हो और लडके को भी बाहर तकलीफ न हो।

शमा सिर पकड कर रह गयी।

और फिर शबनम के विवाह की तैयारियाँ। ढोलक के गीत।

पाच हजार बिजली के लटटुओं की जगमगाहट! शहनाइया! एक सौ एक साजियो का बैण्ड! फिर वह सेहरा बाँध कर आया। घोडी पर चढ कर। शमा ने अपने मन को मसला लिया। फिर शबनम का निकाह। मजूर? मजूर। मजूर? मजूर। शबनन फरीद को मजूर थी, फरीद शबनम को मजूर था। और फिर शबनम डोली में बठ कर चली गयी। डोली के साथ साथ चलता अपने सरमाये को सँभाले वो भी चला गया। शमा ने अपने मन को समझा लिया।

ब्याह नही कर सकती थी पर उसे उस के मन से तो कोई नही छीन सकता था। शमा ने अपने ग़म को सीने से लगा लिया। हँस रही बहना से हँस लेती, खा रही बहनो के साथ खा लेती, खेल रही बहनों के सग खेल लेती, सज रही बहनो से मिल कर सज लेती, लेकिन अपने दिल के द्वार उस ने बन्द कर लिये। एक साल, दो साल तीन साल। शबनम के बाद शादी की उस की बारी थी, पर शमा किसी और लडके की ओर आख उठा कर न देख सकती। उस के घर वालो ने कई रिश्त ढूँढे, लेकिन शमा ने किसी के लिए भी हामी नही भरी।

किसी को कुछ समझ नही आ रहा था। जब तक शमा शादी न करे हुमा का ब्याह कसे हो सकता था! और हुमा कोठे का कोठा हो रही थी। और फिर लडके कहाँ मिलते थे! लेकिन शमा थी कि ब्याह का नाम नही लेती थी। ब्याह का कोई जिकर करता तो छल छल आँसू रोने लगती।

शबनम के एक बच्चा हुआ, अब दूसरा होने वाला था, लेकिन शमा शादी के लिए तयार नही हुई।

एक शाम मोटर में बठा सारा परिवार कही सर को निकला। शमा साथ नही थी। शमा अकसर बाहर नहीं जाया करती थी। बाजार में एक जगह आ कर मोटर रुक गयी। सडक तग थी, भीड ज्यादा थी, और मोटर के सामने एक और मोटर खडी थी। ड्रायवर हान बजा-बजा कर हार गया था, लेकिन यूँ लगता था जैसे अगली मोटर फेल हुई पडी हो।

"ये मोटर क्यों नही चलती?' अखबार पढ रही हुसना ने सिर उठा कर पूछा।

"मोटर हमारी कसे चले, आगे शमा बहन बैठी हुई है।" [illegible] दिया।

और सब हँस दिये। हँस हँस कर सब के पेट दर्द होने लगा। एक बार हँसी खतम होती फिर छिड जाती। और घर आ कर जब शमा को ये बात सुनायी गयी, सारी रात उस की पलकें नही सूखा। रो रो कर वह बेहाल होती रही।

थक कर, हार कर घर वालों ने हुमा का ब्याह रचा दिया। शमा ने ऐलान कर दिया था कि वो शादी कभी नही करेगी। आखिर वो लोग भी तो हैं, जो सारी उमर कुँवारे रहते हैं।

एक साल और बीत गया। शबनम के घर एक और बच्चा हुआ। हुमा के घर भी बच्चा होने वाला था। अब तो हुसना के ब्याह की भी चर्चा शुरू हो गया थी, लेकिन शमा थी कि अपनी जिद पर अडी हुई थी।

शमा जसी हसीन लडकी का यू घर कुँवारी बठ जाना सारा शहर कहानियाँ करने लगा। जितने मुँह उतनी बातें। कोई कुछ कहता कोई कुछ कहता। और फिर ये कहानियाँ चलती चलती शमा के कानों तक भी पहुचने लगी। उस की माँ तक भी पहुँचने लगी। उस के बाप को भी इशारे-कनाये होने लगे। और घर में आठा पहर अधेरा अधेरा छाया रहता। गाले उपले की तरह शमा सुलगती रहती। उस की माँ चारपाई पर पड गयी। उस का बाप घुलता जा रहा था। बेटी का क्लेश बुरा! पर वो ब्याह क्यो नही करती थी, ये बात किसी को समझ नही आती थी। अच्छे लडके बेशक मुशकिल से मिलते थे, पर शमा जसी सुन्दर लडकी के लिए कोई काल नही था।

और फिर उस की माँ को पता लग गया, क्यो शमा ब्याह नही करती थी। एक दिन उस ने अपनी आँखों देख लिया। फरीद की तसवीर के सामने खडी वह अविरल आँसू रो रही थी। बेगम के सीने में जसे कटार आ लगी हो, और वो वहीं का वही बेसुध ढेरी हो गयी। शमा का राज खुल गया था। लेकिन ये कसे हो सकता था? उस के सीने का सब से महबूब भेद! यह कसे हो सकता था? और शमा दीवानी ने अपनी माँ को झुठलाने के लिए ब्याह करने का इकरार कर लिया। ये कसे वो बरदाश्त कर सकती थी कि कोई सोचे कि वो अपनी बहन से उस का शौहर छीन लेना चाहती थी? शमा को कोई कहे तो वो लाख जानें अपनी दीदी पर से न्योछावर कर दे। शबनम का इस में क्या कसूर था?

अपनी माँ को ग़लत साबित करने के लिए शमा ने ब्याह करने का फसला कर लिया। और पहला लडका जिस का जिकर हुआ उस के साथ शादी के लिए रजामन्दी दे दी। शमा ने 'हाँ' की और जसे बहार आ गयी हो सारे घर में गहमागहमी होने लगी। शबनम विलायत से उड कर उस के विवाह में शामिल होने के लिए आयी। हुमा आयी। हुमा का घरवाला आया। दर से साक-सम्बन्धी इकट्ठे हुए।

कितनी प्यारी दुल्हन बनी थी शमा! उसे देख-देख कर भूख न मिटती। अम्मी ने जी भर कर अपने अरमान उतारे। ढर सा उसे दहेज दिया गया। उस के बाप ने अपनी लाडली के लिए लाखों रुपये लुटा दिये।

और शमा डोली में बठ कर चली गयी। अपनी पाक मुहब्बत का मम सीने में छुपाये, शमा चली गयी।

एक दिन, दो दिन, चार दिन, अभी पूरा हफ्ता नही गुजरा था कि खबर आयी उस की बहन शबनम मर गयी थी। बच्चों के कपडे इस्तरी कर रही उसे बिजली का झटका लगा था, और वही की वही तडप कर उस ने जान दे दी। शमा ने सुना और वो औंधी जा गिरी। ये क्या हो गया था? चार दिन उसे ब्याहे नही हुए थे! यह क्या हो गया था! इस तरह की अकाल मौत, सारे शहर म हाहाकार मच गयी। रो रो कर, पीट-पीट कर घर वाले बेहाल हो गये। जवान-जहान लडकी, फूला जसे तीन बच्चे छोड कर, एक पलक झपकने में चली गयी थी।

कोई नही कहता था बेगम बचेगी, कोई नही कहता था कि नवाब बचेगा, शबनम के खाविन्द की ओर वो देखने, शबनम के नन्हें-नन्हें बच्चों की ओर देखते और बूढे बुढिया को हौल पडन लगते।

और फिर वो दिन समीप आ गया, जब फरीद को लौट कर नौकरी पर पहुँचना था। और फैसला यह हुआ कि सब से छोटी हुसना का उस से विवाह कर दिया जाये। अपनी दीदी के छोटे छोटे बच्चा को सँभाल लेगा, और फिर लडका भी इतनी दूर जा रहा था, बाहर अकेले उसे तकलीफ होगी।

शमा सब कुछ सुनती रही। शमा सब कुछ देखती रही।

सब से छोटी बहन हुसना और उस के शौहर फरीद को हवाई जहाज में बिठा कर लौट रही उस शाम अपने खाविन्द के साथ मोटर की पिछली सीट पर बठी शमा फूट पडी। इतने दिन स डोर मोर वह अपनेआप को सँभाले हुई थी। इतन दिन से वो कुदरत के इस सितम पर हरान गुमसुम थी। आज अपने घरवाले के क धे पर सिर रख कर, शमा की आखों में से आँसुओ की जैसी झडी लग गयी। रोती जाये, रोती जाये। सब उसे समझाते थे सब उसे दिलासा देते थे, लेकिन शमा के दिल का दद कोई नही पहचानता था। कोई नही! रब्बुल आलमीन ने जो अन्याय उस से किया था, वह कोइ नही जानता था। कोई नही! और शमा में की औरत के सीने का राज किसो का नहीं पता लगा। चाहे सारी उमर जलती रहे, जलती-जलती खतम हो जाये, शमा के मन का मम कोई नहीं जान सकेगा।

•

# दस-दस के नोट

मनाली के बाद एकदम चढाई ह और रोहताग तक चाहे फ़ासला ज्यादा नही पर रास्ता अत्यन्त कठिन है। सुबह के चले हुए वह स्थान-स्थान पर सुस्ताते अभी आधी मजिल ही तय कर पाये थे कि साँझ हो गयी। इस ओर जब साझ होती ह तो फिर रात झट ही उतर आती ह।

उन को सडक के किनारे एक गाव में रात गुजारनी पडी।

जिस घर में उन्हाने पनाह ली उस का मालिक सुदर इस समय दो मुसाफ़िरों को आता देख कर खिल सा गया।

पिछले वष भी उस के घर इसी तरह दो मुसाफिर ठहरे थे। किन्तु वे तो गोर थ सफेद चमडी वाले कजी आँखो वाले, उन के सिर पर टोप थे। लेकिन ये मुसाफिर तो हिदुस्तानी थे। काले रग काली आँखें, काली आँखो पर काले चश्मे।

घर के ऊपर वाले कमरे में मुसाफिरो को ठहरा कर सुदर नीचे उन के खाने-पीन का प्रब ध करन लगा। तेरह साल की उस की बेटी प्रीतो साथ वाले घर में खेल रही थी। सुदर सोचता, उस को आवाज़ दे कर बुला ले। फिर सोचता वह बेचारी मेरी क्या मदद करेगी। सँभालती कम ह, बिगाडती ज्यादा ह, अल्हड, भोली, मासूम। और बार-बार आज सुदर को अपनी पत्नी की याद आती। उसे तो चटनी बनानी भी आती थी जो नीचे मदाना में रहने वाला के मनपसन्द होती है। किन्तु भगवान् ने उसे छीन जो लिया! और सुदर सोचता इसी में चाहे उस की भलाई हो।

ईश्वर की मरजी को सुदर सारी आयु मानता रहा था, पर वह हरान था, हमेशा ईश्वर की मरजी उस की मरजी के उलट क्या होती ह। जिस बात में उस की खुशी होती भगवान् वह बात कभी नहीं होने देता था और बाकी सब बातें उस की आशा के अनुसार होती रहती थी। दस भेडा के पीछे आज कितने साल हुए उस की जमीन रेहन पडी हुई था। पाँच रुपये हा ता अपनी बेटी के लिए बालियाँ और मोतियों का हार खरीद कर उस के लिए रिश्ता ढढ ले। ढाई रुपये उस को बनिये के देने थे और वह अक्सर काट-काट जाता था। और किस तरह बुरी-बुरी नजरा स वह देखता था! अब मुह खोल्ता बुरा बोल बोलता। गली की ओर खुलते उस के आँगन के दरवाज़े की कुण्डी टूटी हुई थी। और आज छह महीन होन को आय थे यह नयी कुण्डी

नही बनवा सका था। रात को जब तेज हवा चलती तो बज बज कर दरवाजा टूटने लगता। और गाँव के आवारा कुत्ते इस मे बरामद में आ कर मूत जाया करते थे। यदि उस के पास चार पैसे हो सुन्दर सोचता तो वह अपनी पत्नी के निमित्त कोई दान पुण्य ही करता। आज सात महीने उस को मरे हो गये थे और इस ने अपनी सारी आयु की साथी के लिए कुछ नही किया था। और इस तरह सोचते सोचते सुन्दर की आखें डबडबा गयी।

धीरे धीरे काम-काम कर रहा सुन्दर अपने विचारा मे खोया हुआ था। उस की गरीबी उस की मजबूरिया एक फिल्म की तरह उस की आँखों के आगे घूमती जा रही थी।

सुन्दर जान मार कर मेहनत करता था, दिन से ले कर रात तक, तब भी कही मुश्किल से उस को रोटी चलती थी। कच्ची कौडी नही वह कभी बचा सका था। और वह सोचता उस के कर्ज कब उतरेंगे, उस की आवश्यकताएँ कब पूरी होंगी।

पिछले साल उस के यहाँ दो मुसाफ़िर ठहरे थे। सुन्दर को पाँच रुपये दे गये। उन पाँच रुपयों से सुन्दर ने दस काम चला लिये थे। यदि वह पाँच रुपये इस के पास न होते ता जब इस की पत्नी बीमार पडी पता नही वह क्या करता। और फिर जब वह मर गयी तो पता नहीं इस की क्या दशा होती।

पाच रुपये सुन्दर को मिले थे और दस रुपये शेरे की छिनाल बेटी ले गयी थी। दस रुपये। और सुन्दर सोचता पता नही वह शेरे की बेटी थी भी कि नही। शेरे की घरवाली के बारे में लोग कितनी बातें करते थे। चुडैल थी चुडैल। कई कतल हुए थे उस के पीछे। कई घर उस ने बरबाद किये थे।

इस तरह खयालों में खोया सुन्दर धीरे धीरे अपना काम किये जा रहा था। बाहर अधेरा हो गया। फिर बरफ़ गिरनी शुरू हो गयी।

बरफ़ आहिस्ता आहिस्ता पडती रही।

खेल कर जब प्रीतो घर लौटी उस के कधो पर पड बरफ़ के गाले फिसल फिसल कर नीचे गिर रहे थे।

प्रीतो पडोसिया के खा-पी आयी थी। आते ही बिस्तर में घुस गयी। उस के पिता का काम तो सारा खतम हो चुका था। कुछ मिनट उस ने सुन्दर से बातें की और फिर बेसुध सो गयी।

बाहर बरफ पडे जा रही थी।

भेड की खाल का एक चीथडा अपने ऊपर लिये सुन्दर खाने का सामान मुसाफ़िरा के कमरे में ले गया। खाने का सामान सुन्दर ले गया पीने का सामान उन के पास पहले ही था। और यों प्रतीत होता था जसे वह कितनी देर से अपने दिल को बहला रहे थे। कमरे में आग जल रही थी और एक खुशबू फली हुई थी जो कितने दिन सुन्दर को उस कमरे में से आती रही जब पिछले साल गोरे उस कमरे में रह कर

दस-दस के नोट

गये थे।

सुन्दर को यह खुशबू बड़ी अच्छी लगी। उस की नाक के अन्दर कुछ बाला का जसे झनझना रहा थी।

खाना खतम हुआ पर मुसाफिरों का पीना अब भी जारी था। सुन्दर जब बरतन संभाल कर चलने लगा इस साल के मुसाफिरों की आँखों में भी उस ने वही माँग देखी जो पिछले साल के दो गोरों ने की थी। तारि सारी रात उन के कमरे में आग जलती रहे। बाहर ठण्ड जो इतनी थी। बरफ पड़ जा रही थी, पड़े जा रही थी।

और जब सुन्दर नीचे आन लगा, एक मुसाफिर उठा और उस ने दस दस के दो नोट सुन्दर की मुट्ठी में थमा दिये।

और सुन्दर की दारू की सुगन्ध से भारी हो रही पलकें मुश्किल से उठ सकी, और उन्हान मुसाफिरों को विश्वास दिलाया कि उन का काम हो कर रहेगा।

दस-दस के दो नोट, सुन्दर को ऐसे लगता जसे उस के तन-बदन में एक झनझनाहट छिड़ गयी हो। उस की पलकें खुली की खुली रह गयी। उस के डले जसे फूट कर बाहर आ पड़ेंगे। बार बार उस के हाथों में पसीना आता बार बार उन को वह अपने चोगे के साथ पोछता कहीं नोट गीले न हो जायें। बार-बार उस के हाथ तर हो जाते।

और धीरे से अपना दरवाजा भिड़ कर खाल का चीथड़ा अपने सिर पर लिये सुन्दर बाहर निकल गया। घुप अंधेरी रात! कितनी देर से पड़ रही बरफ! सब रास्ते ढक गये थे। पर सुन्दर के हिले हुए पाँव जहाँ उसे जाना था ठीक उसे ले जा रहे थे।

दस दस के दो नोट! सुन्दर सोचता एक नोट वह शेर को देगा। उस की बेटी छिनाल का क्या था और एक नोट उस का अपना ही जायगा। दस का एक नोट और पाँच का एक और नोट। कमरे का, खाने का आग का खिदमत का। बख्शीश। उस की अपनी और कली जसी बेटी का। उस की बेटी ने चाहे काम तो कोई नही किया था पर सुबह जाने के समय जब मुसाफिरों को वह झिझकती हुई, सकुचाती हुई हाथ जोड कर नमस्ते कहेगी तो अपनी बख्शीश पर उस का हक हो जायगा।

एक दस का नोट और एक पाँच का नोट। सुन्दर सोचता उस के सारे क़र्ज़ उतर जायेंगे। अपने साहूकारों का जब उसे ख्याल आता तो सुन्दर को ऐसा लगता जसे उस के शरीर पर फोड़े निकले हुए हो। और अब वह सोचता जसे वह नहा धो कर साफ-सुथरा हो जायेगा। फिर वह जो कमायेगा सो खायगा। उस को कोई फ़िक्र फाका न रहेगा।

धीरे धीरे बरफ पड़े जा रही थी, जसे अभी तो पूरी रात बाकी थी जाड़े का पूरा मौसम बाक़ी था बरसने के लिए। और गाँव में कभी का सोता पड़ चुका था। किसी घर में रोशनी नही थी। किसी घर में कोई आवाज़ नही थी। सुन्दर को इस चुप से इस अँधेरे से आज पहली बार एक सहम सी महसूस हुई। उस ने सोचा शायद इस लिए कि उस के पास दस दस के दो नोट थे। आज वह अमीर था रुपये

वाला था। और सुंदर के होंठों पर एक मुसकान खेलने लगी।

शेरे के घर आंगन में उस का कुत्ता उछल कर सुंदर के ऊपर लपका। कुत्ते को पुचकार कर जब वह आगे हुआ, सुंदर ने देखा घर को तो बाहर ताला लगा हुआ था। न शेरा था, न शेरे की बेटी घर में थी।

"कजर किसी जहाँ का पता नहीं कहाँ मख मार रहा है" सुंदर ने दाँत पीसते हुए कहा और फिर उस पर जैसे मनो पानी पड़ गया हो। उस की छाती के साथ लगे दस-दस के दो नोट उस को दो सूखे छिलकों की तरह चुभने लगे।

और सुंदर सोचता पाँच रुपये जो कमरे के उसे मिलेंगे उन के साथ उस का क्या बनेगा! उस का दलिद्दर तो कम से कम पन्द्रह रुपये से ही धुल सकता था। और फिर उसे लगा उस का भगवान् उस से फिर दगा कर गया है। जैसे कोई किसी को दिखा कर उस से वह चीज छीन ले।

घर की ओर लौट रहा सुंदर फिर चिंताओं के दलदल में फँस गया। अब वह बार-बार रास्ता भटक जाता बार-बार उसे ठोकर लगती। रात भी तो इतनी काली थी, इतनी भयानक थी।

बरफ पड़े जा रही थी, पड़ जा रही थी।

चलते चलते अचानक सुंदर का पैर फिसला और वह चार कदम दूर औंधा जा पड़ा। पहाड़ों में पैदा हुआ पला, सुंदर गिलहरी की तरह पहाड़ियों पर दौड़ता रहता था। इस तरह अपनी सारी याद में वह कभी नहीं गिरा था। उस की पसलियों में टीसें उठ रही थीं। और अभी मुश्किल से ही उठा था कि दूर सामने किसी साधु की समाधि पर एक दीया टिमटिमाता उसे दिखाई दिया। घुप अँधेरे में एक दीया जल रहा था दूर बहुत दूर! अपने कपड़ों पर लगी बरफ़ को झाड़ते हुए सुंदर को महसूस हुआ जैसे वह दिया उस पर हँस रहा हो। जैसे उस दीये ने सुंदर को इस तरह ठोकर खा कर गिरते हुए देख लिया था।

रात अत्यंत भयानक थी। श्वेत-श्वेत बरफ अंधेरे की कालिमा को और काला बना रही थी। निराश, अपने घर की ओर लौट रहे सुंदर के पाँव मन मन भारी हो रहे थे। वह कदम नहीं रखता, उस का कदम नहीं पड़ता। रास्ता जैसे खतम होने में ही नहीं आ रहा था। कहीं कोई कुत्ता नहीं भौंकता था। किसी घर में कोई हलचल नहीं सुनाई देती थी। जंगली जानवर तक कहीं छुप बैठे थे। समूचा संसार सोया पड़ा था। और यह चुप और यह खामोशी सुंदर को जैसे खाने को दौड़ रही था। वह और ज्यादा चिंताओं के दलदल में डूबता जा रहा था।

सुंदर ने सुन रखा था, दूर बहुत दूर शहरों में लोगों के पास इतने पैसे होते हैं, इतने पैसे होते हैं कि सुंदर का सारा कोठा भर जाये तो भी बच जायें। सुंदर को इस बात पर कभी विश्वास नहीं आया था।

पाँच रुपये जो मिलेंगे, सुंदर सोचता उन से वह पहले बनिये का कर्ज

उतारेगा। जो वह इसे इस की बेटी को गालियाँ देता था। वह सुन्दर को छुरिया की तरह लगती थीं। और फिर वह अपने आंगन के दरवाज़े की कुण्डी खरीदेगा। हर वक्त दरवाज़ा खुला रहता था। जो कोई भी गुज़रता उस में अन्दर झांकता रहता। अब उस की बेटी सयानी हो रही थी। और फिर मनि कुछ बचा तो वह प्रीतो के लिए कोई पीतल का गहना खरीद लायेगा। दूर कसब में आन जाने का भी तो खच होगा। और सुन्दर सोचता पाँच रुपया से वह क्या-क्या करेगा! नशा धोयेगा क्या निान्गा क्या!

काश! कभी जो दस रुपये और उसे मिल जाते।

सुन्दर का एक रोशनी सी अपनी आँखों के सामने दिखाई देने लग पड़ी। और इस रोशनी में उसे गाँव के नाई काहन की हालत नज़र आयी। काहन का खयाल आते ही सुन्दर खिल सा गया। काहन के घर जवान बेटी थी। नेक की बेटी की तरह जवान और खबसूरत। काहन तो सुन्दर से भी ज़्यादा ग़रीब था। काहन को तो एक रुपया कोई दे तो वह ऊँची से ऊँची चोटी से छलांग लगाने को तयार हो जाये। *काहन की बेटी का क्या था! वह तो पाँच रुपये में टल जायेगी।* और सुन्दर के कदम तेज़-तेज़ पड़ने लगे। उस को समस्या का जैसे उसे हल दिखाई देने लगा।

सुन्दर सोचता काहन का क्या था! उस को तो एक घूँसा मार कर वह मना सकता था। उस की बेटी को तो वह ज़बरदस्ती भी उठा कर ला सकता था। काहन की मज़ाल ही क्या थी! आखिर गाँव का कमी था।

कान्न का घर गाँव की दूसरी ओर था।

बरफ पड़ जा रही थी पड़े जा रही थी।

*"काहन का क्या था!"* इस तरह सोचता सुन्दर काहन के घर की ओर जा रहा था कि अपने कोठे के पास से गुज़रते उसे खयाल आया कि एक नज़र अन्दर आगन में झाक लें। प्रीतो अकेली सोयी पड़ी थी और दरवाज़ा वह खुला ही छोड़ आया था।

"काहन ससुरे का क्या था!' अपन खयालों में खोये सुन्दर ने जब अपने कोठे का दरवाज़ा धकेला, दरवाज़ा के पट खुले नहीं दरवाज़ा तो अन्दर से बन्द था। सुन्दर हरान था। प्रीतो तो मुरदा की तरह सोती थी। वह इतनी सुघड़ कहा कि उठ कर अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर ले।

"प्रीतो प्रीतो!" सुन्दर ने दरवाज़ा खटखटाया।

अन्दर से कोई जवाब नहीं था।

'प्रीतो! प्रीतो! प्रीतो!" सुन्दर ने ज़ोर ज़ोर से दरवाज़ा को झझोड़ा।

कोठे के अन्दर हलचल हुई और पट की दरार में से दस दस के दो नोट और बाहर सुन्दर के पाँव पर आ गिरे।

सुन्दर के शरीर का जसे सार का सारा लहू किसी ने खींच लिया हो। 'हाय

मैं लुटा!" उस की चीख निकली और बाहर आँगन में दौड कर उस ने देखा कि ऊपर कमरे में बत्ती जल रही थी और मुसाफिर अन्दर नही थे।

दारू की जो खुशबू उस का ऊपर कमरे में से आयी थी अब उसे नीचे अपने कोठे में से आ रही थी। और सुन्दर हक्का-बक्का अपने बरामदे में खडा अपने पाँव में पडे नोटों को देख रहा था।

"नही, नही" और फिर सहसा सुन्दर ने दरवाजा को तोडना शुरू कर दिया। "प्रीतो, प्रीतो" बार-बार चीखता और बार बार दरवाजे पर अपना सिर मारता।

दरवाजा अन्दर से पक्का बन्द था।

सुन्दर खफा हो हो कर, रो रो कर, फरयाद कर-कर के, बार-बार अपनी बेटी को पुकारता। तेरह साल की मासूम! हुट-हुट कर अपने सिर को दरवाजा से टकराता। सुन्दर लहू-लुहान हो गया। सारा गाँव सो रहा था जैसे कभी न सोया हो। दूर मोहन के घर की ओर एक कुत्ता भौंक रहा था। सुन्दर के कपडे लहू से लथपथ हो गये थे। और इस बार जब उस ने अपना सिर दरवाज़ा से मारा, वह बेहोश हो कर औंधा जा गिरा!

सारी रात बरफ गिरती रही, और सुन्दर का क्रोध में उबल रहा लहू ठण्डा होता गया, ठण्डा होता गया और फिर उस का शरीर सारे का सारा अकड गया।

सुबह अडोस-पडोस के लोग सुन्दर के आँगन में जमा थे। लहू में लथपथ सुन्दर बरामदे में बेजान पडा था। दस दस के दो नोट वसे के वसे उस के पास पडे थे। और लोग बार बार उस की बेटी प्रीतो से पूछते, "इस को क्या हुआ है?"

और प्रीतो हर बार इस तरह गुमसुम आखों से देखती, जैसे कह रही हो, "मुझ से क्या पूछते हो? मैं भी तो मर चुकी हूँ।"

●

# अकेली

१५ मई, ३ बजे बाद दोपहर—

तीन पाच, तीन पाँच, तीन पाँच ।

जी ।

मैं मिस हाश्मी बोल रही हूँ ।

जी हाँ, यास्मीन हाश्मी ।

कौन ? माफ कीजिए, मैं पहचानी नही ।

ओ, आप ?

भाईजान को बुलाती हूँ । सच, भाईजान तो हैं नही ।

एयरपोट गये ह ।

जी मैं कह दूँगी, मिस्टर मल्लिक ने टेलीफोन किया था ।

जी, सलीम मल्लिक ।

१५ पार्क रोड, मुझे पता ह ।

जी, जी ?

अब्बाजान दौरे पर हैं ।

अम्मी अस्पताल में ह कितने दिना से।

जी नहो, शायद आपरेशन होगा।

अकेली ? नही नौकर हं।

जी, शुक्रिया।

जी, जी।

जी।

आदाब !

जी।

जी, बेहतर।

मैं कह दूँगी।

आदाब अ

जी ?

जी हाँ, ठीक ह।

अच्छा, आदाब अर ।

जी, जी जरूर।

आदाब अज।

१५ मई, ३ बज कर १० मिनट बाद दोपहर—

तीन पाँच, तीन पाँच, तीन पाँच।

जी।

यास्मीन हाश्मी।

शुक्रिया।

जी म अकेली बिल्कुल नही। सारे नौकर घर में ह। आया मौ ह, बरा है खानसामा है।

अभी भाईजान आ जायेंग।

उन का कोई पुराना क्लासफेलो विलायत जा रहा ह।

जी ?

हाँ, क्लासफेलो तो आप भी ह।

मुझे याद ह। याद क्या नही ? तब म बहुत छाटी थी।

जी अब्बाजान का कुछ पता नही। हफ्ता दस दिन लग ही जायेंगे। आज सुबह ही तो गये है।

अम्मी ? अस्पताल वाला की मरजी पर ह। अभी तो जाँच ही हो रही ह।

.. ..

हाँ, इस बार गरमो न तो हद कर दी। सात दिन से झुलस रही ह। ऐसी गरमी पहले ता कभी नही पडी।

हमारा सिफ बड रूम एयरकण्डीशण्ड ह गलरो नही।

..

टेलीफ़ोन गलरी में है।

जी ?

जी नहीं, कोई बात नहीं।

आदा

जी शुक्रिया।

जी नहीं।

आदाब

जी ?

बहुत अच्छा।

आदाब अर्ज।

१५ मई, ३ बजकर २० मिनट बाद दोपहर—

तीन पांच, तीन पांच, तीन पांच।

जी मैं यास्मीन बोल रही हूं।

मेरी आवाज बैठी हुई है ? नहीं तो।

शायद मैं आया माँ को पुकार रही थी।

जी हां। दोपहर को नौकर तो अपने अपने क्वार्टरों में चले जाते हैं। आया माँ मेरे पास रहती है। आज वह भी गायब है। इधर उधर कहीं होगी। पिछले महीने उस के घरवाला नहीं रहा।

जी नहीं, अकेली काहे को ?

अकेली

भाईजान अभी आ जायेंगे। उन को पता है पीछे म अकेली हूं।

..

हां, आज गरमी बला की ह। बादल अभी दूर ह। मानसून अभी तो बम्बई भी नही पहुंचा।

अच्छा, आदाब, भाईजान आ गये हैं शायद।

नहीं, नही, यह तो कोई और मोटर थी। हमारी मोटर क रग की एम्बेसडर। साथ की कोठी में चली गयी ह। आप की मोटर क्रीम रग की ह न? मुझ क्रीम रग बड़ा पसन्द है।

सच!

भाईजान की तरफ देखो, वहीं बठ ही गये ह।

क्या, एक घण्टे बाद आयेंग? आप को कसे पता?

*हवाई जहाज लेट ह? मैं मरी! एक घण्टा और! मैं न कहा भी था टलीफ़ोन कर के पूछ लो, कहने लगे हवाई जहाज हमेशा वक्त पर आते ह।*

नही, आया माँ नहीं, मेरी किताब नीचे गिरी ह।

योंही एक नावेल ह। मुरेविया का नया नावेल।

हां, एम्टी कनवैस। आप ने पढा ह? मैं ने तो अभी शुरू किया ह। आया माँ नही थी और म ने सोचा अकेली बठी ।

डर? डर किस का? अपने घर में क्या डर?

मेरी आवाज़ डरी हुई ह? नही तो।

आया माँ ने मुझे दूध पिलाया ह। मुझे पाला ह। अम्मीजान तो तब से बीमार चली आ रही हं।

यहीं कहीं होगी। अभी आ जायेगी। आजकल बेचारी बड़ी उदास है। अकेली हो गयी है न।

नहीं, आप काहे को तकलीफ़ करेंगे। और नहीं तो मैं लैला को टेलीफ़ोन कर लूँगी। हम घण्टे टेलीफ़ोन पर बातें करती रहती हैं। मुझे टेलीफ़ोन पर बातें करना अच्छा लगता है।

आप को भी ? सच ?

आप की एक तसवीर हमारी नहीं भाईजान के एलबम में है। सब के दरम्यान आप खड़े हैं। सब से ऊँचे। ऊँचे और लम्बे

पुरानी तसवीर है ? पुरानी है तो क्या ? भाईजान के सारे दोस्त हैं ।
शायद कोई आ रहा है। अच्छा आदाब

नहीं, कोई नहीं, बिल्ली है। बिल्ली कहीं से चूहा पकड़ लायी है। टप-टप खून बह रहा है। बिल्ली अब बरामदे में निकल गयी है।

क्या ? आप को कोई बुला रहा है ?

अच्छा आदाब।

१५ मई, ३ बज कर २५ मिनट बाद दोपहर—

हलो !

लैला है ?

ज़रा, बुलाइएगा

मैं यास्मीन बोल रही हूँ।

लला ! क्या हो रहा है ?

म अकेली थी, मैं ने सोचा लाओ तुम्हें टेलीफ़ोन ही कर दूँ।

बाहर धूप कितनी है ! जैसे कौवे की आँख निकल रही हो ।

पता नही आज मुझे अजीब-अजीब लग रहा ह । न मालूम आया माँ कहाँ चली गयी ह । भाईजान एयरपोर्ट गये ह । अब्बा दौरे पर ह और अम्मी, तुम्ह पता ह अस्पताल में

क्या तुम्हें किसी जरूरी टेलीफोन का इतजार ह ?

किस का ?

अच्छा मैं समझ गयी ।

तेरा मतलब ह बाबा, मैं टेलीफोन ब द कर दू ?

अच्छा, यह बताओ अकबर के बटे का पहला नाम क्या था ?

हाँ, सलीम । मुझे याद नही आ रहा था ।

अच्छा, ब द करती हूँ, बाई-बाई !

१५ मइ १ बज कर ४५ मिनट बाद दोपहर—

हलो ! देखिए मैं पिछले १५ मिनट से दो तीन छह, सात, नौ, एक मिलाने की कोशिश कर रही हूँ । टेलीफोन खराब लगता है शायद !

क्या ? खराब नही, टेलीफोन रुका हुआ ह ?

१५ मिनट से कोई बातें किये जा रहा ह ?

मैं मरी !

१५ मई, १ बज कर ४५ मिनट बाद दोपहर—

हलो ! सम्मी ह ?

..

१५ मर्च, ४ बजे शाम—

हलो !

जी साहब !

मैं आया मां बोल रही हूँ साहब ।

घर कोई नही साहब ।

यास्मीन बीबी को सख्त बुखार है साहब, पलंग पर बेहोश पडी है ।

म बाहर गयी हुई थी वापस आयी तो कमरे में रडियो बहुत ऊंचा लगा हुआ था । इत्ता ऊंचा रडियो ता हमारी कोठो में कोई नही बजाता । अंगीठी पर रखी घडी नीचे फर्श पर टुकड-टुकड हुई पडी थी । और यास्मीन बिटिया बुखार से पलग पर निढाल ।

मुझे कुछ समझ नही आ रही है साहब ! मैं तो भली चंगी उसे छोड कर गयी थी । कई बार म यहीं बाहर चली जाती हूँ ।

लडकी को शायद कोई परछाई लग गयी है ।

आप आ रहे है ?

.. ..

आप कौन है साहब ? माफ करना, मैं ने पहचाना नहीं ।

याकूब राड से छोटे साहब के दोस्त ?

अच्छा साहब ।

•

# कुलसम

न खाने को न पीने को, आज ऐसी कौन सी सौगात बूढा बाबा शहर से लाया था ? और नवयुवक मास्टर के बेचन कदमा की तेज तेज आहट उस की अँधेरी कोठरी में आ कर खो गयी। दायी ओर रसोई में कुछ नही था। रसोई के सामने चटाई बिछी रहती था जिस पर बूढा बाबा बठ कर भजन करता था। चटाई पर एक सुमिरनी मुसीमुसाई पडी थी, और बस। इस के आगे कोठरी और अँधेरा था। चाहे दिन अभी नही डूबा था, बूढे बाबा की कोठरी में इस से पहले ही अधेरा-अँधेरा रहता ह। और अब नौजवान स्कूल मास्टर की फटी फटी आखें अदर म कुछ ढूढ रही थी। "न खाने को न पीने को," तो फिर क्या था !

और फिर नवयुवक स्कूल मास्टर ने दखा बूढे बाबा की कोठरी के हलके-हलके अँधेरे में, खम्भे के साथ एक लडकी सटी खडी थी। ऊची लम्बी, गोरी चिट्टी गज गज लम्बे बाल जस चमेली की बल अपन भरपूर यौवन में महक बिखेरती ऊपर उठ गयी हो। और नौजवान मास्टर की आँखें फटी की फटी रह गयीं।

न खाने का न पीने की !' खम्भे के सामने अँधेरे म एक चारपाई थी। चारपाई पर रग बिरगे चारखानो का एक खेस बिछा था।

"मरा नाम कुलसम ह। कितना ही समय बीत गया। नौजवान स्कूल मास्टर के अपलक नेत्र कभी चारपाई को देखते, कभी खम्भे से सटी हुई परी जैसी उस लडकी को। देख देख कर वह दीवाना सा हो रहा था।

"मेरा नाम कुलसम ह। आप का नाम क्या ह ?' फूल की पत्तिया जैसे उस लडकी के होठ खुले। और नौजवान स्कूल मास्टर जसा थका हारा चारपाई पर ढर हो गया। उसे लगा जसे वह अपनी जि दगी क पचीस बरस चलता ही रहा हो।

इसी लिए तो बूढा उतावला हो रहा था, नौजवान स्कूल मास्टर सोचने लगा। बार-बार स-देश भेजता था—मास्टर जी से कहता, उन के लिए सौगात आयी रखी ह। लेकिन स्कूल ब-द होने से पहल वह कसे आ सकता था ! शाम को छुट्टी हुई, बच्चे अपन घर चले गये, फिर कही मास्टर जी पधार सके। पूछने पर कहने लगा, 'न खाने की न पीने की ह।"

सचमुच न खाने की थी न पीने की।

खाने की क्यों न थी ? वह तो उसे समूचा निगल जायगा। पीने की क्यों न थी ? वह तो उस के दांतों पर दांत रख कर सारी की सारी को एक ही घूंट में पी जायेगा। और नौजवान स्कूल मास्टर का अंग अंग ऐंठने लगा उस की आंखों में एक नशा सा झलकने लगा। एक बेपनाह तूफान सा उस की रग रग में ठाठें मार रहा था।

आजादी शायद इसी को कहते हैं नौजवान स्कूल मास्टर सोच रहा था ! अभी तो देश कल आजाद हुआ था। सारे जहां से अच्छा हिंदोस्तां हमारा !' और अभी दूसरा दिन भी नहीं ढला था कि एक हूर उस के सामने खड़ी थी।

कुलसम ! जैसे हाथ लगाने से मैली हो रही हो !

मेरा नाम कुलसम है।

और नौजवान स्कूल मास्टर को याद आया कि उस गांव में हिंदू, सिक्ख लड़कियां दिन के उजाले में बाहर नहीं निकल सकती थीं। मुसलमान गुण्डे आती जाती लड़कियों पर आवाजें कसा करते थे और उन को पूछने वाला कोई नहीं था। एक तो फिरंगी का राज्य और दूसरे मुसलमानों का शासन चलता था सारे पंजाब पर। दिन-दहाड़े किसी की पत उतार लेना दिन दहाड़े किसी के सेंध लगवा देना दिन दहाड़े किसी की बहू बेटी को उठा कर इधर उधर कर देना मुसलमान पड़ोसियों के लिए यह सब कोई ज्यादती नहीं थी। उन को कहने-सुनने वाला कोई न था।

और आज उस के सामने एक परी खड़ी थी। जैसे सात परदों में से निकाल कर किसी ने लाया गया हो। सच्चा मोती। नौजवान स्कूल मास्टर का अंग-अंग तड़प रहा था। उस की आंखों में पाप छलक रहा था। उस के होठों पर एक घृणापूर्ण हंसी खेलने लगी और उस ने आगे बढ़ कर खम्भे से लगी लड़की का हाथ पकड़ कर, उसे चारपाई की ओर खींचा। लड़की अपनी जगह से हिली नहीं। नौजवान स्कूल मास्टर ने फिर उसे अपनी ओर खींचा। लड़की वैसी की वैसी खम्भे से सटी खड़ी रही।

आप बात तो करें। उस ने फरियाद की।

नौजवान स्कूल मास्टर को कोई और बात सूझ ही नहीं रही थी। वह अपने हठ पर अड़ा था। बार-बार लड़की को अपनी ओर खींच रहा था।

आप मेरे साथ ब्याह कर लें। पहले आप मेरे साथ ब्याह कर लें। पराये मर्द के साथ कोई चारपाई पर कैसे बैठ सकता है ?' लड़की ने मिन्नत की। नौजवान स्कूल मास्टर के चेहरे पर वैसी की वैसी वहशत थी। उस की आंखों में वैसे का वैसा पाप झलक रहा था। मुंह से कुछ नहीं बोलता था और लड़की को चारपाई की ओर खींचे चला जा रहा था।

आप ऐसा न करें। मैं हाथ जोड़ती हूं आप ऐसा न करें। पहले आप मुझ से ब्याह कर लें। आप नौजवान हैं। आप की उम्र का ही था जिस से मेरी सगाई हुई थी। आप के जैसा कद-बुत। आप जैसा गोरा माथा आप जैसे दांत—मोतियों के दाने। उन कुमानियों ने टुकड़े-टुकड़े कर दिया। मेरे मां-बाप मेरे भाइयों मेरे सारे रिश्तेदारों की

एक एक कर के कृपाणा से हत्या की गयी । पता नही मैं कैसे बच गयी । म पागलों की तरह भागी जा रही थी कि यह बूढा मुझे पकड कर ले आया । रास्ते में इस ने मेरे साथ वायदा किया था कि यह मुझे किसी के पल्ले बांध देगा । आप मेरे साथ ब्याह कर लेवें ।" नौजवान स्कूल मास्टर को कुछ सुनाई नही दे रहा था । उस का रुआं रुआं असे एक नशे से मदमस्त था । अपने पूरे बल से उस ने लडकी को फिर चारपाई की ओर खींचा । लेकिन लडकी ने खम्भे को नही छोडा । अपने कदमों पर अडिग खडी रही ।

'आप मेरे साथ ब्याह कर लेवें । मैं आप के पैरों पडती हूँ । पहले आप मेरे साथ ब्याह कर लें । कभी किसी जवान जहान लडकी ने इस तरह फरियाद की है ? कभी किसी कुआरी कन्या ने इस तरह मुँह खोला है ? आप मेरे साथ ब्याह कर लेवें । म आप की मोल ली हुई बांदी की तरह रहूँगी ।'

नौजवान स्कूल मास्टर को कुछ सुनाई नहीं दे रहा था, कुछ दिखाई नही दे रहा था । एक बेपनाह वहशत में फुँकारता हुआ वह उठा और खम्भे से लगी लडकी के दोनों हाथ पकड कर उसे चारपाई की ओर खींचा । और तब पल भर के लिए वह बेबस लडकी जैसे शेरनी बन गयी और पूरे ज़ोर से उस ने उसे धक्का दिया । नौजवान मास्टर उलट कर चारपाई पर औंधा जा गिरा ।

'मैं आप के हाथ जोडती हूँ ।' अब लडकी छम छम रो रही थी कि नौजवान स्कूल मास्टर क्रोध में दांत पीसता हुआ चारपाई से उठा और तेज़-तेज़ डग भरता हुआ कोठरी से बाहर निकल गया । बूढा बाबा नीम के नीचे बैठा सुतली बट रहा था । नौजवान स्कूल मास्टर की व्यथा सुन कर उस ने तकली वही की वही रख दी और "सुसरी म हो बडी की बनी आयी ब्याह करवाने वाली !" कहता हुआ कोठरी के अन्दर चला गया । अन्दर घुसते हुए उस ने किवाड बन्द कर लिया ।

कोई तीन मिनट के बाद किवाड खुला और बूढा अपने तहमद की गाँठ लगाता हुआ बाहर आया । जाओ मास्टर जी अब बेखटके अन्दर चले जाओ ।" कहते हुए उस ने दरवाजे के बाहर रखी हुई पानी की लुटिया उठायी और नीम के नीचे बैठ कर हाथ धोने लगा । धीरे धीरे डग भरता नौजवान स्कूल मास्टर कोठरी के अन्दर गया । कोठरी के धीमे धीमे अँधेरे में उस ने देखा, अब लडकी चारपाई की एक पाटी पर बैठी हुई थी । उस की पीठ इस की ओर थी । उस का रेशमी सूट मसला हुआ था । उस के सिर पर चुनरी का पल्ला नही था । उस के बिखरे बालों की एक लट उस के भीगे हुए गाल से चिपकी हुई थी । उस की गर्दन से जैसे पसीने की धाराएँ बह रही थी । नौजवान स्कूल मास्टर उस के साथ चारपाई पर बैठ गया । लडकी इस बार उठी नही । नौजवान स्कूल मास्टर ने एक हाथ लडकी के कन्धे पर रखा । लडकी हिली नहीं । "कुलसम !" नौजवान स्कूल मास्टर ने उसे सम्बोधित किया । तीन मिनट हुए जो लडकी हाथ जोड जोड कर फरियाद कर रही थी, अब खामोश थी ।

और फिर कोठरी में अन्धेरा छा गया । शायद बाहर सूरज डूब चुका था ।

बहन देवकी सुबह-सवेरे उठती, बावली में नहा कर गुरबाणी का पाठ करते हुए घर आती। पाठ करते-करते गुरुद्वारे का काम करती। उधर उस का भाई काम पर जाता इधर यह गुरद्वार कीर्तन सुनने के लिए चल देती। हर रोज भोग गुरद्वार में ही बज जाते थे। गुरद्वार से निकली कोई न कोई उसे बातों में लगा लेता। लड़कियाँ अपने दुख उस से रोतीं बड़ी-बूढ़ियाँ छोटी-छोटी बातों में उस की सलाह लेतीं। जब घर लौटती बच्चे पढ़ने के लिए प्रतीक्षा कर रहे होते। दोपहर को बच्चे जाते और अड़ोस-पड़ोस की औरतें प्रसाद ले कर आ जाती। किसी की कोई समस्या किसी की कोई मुश्किल और इस तरह शाम हो जाती। फिर गुरु घर का काम, फिर उस का भाई काम से लौटता अपने एक ही एक भाई से वह दिन भर की कहानियाँ सुनती अपने एक ही एक भाई को वह दिन भर की छोटी-छोटी बातें बताती बहन देवकी सो जाती। उस के जीवन का एक और दिन व्यतीत हो जाता।

यों हँसी खुशी दिन गुजर रहे थे कि कुछ दिनों से बहन देवकी को महसूस होने लगा जैसे उस की नजर कमजोर हो रही हो। पहले उस के बाल गिरने शुरू हुए थे अब उस की नजर ने जवाब देना शुरू कर दिया था। पढ़ रही होती बहन देवकी के पपोटे दुखने लगते, अक्सर उस का सर भारी भारी रहने लगा।

कितने बहन देवकी के देसी इलाज हुए, कोई फर्क न पड़ा। उस की नजर कमजोर हो रही थी। उस को साफ लग रहा था। और फिर उस ने सोचा छावनी आँखें दिखा कर वह ऐनक लगा लेगी। यह कौन सा कठिन था! गाँव का एक डॉक्टर छावनी अस्पताल में नौकर था और उस ने कहा 'चाहे किसी रोज बहन देवकी आ जाये मैं सब कुछ कर दूँगा। बहन देवकी के लिए कौन सब कुछ करने के लिए तैयार न हो जाता था!

आँखों का निरीक्षण कराने के लिए आयी, बहन देवकी के साथ कितनी देर अपने कमरे में बैठा डाक्टर बातें करता रहा। कितना लम्बा, कितना सुन्दर जवान था! कुछ महीने हुए बेचारे की पत्नी चार दिन बीमार रह कर चल दी थी। पीछे एक बच्चा था और डाक्टर कहता 'हर समय मेरा ध्यान बच्चे में रहता है।' नौकरों पर बच्चे थोड़ा ही पलते हैं! और फिर डाक्टर कितनी देर अपने बच्चे की बातें करता रहा। पत्नी के बगैर मर्द के जीवन को दुश्वारी की बातें करता रहा। उदास उदास, कितना भावुक हो रहा था!

और बहन देवकी को लगा, यह डॉक्टर उस से क्या इस तरह चबा चबा कर बातें कर रहा था। और वह सारी की सारी लरज़ गयी। पर नहीं यों ही यह उस का भ्रम था अगले ही क्षण बहन देवकी को ख़याल आया। और वह डाक्टर के साथ उस के बच्चे के सम्बन्ध में, उस के अपने जीवन के सूनेपन के बारे में कितनी देर बैठी बातें करती रही।

और फिर डाक्टर उसे आँखों के निरीक्षण के लिए एक विशेष कमरे में ले

गया। एक कमरा, उस के अन्दर एक और कमरा। कमरे की खिडकियाँ बन्द कर दी गयी, झरोखे बन्द कर दिये गये। जब किवाड बन्द हुआ तो कमरे में घुप अँधेरा हो गया था। एक कमरे की खिडकिया रोशनदानों के शीशा पर नीले परदे लगे हुए थे। कमरे में अँधेरा हुआ और बहन देवकी के पाँव के नीचे से जैसे धरती निकल गयी। उसे या महसूस हुआ जैसे डाक्टर ने उस के कन्धे पर हाथ रखा हो।

एक बिजली की तेजी से बहन देवकी पीछे हटी और चिल्लाते हुए उस ने एक चाँटा डाक्टर के मुह पर दे मारा। फिर लाख लाख गालिया बकते किवाड खोल वह बाहर आ गयी। रोती जाती और गालियाँ बकती जाती। डॉक्टर हक्का बक्का उस के मुँह की ओर देख रहा था। कहता तो क्या ? अपनी सफाई पेश करता तो कैसे ?

उसे कुछ समझ नही आ रहा था। बस हाथ जोड रहा था, माफिया माँग रहा था, आँखें नीचे किये उस की मजाल नही थी बहन देवकी के क्रोध की ओर देख भी जाये।

और बहन देवकी वैसी का वैसी खफा, वैसी की वैसी दाँत पीसते, वैसा का वैसी होंठ काटते गाँव लौट आयी।

पता लगाने वालों को पता लग गया था, जो घटना अस्पताल में हुई था। और कितने दिन लोग खुसर फुसर करते रहे। कितने दिन डाक्टर शरमिन्दा शरमिन्दा बाहर न निकलता और बहन देवकी वसी की वसी गुरुद्वारे पाठ करती, वसी की वैसी गली मुहल्ले में खडे अडोस-पडोस की औरतों को सलाह देती। वैसे के वसे गाव में हर किसी की जबान पर 'बहन देवकी' 'बहन देवकी' चढ़ा रहता।

यदि डॉक्टर इतना बडा आदमी न होता, इतना पढा लिखा न होता, इतना अमीर न होता तो पता नही लोग उस का क्या हाल करते।

और फिर डॉक्टर का ब्याह हो गया शहर के एक प्रसिद्ध डाक्टर की बी० ए० पास लडकी के साथ। परियाँ जैसी सुन्दर लडकी, उसे देख देख कर गाँव वालों की भूख न मिटती। हर कोई डाक्टर को बधाई देता और डॉक्टर कहता उसे तो सिर्फ अपने बच्चे की चिन्ता थी, अब कोई घर रहेगा और उस का बच्चा पल जायेगा। लडकी पढी लिखी थी, सयानी थी, आते ही जैसे उस ने बच्चे को आँखों में बिठा लिया।

डॉक्टर का घर बस गया।

कई दिन गुजर गये।

परन्तु बहन देवकी जब भी डॉक्टर को देखती, डाक्टर की पत्नी को देखती, डाक्टर की गली से गुज़रती, डाक्टर की गली का कुत्ता भी उसे कहीं नज़र आ जाता तो उसे घुप अँधेरे कमरे में डॉक्टर का उस के कन्धे पर हाथ रखना याद आ जाता और उसे चारों कपडे जैसे आग लग जाती। उसे अपना आप मैला मैला लगता। वह सोचती सात पानियों से कहीं नहाये तो जा कर वह उजली हो। उस के मुह का स्वाद

कितनी कितनी देर तक धड़का धड़का रहता।

कई दिन और गुज़र गये। अपने ध्यान में बैठी बहन देवकी को डॉक्टर का उस के कन्धे पर हाथ रखना याद आ जाता और वह पानी-पानी हो जाता। एक मन, एक चित्त हो कर पाठ करते सहसा उस के सामने अंधेरे कमरे का वह दृश्य आ जाता और बहन देवकी के माथे पर बल पड़-पड़ जाते मुंह की पंक्ति मुंह में ही रह जाती उस का पाठ बीच में छूट जाता। अड़ोसियों-पड़ोसियों से हँसते-खेलते कहानियाँ सुनते अचानक उसे डाक्टर का चया चबा कर उस के साथ बातें करना याद आ जाता और उसे लगता जसे उसे किसी ने गाली दी हो। गन्दगी की टोकरी जसे किसी ने उठा कर उस के ऊपर ला डाली हो।

कई दिन और गुज़र गये।

बहन देवकी को डाक्टर का उस के साथ छोटी छोटी, इधर उधर की बातें करना नही भूलता था। अंधेरे कमरे का वह दृश्य नही भूलता था जब खिड़कियाँ झरोखे और किवाड़ बन्द कर दिये गये थे। किसी का पीछे से कन्धे पर हाथ रखना बार बार याद आ जाता था।

कई दिन और गुज़र गये।

और फिर बहन देवकी का जी चाहता वह अकेली-अकेली चुपचाप बठी रहा करे। अकेले बठे उसे लगता जसे पीछे से आ कर किसी ने उस के कन्धे पर हाथ रख लिया हो और बहन देवकी आँखें बन्द किये बठी रहती बठी रहती। और कितनी देर हाथ जसे वसे का वसा उस के कन्धे पर टिका रहता। और फिर सारी सारी शाम, सारी-सारी रात उसे अपना वह कन्धा अच्छा अच्छा लगता रहता।

कई दिन और बीत गये।

फिर बहन देवकी को अकेला बठना अच्छा लगने लगा। आँखों में आँसू भर दूर क्षितिज पर देखना अच्छा लगने लगा। खाली खाली आकाश में आँखें फाड़ फाड़ कर कुछ ढूंढना अच्छा लगने लगा। दूर गा रहा कोई चुप क्या हो जाता था? उस का जी चाहता कोई सारी रात गाता रहे। हलकी हलकी धूप में ऊंघना अच्छा लगता। कल-कल करती बावली के मोतिया जसे पानी में जब वह उतरती उस का बाहर आने को जी न चाहता।

कई दिन और बीत गये।

फिर बहन देवकी का जी चाहता कोई चुपके से आये और उस के कन्धे को पीछे से पकड़ ले। और वह कितनी कितनी देर ड्योढ़ी की ओर पीठ किये बठी रहती। शाम रात में ढल जाती।

फिर बहन देवकी का जी चाहता आज कल जब वह धूप निकलने तक सोयी रहती थी क्या नही कोई आ कर उसे कन्धे से पकड़ कर उठा देता था।

अपने ख्यालों में डूबी जब वह या गुरुद्वारे में बठी होती, उस का जी

चाहता कोई उसे कन्धों से पकड़ कर पूछे, "अरी देवकी यह तुझे हो क्या रहा है ?"

रो रो कर थक गयी, पाठ कर कर के हार गयी, माथा रगड़ रगड़ कर बेहाल हो गयी। बहन देवकी बहती ही जा रही थी।

कई दिन और बीत गये।

फिर बहन देवकी का जी चाहता कोई तेज़-तेज़ डग भरता आये और उस के दोनों कन्धों से पकड़ कर झिंझोड़ दे।

कई दिन और बीत गये।

और फिर सुना गया कि बहन देवकी एक राहगुज़र की घोड़ी पर बैठ कर चली गयी थी। हर हफ्ता वह उन के घर के पास से गुज़र कर शहर अनाज बेचने जाता था। और हर हफ्ता लौटते हुए खाली घोड़ी लाता था। और आते भी और जाते भी वह बहन देवकी की ड्योढ़ी में सुस्ता कर कुएँ का ठण्डा पानी पिया करता था। इस बार वह लौटा और बहन देवकी को भी साथ ले गया।

बहन देवकी का घर भी तो सड़क के किनारे पर था।

●

# एक नगमे की मौत

पार भर फूल गुलोरान
मिट्टया नहीं पर मिलगो
(सारा चमन में एक फूल सुनो है
फूल मिला नहीं, पर मिलेगा)

ये गीत अम्बो बहन का है। एक दिन गर्मियों की शाम को उस ने मुझे एक अमराई तले पकड़ लिया और अपनी शहद जैसी मीठी आवाज़ में गा गा कर सुनाया था। मेरी आँखों में झाँकती जाती और गाती जाती। मेरे हाथों को अपने गालों पर रख लेती और गाती जाती। गाती जाती और हँसती जाती। गाती जाती और रोती जाती। फिर जब भी कभी अपनी मुंडेर पर बैठी अम्बो बहन पड़ोस में मुझे आँगन में खेलता देख लेती तो गीत के ये बोल गुनगुनाने लगती। गीत के ये बोल गुनगुनाती और मुसकाती जैसे उस की नाक कान आँखों में से फूट फूट निकलती। हमेशा जब छत पर बैठी अम्बो बहन यूँ गुनगुना रही होती तो मुझे लगता जैसे वो मुझे बुला रही हो। और मेरे बचपन का मन के भारी हो जाते। मैं टिक टिक उस की ओर देखता रहता—अम्बो बहन का अटूट यौवन साँवली-साँवली प्याजी-प्याजी गालों पर एक तिल बालों की कोई लट उड़ उड़ कर उस के मुँह पर पड़ रही।

हर साल गरमी की छुट्टी में अपने ननिहाल गुज़ारा करता था। ननिहाल जाने की जब भी कभी बात चलती तो मैं खिल सा जाता। नाना-नानी ढेर से मामू-ममानियाँ मुझे ननिहाल में केवल अम्बो बहन ही याद रहती।

एक बार गाँव में एक बेर तले बेर लूट रहा। अम्बो बहन ने मुझे देखा और अपनी चुनरी मुझे पकड़ा दी। गिलहरी की तरह बेरी में ऊपर चढ़ गयी। एक एक टहनी को झटकती लाल बेरों से नीचे की धरती पट गयी। चुन चुन कर मैं थक-थक जा रहा था। मेरी जेब मेरी झोली भर गयी और ढेर से बेर अभी बिखरे पड़े थे। मुझे समझ नहीं आ रही थी कि क्या करूँ, क्या न करूँ। न बेर छोड़े जाते न बेर खाये जाते। और अम्बो बहन नीचे उतरी काँटों से लहू-लुहान हो रही थी। उस के मुँह माथे हाथों बाहों से लहू बह रहा था। हँसती हँसती वो नीचे उतरी और इतने सारे बेर देख कर खुश हो रही। मुझे उस ने छाती से लगा लिया।

दूध दूहने के लिए हवेली की ओर जा रही, कभी जो मैं राह में मिल जाता, अम्बो बहन मुझे साथ ले लेती। हवेली में दूध दूह रही मेरे मुँह में वह धारें छोडती रहती पच कल्याण भैस की धारें, विलायती नसल की गाय की धारें। कभी धारें मेरी आँखों में लगतीं कभी धारें मेरे कानों में लगती कभी धारें मेरी नाक में लगती कभी धारें मेरे गालो पर लगतीं। मूँद मूँद आँखें खोले मैं दूध के लिए गरदन को दायें-बायें नीचे ऊपर घुमा रहा होता और अम्बो बहन हँसती भी जाती और धार पर धार छोडती भी जाती। दूध से भरे छलक रहे स्तनों को अपनी पोरों में पकड कर इतनी लम्बी धार छोडती कि पीते पीते कई बार मुझे उच्छू आ जाता। पीता कम और गिराता ज्यादा। अम्बो बहन तो भी खुश थी। और यों दूध दूहते, अकसर हमें सायकाल हो जाता। अम्बो बहन कहती—"जब तुम मेरे साथ होते हो, तो मुझे जरा डर नही लगता। नही तो अँधेरे से जवान जहान लडकियो को बडा खौफ आता है।'

यें खातिरो में, यूँ खेलते-खेलते, मुझे पता भी न चलता और गरमी की छुट्टियाँ खत्म हो जाती। मै शहर अपने घर लौट आता। फिर वही स्कूल का काम, फिर वही सडको की भीड फिर वही गलो का चीत्कार।

बस अगली गरमी की छुट्टियाँ और अपने ननिहाल की याद, जिन्दगी को सुहाना बनाये रहती।

गरमिया की एक दोपहरी गाव की नदी के उथले पानी में अपने साथियो के साथ नहा रहा अम्बो बहन ने मुझे देख लिया। घुटना घुटनो पानी में हम डुबकियाँ लगाते और एक दूसरे पर छीटे मारते खेल रहे थे। अम्बो बहन ने मुझे देखा और मेरा उँगली पकड ली। मुझे वह गहरे पानी की ओर ले गयी। अम्बो बहन मुझे तरना सिखाने लगी। सारी दोपहर नदी के मोतिया जसे साफ पानी में हम नहाते रहे। अपनी बाँहो, अपनी हथेलियों का सहारा दे कर वो मुझे तरना सिखा रही थी। कभी सारे का सारा वो मुझे अपने बाहुपाश में ले लेती, कभी मैं उस के कधो पर हाथ रख कर पानी में लात चलाने लगता। कभी वो मुझे अपनी पीठ पर चढा कर कही की कही ले जाती। अम्बो बहन के जूडे की भीनी भीनी सुगन्ध नस नस में मैं अपना सिर उस के रेशम जसे मुलायम बालो पर टिका देता, और उस की पीठ पर पडा, उस की गरदन के गिर्द अपनी बाहो को लपेटे मुझे लगता जसे मैं किसी सुरमई बादल के आँचल म लिपटा उड रहा हूँ। फिर अम्बो बहन मुझे दोनो हाथों से गरदन पकडने के लिए कहती और नदी के बायें किनारे से डुबकी लगा कर दायें किनारे पर पहुँच जाती। यू अम्बो बहन के साथ मुझे पानी में नीचे-नीचे उतर जाना अच्छा अच्छा लगता। यू अम्बो बहन के साथ पानी के ऊपर-ऊपर आ जाना अच्छा-अच्छा लगता। कभी अम्बो बहन खुद किनारे पर बठ जाती और मैं उस की पानी में लटकी हुई टाँगो को पकड कर मछली की तरह तरने की कोशिश करता। सब से मुझे अच्छा लगता जब अम्बो बहन औंधी हो तख्ते का तख्ता बनी पानी की सतह पर लेट जाती न हिलती,

न डुलती, पानी की लहरें जैसे उसे झूला झुला रही हों। यूँ अहिल पानी पर पड़ी अम्बो बहन का जूड़ा खुल जाता और उस के गज गज लम्बे बाल कभी इस तरफ से झांकने लगते, कभी उस तरफ़ से झांकने लगते। और अभी दोपहरी ढली नहीं थी कि अम्बो बहन ने मुझे तरना सिखा दिया।

कोई भुट्टा मीठा निकलता, भुट्टे सेंक रही अम्बो बहन मेरे लिए उसे सँभाल कर रख देती। बाजड़े की कोई बाली मजेदार होती बालियाँ तोड़ रही अम्बो बहन मेरे लिए उसे अलग कर देती। जिस बेरी के बेर मुझे अच्छे लगते उस बेरी के बेर और कोई नहीं तोड़ सकता था। तारा-मीरा अपने हाथों से बीनना मुझे अच्छा लगता था और अम्बो बहन खेतों की मेंडों पर घूमती तारा मीरा तलाश करती रहती और फिर मुझे अपने साथ ले जा कर मेरे नन्हें-नन्हें हाथों से उसे चुनवाती।

सावन के दिनों में मेरे ननिहाल-गाँव में झूले पड़ते थे। हर पीपल के नीचे झूला, हर अमराई के नीचे झूला हर बूढ़ी बेरी के नीचे झूला। सुबह शाम, दोपहर, लड़के-लड़कियाँ अपने-अपने काम से फारिग हो कर झूला झूलते रहते। बड़ी गहमा गहमी होती। चारों ओर रंग बिरंगी चुनरियाँ, रंग बिरंगे साफ़ माहिये की तानें और ढोले के टप्पे। और इन दिनों अम्बो बहन पोठोहारी जूता लट्ठे की सलवार डोरिये का कुरता और चितकबरा दुपट्टा लिये, ऊंची लम्बी यूँ लगती जैसे झूला झूलती झूलती घिर घिर आये बादलों में खो जायेगी। हर बार झूला झूलती ऊपर जाती मुझे लगता अम्बो बहन लौट कर नहीं आयेगी। पीपल की टहनियों को छू-छू कर आती पीपल की पत्तियों को चूम चूम कर आती। खिलखिला कर हंसती, ऊपर, और ऊपर पेंग चढ़ाये जाती। उस का दुपट्टा उस के गले में आन पड़ता, उस की लट्ठे की सलवार फूल फूल जाती। उस का कुरता उस के शरीर के साथ यूँ चिपक जाता कि उस का अंग-अंग रेखांकित हुआ दिखाई देने लगता। कित्ती कित्ती देर झूला झूलती अम्बो बहन न थकती न हारती। यूँ झूला झूल रही कभी वो मुझे पकड़ कर अपने साथ बिठा लेती। मैं उस की छाती के साथ चिपक जाता। और घुँघरुओं वाली पेंग के मधुर संगीत में घण्टों अम्बो बहन मुझे झूला झुलाती अपने प्रिय गीत के बोल गुनगुनाती रहती। आँखें मूंदे ऊपर और ऊपर, आखें मूंदे नीचे और नीचे। आँखें मूंदे फिर ऊपर और ऊपर, आखें मूँदे फिर नीचे, और नीचे। और हर बार यूं झूला झूल कर हटती अम्बो बहन मेरी आँखों में आँखें डाल कर कहती—तुम ज़रा और बड़े हो जाओ? मैं तुम्हें झूला झुलाना सिखा दूँगी। पेंग पर बिठा कर तुम चाहे किसी को कहां उड़ा कर ले जाना। और *अम्बो बहन दूर बहुत दूर, क्षितिज पर देखने लगती जहाँ सूरज रात को लुटाता* आँखमिचौनी खेल रहा होता।

लेकिन, मेरे बड़े होने में अभी कितने वर्ष बाकी थे। और अम्बो बहन अपनी बाँहों से उठा कर मुझे अपने सिर तक ले जाती और बार-बार कहती— देखो तो सही कितना बड़ा हो गया है! बड़ा जवान निकला है!" और फिर आप ही आप हंसने

लगती, जस गल्त सवाल को स्लेट पर से मिटा दिया जाये। हँसती हँसती मेरे मुँह, सिर, मेरी नाक, मेरे कान मेरे गले को चूमती रहती। अम्बो बहन को मुझे चूमना बहुत अच्छा लगता था। बात बात पर लाड में मुझे प्यार करने लगती। मेरे होंठों को अपने ओठों में दबा कर चूसती रहती, मेरी उँगलियों को अपने दाँतों में ले कर चबाती रहती मेरी हथेलियों को अपनी पलकों पर रख कर कितनी कितनी देर एक नशे नशे में उन्मत्त सी पड़ी रहती। और फिर किसी ने अम्बो बहन को याद दिलाया—अरी, लड़के को य दीवानों की तरह प्यार न करती रहा करो। ये अच्छा नहीं होता। मेरे ननिहाल गाँव में ये माना जाता था कि जितनी बार कोई किसी को प्यार करे, हर प्यार पर जिस को प्यार किया जाये, उस की उमर का एक पल कम हो जाता है। अम्बो बहन ने सुना और उस की ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की सांस नीचे रह गयी। हक्की-बक्की कितनी देर वो खड़ी सोचती रही। और फिर लाख उसे मुझ पर लाड आता, कभी उस ने मेरा चुम्बन नहीं लिया। उस के लब जैसे कपकँपा कर रह जाते, लेकिन चुम्बन उस ने मेरा उस के बाद कभी नहीं लिया। कभी कभी जब उस में मेरे लिए बेपनाह मुहब्बत फूटती तो वह अपने माथे को मेरे माथे के साथ जोड़ लेती, अपनी नाक को मेरी नाक के साथ रगड़ लेती अपनी आँखों को मेरी आँखों में डाले दीवानों की तरह कितनी कितनी देर देखती रहती।

मुझे अम्बो बहन का ये सब कुछ करना बहुत अच्छा लगता था। ननिहाल से लौटा, मुझे शहर में कभी अम्बो बहन का यूँ लबालब प्यार से भरी पलकों से देखना याद आ जाता और मैं खिल उठता। यूँ लगता जैसे दिल के किसी कोने में एक स्वर्ग आन बसा हो और अकसर मैं उस में घुस कर बैठ जाता।

नीचे गली में किसी बेलौस हँसी की आवाज आती, और मैं खिड़की से झुक झुक कर देखता कहीं अम्बो बहन तो नहीं। हर सुन्दर लड़की के चेहरे में मुझे अम्बो बहन की झलक दिखाई देती। कभी स्कूल से लौटते जब मुझे देर हो जाती, ममता में बेचैन खिड़की में खड़ी मेरी अम्मी की नज़रों में क्षण भर के लिए मुझे अम्बो बहन की सूरत दिखाई दे जाती। मेरी सब से प्रिय चीज़ मुझ दे रहे हाथ मुझे अम्बो बहन के हाथ लगते। और मैं उन्मत्त सा हुआ पलकें मूँदे रहता।

यूँ सपनों से खेलते-खेलते फिर गरमी की छुट्टियाँ आ जातीं। फिर मैं अपने ननिहाल पहुँच जाता।

इस बार जब मैं अपने ननिहाल आया मेरे पास छर्रों की एक बन्दूक थी। बन्दूक मुझे नयी-नयी ले कर दी गयी थी और उसे मैं हर समय उठाये चलाता रहता। हमारी मुँडेर पर आ कर बैठी हर चिड़िया का हर कबूतर का मैं निशाना बनाता और हर बार मुझे महसूस होता कि छर्रा जरूर अपने निशाने पर जा कर लगा है, और पंछी घर जा कर मर जायगा। और हर कोई मेरी हाँ में हाँ मिलाता रहता। किसी को किसी पंछी का कोई पर टूटा हुआ दिखाई देता, किसी को किसी पंछी के लहू

की बूँद टपकी हुई नजर आती। सारा सारा दिन मेरा इस नये खेल में मस्त गुज़र जाता।

बहुत दिन नहीं गुज़रे थे कि एक दोपहर मैं अपनी बन्दूक थामे अम्बो बहन को ढूढ़ने निकला। वो अपने पिछले बरामदे में अकेली बैठी थी। पता नहीं किस सोच में डूबी थी। मुझे आता हुआ देख कर खिल सी गयी। उस के होंठ थिरकने लगे। मेरे हाथों में बन्दूक देख कर अम्बो बहन ने बरामदे की छत पर बैठा एक मैना की ओर इशारा कर के कहा—"मारो तो!" और आँख झपकते में मैं ने निशाना साध कर बन्दूक चला दी। छर्रा मैं ने छोड़ा और मैना औंधी हुई सामने फर्श पर आन गिरी।

अम्बो बहन का मुंह खुले का खुला रह गया। मैं ने सचमुच मैना का निशाना बना दिया था। अम्बो बहन का जैसे लहू सूख गया हो। वो पीली ज़र्द हो गयी। जैसे प्याज़ का एक छिलका हो।

और अगले क्षण टूट कर जैसे उस ने मुझे अपने बाहुपाश में ले लिया। मेरे मुंह, माथे आँखों, गालों, पोर पोर को प्यार करती वो दीवानी हो गयी। अपने घर के पीछे बरामदे में उस चिलचिलाती दोपहरी में अम्बो बहन ने मुझे इतना प्यार किया, इतना प्यार किया, और फिर फूट फूट कर रोने लगी। रोये जाती रोये जाती।

उस शाम मेरी नानी के पास बैठी अम्बो बहन मैना की कहानी कहने लगी। 'जैसे तीर किसी की छाती में जा लगता है, यूँ इस ने बन्दूक दे मारी। बार बार अम्बो बहन ये कहती और बार बार अपनी छाती पर हाथ रख लेती। 'अब इस का ब्याह कर दो ताई, अब ये जवान हो गया है। और अम्बो बहन की पलकें गीली हो गयीं। पहली बार आज मैं अम्बो बहन की ओर देख रहा था और वो मेरी ओर नहीं देख रही थी।

अगली सुबह जिन्होंने अम्बो बहन को सो कर उठते हुए देखा, उन का कहना है कि उस की आँखें सूजी हुई थीं।

वो दिन और आज का दिन, अम्बो बहन फिर मुझे कभी नहीं मिली।

●

# रंगीन पायों का पलंग

रंगीन पायों के पलंग पर दुल्हन बैठी है। बैठी बैठी शायद सो गयी है। रात भी कितनी जा चुकी है। और दूल्हा, चौबारे के बाहर, खुली छत पर, तेज-तेज कदम टहल रहा है, दायें से बायें, बायें से दायें। नीचे दालान में चन्दो की आँख नहीं लग रही। छत पर टहल रहे उस के बेटे के कदम जैसे हथौड़े की तरह उस के सिर पर पड़ रहे हैं।

खिड़की के शीशे में से छन छन कर चाँदनी दुल्हन के बालों पर पड़ रही है पलकों पर पड़ रही है गालों पर पड़ रही है होंठों पर पड़ रही है, छातियों के नीचे परछाइयाँ बना रही है। ये परछाइयाँ हर क्षण लम्बी होती जा रही हैं।

चौबारे के बाहर छत पर टहल रहे दूल्हे के कदम तेज और तेज हो रहे हैं। उसे लगता है, जैसे हलका हलका बुखार हो। उस का शरीर तप रहा है।

करवटें बदल बदल कर चन्दो का अंग अंग दुखने लगा है। रात इतनी अँधेरी नहीं जितना अँधेरा उस की आखों के आगे घिरता चला आ रहा है, जैसे अँधेरे की दीवारें हों। सोयी-सोयी दुल्हन की चादर एक ओर से ढलक गयी है। उस की अनढकी कमर जैसे कोई गोरी धीरे से पट खोले किसी को पुकार रही हो, लेकिन कोई सुन नहीं रहा। तेज तेज कदम टहल रहे दूल्हे के कानों में एक अजीब खुसुर फुसुर की आवाज सुनाई दे रही है। कई वर्ष पहले सुनी खुसुर फुसुर की यह आवाज जैसे यहीं कहीं छिपी बैठी थी।

और यह खुसुर फुसुर नीचे दालान में, चन्दो के कानों में भी पड़ रही है। ऐसी ही एक रात की खुसुर फुसुर। और चन्दो का जैसे अंग-अंग झुलसा जा रहा हो। गीले उपले की तरह वह सुलग रही है।

यह कैसी खुसुर-फुसुर है जो दुलहन को भी सुनाई दे रही है। सोयी सोयी जैसे वह कोई रेडियो नाटक सुन रही हो। यह कैसा सपना है, इस नयी-नवेली दुल्हन का

"कोई है?'

'कोई भी तो नहीं।"

'यों ही मेरा वहम है।'

"आज की यह रात फूलों की रात है।'

'कोई है?"

'कोई नही, कोई नही ।''
' शायद मेरे दिल का चोर है ।''
आज की रात तुम जसे कोई परी हो ।
' तुम्ह सीढियाँ चढ रहे कदमो की आहट सुनाई नही दी ?'
'नही, नही ।
चाँदनी तुम्हारे होंठो को चूम रही ह ।''
चाँदनी तुम्हार गालो से खेल रही ह । '
'कोई ह ? बाहर छत पर कोई सास ले रहा ह ।''
कोई नही कोई नही ।'
' या होठों पे होंठ फिर चाहे कोई मर जाये । '
यो पल्को पर पलकें और फिर चाहे किसी क प्राण छूट जाये ।'
कोई ह !!!''

और फिर दुलहन की चीख निकल जाती ह । बाहर टहल रहे दूल्हे के कदम लडखडा कर रुक जाते ह । नीचे के दालान में लेटी चन्दो की साँस फूलने लगती ह और पसीना पसीना हो कर वह उठ बठती ह । और कई बरस पहले का एक भयानक दृश्य उस की आँखो के सामने जसे चित्रित हो गया हो ।

इस तरह की रात थी । ऐसी ही चाँदनी आकाश पर छिटकी हुई थी । चौबारे में खिडकी के पास रगीन पायो के पलग पर वह अपने प्रेमी के साथ मदहोश पड़ी थी । आधी रात का समय होगा । जो समय अब था । बाँहो में बाँहें । होठो पर होठ । अग के साथ अग । खिडकी में से छन छन कर आती चाँदनी उन की बेचनी उन के दीवानपन को जसे उकसा रही हो । कुछ देर और जसे खुशबुओं के आलिंगन में लिपटे, वह उड रहे हो । और फिर उस के प्रियतम की जीभ उस की जीभ पर तरने लगी । चन्दो को लगा जसे वह किसी नदी में डूबती जा रही हो । नीचे और नीचे । और फिर अचानक परदा हटा कर उस का बटा सात साल का बच्चा चौबारे में रगीन पायों के पलग के सामने आ खडा हुआ ।

तोबा-तोबा ! कितना अनथ हो गया था । उस का प्रेमी बर्फ का बना ठण्डा-ठार हो गया । और चन्दो ने अपन बच्चे को छाती से लिपटा लिया ।

अखिल की तबियत खराब थी । आज की रात वो हमार, रह गये । मैं उन का सिर दबा रही थी । ' चन्दो अपने बच्च को उगली म लगाये नीचे दालान में चली गयी । और हक्का-बक्का बच्चा थोड दर बाद सो गया । जसे सोया-सोया आया था ? जाग कर अपनी माँ को ढूँढता हुआ उपर चौबार में पहुँच गया था वसे ही बिना कोई बात किय उनींदा उनींदा सो गया । चन्दो की अपनी आँख लग गयी । और फिर पता नहीं कब चौबार में पड़ा उस का प्रेमी पीछ की सीढियाँ उतर कर चला गया ।

अगली सुबह हर रोज की तरह नहा कर चन्दो भगवान् की पूजा कर रही

थी। अगरबत्ती की खुशबू सारे घर में फली हुई थी। उस का बच्चा हर रोज की तरह हँसता खेलता उठा और जल्दी जल्दी स्कूल की तैयारी करने लगा। उस की बस जो सुबह सुबह आ जाती थी। सब से पहले उसे लेती, सब से आखिर उसे छोडती। बस वाले का क्या कसूर था। उस का घर ही शहर से बाहर था। उस क बाप ने इतना सुन्दर घर बनवाया और खुद लाम पर चल दिया। कई साल बीत गये थे। उसे तो अपने बाप की सूरत भी याद नहीं थी। ऊंचा लम्बा होगा गोरा चिट्टा होगा लम्बी लम्बी मूँछें जसे शेर की होती हैं। और या सोचते-सोचते वह काँपने लगता।

चन्दो ने अपने भगवान् का लाख शुक्र किया। उस के बेटे को जसे रात की बात याद ही न हो। चन्दो ने आजमा कर देखा था, जब भी वह अपने भगवान् की आरती उतारती, नम्रता से प्रार्थना करती, हमेशा उस के मन की मुराद पूरी हो जाती थी।

एक दिन, दो दिन चार दिन दस दिन उस के बेटे ने रात की उस घटना का कभी जिक्र नहीं किया। जसे कुछ हुआ ही न हो। जसे कोई सपना हो, जो किसी को याद न रहे। और फिर चन्दो जसे खुद भी उस बात को भूल गयी। याद रखने के लिए उस में रह ही क्या गया था। वह रात, और उस का प्रेमी उसे फिर कभी नहीं मिला। पहले कुछ दिन चन्दो उस से दूर दूर रहती रही। फिर वह खुद कहीं निकल गया। चन्दो उसे ढूंढ ढूंढ कर हार गयी। उसे उस का पता नहीं चला। शायद शहर छोड कर चला गया था।

कई वर्ष बीत गये। उस घटना का कभी जिक्र नहीं हुआ।

हाँ, एक बार बातों-बातों में उस के बेटे ने कहा था चौबारे का वह कमरा उसे जहर लगता है। और चन्दो का जसे दिल धक् से रह गया हो। पर नहीं, वह तो उस के बेटे ने यों ही कहा था। कालिज का लडका कोई चीज उसे अच्छी लगती कोई चीज नहीं। चौबारे में उन दिनों हवा बहुत तेज चलती थी और उस के सवरे हुए बाल खराब हो जाते थे।

फिर एक बार तो जसे चन्दो के पैरों तले जमीन निकल गयी हो। शेखर उस के प्रेमी का नाम था और उस का बेटा कहने लगा 'शेखर नाम मुझे जहर लगता है।

"क्यों?" चन्दो की साँस खुश्क हो गयी।

और फिर चन्दो हँस दी। दीवाना उस का बेटा। शेखर नाम का स्कूल के जमाने में उस का एक मास्टर होता था जो उसे जान बूझ कर फेल कर देता ताकि लडका और मेहनत करे। कोई बात भी हुई फ़ेल हो कर बच्चे का खून सूखा रहता और फिर पीटता भी तो कितना था। बेंत ले कर चमडी उधेड देता। उस का बेटा उसे बता रहा था और चन्दो अपने लाल के हाथों की उगलियों से खेल रही थी। एक इकलौता, उस की जान का टुकडा।

और आज सुहाग की पहली रात चन्दो ने अपने बेटे का बिस्तर चौबारे में

बिछाया था। यह फसला करने से पहले, एक क्षण भर के लिए उस ने सोचा, और फिर उस ने रगीन पाँया के पलग के पक्ष में ही निणय किया। और फिर दूसरा कमरा भी कौन सा था। नीचे एक दालान था जिस में वह गुम साता था। साथ बठक थी। खाने का कमरा उन्होंने बरामदे को ढक कर बनाया हुआ था। बस चौबारा ही फ़ालतू था। अब वह कमरा उस के बहू-बेटे का होगा। उस में वे दोनों रहा करेंगे।

और शादी के हल जगन से निबट कर चन्दो अपनी खाट पर जा लेटी। सुहागरात और फिर लडकी रच बस जायेगी। फिर चन्दो गुरुरू हो जायगी। वह रानी खुद निकालेगी खुद रखेगी। फिर चन्दो निश्चिन्त हो जायेगी।

पर नहीं यह छत पर कदमों की आवाज क्या थी। हाँ, कदमों की आवाज थी। उस के बेटे के कदमों की आवाज। कदमों की आवाज तेज हो रही थी और तेज हो रही थी। और चन्दो का दिल धडकने लगा। सुहागरात में उसे आराम करना चाहिए लेकिन उस का बेटा यों टहल क्यों रहा था? अकेले मद के कदम थे। दुलहन अन्दर पलग पर लेटी थी। वह बाहर टहल क्या रहा था दीवाना की तरह! दुलहन अन्दर पलग पर लेटी उस का इन्तजार कर रही होगी। और यह बाहर क्या यों पर शान-परशान कदम चक्कर काट रहा था?

और चन्दो का दिल धडकने लगा। उसे पसीना छूटने लगा। दायें से बायें बायें से दायें वह करवटें बदल रही थी। चन्दो सोचती, उसे यह हो क्या रहा था। जसे उस का अग अग झुलसा जा रहा हो। जसे उस का जोड जोड टूटता जा रहा हो। उसे यह हो क्या रहा था? चन्दो को लगता जसे उस का दम घुट रहा हो। कोई उस की छाती पर बठा जसे उस के गले को दबोच रहा हो। अँधेरा, अँधेरा! अँधेरे की दीवारें उस के आगे-पीछे चिनी जा रही थी।

और फिर चन्दो ने एक चीख सुनी। हूबहू उस की अपनी चीख, कई बरस हुए जो अचानक उस के गले से निकली थी, जब उस रात उस का बेटा चौबारे के कमरे में परदा हटा कर आ घुसा था।

यह चीख सपना देख रही दुल्हन की थी। और उस का बेटा बजाय इस के कि चौबारे में अपनी ब्याहता के पास जाता तेज-तेज कदम नीचे उतर आया था। उस के कमरे की बत्ती जला कर टिट टिट अपनी माँ को देख रहा था। फटी फटी आँखों। जसे कोई मुद्दई उगली उठा कर मुलजिम की ओर देखता है। कई बरस, कई बरस हुए चौबारे के उस रगीन पाया के पलग की सारी घटना उस की आँखों में लिखी हुई थी। सारी की सारी बात जसे किसी दबे कोने से उभर आयी हो।

और चन्दो का बेटा इस सब कुछ का अपनी माँ से जवाब माँग रहा था।

रगे हाथों पकडे चोर की तरह चन्दो खामोश थी।

और फिर उस का बेटा साथ के कमरे में चला गया। एक गोली की आवाज! एक और आवाज। और दूल्हा खून के जोहड में औंधा पडा था।

# १०×८ का कमरा

'यह कमरा १०×८ का होना चाहिए।'' तिपाई पर खुले पड़े नक्शे की ओर इशारा करते हुए मिसेज़ मलिक ने फिर कहा। यह तीसरी बार उन्होंने सुझाव दिया था। किन्तु पता नहीं क्यों न उन के पति ने और न ही आर्किटेक्ट ने उन की बात की ओर ध्यान दिया था।

मिसेज़ मलिक अपना मकान बनवा रही थी। दिल्ली के सब से अधिक फैशनेबल इलाके में उन का प्लाट था। और आज कल जब उन का तबादला दिल्ली में हुआ था उन्होंने फैसला किया, चार छह महीने लगा कर यह काम भी निपटा दें।

मिसेज़ मलिक कहती, 'मैं तो अब दिल्ली ही रहूँगी। आप की तबदीली तो हर चौथे रोज़ हो जाती है मैं तो अब बच्चों की पढ़ाई और खराब नहीं करूँगी। मैं और मां जी ( मिसेज़ मलिक की सास ) बच्चों के साथ दिल्ली ही रहेंगे। कोई बात भी हुई, हर दूसरे रोज़ तामझाम उठा कर दूसरे शहर।

बच्चे जवान हो रहे थे। दिल्ली में अकेले रहने से क्या डर? और फिर माँ जी उन के पास होंगी। मिस्टर मलिक भी अपनी पत्नी के साथ सहमत थे।

'यह कमरा १०×८ का होना चाहिए।'' मिसेज़ मलिक ने फिर कहा। पिछले कुछ क्षणों से मिस्टर मलिक के साथ कमरे में टेलीफोन सुन रहे थे।

'लेकिन यह तो स्टोर है। आर्किटेक्ट ने मिसेज़ मलिक को समझाया।

''यह तो ठीक है। मेरा मतलब है, यह कमरा माँ जी का हो जायेगा। फिर स्टोर बना लेंगे।''

आर्किटेक्ट को जैसे बात समझ में न आयी हो। वह मिसेज़ मलिक के मुँह की ओर देख रहा था।

मेरा मतलब है, माँ जी इस कमरे में उठ-बैठ लिया करेंगी। फिर उन के बाद उन्हें कौन सी अब ज्यादा देर '

इतने में मिस्टर मलिक टेलीफोन सुन कर आ गये। टेलीफ़ोन पर बातें करते करते उन्होंने भी यही सोचा था कि स्टोर रूम ज़रा बड़ा होना चाहिए। आदमी खुलासे से और सामान रख सके। और फिर खुले स्टोर की सफाई भी तो आसानी से हो सकती है।

और फैसला हुआ, बच्चों के बेडरूम और गुसलखाने के साथ लगता कमरा १० × ८ का बना दिया जाये। आँगन कुछ सिकुड़ जायेगा, इस में कोई हर्ज नहीं।

बाकी सब सुविधाएँ नक्शे में पहले ही मुहैया की हुई थी। और नक्शा पास कराने के लिए भेज दिया गया। मिसेज़ मलिक ने बड़े चाव से साथ अपना घर बनवाया। गरमी के दिन सारी सारी दोपहर छाता ले कर वे कारीगरों के सिर पर खड़ी रहती। कई बार, जब कोई मजदूर औरत न पहुँचती खुद मजदूरों का हाथ बँटाने लगती। सुबह हर किसी से पहले मौके पर पहुँचती। शाम को सब को भेज कर वापस आती। मिसेज़ मलिक मिट्टी के साथ मिट्टी होती रही। और फिर उन का मकान खड़ा हो गया।

कमरे तो पहले ही बंटे हुए थे कौन सा कमरा किस का होगा। मिसेज़ मलिक कहती, पुराने फर्नीचर का पटरा तक वे इस घर में न घुसने देंगी।

घर बन कर तयार हो गया था अभी गृह प्रवेश नहीं हुआ था कि सरकार ने मकान को रक्वीजीशन कर लिया। मिसेज़ मलिक को जब पता चला चारों कपड़े उन्हें आग लग गयी। लेकिन फिर ढेर सारी रकम किराये की सुन कर उस ने सरकार के इस जुल्म को माफ कर दिया।

अड़ोस पड़ोस की औरतों से, पहले से बना रखी दोस्ती, गली महल्ले में मकान बनाते वक्त पैदा हुई साँझ, मिसेज़ मलिक की छोटी मोटी कई आकांक्षाएँ, वैसे की वैसी धरी रह गयी। अपने बनाये घर को सँवारने सजाने के उस के सपने वैसे के वैसे अधूरे रह गये। मिसेज़ मलिक सोचती और एक फीकी सी हँसी उन के लिपस्टिक रंगे होंठों पर खेलने लगती।

और फिर उन का तबादला हो गया। मिसेज़ मलिक ने शुक्र मनाया। न अब वे अपना मकान देखा करेंगी न उन्हें गुस्सा आया करेगा, न अगले क्षण ढेर सारे किराये की फिक्र उन का गुस्सा ठण्डा हुआ करेगा।

दिल्ली से चलते समय कभी मिसेज़ मलिक सोचती—अच्छा है जायदाद तो बन गयी। कभी उन्हें अफसोस होने लगता, इतने शौक से उन्होंने अपना मकान बनवाया था हर अपनी जरूरत का ध्यान रख कर और चार दिन भी वे उस में रह नहीं पायी थी।

तबदीलियों के चक्कर में, एक शहर से दूसरे शहर घूमते, कई वर्ष बीत गये। एक अरमान था मिसेज़ मलिक का अपने घर में रहने का, वह पूरा न हुआ। सरकार ने उन के घर में कोई दफ्तर खोल रखा था। और मिसेज़ मलिक सोचतीं—चलो अच्छा है किराया तो हर महीने की पहली को हमारे नाम जमा हो जाता है। यदि सरकार न उठाती, तो कभी कोई किरायेदार, कभी कोई। किसी का यह नखरा किसी का वह। कौन किरायेदारों की फरमाइशें पूरी करता रहता।

यों तबादलों के चक्कर में मिसेज़ मलिक की सास चल बसी। बूढ़ी उम्र, कितनी देर और इन्तज़ार करती। मिसेज़ मलिक की बेटी ब्याही गयी। बस अब बेटे

का विवाह रचाना था। उधर उन के पति के रिटायर होने का वक्त आ रहा था। उन्होंने फैसला किया, रिटायर होने से कुछ दिन पहले वे लड़के का ब्याह भी कर डालेंगे। नौकरी में ब्याह रचाने में सौ मदद मिल जाती है।

उन के बेटे का ब्याह हो गया। घर बहू आ गयी। और फिर मिस्टर मलिक रिटायर हो गये। लेकिन दिल्ली वाला घर सरकार ने अभी तक खाली नहीं किया था।

मिस्टर मलिक और मिसेज मलिक अपने बहू-बेटे के साथ रह रहे थे। दिल्ली में ही तो उन का बेटा नौकर था। मकान के मालिक खुद किराये के घर में रहते, उन का अपना घर सरकार ने सँभाला हुआ था।

मिस्टर मलिक सरकार के साथ अर्जी पर्चे करते हार गये, फिर एक दिन उन का आखिरी वक्त भी आ गया। अभी मिस्टर मलिक की मृत्यु को तीन महीने नहीं हुए थे कि उन का घर खाली कर दिया गया।

मिसेज मलिक की फ़ैशनेबल बहू अपनी सास से भी ज्यादा उतावली थी अपने घर में जाने के लिए। उधर मकान खाली हुआ, इधर उस ने अपना सामान ढोना शुरू कर दिया। एक दिन, दो दिन तीन दिन, ठेले जाते रहे। बाज़ार से नया फ़र्नीचर पहुंचता रहा। मिसेज मलिक की बहू सारा सारा दिन अपने मकान में जा कर, सफ़ाई करानी रहती घर सजाती रहती।

सोमवार सुबह उन्हें अपने घर में प्रवेश करना था। उस दिन सो कर उठे और बाहर वर्षा हो रही थी। मिसेज मलिक की बहू, बेटा, मिसेज मलिक खुद प्रतीक्षा करते रहे, करते रहे वर्षा अभी रुकती है, किन्तु पानी लगातार पड़ता रहा। और फिर मिसेज मलिक के बेटे का दफ्तर का समय हो गया। फ़ैसला यह हुआ कि शाम को वे अपने घर में प्रवेश करेंगे। शाम को भी वर्षा वसी की वसी, टूट जा रही थी। मिसेज मलिक बार-बार कहती—मुहूर्त आज का निकला है किसी तरह आज अपने घर पहुँच जाना चाहिए। और फिर माँ जी का कहना मान बहू-बेटा वर्षा में ही चल दिये। जो सामान बाकी रह गया, वह फिर ढोया जा सकता था। एक अपनी कार थी एक टैक्सी मँगवा ली गयी।

छम-छम बाहर मेंह पड़ रहा था। कार की पिछली सीट पर बैठी मिसेज मलिक यादों की झुरमुट में खोयी जा रही थी।

वह अरमान जिस के साथ उन्होंने अपना घर बनवाया था वे दिन हाय! वे दिन भी कम थे! सारा-सारा दिन वे धूप में खड़ी मजदूरों को काम करता देखती रहती और क्या मजाल जो उन्हें रत्ती भर भी थकावट हो। उन के आर्किटेक्ट ने घर का एक रंगीन नक्शा बनाया था घर तैयार हो कर कैसा लगेगा। नक्शे में बरामदे के खम्भे के साथ सट कर एक औरत खड़ी थी—बेहद खूबसूरत, जैसे कोई परी हो। और उस रात सोने के लिए लेटी मिसेज मलिक को लगा आर्किटेक्ट ने जैसे उन्हें में यह चित्र उन का बनाया था। और फिर कई दिन बार-बार वे शृंगार मेज के सामने जा

खड़ी होती, बार बार उस चित्र को देखती। मिसेज मलिक को लगता आर्किटेक्ट ने वह चित्र उन्हीं का ही बनाया था। मिसेज मलिक सोचती, वह चित्र कभी वे अपनी बहू को दिखायेंगी।

उन की बहू ( ये आजकल की लड़कियाँ ) मगर अगली सीट पर पति के साथ बैठी हण्डब्ग में से शीशा निकाल कर, लिपस्टिक से अपने होंठ रंग रही थी। आखिर अपने घर ही तो वे जा रहे थे। बाहर पानी पड़ रहा था। ऊपर से रात हो रही थी। ऐसे में इतने शृंगार की क्या जरूरत। लेकिन ये आजकल की लड़कियाँ ! तोबा-तोबा ! कैसे गिटपिट गिटपिट वह अंगरेजी में बातें कर रही थी।

मिसेज मलिक से बस एक अंगरेजी नहीं सीखी गयी थी। और सब कुछ उन्होंने किया था। क्या क्या नहीं उन्होंने किया था ! पी भी थी। पार्टियों में क्लबों में, कब तक कोई इंकार कर सकता है। डान्स भी उन्होंने सीखा था। अपने पति के साथ भी, पराये मर्दों के साथ भी वे नाची थी।

लेकिन उन की बहू तो जैसे दस कदम उस से आगे हो। मिसेज मलिक को लगा—*आर्किटेक्ट के रंगीन नक्शे में वह बेहद खूबसूरत लड़की कहीं उन की बहू तो नहीं थी ?* नहीं नहीं, उन की बहू कैसे हो सकती थी, वह तो तब किसी के सपने में भी नहीं थी। तब तो उस का बेटा भी स्कूल में पढ़ता था। तरबूजी रंग की साड़ी जो उन की बहू ने आज बाँधी हुई थी वही रंग तो शायद था नक्शे वाली लड़की का। हाँ तरबूजी रंग ही तो था। तरबूजी रंग मिसेज मलिक को कभी नहीं अच्छा लगा। इतना भड़कीला रंग। जैसे किसी को आग लगी हो। आग तो लगी हुई थी इस जमाने को !

तरबूजी रंग की साड़ी पहन सकती हूँ—मिसेज मलिक सोच रही थी—*जब मानूँ यदि मेरी जैसी मेहनत भी कर सके। जैसे मैं ने घर बनाया था इस की उम्र में।* एक एक ईंट अपने सामने लगवायी। चाहे धूप हो चाहे कुछ मैं कभी न हिली थी चिनाई की दीवार से। मैं तो कई बार ईंटें उठा उठा कर उन्हें पकड़ाती रही। मैं तो कई बार रबड़ का पाइप उठा कर खुद सीमेंट की दीवारों पर छिड़काव करती रहती। मैं ने तो कई कई दिन रेत बीनी, जब कोई मजदूर औरत नहीं आती थी—उन दिनों उन चुडला के बच्चे होने वाले थे।

और फिर कार उन की कोठी में जा रुकी। आँख झपकने की देरी में मिसेज मलिक की बहू कूद कर बरामदे में जा खड़ी हुई। ठीक वहीं खम्भे के साथ सट कर जैसे नक्शे में लड़की खड़ी थी। मिसेज मलिक के कलेजे में जैसे छुरी चल गयी हो। शायद आर्किटेक्ट ने उन के साथ छल किया था।

सामने बरामदे में खम्भे के साथ सट कर खड़ी, तरबूजी रंग की साड़ी के साथ अपने मोटे भारी जूड़े को ढापती, उन की बहू पीछे टक्सी में से सामान उतरवा रही थी, अपनी मोटर में से सामान निकालने के लिए नौकरों से कह रही थी।

सारा सामान निकल गया। टक्सी वाला पैसे ले कर चला गया। मिसेज मलिक

वसी की वसी कार में बैठी थी। जैसे नीचे ही नीचे दलदल म कोई धँसता चला जा रहा हो। और फिर उन का बेटा कोठी के अन्दर चला गया, उन की बहू चली गयी, उन के नौकर चले गये। हर कमरे में बत्तियाँ जल उठीं। मिसेज मलिक वैसी की वसी कार में बैठी थी जैसे उन का अंग-अंग शिथिल पड गया हो। फटी फटी आँखों से देखे जा रही थी देखे जा रही थी।

एक घण्टा, दो घण्टे गुजर गये। और फिर उस घर वालों को याद आया।

"अरे माँ जी!" उन का बेटा घबराया हुआ लपका और उस ने मोटर का दरवाजा खोल माँ को बाहर निकाल लिया।

"बठे-बठे मेरी आख लग गयी।" मिसेज मलिक का बेटा हँसता हुआ अपनी माँ को कोठी में ले चला। उन की बहू भी बाहर आ गयी थी। बरामदे में खम्भे के साथ सट कर खडी हँस रही थी। तरबूजी रंग की साडी का पल्ला उस के मोटे भारी जूडे को ढक रहा था।

"मुझे खाना-पीना कुछ नहीं, मं तो अब लेटूँगी।" मिसेज मलिक ने अपनी बहू से कहा। खाना मेज पर लग चुका था। खाने के मेज पर ही तो उन्हें माँ जी की याद आयी थी।

"तो फिर आप अपने कमरे में आराम करें।" मिसेज मलिक की बहू ने १०×८ के उस कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा। और बेटा माँ जी की बाह पकडे उन्हें उन के कमरे की चारपाई पर लिटा आया।

"मेरा मतलब ह यह कमरा माँ जी का हो जायेगा, फिर स्टोर बना लेंगे।" चारपाई पर लेटे बार बार मिसेज मलिक के कानों में ये शब्द गूँज रहे थे।

मिसेज मलिक सोचती उन्हें कौन सा अब बठ रहना था, उन का सिरताज चल दिया था, जिन को लाख बार उन्होंने एक साथ जीने एक साथ मरने के वचन दिये थे।

"मेरा मतलब है, यह कमरा माँ जी का ही जायेगा फिर स्टोर बना लेंगे।' बार बार उन के कानों में पड रही यह आवाज कितनी ऊँची होती चली जा रही थी।

मिसेज मलिक सोचती उन्हें अब कौन सा बठे रहना है। उन के अरमान एक एक कर के पूरे हो गये थे।

"मेरा मतलब ह यह कमरा मा जी का हो जायेगा, फिर स्टोर बना लेंगे।' यह आवाज जैसे उन के कानों में गजने लगी। हाँ एक अरमान मिसेज मलिक का बाकी था। मिसेज मलिक सोचती मर तो उन्ह जाना ह काश मरने के बाद व यह देख सकें, उन की बहू उस कमरे को स्टोर बनायेगी कि नहीं।

"और तो सब कुछ ह एक स्टोर नहीं इस घर म," सामने खाने की मेज पर बठी उन की बहू कह रही थी।

मिसेज मलिक ने सुना तो उन्हें लगा, उन के दिल की हरकत जस बन्द हो गयी हो। एक झटका सा उन्हें महसूस हुआ और फिर उन की आँखें मुद गयीं।

# कभी बन्द दरवाजे तेरे, कभी बन्द दरवाजे मेरे

चिलचिलाती धूप में बाहर कमरे की आँच नहीं घुस रही। कमरे की खिड़कियाँ दरवाजे सब बन्द हैं। रोशनदानों पर पर्दे लगा कर अँधेरा किया हुआ है। छत पर एक मोटा चल रहा पंखा जैसे थक हार रहा हो।

खाने की मेज पर अकेले बैठे मुझे अपने बच्चे याद आ रहे हैं। आज कितने दिन हो गये हैं माँ-बेटी को पहाड़ गये हुए। मुझे अपने बच्चों की मासूम आँखें याद आ रही हैं। अभी तो पूरा एक महीना उन्हें और पहाड़ पर काटना है। मुझे बच्चों के गुलाबी गुलाबी गाल याद आ रहे हैं। फ्रिज में ठण्डी की हुई लस्सी के मैं गिलास पर गिलास पिये जा रहा हूँ। हर बार गिलास खाली करता हूँ, नौकर उसे फिर भर देता है। गरमियों में मुझे लस्सी पीना बहुत अच्छा लगता है। लस्सी पी पी कर पेट फूल गया है। और फिर लस्सी पी कर नींद कितनी आती है। मेरी आँखें एक खुमार में बोझिल-बोझिल हो रही हैं।

लेकिन मुझे तो अभी दफ्तर जाना है। खाना खा कर, पल भर आराम कर लूँगा। अभी तो मुझे आधा दिन और दफ्तर जा कर काम करना है। बाहर पोर्च में खड़ी मोटर भट्टी बन गयी होगी। लू भी तो कैसी चल रही है। झुलस-झुलस डालती है।

भिश्ती ने शायद फिर पीछे खस की टट्टियों पर छिड़काव किया है। कैसी सोंधी सोंधी खुशबू आयी है।

ठक! ठक!! ठक!!! बाहर कोई है।

इस वक्त?

हवा होगी! दामन में आँच लिये झुलसती चली जा रही है।

ठक! ठक!! ठक!!! हवा नहीं, यह तो कोई मुलाकाती है।

शायद कोई रास्ता भूल गया होगा।

"सरकार, कोई मिस साहब आप से मिलने आयी हैं" नौकर आ कर मुझे बताता है।

नौकर ने काम नहीं पूछा। हमेशा हमारा यह नौकर मुलाकाती का नाम और

नाम पूछना भूल जाता है। यह सब कुछ पूछना शायद इसे बदतमीज़ी लगता है। मुलाक़ाती को 'स्टडी' में बैठा आया है। पखा भी खोल आया है।

इस वक्त कौन हो सकता है? मुझे दफ्तर लौटने की जल्दी है। दफ्तर जाने से पहले यदि मौक़ा मिले, तो मैं आँखें मूँद लेटना भी चाहूँगा।

खाना खत्म कर रहा, हाथ धो रहा, कुल्ला कर रहा, बार-बार मैं सोचने लगता हूँ—इस समय कौन मिलने आ सकता है। यह कोई वक्त है? 'स्टडी' तो तप रही है। 'स्टडी' में तो इस वक्त सीधा सूरज पड़ता है। पंखा चल रहा होगा। लेकिन पखे में से तो आग निकलती है इस समय। 'स्टडी' के परदे भी हल्के रंग के हैं। उधर बाहर खस की टट्टियाँ भी नहीं लगी हुईं।

खाने के कमरे में से 'स्टडी' की ओर जा रहा, मैं अपनी बच्ची की नर्सरी में से गुजरता हूँ। पालना, फ्रेम, ढेरों खिलौने। मुझे अपनी बच्ची की मासूम आँखें फिर याद आ रही हैं। मेरी बच्ची के गुलाबी-गुलाबी गाल मेरी आँखों के सामने घूमने लगते हैं।

'स्टडी' में कदम रखते ही, मेरी नज़र दीवार पर जड़े न्यूड पर पड़ती है। मुझे मिलने आयी लड़की की मेरी ओर पीठ है। वह भी जैसे एकटक न्यूड की ओर देख जा रही है। एक क्षण भर के लिए हम दोनों न्यूड की ओर देखते रह जाते हैं। यह न्यूड मुझे इतनी सुन्दर तो पहले कभी भी नहीं लगी। और चौंक कर वह लड़की अपनी कुरसी से उठने लगती है। मैं उसे बैठी रहने के लिए इशारा करता हूँ। और फिर हम दोनों न्यूड को देखने लग जाते हैं। दो अजनबी एक दूसरे को नहीं देख रहे, और सामने दीवार पर लगे न्यूड को देखे जा रहे हैं। सचमुच इस समय 'स्टडी' में पड़ रही रोशनी के कारण फ्रेम में जड़े न्यूड में जैसे ज़िन्दगी मचल उठी हो।

चिलचिलाती दोपहर की गरमी, भट्टी की तरह तप रही 'स्टडी' में दीवार पर लगे न्यूड को एकटक देखते मुझे लगता है सामने कुरसी पर बैठी लड़की धीरे धीरे कदम उठा कर जैसे फ्रेम में जड़ गयी हो, न्यूड तसवीर जैसे हौले-हौले कदम उठा कर आरामकुरसी में आ बैठी हो।

न्यूड से आरामकुरसी की ओर, आरामकुरसी से न्यूड की ओर बार-बार मैं देखता हूँ। मेरी पलकें बन्द होती हैं, खुलती हैं। बन्द होती हैं खुलती हैं। चक्कर चक्कर, अँधेरा अँधेरा। मेरा पसीना टखना तक चूने लगता है।

दफ्तर जाते हुए मैं उस लड़की को मेडिकल कॉलिज के होस्टल के बाहर उतारता हूँ। हमारी कोठी के बाहर मेडिकल कॉलिज है। हमारी 'स्टडी' के बिलकुल सामने लेबोरेटरी है, जिस में सुबह शाम लड़के लड़कियाँ तजरबे करते रहते हैं।

दफ्तर जाते हुए मुझे देर से बरस पहले की एक घटना याद आती है। एक उम्र गुज़र गयी है। यह बात कहाँ छिपी हुई पड़ी थी। आज चुपके से ऊपर उभर आयी है। और मैं पानी-पानी हो रहा हूँ। यह पसीना नहीं। गरमी ज़रूर है लेकिन यह पसीना नहीं।

बिल्कुल ऐसी ही चिलचिलाती दोपहर थी। उन दिनों मैं शहर के स्कूल में पढ़ता था। गाँव से सात मील साइकिल पर स्कूल आता, सात मील लौट कर जाता। बहुत दिल लगा कर पढ़ता, हमेशा पहले नम्बर पर रहता। लेकिन कुछ दिनों से मेरा पढ़ाई में जी नहीं लग रहा था। आखिर क्या बात थी ? और फिर ढूंढ ढूंढ कर मैं ने सोचा, यह बसी थी। जिस दिन से बसी का ब्याह हो गया था, मुझे अपना महल्ला खाली खाली लगने लगा था, अपना गाँव उदास उदास लगने लगा था।

लेकिन बसी को तो ब्याहे हुए दो बरस हो गये थे। बसी कब की चली गयी थी! बसी तो अब एक बच्चे की माँ भी बन गयी थी। बसी ही थी। यह चोट कहीं भीतर छिपी पड़ी रही। बसी की मंगनी हुई, बसी का ब्याह हुआ, बसी डोली में बैठ कर चल दी। मैं बाकी बच्चों के साथ गली में गुल्ली डण्डा खेलता रहा। मुझे मालूम भी नहीं था, ब्याह क्या होता है।

और दो साल बाद अब मेरा दिल बहुत उदास था। बसी क्या नहीं थी हमारे महल्ले में! बसी क्या नहीं थी उस आँगन में जिस में हुआ करती थी। गोरी चिट्टी, सुनहले घुंघराले बाल, चमचम करते मोतियों जैसे दाँत, जब हंसती तो जैसे चाँदी के घुंघरू बजने लगते।

मुझे भूख लगनी बन्द हो गयी। रात को नींद घुल घुल जाती।

और उस दिन चिलचिलाती धूप में मेरी साइकिल आप से आप और से और सड़कों पर होती, मुझे तभी पता चला, मैं तो खलासी लाइन में पहुंच गया था। कहाँ हमारा गाँव और कहाँ खलासी लाइन! और मेरी साइकिल बसी के क्वाटर के सामने खड़ी थी। धीरे से मैं ने दरवाजे को खटखटाया। एक बार दूसरी बार। चिलचिलाती दोपहर थी। बसी ने अन्दर से दरवाज़ा खोला और मुझे देखती रह गयी। बाहर जैसे आग बरस रही हो। मैं बसी की ओर देख रहा था, बसी मेरी ओर देख रही थी। और फिर मुझे वह अपने क्वाटर में ले गयी। एक कमरा था, पीछे सामान की कोठरी थी। बरामदे में एक ओर रसोई बनी थी। इस समय उन के घर कोई मेहमान, सोयी पड़ी बसी की बच्ची की आँख खुल गयी। मासूम मासूम अखियाँ, गुलाबी गुलाबी गाल।

और बसी ने गिरेबान के बटन खोल अपना दूध बच्ची के मुंह में दे दिया। बसी का सीना जैसे संगमरमर में से तराश कर किसी ने गढ़ा हो। मेरी स्टडी में लगे बूड जैसे आग। एक स्तन का दूध जब बच्ची खत्म कर चुकी, बसी ने दूसरा स्तन बच्ची के मुंह में दे दिया। बस पी रही थी, हुडबू हुडबू करती हुई। मुझे बसी की बच्ची पर गुस्सा आने लगा। कोई बात भी हुई। बच्ची का क्या कसूर था। अपनी माँ का दूध पी रही थी। और माँ ने अपनी बच्ची को सीने के साथ चिपका लिया, जैसे उसे पता लग गया हो, किसी को उस का यों अपनी माँ की छाती से दूध पीना अच्छा नहीं लग रहा था।

दूध पीते-पीते बच्ची फिर सो गयी। सामने उस पालने में डाल वसी अपने गिरेबान के बटन बन्द करती हुई मेरे पास आ बैठी। और पंखा पकड़ मुझे झलने लगी। बला की गरमी पड़ रही थी।

और फिर वसी ने अचानक अपनी एक छाती को हाथ लगा कर देखा, "मरी का दाँत क्या निकला है हर बार दूध को काट लेती है।" वसी ने लाड़ में कहा और फिर सामने पालने में पड़ी अपनी बच्ची की ओर देखने लगी। मासूम मासूम अँखियाँ, गुलाबी-गुलाबी गाल।

बच्ची में जैसे उस की जान हो! पंखे को दो बार उधर झलती, एक बार मेरी ओर झलती। यों पंखा झल रही वसी ऊंघने लगी। और मैं चुपके से साइकिल पकड़ उस के क्वाटर में से निकल आया।

•

# विधवा होने से बच गयी

खबर आयी है कि मिस्टर हाशमी का हादसा हो गया है। स्कूटर पर जा रहा था। स्कूटर की टक्सी के साथ टक्कर हो गया। "दिल्ली में आजकल आवा-जाही कितनी बढ़ गयी है।' मिसेज मिर्जा सोच रही है 'कदम कदम पर हादसे होते हैं। जब से ये नामुराद स्कूटर चले हैं खास तौर पर एक्सीडेंट बढ़ गये हैं। टिटहरी की तरह उड़ते फिरते हैं। कोई बात भी हुई। हादसे न हों तो क्या हो। मिस्टर हाशमी ने अभी पिछले महीने ही तो नया स्कूटर खरीदा है। पास मोटर है मोटर नहीं चलाता कि पुरानी मोटर पेट्रोल बहुत खाती है और स्कूटर लिये फिरता है। पीछे अपनी औरत को भी बिठा लेता है। शायद वह भी स्कूटर पर बैठी थी जब हादसा हुआ। नहीं, वह तो घर पर है। अन्दर सज रही होगी। इस औरत को सजने का कितना शौक है। उधर मर्द का हादसा हो गया है इधर यह अन्दर शृंगार करने घुसी बैठी है। और कोई होता । और कोई होता तो क्या करता? हादसे तो होते ही हैं। इतनी मोटरें इतने ट्रक इतने स्कूटर इतने टाँगे, इतनी साइकिलें चलेंगी तो क्या हादसे नहीं होंगे? और फिर पैदल चलने वाले! चींटियों की तरह कतारों की कतारें चले आते हैं। पता नहीं इतने लोग कहाँ से इस शहर में उमड़ आये हैं। आदमी पर आदमी चढ़ा जाता है। हादसे न हों तो क्या? कसूर टक्सी वाले का होगा। हाशमी साहब का कसूर नहीं हो सकता। ये टक्सी वाले बड़ी लापरवाही से टक्सी चलाते हैं।

और मिसेज मिर्जा के मुँह पर एक मुसकान खेलने लगती है। एक बार मोटर चला रही थी मिसेज मिर्जा की मोटर के नीचे एक आदमी आ गया था। घायल को एक और मोटर में अस्पताल ले जाया गया। मिसेज मिर्जा को अपनी मोटर में पास पेट्रोल पम्प पर बिठा दिया गया। पुलिस वाले कहते, पहले वे घायल की हालत देखेंगे फिर उस का बयान लेंगे। उन दिनों मिसेज मिर्जा की अभी शादी नहीं हुई थी। यह सुन कर कि खान बहादुर की बेटी की मोटर के नीचे कोई आदमी आ गया है सामने टक्सी स्टैण्ड से एक सरदार ड्राइवर दौड़ता हुआ आया। बार बार कहता—बीबी, तुम फिक्र क्या करती हो? बन्दा ही है कोई कोठा तो नहीं ढह गया। और मिसेज मिर्जा उस की ओर देख देख कर हैरान होती। बार-बार कहता—अगर उसे कुछ हो गया तो तुम कह देना कि गाड़ी फौजासिंह चला रहा था, मैं तो पास बैठी थी। मैं अपनेआप

भुगत लूँगा। क़सूर उस का अपना है चाहे जानबूझ कर तुम्हारी मोटर के नीचे आया हो।

'क़सूर हाशमी साहब का हरगिज़ नहीं होगा'—मिसेज़ मिर्ज़ा फिर हाशमी साहब के बारे में सोच रही है। 'क़सूर हाशमी साहब का कभी नहीं होगा। हाशमी साहब तो जैसे फूँक फूँक कर क़दम रखते हैं। जैसे कोई दस बार सोचता है और फिर मुँह खोलता है। यह आदमी! लेकिन खूबसूरत कितना है। खूबसूरत इतना नहीं जितना शरीफ़ है। मुझे हमेशा शराफ़त में एक अनोखे हुस्न की झलक दिखाई देती है। और फिर मेरा जी चाहता है, लपक कर उसे अपना लूँ। लेकिन शराफ़त आखिर शराफ़त ही क्या हुई जो अपने ढर्रे से भटक जाये। मुझे नफ़रत है, इस तरह किसी को ठुकरा देना। मैं ने कहा—हाशमी साहब! आप के आँगन में चमेली खिली है। आप की चमेली की खुशबू मुझे बड़ी अच्छी लगती है। और वह टस से मस नहीं हुआ। यह नहीं कि अंजलि भर कलियाँ तोड़ कर भेज दे! इतना भी क्या डर! उन दिनों उस की बीवी अस्पताल में दाखिल थी। मुअरनी हर दूसरे साल बच्चा जनती है और फिर उसे खुद ही खा लेती है। कोई बात भी हुई! किसी का बच्चा हो और बच्चा बच न सके। जाकों जैसे बच्चे जनती जाती है। बच्चा हो कि राह चलते का मन मोह ले। हमारे बच्चे ने कहा—अंकिल टा टा। एक नज़र उस ने देखा और सामने से जवाब दिये बिना चला गया। ये ठण्डा यम! शायद फ़्रिज में लगा कोकाकोला ठण्डा हो गया होगा। मुझे प्यास कितनी लग रही है? आज़मा कर मैं ने देखा है, जब मिस्टर हाशमी के बारे में मैं सोचती हूँ, मुझे प्यास सताने लगती है। लो कोकाकोला तो कुक्कू निकाल कर पी रहा है। कुक्कू! कुक्कू! तेरे अंकिल के स्कूटर का टक्कर हो गयी है और तुझे कोकाकोला पीने की पड़ी हुई है?'

●

खबर आयी है कि मिस्टर हाशमी का हादसा बड़ा सख्त हुआ है। उसे अस्पताल ले गये हैं। जिस मोटर के साथ उस की टक्कर हुई उसी में डाल कर उसे अस्पताल पहुँचा दिया गया है। "मुझे जाना चाहिए।" मिसेज़ मिर्ज़ा का मन कह रहा है—"मुझे अस्पताल जाना चाहिए। न मालूम कितनी भारी टक्कर हुई है। कहते हैं स्कूटर कुचला गया है। अगर स्कूटर यूँ टूटा है तो स्कूटर चलाने वाले का क्या हाल हुआ होगा! मुझे जाना चाहिए। कुक्कू की उँगली से लगाये मैं बाहर सड़क पर खड़ी थी कि वह अपने घर से निकला। हमेशा की तरह आँखें नीचे डाले, हमेशा की तरह अपने ख्यालों में खोया खोया। पता नहीं यह आदमी इतना सोचता क्या रहता है! जैसे सारी दुनिया का बोझ इस के कन्धे पर आ पड़ा हो। हमेशा की तरह झुक कर उस ने मुझे सलाम किया। कितनी प्यारी तरह कहता है—आदाब! कितनी कितनी देर उस की आवाज़ मेरे कानों में गूँजती रही है और मैं स्वाद स्वाद हुई दूर तक उस की पीठ देखती रही। मेरा दिल चाहा उस से कहूँ—हाशमी मेरी जान! तुम आज न जाओ। आज हमारे आँगन में आलूचा खिला है। आज तुम न जाओ। तौबा-तौबा! मैं भी

विधवा होने से बच गयी

क्या बकवास कर रही हूँ। कोई किसी पराये मर्द को भी यूँ कहता है? परियों जैसी सुन्दर उस की घरवाली है। सारा दिन सजती रहती है। कभी कैसे, कभी कैसे। चुडल कुक्कू के डंडी के साथ कैसे हँस हँस कर बातें करती है। कुक्कू को पकड़ कर छाती से लगा लेती है। उस का मुंह माथा चूमने लगती है। और बच्चे का बाप टिट-बिट देखता रह जाता है। कभी यूँ भी कोई पड़ोसिन किया करती है! जैसे उस का अंग अंग बह रहा हो—काश मेरे भी इस जैसा बच्चा होता! तुम्हारे साथ हँस कर बात करती हूँ, शायद मेरे भी कुक्कू जैसा बच्चा हो जाये। मेरा मर्द तो बस कुछ पूछो नहीं। स्कूटर पकड़ा इधर चले गये स्कूटर पकड़ा उधर निकल गये। पता नहीं कहाँ खोया खोया रहता है। और फिर मुझे तो सरकारी नौकरी पसन्द है। कोई नौकरी करे तो सरकारी। न कोई फ़िक्र न फाका। सरकारी दफ्तर आप ही आप चलते हैं। इधर से कागज़ आया, उधर भेज दिया, उधर से आया, इधर चला दिया। सुबह खुश-खुश दफ्तर गये, शाम को सुर्खरू हो कर लौटे। व्यापार में तो आदमी आठों पहर डूबा रहता है। हर वक्त कुढ़ता रहता है। हर वक्त जोड़ तोड़। हर वक्त दूसरे के कपड़े उतारने को सोचते रहना। यह भी कोई ज़िन्दगी है! कभी किसी ने अपने घरवाले के धंधे को यूँ नफरत की है! कब तक कोई किसी घरवाले के धंधे से नफरत कर सकता है और उस आदमी से मोहब्बत?

'मुझे नफरत है नफरत है। अपने बच्चे का अन्धा एक आँख मुझे नहीं भाता"। मिसेज़ मिर्ज़ा तुनक उठती है। तोंद कैसे निकलती आ रही है उस की। आदमी को चाहिए सैर करे कसरत करे सोच समझ कर खाये, समय कुसमय देख कर हँसे, कुक्कू का अन्धा हर वक्त हँसता रहता है। लो अब कोई हंस भी न। मुन्ने हो क्या रहा है! कि रोटी खाते तुम्हारी दाढ़ी हिलती है। वही बात हुई न!'

और मिसेज़ मिर्ज़ा सामने आलूचे के पेड़ से एक शगूफा तोड़ कर अपने जूड़े में खोंस लेती है। गुलाबी गुलाबी रंग शगूफे ने उस के जूड़े को जैसे महका दिया हो। मिसेज़ मिर्ज़ा अन्दर शृंगार मेज़ के सामने जा खड़ी होती है। कितनी देर जूड़े में लगे शगूफे को देखती रहती है। और फिर मिसेज़ मिर्ज़ा को यूँ लगता है जैसे हौले-हौले कदम कोई पीछे से आ रहा हो। हाँ आ तो रहा है कोई। मिस्टर हाशमी है। मिसेज़ मिर्ज़ा उस की ओर पीठ किये खड़ी रहती है। मिस्टर हाशमी उस के कन्धों पर आ कर हाथ रख देता है। मिसेज़ मिर्ज़ा वैसी की वैसी उस की ओर पीठ किये, गर्दन को उठा कर उस की तरफ देखती है। मिस्टर हाशमी है। और फिर तड़प रहे होंठ तड़प रहे होंठों पर जुड़ जाते हैं।

●

खबर आयी है कि मिस्टर हाशमी की मौत हो गयी है। अस्पताल पहुँचने से पहले ही वह मोटर में खत्म हो गया। "मर गया।" मिसेज़ मिर्ज़ा का मुँह खुले का खुला रह जाता है। मर गया मर गया मर गया।" मिसेज़ मिर्ज़ा की आँखें फटी

की फटी रह जाती है। गम गम आँसुओं के दो क़तरे उस की पलकों में लटकने लग जाते हैं। साथ के कमरे में से कुक्कू —उस का बच्चा हँसता हुआ आता है। "कुक्कू ! क्या तुम इस तरह हँस रहे हो ?" मिसेज़ मिर्ज़ा का जी चाहता था, वह अपने बच्चे से पूछे। "कुक्कू हँस रहा है", फिर मिसेज़ मिर्ज़ा अपनेआप से कहती है— 'कुक्कू हँस रहा है, क्योंकि उस की माँ विधवा होने से बच गयी है।" और फिर मिसेज़ मिर्ज़ा अपने हँस रहे बच्चे के साथ हँसने लग जाती है। उधर टप-टप उस की आखों से आसू बह रहे है, इधर वह हँस जा रही है, हँसे जा रही है। दीवानों की तरह हँसे जा रही है।

•

# *ए स्टडी इन बोरडम*

सौण दा कमरा, खाण दा कमरा, बराण्डा गलरी ।
गलरी, बराण्डा खाण दा कमरा सौण दा कमरा ।

ऐनी टहल रही ह ।

इट्ट दी दुक्की, पान दी पंजी हुकम दी बेगम ।

साह्मणें गोल कमरे विच्च ऐनी दा खाविन्द ताश खेड रिहा ह ।

*त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह ।*

सौण दे कमरे विच्च पलंगा दीया चादरा नू छण्ड झाड के उन्हा ते पलग पोश विछ हुन, सज्जरे धोबी दे धोत्ते पलग पोश जिन्हा विच्चों धोबी दी इस्त्री दी भिन्नी भिन्नी खुशबो आ रही ह ।

साफ सुथरे । ऐनी हुण पलग ते वी नही बठ सकदी । इक्क वार नौक्कर सफाई कर के गिया ह । मुड मुड उस थोडा आउणा ह । त फेर उसनू होर कम्म कितन नें ! उहदे खाविन्द दीआं फरमाइशां ही नही साह लण दिन्दियां । उहदा खाविन्द ते उहदे जूएबाज दोस्त ।

चिडिय दा गुलाम पान दी पंजी, इट्ट दा बादशाह । गोल कमर विच ताश दे पत्ते इकट्ठे कीत्ते जा रह हुन ।

त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह ।

लम्मी सेम दा फली हरी सम दी फली लम्बी सम दा फली,

*हठ गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह ।*

खाण दे कमर विच्च मेज साफ ह । मज दे विचकार पिया पाणी दा जग दन्दा दन्द भरिया ह । कुरसियां मज दे अन्दर हुकियां होइयां हन कवल उन्हा दीयां पिट्ठा बाहर हन जिवें कुक्कड न आपणे चूचें खम्भां हठ कज्ज लए होण । ड्राइंग रूम त पई घडी दा टिक टिक उच्चा हो रही ह । जन्नों दी ऐनी इस कमरे विच्च आई ह गल्लातो ह घडी दा टिक-टिक लगातार उच्ची हुन्दी जा रही ह ।

पान दी दुक्की, पान दी पंजी, पान दा नहला। ताश खेड रही
चौकडी विच्च कोई खुश हो रिहा है।
त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह।
लम्मी सेम दी फली हरी सेम दी फली लवी सम दी फली,
हेठ गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह।
वराण्डे विच्च आराम कुरसियां अहिल पईयाँ हन। कुरसियाँ दे
विचकार तिपाई ते अखबार रखिया ह। 'विशव जंग होर रहेगी" चीन
दा कहिणा ह "के इस युग दी ऐटमी जंग विच्च भावें सारी दुनिया
खतम हो जावे चीनी खतम नही हो सकदे उना दी आबादी दुनिया
विच्च सभ तों वधीक ह"। ते ऐनो नूँ आमा नाल बाहर सैर गये,
आपणे वच्चियाँ दा ख्याल आउन्दा ह। उहदियां अक्खाँ अग्गे हनेरा
छा गिया ह।
चक्कर चक्कर!
इट्ट दी पंजी, पान दी छिक्की, हुक्म दी सत्ती, गोल कमरे विच्च ताश
खेड रहे लोकाँ विच्च कोई चीख उठिया ह!
त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह।
लम्मी सेम दी फली हरी सेम दी फली, लवी सेम दी फली,
हेठ गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह।
तेल नाल लिशकाये पटे लाल-लाल डिहले कजलाइयाँ पलका, मूला
वरगियाँ तज मरोड़ियां हाइयाँ मुच्छा सपाट वरगी छाती कमाये
होए मोहले करारी आवाज, ऐनी गलरी विच्च खलो के हेठ गली विच्च
देखदी ह।
चिड़िये दा यक्का पान दा चुक्की हुकम दा तिक्की, गाल कमरे विच्च
ताश उज दो उज चल रही है।
त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप, रसोई विच्च नल चो रिहा है।
लम्मी सेम दी फली, हरी सेम दी फली लवी सेम दी फली
हेठ गली विच्च फरी वाला हाक ला रिहा ह।
वराण्डे विच्च किते वी कोई जाला नहीं। इस सड शहर विच्च कितनी
सफाई ह, ना मक्खी ना मच्छर। मकडी जाला नही बणान्दी।
पेके घर ते उह जाले लाया करदी सी। जदों होर कुज ना हुन्दा,
बाँस फड जाले साफ़ करन लग जाँदी मकड़ियाँ बिट-बिट उस वल
वेखदियाँ रहिन्दियाँ। ते ऐनो उन्ना दे किले ढूँढदी रैहन्दी।
चिट्टियाँ दुध कन्धाँ, चिट्टे दुध छत चिट्टियाँ दुध नुक्करां। किते जाला
नहीं किते मिट्टी नहीं।

हुक्म दा ग्हिला, हुक्म दा दहिला, हुक्म दा गुला, कोई फर जितिया ह ।
त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह ।
लम्मी सेम दी फली, हरी सेम दी फली लवी सेम दी फली हठ
गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह ।
खाण द कमरे विच्च हर चीज आपण टिकाणे ते ह । इक्क वार कह दित्ता, इह कमबख्त नौकर कदी ग़लती नही करदा । जग दन्ना दद भरिया ह जितना जी चाह पाणा पी लवा । घडी घडी पाणी लई नौकर नू आवाजाँ देणा उसनू जहर लगदा ह । कुरसियाँ मेज़ दे अन्दर हन ! बाहर कुरसियाँ अजाड जगा घेरी रखदियाँ नें । जितना शहर वड्डा, उतने फ्लट छोट उतनी थाँ तग । चिडिय दा यक्का चिडिये दी दुक्की चिडिये दी त्रिक्की, किसे द खिड खिड हस्सण दी आवाज़ आ रही ह ।
त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह ।
लम्मी सेम दी फली हरी सेम दी फली, लवी सेम दी फली
हठ गली विच्च फरी वाला हाक ला रिहा ह ।
सौण दे कमर विच्च सिंगार मेज़ दे साह्मणे इक चिडी आपण परछांवे नाल लड रही ह । मुड मुड शीशे नूँ ठगे मारदी ह । जदा थक जादी ह ता सिंगार मेज़ दे फरेम ते बठ घट घडी सुसता लदी ह । फेर शीशे नू आ के ठूगे मारनें शुरू कर दिदी ह । दीवानी चिडी !
हुकम दी दुक्की, पान दी दुक्की, इट्ट दा दुक्की । जिवें कोई चीख रिहा होव ।
त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप, त्रिप त्रिप रसोई दा नल चो रिहा ह ।
लम्मी सेम दी फली हरी सेम दी फली, लवी सेम दी फली
हेठ गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह ।
खाणे दे कमरे विच्च साईड बोड ते पई घडी रुक गयी ह । तिन वज के पजी मिण्ट ते सत सकिण्ट । इह घडा क्या रुक गयी है ? खबर ऐना अज फेर उसनू चाबी देणा भुल गयी सी ।
बाहर बराण्डे विच्च तिपाई ते पई अखबार—विशव जग होवे रहेगी—ऐनी नू लगदा ह जिवें कण्डियाला सप कुण्डल मुण्डल मारी बठा होवे । सरा दे तेल नाल लिगाकाये पटे हेठ गली विच्च इह पटियाँ दी खुशबो ह, पकौड नही कोई तल रिहा ।
हुकम दा यक्का पान दा यक्का, जिवें कोई कुद रिहा होव ।
त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप त्रिप रसोई विच्च नल चो रिहा ह ।

लम्मी सेम दी फली, हरी सेम दी फली, लबी सेम दी फली,
हेठ गली विच्च फेरी वाला हाक ला रिहा ह।
ऐनी इशारा कर के फेरी वाले नूँ उत्ते बुला लैन्दी हैं। तेल नाल लिशकाये
पटे लाल लाल डिहले, कजलाईयाँ पलका, सूलाँ वरगीया तेज मरोडिया
होइया मुच्छाँ सपात वरगा छाती, कमाये होए डोहले, करारी आवाज।
"इक रुपिया किलो दित्तीयाँ ने सेम दाआँ फलिआँ"।
लम्मी सेम दी फली, हरी सेम दो फली लबी सेम दी फली
फेरी वाला एनी वल देख रिहा ह। उच्चो लम्मी, हरे रग दी साडो
विच्च जिवें लिफ लिफ पै रही हावे।
"दो किलो दे द।"
ऐनी पजा दा नोट फेरी वाले दी तली ते रखदी ह।
फेरा वाला टोकरी विच्चो दो किलो सेम तोल के ऐनी दी पटारी
विच्च पादा ह। ते फेर इक नजर ऐनी वल वेखदा ह। लम्मी सेम दी
फली
'मेम साहिब!' फेरी वाला हत्थ जोड के खलो गिया ह। "मेम साहिब
इह बाकी तिन रुपये मेर कोल ही रहिण दिओ। मैं कल्ल तुहानू
मोड दिआगा मेरी लोड बडी डाढी ह।"
ऐनी राजी हो जादी ह। अजे सेम दी पटारी उस अन्दर रसोई दे
लिया के रखखी हो सी कि बाहर दरवाजे ते दसतक हुन्दी ह।
ऐनी दरवाजा खोल्दी ह। "मेम साहिब" साह्मणे सेम वाला खलोता है।
मम साहिब, म बडी मुसीबत विच्च हाँ मैनूँ दस रुपये होर दे देवो।
मेरे भरा नूँ पुल्स वालियाँ ने फड लिआ ह ते मैं उहना दे मूँह विच्च हड्डी
दे के आपणे वीर नू छुडा लिआवागा।
ऐनी अन्दरो आपणा बटुआ ल आन्दी ह। ते उस विच्चो दस रुपये
दा नोट कड्ढ के फेरी वाले न दिन्दी ह। बाकी नोटाँ दी थब्बी बटुए
विच्च रखदी होई ऐनी फेरी वाले वल वखदो ह।
लम्मी सेम दी फली हरी सेम दो फली, लबी सेम दी फली।
फेरी वाला पौडियाँ उतर जान्दा ह।
ऐनी मुड आपणे कमरे विच्च अजे पुज्जी वी नहीं कि बाहर दसतक फेर
हुन्दी ह, फेरी वाला है। मेम साहिब, उह ते पजाह रुपये होर मगदे
ने। मेरा भरा उहना डक लिआ है। मैं तुहाडे अग्गे हथ जोडदा हाँ.."
बटुआ अजे ऐनी दे कोल ही ह। बटुए नूँ खोल, ऐनी दस दस दे नोट
गिण के फेरी वाले नू दिन्दी ह। बाकी सिरफ दा नोट रह गये हन।
ऐनी उहना नूँ बटुए विच्च रख रही है।

गन्दा था। दीवारों पर पान की पीकें। नालियों में बालों के गुच्छे। वाश-बेसिन के आईने पर दातुन के छींटे। नल चू रहा। छत पर मकड़ी के जाले। रोशनदान में चिड़ियों ने घोंसला बना रखा था। इसी लिए शायद उसे कभी ताला नहीं गया था। एक सीलन की सी सड़ांध आ रही थी। इस तरह की सड़ांध सामने नौकरों के क्वार्टरों के साथ लगे कूड़े के ढेर में से भी आ रही थी। यही सड़ांध ड्रेसिंग रूम की आलमारी में से भी आयी, जब उस ने पल भर के लिए उसे खोल कर देखा। पुरानी रद्दी। शराब के खाली पौवे। जंग लगे ब्लेड। काई जमे डबल रोटी के टुकड़े। टूटे हुए चीनी के बरतन। उस के माथे पर हर क्षण बढ़ रही त्योरियों को देख कर उस के मेजबान कर्मचारी ने कहा—'सरकार! पूरे पन्द्रह साल ये लोग इस होस्टल में रहे हैं। पन्द्रह साल यार लोग टिके हुए थे। अब इस की सफ़ाई होगी। कहीं-कहीं तो शुरू भी हो चुकी है। जब से यह होस्टल बना, कई लोग इस में टिके और अब निकले हैं—जब प्रेसीडेंट का राज हुआ है।'

दो चार महीने के बाद फिर आ जायेंगे।' अपने मेजबान को चाय-पानी के इन्तज़ाम के बाद, विदा करते हुए उस ने कहा। बाक़ी काम वह स्वयं कर लेगा।

और पहली बात जो उस ने की वह यह थी कि जमादार को बुला कर उस ने बाथरूम साफ़ कराया। बाथरूम के बाद वह चाहता था कि बाकी स्वीट की सफ़ाई भी जमादार करे, ड्रेसिंग रूम की आलमारी में से कूड़ा-कचरा निकाले लेकिन यह काम जमादार का नहीं था। यह काम तो कमरे के बेरा का था और वह उस दिन छुट्टी पर था। चाहे अगले दिन भी आये या न आये। अपने गाँव गया हुआ था। बिरादरी में कोई मातम हो गया था।

इतने में अखबार आ गया और वह कुछ देर के लिए अखबार में मग्न, एम एल ए होस्टल के अपने स्वीट की गन्दगी जैसे भूल गया हो।

पहले पन्ने पर सुर्खी थी—"हमें इस प्रान्त को साफ सुथरी सरकार देनी है।" राज्यपाल ने ऐलान किया था। हर नुक्कड़ हर कोने में से कूड़ा बुहार कर हमें हर स्तर पर सफ़ाई करनी है। स्वच्छ वातावरण प्रदान करना है ताकि स्वस्थ लोक राज्य की फिर से स्थापना हो सके। धक्का शाही, रिश्वत खोरी चोर-बाज़ारी, मुनाफ़ा खोरी जैसी लानतों को ख़त्म करना है।' अखबार पढ़ते-पढ़ते ढेर सा समय बीत गया। और फिर वह जल्दी जल्दी तैयार हो नाश्ता कर के काम पर निकल गया।

मीटिंग में भी इसी समस्या पर चर्चा होती रही कि राष्ट्रपति शासन को जल्दी से जल्दी ख़त्म करना चाहिए। लेकिन इस से पहले राज्य में स्वस्थ परम्पराओं को चलाना बड़ा ज़रूरी है। भ्रष्टाचार और बेईमानी को खत्म करना बड़ा ज़रूरी है। बड़ा ज़रूरी है कि लोगों में उजले रहन-सहन के लिए लगन पैदा की जाये। सरकारी ढाँचे में से जंग लगी कड़ियों को छाँटना बड़ा ज़रूरी है। बरसों से जमे हुए जालों को उतारना बड़ा ज़रूरी है।

दोपहर, खाना खाने के बाद जब वह लौटा तो बहुत उमस थी। हर कोई कहता—इन दिनों जब ऐसी उमस होती है तो बारिश जरूरी आती है। लेकिन वर्षा का दूर दूर तक कहीं निशान नहीं था। और वह होस्टल के अपने स्वीट में किवाड़ बन्द कर के पंखे के नीचे लेट गया। कुछ देर के बाद उस महसूस हुआ जैसे ड्रेसिंग रूम की आल्मारी में से उसे कचरे की सड़ांध आ रही हो। आलमारी बन्द थी। ड्रेसिंग रूम का दरवाज़ा बन्द था, फिर भी जैसे उसे दुर्गन्ध आ रही थी। यूँ ही उस का वहम है उस ने सोचा। दुर्गन्ध तो आ रही थी। फिर वह उठा—और उस ने सामने खिड़की का पट खोल दिया।

आसमान पर जैसे धूल छा रही हो। अजीब मौसम हो रहा था।

खिड़की के बाहर खाली जगह में किसी ने मक्का बो रखी थी। पौधे कन्धे तक बढ़े हुए थे, लेकिन अभी उन में भुट्टे नहीं लगे थे। और सामने क्वाटर थे। नीचे मोटरों के लिए गराज। ऊपर नौकरों के घर। घरों के सामने गैलरी थी। इस ओर सीढ़ियां थीं जहाँ कूड़े का ढेर लगा था। लेकिन जहां वह लेटा हुआ था, वहाँ से कूड़े का ढेर नहीं दिखता था। मक्का के पौधे दिखाई देते थे। गराजों के छज्जे दिखाई देते थे और नौकरों के क्वाटरों की गैलरी दिखाई देती थी।

उसे नींद नहीं आ रही थी। उमस भी कितनी थी। पंखे में से जैसे आग निकल रही हो। उसे नींद नहीं आ रही थी। और फिर उस ने देखा—सामने नौकरों के क्वाटरों के बाहर गैलरी में कोई आ खड़ी हुई। इस गर्मी में। पहाड़िन थी कोई। पान के पत्ते जैसा मुँह गोरा रंग, कहीं कहीं चेचक के दाग, सोयी सोयी आँखें खुले बाल कन्धों पर बिखरे हुए मैली चीकट धोती। गैलरी में आ कर खड़ी हुई कि उस की नजरें जैसे एम एल ए होस्टल के पिछवाड़े की खिड़कियों पर तैरने लगीं। एक दो तीन, चार, दस बीस पचास सौ खिड़कियाँ पाँचवीं मंज़िल की। एक दो, तीन, चार दस बीस पचास सौ खिड़कियाँ चौथी मंज़िल की। फिर तीसरी मंज़िल, दूसरी मंज़िल पहली मंज़िल और अब निचली मंज़िल की खिड़कियों पर घूमती हुई उस की नजरें उस खिड़की पर आ कर रुक गयीं—जिस स्वीट में वह ठहरा हुआ था। यह खिड़की खुली थी। बाकी खिड़कियाँ बन्द थीं। तीसरे पहर की इस उमस में बाक़ी सब खिड़कियाँ बन्द थीं। और इस खिड़की में उस की नजरें जैसे जम गयी हों। और आगे नहीं उठ सकीं। उस ने बाज़ू उठा कर एक जम्हाई ली। मानो उस का सारा शरीर ऐंठ गया हो। अब वह अपने बालों को इकट्ठा कर के, उन का जूड़ा बना रही थी। और अन्दर पंखे के नीचे लेटे हुए उस ने देखा, उस की चार-अंगुल चोली उस के अंग को ढकने की जगह उन की गोलाइयों को और उघाड़ रही थी। और फिर वह मन्द मन्द मुसकराने लगी। सामने वह लेटा हुआ था। सफ़ेद चादर पर। पंखा तेज चल रहा था। उस के बाल उड़ उड़ कर उस के चेहरे पर गिर रहे थे। वह बार-बार अपने बालों को पीछे कर रहा था और एकटक उसे देख रहा था। इस बेहूदा मौसम

जाँघिया, बनियान, सब कपड़ा को एक एक कर के कीला के साथ, खिड़की को दरवाज़ों के साथ, कुरसियों की पीठ पर टाँग दिया। और फिर अपने हाथों को धोती के पल्लू से पोंछती हुई, वह उस के सामने आ खड़ी हुई। "अब ड्रैसिंग रूम की आलमारी को साफ़ कर दो।" वह मुड़ कर ड्रेसिंग रूम की ओर चली गयी। आलमारी में से बेहद बू आ रही थी। उस ने भीतर का दरवाज़ा बन्द कर लिया। ऐसा लगता था, आलमारी को किसी ने बरसों से साफ नहीं किया था। और वह एक एक कर के हर खाने को झाड़ती, बुहारती, साफ करती कितनी देर इस में व्यस्त रही। काम करती जाती और साथ साथ किसी लोकगीत की धुन भी गुनगुनाती जाती। आलमारी का साफ करने, कूड़ा इकट्ठा करने, कूड़ा बाहर फेंकने में कोई एक घण्टा बीत गया। अब फिर वह उस के सामने आ खड़ी हुई। इस बार वह साबुन से हाथ मुँह धो कर आयी थी। उजली उजली लग रही थी। फाख्ता सी, शान्त गम्भीर अँखड़ियाँ।

वैसी की वैसी वह खड़ी थी, मानो कोई अभी अभी धरती से फूटी सुम्भी हो कि वह उठ कर जल्दी जल्दी बाथरूम की ओर निकल गया। उस ने अन्दर से कुण्डी लगा ली। कुछ देर के बाद उस के नहाने की आवाज़ आने लगी। इतने में बेकार खड़ी, उस ने उस के सोने के कमरे की सफाई शुरू कर दी। पहले कमरे को बुहारा फिर झाड़ा पोंछा, फिर पलंग के पाये, मेज, कुरसियों, खिड़कों के शीशे साफ किये शीशे कितने मले थे? जैसे साला से किसी ने उन्हें हाथ नहीं लगाया था।

वह नहा कर निकला। वह अभी तक खिड़की के शीशे साफ कर रही थी। जितनी देर तक वह ड्रेसिंग रूम में कपड़े बदलता रहा, वह वैसी की वैसी शीशे साफ करती रही। अब उस की पलंग की चादर को झटक कर बिछा रही थी। इतने में वह तैयार हो कर उस कमरे में आ गया।

चादर के एक सिरे में से सिलवटें निकालते हुए उस ने उस की ओर देखा। कितना बाँका आदमी था! ऊँचा लम्बा गेहुआँ रंग, ताज़ा सँवारे बाल। एक नज़र उस ने उसे देखा और जैसे उसे कुछ हो गया हो। जैसे उस का अंग-अंग टूटने लगा हो। उसे देखती हुई उस का मुँह खुला का खुला रह गया।

उसे लगा एक क्षण और वह उस के भरपूर आलिंगन में होगी। उस के माथे पर उस की गालों पर एक झनझनाहट सी महसूस हुई, चक्कर चक्कर अँधेरा अँधेरा। और उस ने देखा उस का हाथ उस के कोट की अन्दर की जेब की ओर गया। और उस ने दस रुपये का एक नोट उस की हथेली पर धर दिया।

'बहुत बढ़िया सफाई तुम ने इन कमरों की की है।" वह उस की प्रशंसा कर रहा था।

दस रुपये का नोट उस की हथेली में था और वह बाहर जाने के लिए तैयार खड़ा था। इस बात का अहसास जब उसे हुआ तो गोरी सी उस पहाड़िन का जी चाहा कि उस के कदमों में वह औंधी जा गिरे। कृतज्ञता में फूल जैसे टूटते हुए अंगों का

समेटती वह कमरे से बाहर निकल आयी। दरवाज़े से गुज़रते हुए उस ने धोती के पल्लू से अपने सिर को ढक लिया।

कुछ देर के बाद उस ने देखा, वह साम। नौकरों के क्वार्टरों की सीढ़ी में खड़ी थी। जैसे उड़ कर वहाँ पहुँच गयी हो। जब आयी थी तो कितनी देर उस ने लगाया था, अब जैसे इसी क्षण मकान पर पहुँच गयी थी। उस के बच्चों ने उसे घेरा हुआ था। और सब से छोटे को वह हवा में उछाल कर दुलरा रही थी। बच्चा खिल-खिला कर हँस रहा था। बाहें उठाये, बच्चे को उछालते हुए, माँ ने उस के पाँव की उंगलियों को अपने होंठों में ले लिया। जैसे उन्हें चबा रही हो। और उस की आँखें एक अजब नीम खुमार में घुल गयीं। कुछ देर और खिलखिल खिलखिल पुकार चलने लगी।

•

# एक जनाज़ा और

इतने बरस हो गये थे मिस्टर मलकाणी जब से सिन्ध से निकल कर आया था, उसे एक ही भटकन लगी हुई थी—किसी तरह उसे रावल बिल्डिंग में रहने के लिए फ्लैट मिल जाये। रावल बिल्डिंग उस के कारखाने से पन्द्रह मिनट पैदल रास्ते पर थी। दुनिया भर की सिफारिशें करवा कर वह थक चुका था। अफसरों को भी उस ने रिश्वतें खिलायी थीं उस ने सुना था, इस विभाग में औरतें मर्दों से जल्दी काम निकलवा लेती थीं। उस ने कई बार अपनी औरत को लिपस्टिक लगवा कर भेजा था, मिस्टर मलकाणी की मुसीबत यह थी कि वह अपने काम से दस मील दूर रहता था और सरकारी कारखाने में उस की ड्यूटी कभी दिन में लगती थी तो कभी रात में। वक़्त-बेवक़्त दस मील बसों पर धक्के खा कर जब वह घर पहुँचता तो उस का बुरा हाल हो जाता, न खाने का स्वाद न पीने का मज़ा। पहली ड्यूटी की थकान उतरती नहीं थी कि दूसरी ड्यूटी का वक़्त हो जाता। कभी-कभी मिस्टर मलकाणी को लगता कि जब से वह हैदराबाद सिन्ध के अपने घर से निकला था, उस की थकान आज तक नहीं मिटी थी—जैसे कोई बरसों से चलता ही आ रहा हो, वह सोचता, अगर रावल बिल्डिंग में उस को सरकारी फ्लैट अलॉट हो जाये तो उस की सभी समस्याएँ हल हो जायें। ड्यूटी के वक़्त भी आदमी कभी वक़्त निकाल कर घर हो आता है या नहीं तो ड्यूटी के बाद बसों के इन्तज़ार में तो घण्टा नहीं खड़े रहना पड़ेगा। उसे तो अपनी बीवी का चेहरा ही भूलता जा रहा था। उस की माँ पत्रों में बार-बार लिखती थी 'पोते को देखने को मेरा जी चाहता है।' इस तरह की कुतिया नौकरी में, इस तरह के निर्लज्ज शहर में, किसी के औलाद खाक हो।

और फिर भगवान् ने जैसे उस की सुन ली। मिस्टर मलकाणी को रावल बिल्डिंग में दो कमरों का एक फ्लैट अलॉट हो गया। मिस्टर मलकाणी खुश था—बड़ा खुश जैसे दुनिया भर की बादशाहत उसे मिल गयी हो। उधर अलॉटमेंट हुआ, इधर उस ने कब्ज़ा ले लिया।

मिसेज़ मलकाणी कहतीं, 'अब तुम वक़्त पर आ जाया करना। कहीं ओवर-टाइम न लगाना शुरू कर देना।'

मिस्टर मलकाणी ने अपनी पत्नी से तो इक़रार कर दिया, पर दिल ही दिल

में वह सोचने लगा जो समय मैं पहले बसा में खराब करता था, अगर वह कारखाने में लगा दिया जाये तो चार पसे ही ज्यादा मिल जायेंगे, उजटे उखडे लोग, अगर कहीं वे चार पसे इकट्ठे कर सकें तो बाकी सरकारी कर्ज ले कर अपना सिर ढकने के लिए वह कोठरी ही डाल लेगा।

और वही बात हुई। मिस्टर मलकाणी ने उसी दिन से ओवरटाइम लगाना शुरू कर दिया। अब ओवरटाइम का उसे ऐसा चस्का लगा कि पहले की अपेक्षा कहीं ज्यादा देर से घर पहुँचता। कभी कभी समय से पहले ही घर से निकल जाता।

पर घर कारखाने और बाजार के निकट था। चार कदम पर बच्चों का स्कूल था जब उन के बच्चा होगा तो उस के स्कूल की भी कोई समस्या नहीं रहेगी। उसे बच्चों को बसों में स्कूल भेजना बिल्कुल पसन्द नहीं था। खास तौर पर लडकियों को। और मिस्टर मलकाणी का यकीन था कि पहले उन्हें लडकी ही होगी।

रावल बिल्डिंग में फ्लैट! जो भी सुनता, उस की ओर ललचायी सी नज़रों से देखता, रावल बिल्डिंग में बडी किस्मत से सिर टिकाने को जगह मिलती थी, लोग तो मरते मर जाते पर रावल बिल्डिंग में मिला ठिकाना न छोडते। वहीं बच्चे पैदा होते, वहीं पलते वहीं पर उन की शादियाँ होतीं, वहीं बच्चों के घर भी बच्चे होने लग जाते। जो एक बार वहाँ रह गया छोडने का नाम ही नहीं लेता था। जो भी बोलता, यही कहता, "हमारा तो जनाज़ा ही यहाँ से निकलेगा।"

और पिछले कई महीनों से जसे अजीब साढेसाती सी आ गयी थी हर चौथे रोज रावल बिल्डिंग में कोई न कोई चल बसता। रावल बिल्डिंग भी कोई छोटी-मोटी इमारत नहीं थी। आठमंजिली गढी थी, जिस में कोई दो सौ घर बसे हुए थे।

भले ही महल्ले का मोहल्ला था, फिर भी शहरों का जीवन! कोई एक दूसरे को नहीं जानता था। साथ के फ्लैट में कौन रहता है, क्या करता है किसी को मालूम नहीं था। हर कोई अपने काम में मस्त, अपनी दुनिया में बन्द रहता था। बस किसी पर कोई मुसीबत आ जाये तो लोग झट से घडी भर के लिए इकट्ठे हो जाते, फिर अपनी अपनी खोहों में गुम हो जाते। बच्चे सारा दिन खेलते रहते। बच्चों के माँ बाप न एक दूसरे को जानते थे, न पहचानते थे।

पिछले हफ्ते एक जनाज़ा उन से निचली मंजिल से निकला था। उस से पिछले हफ्ते उन से ऊपर वाली मंजिल से। मिस्टर मलकाणी सोचता कभी समय निकाल कर वह उन के यहाँ हो आयेगा। आज कल उस की ड्यूटी रात की शिफ्ट में थी। सारी रात काम करता दिन को सोया रहता। नाश्ता करता सो जाता, खाना खाता, सो जाता। शाम को उठता, तैयार हो कर काम को चला जाता।

●

और फिर एक दिन

उस रात काम करते करते एकाएक मिस्टर मलकाणी की तबियत खराब हो

गयी। सिरदद और हरारत। मजबूर हो कर मिस्टर मलकाणी घर की ओर चल पडा। कारखाने के सभी लोग हरान थे। मिस्टर मलकाणी और छुट्टी!

स्कूटर ले कर वह घर पहुँचा। चारा ओर सोता पडा हुआ था। लिफ्टमैन लिफ्ट के बाहर सो रहा था। चौकीदार एक दीवार के साथ लग कर खडा-खडा ही सो गया था। मिस्टर मलकाणी के पैरों की आवाज सुन कर एक छछूँदर सामने के फ्लट में से निकली और बगल के फ्लट में घुस गयी।

मिस्टर मलकाणी ने किसी को परेशान करना मुनासिब नही समझा और खुद ही लिफ्ट चला कर चौथी मंजिल जा पहुँचा।

और अब वह अपने फ्लट के सामने था। उस ने जेब से ताली निकाली और फ्लट का दरवाजा खोला। मिस्टर मलकाणी अपने सोने के कमरे में पहुँचा। परदा हटा कर उस ने देखा सामने पलग पर उस की औरत किसी पराये मद की बाहो में बेसुध सो रही थी। मिस्टर मलकाणी यह क्या देख रहा था? उस की आँखों के आगे धेरे ही घेर—जसे अँधेरे की दीवार उठ आयी हो। और फिर उस ने एकदम जूता उतार कर उस पराये मद के सिर में दे मारा। वह भी सोत से हडबडाया सा उठा और दगड दगड गुसलखाने के रास्ते बाहर निकल गया। वही जूता उठा कर मिस्टर मलकाणी अपनी पत्नी पर बरसन लग पडा। चिल्ल पा मच गयी। आसपास के फ्लटों से लोग भाग आये। चौकीदार, लिफ्टमैन, सभी इकट्ठे हो गये। कोई 'चोर चोर' कह रहा था, कोई कुछ, तो कोई कुछ।

मिस्टर मलकाणी था कि बीवी को एक साँस में ही पीटता चला जा रहा था। फिर लोगों ने आ कर बेचारी औरत को छुडाया।

मिस्टर मलकाणी बार-बार दाँत पीसता और अपनी बीवी की ओर बढता। और फिर सभी को मालूम हो गया कि उस फ्लट में क्या करतूत हुई थी। लोग फ्लट के भीतर और बाहर गलरी में खडे खडे फुस फुस करने लग पडे थे।

मिस्टर मलकाणी कहता, "इस तरह की बदचलन औरत को मैं जान से मार डालूँगा।" और जसी हालत उस की हो रही थी लोग सोचते, अगर वे वहाँ से हिले तो पता नही वह क्या कर बठेगा। सामने मिसेज मलकाणी थी सिर मुँह लपेटे। जमीन फट नही जाती थी कि वह उस में समा जाती।

और ऐसे ही सवेरा हो गया।

कितना शोर हुआ था। आस-पडोस में कोई भी रात भर सो नही सका था। कुछ दिन हुए ऊपर की मंजिल में जब पजाबियो का लडका मर गया था, तो ऐसे ही शोर मचा था। और फिर नीचे वाली मंजिल में मारवाडियो की मा मरी थी, तो उन्होंने भी सारी रात रोते रोते किसी को सोने नही दिया था। और आज रात इस मंजिल पर सिंधियों ने अजब नाटक रचाया था। आस-पडोस के लोगो को समझ नही आया कि हमदर्दी किस से जतायें—मिस्टर मलकाणी से, जिस ने अपनी बीवी को किसी

पराये मर्द के साथ मुँह काला कराते अपनी आँखों देख लिया था, या मिसेज़ मलकाणी से जिसे हर पाँच मिनट के बाद वह किसी न किसी तरह हाथ छुड़वा कर धक्का मुक्की कर रहा था।

और फिर बिल्डिंग का केयरटेकर आ गया। हज़ारे की ओर का पठान। एक हाथ में नम चमड़े में मढ़ा हुआ डंडा, पीछे शेर जैसा अल्सेशियन कुत्ता, और आते ही वह मिस्टर मलकाणी पर बरसने लगा, "यह क्या कंजरखाना मचा हुआ है? यह सरकारी बिल्डिंग है कोई चकला नहीं। मालूम नहीं कहाँ-कहाँ के बदचलन लोग यहाँ आ जाते हैं! मलकाणी साहब, आप मेहरबानी कर के एक घण्टे के अन्दर अन्दर फ्लैट खाली कर दीजिए। नहीं तो मैं पुलिस में रिपोर्ट कर दूँगा। अपने मालिक का, सारी बिल्डिंग में कोई रात भर सो नहीं सका। इस तरह की करतूतों वाले सरकारी फ्लैटों में रह सकते हैं?"

पठान केयरटेकर ऐसे ही बोले जा रहा था। गुस्से में उस के मुँह से झाग फूट रहा था। आगे-पीछे खड़े मर्द और औरतें बिट बिट उस के मुँह को ताक रहे थे।

"अभी तो कल ही इस में मिसेज़ मल्काणी ने सफ़ेदी करवायी है। बोली—"अपना फ्लैट मुझे बड़ा मैला मैला लगता है। मैं ने कहा भले मानस, औरत बार बार कह रही है। इस का काम कर ही दो।" केयरटेकर एक ही साँस में बोले जा रहा था। उस का कुत्ता कभी मिस्टर मल्काणी को सूँघता तो कभी कोने में डर हुई पड़ी मिसेज़ मलकाणी को।

मैं कहता हूँ मल्काणी साहब आप मेरे मुँह की तरफ़ क्या देख रहे हैं? आगे-पीछे शरीफ़ लोग बसते हैं। क्या कहते होंगे—यह सरकारी फ्लैट है कि कोठा" और तिरछी मूँछों वाले पठान ने सामने पड़ी एक कुरसी को घसीट कर बाहर फेंकना शुरू किया।

"ठहरो, खान साहब ठहरो," एकटक केयरटेकर की ओर देख रहा मिस्टर मल्काणी चौंक कर बोला, "आखिर आप इतना झाग क्यों उगल रहे हैं? भीतरी बात क्या है?

"बात यह है कि आप ने रात को अपनी बीवी को किसी पराये मर्द के साथ मुँह काला कराते पकड़ लिया और सारी बिल्डिंग में आप ने हो-हल्ला मचाये रखा।"

"झूठ है बिल्कुल कोरा झूठ! कौन कहता है मेरी बीवी किसी और मर्द के साथ इस कमरे में थी? निरा झूठ! वह तो यों ही हम पति पत्नी झगड़ पड़े थे। किस घर में झगड़ा नहीं होता? हमारे पड़ोसियों को तो आग लगी हुई है! ये तो हमें निकाल कर रहते हैं! फ्लैट खाली करवा कर अपने किसी सगे को अलॉट करवा लेंगे। कोई बात भी हुई? किसी शरीफ़ आदमी को ऐसे ही परेशान करना! अपनी माँ बेटियाँ नहीं रहीं सालों को "

मिस्टर मलकाणी ऐसे बोल रहा था कि आगे-पीछे खडे रावल बिल्डिंग के निवासी एक एक कर मुरने लगे। पठान कभी मिस्टर मलकाणी के मुँह की ओर देखता, कभी फ्लट के बाहर इकट्ठे हुए लोगा की ओर। फिर उस क देखते ही देखने सभी लोग खिसक गये।

मिस्टर मलकाणी जब बोल कर हटा तो केयरटेकर निपट अकेला वहा खडा था। कुछ देर फ्लट में बिलकुल खामोशी छायी रही। मौत सी खामोशी। और फिर केयरटेकर मुह लटकाये, हक्का बक्का वहाँ से चला गया।

आठवी मजिल पर केयरटेकर अपने फ्लट की तरफ जा रहा था कि उस ने सुना, बिल्डिग के कुछ वासी आपस में बातें कर रहे थे—

"और तो इस बिल्डिग में सब आराम ह पर जब कोई मौत हो जाती है तो रात भर कोई नही सो पाता।"

"कल रात चौथी मजिल पर कोई मर गया ह। आज एक जनाजा और "

•

# एक लोक-कथा

बहुत दिनो की बात है। कोई कहता है कि कलियुग शुरू हो चुका था। कोई कहता है, अभी नही हुआ था। एक राजा था। बडा धर्मात्मा। जो प्रदेश आजकल तमिलनाडु कहलाता है, वहाँ राज करता था। लोग उस का नाम ले कर राह पाते थे। उस के राज्य में चोरी चकारी का कभी नाम नही सुना था। घरो के दरवाजे दिन रात खुले रहते। ताले बेचने वालो का व्यापार शुरू नही हुआ था। राज्य में दूध की नदियाँ बहती थी। अनाज से खेत खलिहान भरे रहते। लोग श्रम की कमाई करते और मिल-बाँट कर खाते। न कोई बडा धनवान् था न कोई बडा निर्धन। चारो ओर खुशहाली थी। सुख चैन की बंसी बज रही थी।

उस के महल के दरवाजे सब के लिए खुले थे। राजा के बाग में हर कोई सैर कर सकता था। राजा के ताल से लोग पानी भरते और राजा के गुण गाते। राजा के बच्चों में रजवाडो वाली कोई बात नही थी। राजकुमार और राजकुमारियाँ, जहाँ जी चाहता बैठते जिधर जी चाहता निकल जाते। न महलो की चौकीदारी होती, न दरवाजो पर दरबान पहरा देते।

इस प्रकार खुशी खुशी दिन बीत रहे थे कि एक शाम राजा के महल में मातम छा गया। सुनने में आया कि राजकुमारी के पेट में बच्चा है। राजकुमारी का अभी विवाह नही हुआ था और उस के पेट में बच्चा था। कई दिनो से राजकुमारी के अंग फूले फूले लग रहे थे। लेकिन यह कौन सोच सकता था कि कुआरी लडकी यू अपने कोख को दाग लगवा लेगी? एक के बाद एक दाय बुलवायी गयी। सब सिर पीट कर चली गयी। राजकुमारी के पेट में बच्चा था। वह तो औरत को एक नजर देख कर पहचान लेती कि इस के पाँव भारी है। इन्होने तो राजकुमारी के पेट को छू कर देखा था कान लगा कर सुना था।

और राजकुमारी को इस से कब इनकार था? बच्चा उस के पेट में था। अब तीन महीने से भी ऊपर होने वाला था। किन्तु यह बच्चा किस का था? यह भेद बताने के लिए वह तैयार नहीं थी। कहती—चाहे कोई मेरी चमडी उधेड ले मैं बच्चे के पिता का नाम नहीं बताऊँगी। दाग मेरा है। मैं अपने प्रियतम का बदनाम नही होने दूँगी। राजा और मन्त्री जोर लगा कर हार गये। राजकुमारी टस से मस नही हुई।

और फिर राजा ने अपना न्याय किया। बेटी है तो क्या। ऐसी बदकार बेटी को उस के किये का दण्ड मिल के रहेगा। राजा ने आदेश दिया कि एक नाव में डाल कर राजकुमारी को दूर समुद्र में किसी ऐसे टापू में छोड दिया जाये जहाँ न आदम हो न आदमजात। सारी उम्र किसी वीरान टापू में बिलखती रहे।

राजा के आदेश का पालन हुआ। राजा के तीन नाविक, राजकुमारी को कोसो दूर एक वीरान टापू में छोड आये, जहा घने जगल थे और जगली जानवर। इसान ने अभी इस टापू पर क़दम नही रखा था।

जवान-जहान लडकी कदमूल चुन कर खा लेती और आठो पहर अपनेआप को सुरक्षित रखने की चिन्ता में रहती। दिन में घने पेडो में छुप छुप बैठती और रात गुफाओं और कन्दराओं में काटती। केवल एक ही आशा कि जब उस का बच्चा होगा, उस का बेटा आयेगा, उस का साथ देगा और वह अकेली नही रहेगी।

वही बात हुई। राजकुमारी के जब लडका हुआ तो उसे पता भी न चलता कि कब दिन निकलता है और कब डूबता है। आठो पहर मा, बच्चे में खोयी रहती। अब बच्चा सो रहा है। अब बच्चा जाग रहा है। अब बच्चे के दूध का समय हो गया है। अब बच्चा खेल रहा है। और फिर बच्चा रेंगने लगा। फिर बच्चा चलने लगा। और फिर बच्चा दौडने लगा। और फिर बच्चा बडा होने लगा। देखते देखते मा से भी ऊँचा हो गया। अब बच्चा जवान हो गया था। कहर की जवानी उस पर टूटी थी।

जसे-जसे लडका जवान हो रहा था, मा से जसे दूर होता जा रहा हो। दिन दिन भर गायब रहता। सुबह निकलता और साँझ को थका-हारा घर लौटता। जसे कोई भटक रहा हो। राजकुमारी उस की आँखों में एक सूनापन देखती और उस के मन को कुछ होने लगता। यह भूख, यह तडप, यह वीरानगी उस के चेहरे पर दिन प्रतिदिन बढती जा रही थी। हर समय उदास उदास। हर समय उखडा उखडा। हर समय रुआसा-रुआसा। न उसे खाना अच्छा लगता न पीना। अब माँ ने उसे कभी हँसते हुए नहीं देखा था। अब माँ ने उसे कभी ऊँचा बोलते नहीं सुना था।

राजकुमारी देखती कि हिरणों का वह जोडा जिस उस ने अपने बच्चे के खेलने के लिए पाला था, बढता-बढता एक रेवड बन गया था, कई हिरण और कई हिरणिया, न मचलते, उछलते, कूदते, कुलाँचे भरते सारा-सारा दिन रौनक लगाये रहते। कबूतरों का जोडा जिसे उस ने अपने बच्चे के मनबहलाव के लिए पकडा था, अब एक झुण्ड बन गया था इतना बडा कि जब मिल कर उडते तो आसमान ढक जाता। रग बिरगे कबूतर भाँति भाँति की बोलियाँ बोलते। उडान भरते और अपने साथ और कबूतरों को ले आते। उन की कुटिया के पास लगे पेड हर नयी ऋतु आने पर फलते फूलते बढते बढते कहो के कहो पहुँच गये थे। कई पौधो पर कितने सुदर फूल लगते। एक से एक नये रग, भीनी भीनी सुगन्ध—एक नशा सा छाया रहता। पिछले बर्ष, सामने एक

वृक्ष पर मधुमक्खियों ने एक छत्ता डाला था। अब आगे पीछे वृक्षों पर छत्ते ही छत्ते थे। सारा सारा दिन मधुमक्खियों की गुंजार सुनाई देती—जसे एक अटूट संगीत हो। एक शहर सा उन्होंने बसा लिया था।

राजकुमारी का बेटा यह सब कुछ देखता और उसे अपना अकेलापन खाने को दौडता। कभी कभी उसे लगता जसे वह कुछ कर बठेगा। उस का जी चाहता कि वह अपनी मा को छोड छाड कहीं दूर निकल जाये।

और फिर एक रात वह नींद में बडबडाने लगा। मां ने उस के दिल की बात बूझ ली। आप ही आप बोलता रहा, बोलता रहा और फिर सो गया। सारी रात राजकुमारी की आंख न लगी। छम-छम आंसू उस की आंखों से गिरते रहे। और अगली सुबह, मां अपने बेटे की आंख से आंख न मिला पाती।

कुछ दिन बाद ही बेटा एक सुबह शिकार को निकला। दोपहर हो गयी। शाम हो गयी। रात हो गयी। वह लौट कर नहीं आया। राजकुमारी बाट देख देख कर हार गयी। उस ने न कुछ खाया न पिया। सारी रात उस ने आंखों में काटी। अगली सुबह फिर उस की बाट जोहने लगी। राजकुमारी ऊंचे ऊंचे पेडों पर चढ कर देखती। कहीं भी उस का नाम निशान नहीं था। फिर दोपहर हुई, फिर शाम हुई फिर रात हुई। राह बुहारते उस की पलक थक गयी।

तीसरे दिन, अकेली बठी राजकुमारी को खयाल आया अगर किसी जंगली जानवर न उसे खा लिया हो कहीं उस का पांव किसी पहाडी से फिसल गया हो कहीं किसी नदी के भंवर में वह फंस गया हो—और राजकुमारी का पसीना छूटने लगा। उस के आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। उसे लगा जसे वह रेगिस्तान की तपती रेत पर नंगे पांव चल रही हो। जसे वह राख के किसी ढेरी पर बठी हो। अगर उसे कुछ हो गया तो फिर जंगली जानवर होंगे और वह होगी और बस! अगर उसे कुछ हो गया तो फिर घने जंगल होंगे और वह होगी और बस। किसी इनसान की आवाज का संगीत उस के कानों में नहीं पडेगा। किसी इनसान की निगाह के जादू से महरूम उस के दिन कोहर पाले की तरह जम कर रह जायेंगे।

तीन दिन बाद जब उस का बेटा लौटा तो यूं लगता था जसे वह थका-टूटा हो। जैसे वह कुछ ढूंढ ढूंढ कर हार गया हो। उस का जी चाहता कि कुटिया के बाहर लगे पेडों से सिर पटक पटक कर अपनेआप को लहू-लुहान कर ले।

राजकुमारी ने यह देखा और अपने बेटे को एक ऊंचे टीले पर पकड कर ले गयी। छन छन उस की आंखों से आंसू बह रहे थे। और फिर राजकुमारी ने उसे बताया—दूर सामने पश्चिम की ओर जहां दिन डूबता है एक टापू है। उस टापू में एक राजकुमारी रहती है। अकेली जसे तुम यहां इस टापू में।"

जवान जहान लडके ने यह सुना और खिलखिला कर हंसने लगा। उठ कर नाचने ही तो लगा। नाचता-नाचता, टीले से उतर दूर किनारे पर पेड से बंधी अपनी

नाव की ओर भागा। वह तो रात होने से पहले उस टापू पर जा पहुँचेगा।

यूँ नाव की ओर दौड़ते हुए देख, उस की माँ ने उसे पुकार कर कहा—"उस टापू पर गये तो लौट कर माँ के टापू में नहीं आ सकोगे। और न ही तुम्हारी माँ उस टापू पर कभी कदम रख सकेगी।"

वह तो कुछ भी नहीं सुन रहा था। उसे तो अपनी माँ के आँखों में छम-छम बह रहे आँसू भी दिखाई नहीं दे रहे थे। भागता हुआ वह नाव में जा बैठा और जल्दी-जल्दी चप्पू चलाता आँखों से ओझल हो गया।

उस की नाव अथाह सागर में एक बिन्दु बन कर रह गयी। और फिर राजकुमारी खिलखिला कर हँसने लगी। हँसते हँसते अपनी कुटिया में गयी। वर्षों के सँभाल-सँभाल रखे उस ने अपने जोड़े निकाले, गहने निकाले और राजकुमारी शृंगार करने लगी। कई वर्षों के बाद आज उस ने अपने बालों का उसी तरह सजाया जैसे कभी वह सजाया करती थी और उस के पिता की नगरी में हर किसी की आँख उचक-उचक कर उस की ओर जाती थी। आज वर्षों के बाद उस ने वह अँगिया निकाली, वह साड़ी पहनी जिस में से उस का यौवन फूट फूट पड़ता था। जैसे आकाश से उतरी अप्सरा हो। उस ने अपने होंठों को रंगा, गालों को रंगा, पाँवों को रंगा, हाथों को रंगा, भवों को तिरछाया आँखों में काजल के डोरे चमकाये और फिर वह अपनेआप को सागर के मोती जैसे पानी में देखने लगी। सोलह सत्रह साल की जैसे कोई लड़की हो। उस से अपना आप पहचाना नहीं जा रहा था। और वह जल्दी जल्दी अपनी नौका में जा बैठी।

नौका को उस ने गुप्त रास्ते पर डाल दिया। वह रास्ता जो बस उसे ही मालूम था। और इस से कहीं पहले कि पहली नौका वहाँ पहुँचती राजकुमारी की नाव उस टापू के किनारे जा लगी। नाव से निकल राजकुमारी ने उसे सागर की लहरों में डुबो दिया और स्वयं पेड़ों के एक झुरमुट के पास टीले पर बैठी, दूर सामने एक बिन्दु की तरह, हर क्षण निकट आ रही नाव की प्रतीक्षा करने लगी।

अभी साँझ नहीं हुई थी कि नाव किनारे से आ लगी। नाव में बैठे नवयुवक ने देखा—सचमुच सामने टीले पर एक सुन्दरी उस की बाट देख रही थी। जैसे कोई अप्सरा हो। उस की आँखें एक नशे में मुँदी मुँदी जा रही थीं। उस का अंग-अंग एक नशे में टूट-टूट रहा था। और वह जल्दी जल्दी उस टीले की ओर बढ़ने लगा। टीले की सुन्दरी—मोती जैसे दाँत, मन्द मन्द मुसकराती, बाहें फैलाये जैसे उस की राह देख रही हो। धुँधलका कदम-कदम बढ़ रहा था। अमावस्या की रात जब वह टीले पर पहुँचा तो चारों ओर अन्धकार छा चुका था।

●

और फिर बातों-बातों में अली जू ने बताया, इतने दिनों बाद उन के यहाँ बच्चा एक पीर के मज़ार पर ज़यारत का सदका था। अली जू और उस की बीवी, कई मील दूर पदल ज़यारत करने गये थे। तीन रातें बीच में पड़ती थीं। न वहाँ मोटर जाती थी, न लारी। और जब वे लौटे, नूरां की गोद हरी हो गयी। करामात थी, बिलकुल करामात। आगे, पीछे जो कोई भी सुनता, किसी को विश्वास न होता, लेकिन महीने पूरे हुए और नूरां माँ बन गयी।

जब से उन्होंने यह बात सुनी, उठते बैठते मिस्टर शेख अपनी बीवी को चिढ़ाता रहता। उठते बैठते मिसेज़ शेख हारी-हारी महसूस करती रहती।

और मिस्टर शेख ने, मिसेज़ शेख को मनवा लिया कि वे भी ज़यारत पर जायेंगे। श्रीनगर से साठ मील दूर वे पदल जायेंगे। और मिस्टर शेख को यकीन था, उन के घर भी बच्चा हो जायेगा। मिसेज़ शेख को लगता, जो कुछ उस का शौहर कहता है, शायद ठीक ही हो। शायद यूँ ही होगा। और फिर वह भी तयार हो गयी। नीली कँबलीवाले पीर के मज़ार पर वह हाथ फला कर दुआ माँगगी और उस की झोली भर जायेगी, उस में दिल की मुराद पूरी हो जायेगी। मिसेज़ शेख सोचती, बस नूरां के बच्चे जसा एक लाल उसे मिल जाये, और उसे कुछ नहीं चाहिए। कुछ भी नहीं। अल्ला ने और सब कुछ उसे दिया है।

और फिर एक दिन सुबह नाश्ते पर उन्होंने अली जू और नूरां को बताया कि मिस्टर और मिसेज़ शेख भी ज़यारत करना चाहते हैं। अली जू तो जब से इस साल व आय कई बार मिस्टर शेख को यह राय दे चुका था। उन के फसले को सुन कर जसे वह खिल सा गया। कहता—मैं भी आप के साथ चलूँगा। नूरां का भी ले चलेंगे। अकेला बच्चा बड़ा हो कर उदास उदास रहने लगता है। एक बच्चा और होना चाहिए। यही भाई की बहन।

अगली सुबह उन्हें जाना था। शाम को अली जू आया। कहन लगा—नूरां की तबीयत ठीक नहीं, वह नहीं जा सकेगी। पर अली जू खुद तयार था। वह ज़रूर उन के साथ जायेगा। नूरां नहीं जा रही थी, मिस्टर और मिसेज़ शेख इस में खुश थे कि सफर में छोटे से बच्चे की ज़िम्मेदारी टल गयी।

"नूरां नहीं जा रही, यह तो ठीक ही हुआ।" एक से अधिक बार मिस्टर शेख कह चुका था। "नूरां नहीं जा रही यह तो ठीक ही हुआ।" एक से अधिक बार मिसेज़ शेख के मुँह से यह बोल निकले।

सारी तयारी पूरी हो चुकी थी। उस रात खाने के बाद मिस्टर शेख, हाउस बोट की छत पर बठा सिगरट पी रहा था कि हलकी-हलकी चाँदनी में उस ने देखा, नूरां सीढ़ियाँ चढ़ उस की ओर आ रही थी। यूँ परायी औरत का हाउस-बोट की छत पर, देर रात गये उसे मिलने आना मिस्टर शेख का दिल धक धक करने लगा।

और फिर अगले क्षण नूरां का सिर मिस्टर शेख के पाँव पर था।

"साहब ! बेगम का जयारत पर न ले जाना। उस मजार की जयारत करने से बच्चा होता ह, यह झूठ ह, कोरा झठ।"

"क्या मतलब ?" मिस्टर शेख न हरान हो कर पूछा।

और फिर नूरां ने उसे अपनी सारी बीती सुनायी।

जयारत के लिए जा रहे रास्ते में उन्होंने एक जगह पडाव किया। कई यात्री थे। मद और औरतें। हिंदू और मुसलमान। हर किसी का औलाद की चाह थी। यह दूसरा पडाव था उन का। एक छप्पर के तले वे सोये थे। छप्पर के नीचे जगह कम थी और यात्री ज्यादा। यात्री के साथ यात्री सट कर सोया हुआ था। और उस रात उस की आँख जब खुली तो उस ने देखा कोई पराया मद उस के 'फिरण' के अन्दर साप की तरह फुफकारता हुआ बढ़ता आ रहा था। न इधर की, न उधर को, नूरां ने लाख कोशिश की, उस के मुँह से आवाज न निकली। अगली सुबह, नूरां को अपने घरवाले की तरफ निगाह नहीं उठती थी। उस का जी चाहता, धरती जगह दे और वह उस में समा जाये। वह पानी पानी हो रही थी कि उस के साथ जयारत कर रही एक और औरत ने चुपके से उसे कहा—"कोई बात नहीं, इस से पहले पडाव पर मेरे साथ भी यूँ ही हुआ ह बिलकुल ऐसे ही। नूरां की रास्ते में बनी इस सहेली ने रात को नूरां के साथ हुई वारदात अपनी आखो देखी थी।

मिस्टर शेख ने सुना और उस के पाँव तले से जमीन निकल गयी। आधी रात हो गयी थी कि वह छत से नीचे उतरा। उस की बीवी अभी तक अगली सुबह जयारत की तयारी कर रही थी। मुँह अधेरे ही तो उन्हें चल देना था।

•

# सफेदपोश

सन्तो सोचती वह जग्गू का कहना क्यों माने। फिर उस का दिल कहता शायद जग्गू ने उस पर जादू किया हुआ है और सन्तो जो कुछ जग्गू कहता करने को तयार हो जाती। तैयार तो हो जाती किन्तु कुछ देर बाद फिर अपना मन बदल लेती।

कई बार जब जग्गू उसे लातें मार रहा होता तो वह उस की ओर इस तरह देखती जैसे कह रही हो— मैं मर जाऊंगी मैं मर जाऊंगी और फिर तुम किस को इस तरह मारोगे? और फिर सन्तो सोचती उस पर जग्गू ने जादू किया हुआ है। वह कैसे मर सकती है और सन्तो जग्गू की लातें खाती रहती।

जग्गू एक भेड़ की तरह सन्तो को अपने पीछे लगाना चाहता था। जिधर वह जाता उधर वह जाये, जहां वह ठहरता वहीं वह ठहरे, जहां वह बैठता वहीं वह बैठे जो करने को कहता वही सन्तो करे। जैसे उस की पहली पत्नी प्रीतो किया करती थी।

और जग्गू सोचता वह उस को कोई कठिन काम करने को थोड़ा कहता था। बाजीगरों में वह भी थे जो अपनी औरत के सिर पर पैसा रख कर उसे तीर से उड़ा देते। हर बार वह करतब करते हर बार औरत की जान को खतरा होता। एक सूत्र मात्र निशाना इधर का उधर हो जाय तो तीर माथे पर लग सकता था आंख को चीर कर निकल सकता था। और वह जो अपने बच्चे को टोकरे के नीचे रख कर उसे कबूतर बना देते थे। और वह जो अपनी घरवाली को लिटा कर उस के ऊपर कपड़ा डाल उस की गरदन पर छुरी फेर देते थे। सन्तो को इन का जब खयाल आता तो उस को अपना पेशा अच्छा अच्छा लगने लग जाता। वह जग्गू की खायी सब लातों को भूल जाती।

पर जग्गू का पेशा इतना भयानक था! सन्तो लाख अपनेआप को समझाती फिर उस के दिल में उस के लिए घृणा भर जाती और वह कोई न कोई बात कर बैठती जो जग्गू को बहुत बुरी लगती और जग्गू कहता मैं तुझ से पेशा करवाऊंगा तेरी चोटियों में मोम लगा कर तुझे कोठे पर बिठाऊंगा और सन्तो थर थर कांपने लग जाती। जो जग्गू कहता वही करने के लिए तैयार हो जाती। तयार तो वह हमेशा हो जाती किन्तु कर वह कभी कुछ न सकती।

जग्गू एक आंख से काना था। जब भी कभी उस की मारी हुई आंख का जिक्र आता वह कहता उस के पेशे में वह काम आयी थी। जग्गू का एक बाजू टेढ़ा मेढ़ा था।

यह बाजू भी जग्गू का अपने पेशा में टूटा था। जोड़ने वाले ने जोड़ तो दिया लेकिन हड्डी उल्टी बठ गयी। जग्गू की एक लात बिल्कुल ही कटी हुई थी किन्तु बिसाखियों के सहारे जग्ग ऐसे चलता जसे उसे कुछ हुआ ही न हो। राह चलते सन्ती बार-बार पीछे रह जाती। पीछे रहा सन्ती उस की टूटी हुई लात की ओर जब देखती जग्गू हमेशा उसे याद दिलाता—"नेक वख्त! यह लात तीन बार टूटी ह। पहली बार टखना तक काटी गयी, दूसरी बार घुटना तक इसे उतार दिया गया और तीसरी बार पट स काटनी पड़ी थी। आरी से इसे अलग किया गया था।"

और फिर जग्गू ने अपनी पहली पत्नी को अपने काम में लगा लिया था। कितने दिन प्रीतो ने उस का काम खूब चलाये रखा। भयानक से भयानक अवसरों पर उस को चोट तक भी कभी न आयी। जाको राखे साँइयाँ, मार न सकि॰ कोइ' उस की पत्नी गाया करती थी। और जग्गू हरान होता, कई मास हो गये ये वही काम उस की पत्नी करती थी जो जग्गू स्वय करता था, पर उस का कभी खरोंच तक नहीं आयी थी।

और फिर एक सांझ जब जग्गू अपनी झुग्गी में लौटा उस की पत्नी उस के साथ नही थी। बाकी सब बाजीगर कहते कि जग्गू की वह पत्नी कहीं भाग गयी थी। पर जग्गू हमेशा सन्ती को बताता कि अपनी पहली घरवाली का टोकरे के नीचे लिटा कर उस ने कबूतर बनाया था और फिर वह उस से औरत न बन सकी। कबूतर बन कर उस के हाथों से फुर कर क उड़ गया। अब भी जब जग्गू की झुग्गी पर कोई चितकबरी कबूतरी आ बठती तो सन्ती सोचती शायद जग्गू की पहली पत्नी हो बार-बार फेरे काटती ह।

सन्ती को जग्गू का आकार अच्छा लगा था। चाहे उस की एक लात नहीं थी, एक बाजू टेढ़ा था, एक आँख बह गयी थी पर सन्ती ने जग्गू का दो टांगों के साथ, दो बाजुओं के साथ दो आँखों के साथ भी देखा हुआ था। और जब उस की माँ ने जग्गू का नाम लिया तो वह उस के साथ ब्याह को तयार हो पड़ी थी। सन्ती सोचती जो कुछ भी जग्गू काम करता था उस का काम अवश्य सुथरा हागा। न शेष बाजीगरों की तरह वह कबूतर पालता था, न मुर्गियाँ पालता था, न साँपों के पीछे फिरता था। न शेष बाजीगरों की तरह वह जड़ी बूटियाँ ढूंढता था, न दारूदमल करने के दावे करता था। न टोने बताता था न टोटके करता था। जग्गू का नाम कभी किसी ने चोरी डाके के सम्बन्ध में भी नहीं सुना था।

पर जब पहली बार जग्गू सन्ती को अपने काम पर ले कर गया, वह अपने पति के पेशे को देख कर हक्की बक्की रह गयी। सिर से ले कर पाँव तक उस के पसीना आ गया। कितनी देर वह थर थर कांपती रही। उस को चक्कर आने लगे। उस को जग्गू में एक कसाई नज़र आया जसे बाकी कई बाजीगरों में उसे प्रतीत होता था।

'इस से तो वह सोचती, म किसी ' पर वह किस के साथ ब्याह करती। बाजीगरों के सारे काम मुश्किल थे और अपने गाँव में किसी ने उस के लिए हामी

नही भरी थी। और फिर बाजीगर उधर आ निकले और उस की माँ ने उसे जग्गू के पल्ले बाँध दिया।

इस तरह अपने खयालो में सन्ती डूबी हुई थी कि जग्गू ने इस के मन की बात समझते हुए सामने वाली सात मजिली इमारत की ओर सकेत किया। एक आदमी सातवी मंजिल से रस्सियों के साथ लटक कर दीवार की मरम्मत कर रहा था। सडक से जहाँ सन्ती और जग्गू खडे थे वह मजदूर एक पुतली की तरह लग रहा था और बस।

और सन्ती कहने लगी "हाय कही रस्सी जो टूट जाये! हाय कही इस का हाथ जो उचक जाये! हाय कसे चमगादड की तरह लटका हुआ ह! हवा आती ह तो झूलने लग पडता ह। यह थकता नही? इस को चक्कर नही आते? कितनी देर और इस तरह लटका रहेगा" इस भाँति प्रश्न करती सन्ती अपने पति के पेंचे को जसे भूल गयी थी। अभी वह निणय भी नही कर पायी थी कि सामने सडक से आती हुई एक मोटर को देख कर जग्गू ने सन्ती को सडक पर धकेल दिया। अभी मोटर दूर ही थी कि सन्ती आँखें बन्द किये चिल्लाती हुई लौट आयी। मोटर तो आ रही थी। शेष समय फिजूल गँवाने के बजाय जग्गू खुद सडक पर उतर गया। इस तरह जसे उस की पत्नी कोई वस्तु सडक पर गिरा आयी थी और वह उसे उठाने लगा हो। तेज आ रही मोटर ने जग्गू को बचाने की कोशिश की किन्तु जिस ओर मोटर हुई जग्गू उसी ओर हो गया। ऐसे जसे गडबडा कर आदमी फसला नही कर पाता। फिर मोटर उस के ऊपर आ गयी और जग्गू आप ही आप गिर पडा। मोटर जग्गू से कोई एक फुट की दूरी पर रोक ली गयी। जग्गू मिट्टी धूल में लथपथ हो गया था। उस के कान के पास से लहू की एक धार बह रही थी। मोटर वाले बाहर निकले। पहले तो वह जग्गू को डाँटने लगे फिर उन्होने उस का लहू देखा और चुप हो गये। इतने में सन्ती ने वावेला करना शुरू कर दिया जसे उसे जग्गू ने समझाया था। मोटर वाले सेठ ने जग्गू की मुट्ठी म दस का नोट पकडाया और मोटर ले कर वह चले गये।

अभी मोटर चार कदम आगे गयी थी कि जग्गू खिलखिला कर हस पडा। एक खराश के दस रुपये! और फिर सन्ती भी उस की हसी में शामिल हो गयी।

जग्गू ने सन्ती को समझाया कि मोटर वाले जहाँ तक सम्भव हो किसी को नीचे नही लेते। हाँ ट्रकों लारियों वालो के समीप नही जाना चाहिए। मोटर वाला तो मोटर तोड डालेगा मगर किसी को नीचे आने से जरूर बचायेगा और फिर मोटर वाले तो अधिकतर दफ्तरों के अफसर या पूँजीपतियो के ड्राइवर होते ह। किसी को उन से नुकसान हो जाये तो जो कुछ भी उन के पल्ले हो वह दे कर जान छुडा लेते ह। दोष चाहे उन का हो या न हो। कचहरियों से ये लोग बड डरते ह और फिर कसूर चाहे किसी का हो। हर किसी की सहानुभूति उस के साथ होती ह जिस को चोट आयी हो। मोटर वाला तो हमेशा कसूरवार ठहराया जाता ह।

और फिर जग्गू जिस तरह किसी की मोटर के नीचे आता था किसी को पता

थोडे लगने देता कि यह जान-बूझ कर घायल हो रहा है। कभी यों लगता जैसे वह सडक पार कर रहा है, कभी यों लगता जैसे वह अपनी राह जा रहा है और मोटर वाले सोचते उन का अन्दाजा गलत हो गया था और शर्मिन्दगी में डर से, किसी दामा जान छुड़ाने को तैयार हो जाते।

जग्गू ने सन्ती को बताया जब उस का बाजू टूटा उसे पचास रुपये मिले थे, जब उस की आँख फूटी सौ रुपये, पाँव की बारी फिर सौ घुटने के समय डेढ सौ और जब उस की पूरी टाँग काटनी पडी थी तो उस ने दो सौ रुपए कमाये थे। दो सौ रुपये और अस्पताल का सारा खर्च।

जग्गू कहता मोटर के नीचे इस तरह आना चाहिए कि न ज्यादा चोट लगे और न दूसरे का पता लगे कि जान-बूझ कर इस तरह किया गया है। और हादसे के बाद बावला कर के गे घो कर मोटर वाले के पास जितने पैसे हों बटोर लेने चाहिए। एक न एक अपना आदमी साथ जरूर होना चाहिए जो लोगों को इकट्ठा कर सके उन की हमदर्दी ले सके। जग्गू कहता उस ने जब कभी भी अपना अंग तुडवाया था जान-बूझ कर तुडवाया था। जब उसे ज्यादा पैसों की आवश्यकता होती वह अपनेआप को ज्यादा घायल करवा लेता। 'और जब प्रीतो मोटर के नीचे आयी ' और फिर जग्गू सहसा चुप हो गया। उस ने तो सन्ती को कहा था कि उस की पहली पत्नी कबूतर बन के उड गयी थी।

सन्ती जग्गू के पेशे में किसी तरह शामिल न हो सकी। हर बार वह सडक पर पाँव रखती उस को लगता जैसे उसे चक्कर आ रहे हों। उस की आँखों के सामने अँधेरा छा जाता। वह सडक पर खडी रहती और मोटर वाला मोटर बचा कर निकल जाता। एक बार सन्ती बिलकुल सडक के भीतर जा खडी हुई। मोटर वाले ने बडी मुश्किल से उस से कोई एक गज दूर मोटर रोक ली और फिर नीचे उतर कर तडाक तडाक सन्ती को चाँटे जडे। जग्गू आगे हुआ उसे भी उस ने धक्का दे कर नीचे फेंका और स्वयं मोटर चला कर चला गया।

जग्गू का उसूल था कि एक सडक पर केवल एक बार हादिसा करने की कोशिश करता और एक शहर में ज्यादा दिन कभी न ठहरता। सन्ती उस का कहा मान कर आगे तो हो जाती किन्तु उस का तीर हमेशा चूक जाता। कई बार तो मोटर अभी सौ क़दम दूर होती और वह पहले ही डर के मारे चिल्लाने लग जाती, बेहोश हो कर गिर पडती और मोटर वाले घूर घूर कर उस की ओर देखते बच कर निकल जाते।

फिर सन्ती को माँ बनने की आस लग गयी। इन दिनों लाख जग्गू उस से लडता वह बाहर कदम न रखती। और फिर सन्ती माँ बन गयी। अब तो जग्गू की मजाल नहीं थी कि सन्ती को अपने काम के लिए संकेत तक कर जाये।

लेकिन जग्गू की मुसीबत यह थी कि उस की टूटी हुई लात, उस का टेढा बाजू, उस की एक ही एक आँख को देख कर मोटर वाले हमेशा सँभल जाते और अहाँ तक

सम्भव हो उसे चोट न लगने देते। कोई दिन ही होता जो उस का दाव लगता। और इस तरह उस के रोजगार में कई दिनों से मन्दा आया हुआ था।

सफ़ेदपोश जग्गू और कोई काम नहीं कर सकता था। जग्गू भूखा रह लेता पर बाजीगरों में अपनी सरदारी बनाये रखता। किन्तु उस का यह भ्रम ज्यादा देर बना न रह सका। जग्गू को एस लगता जैसे जीवन के खाने-पान के तार उस के हाथों से निकलते जा रहे हों, छटते जा रहे हों। और फिर एक बार कई दिनों से जग्गू के घर न आग जली और न कुछ पका। शहर की सड़कों पर रात दिन हा-हा जग्गू हार गया था। और अपने बच्चे की माँ की ओर उस की मजाल नहीं थी एक बार देख भी जाय। जब से माँ बनी थी सन्ती तो ।से रोटी हो गयी थी।

बरोजगारी का फ़िक्र हर घड़ी जग्गू को घुन की तरह खाय जा रहा था। भूख, जरूरतें, गरीबी। जग्गू घुलता जा रहा था। चार-चार दिन पाँच-पाँच दिन वह फ़ाके काट लेता पर भले कपड़ा से कभी बाहर कदम न रखता।

फिर एक दिन जग्गू का बच्चा बीमार हो गया। सारी रात उस को बुखार चढ़ा रहा। सारी रात वह सौंखता रहा। सुबह जग्गू उसे उठा कर दवाखाना ले गया। सन्ती का अपना जी ठीक नहीं था। वह साथ नहीं गयी। दुपहर का जब जग्गू लौटा सन्ती ने देखा वह खुश-खुश था। बच्चे की दवाई भी वह लाया, घर खान के लिए आटा भी लाया घी भी लाया।

अगले दिन जग्गू बच्चे को फिर दवाखाना ले गया। बच्चा चाहे कुछ ठीक हो था सन्ती अभी भी तन्दुरुस्त नहीं थी। और जब जग्गू लौटा आज फिर वह खुश-खुश था। वह अपने लिए कपड़े लाया, बच्चे के लिए कपड़े खरीद कर ले आया।

तीसरे दिन जग्गू और बच्चे को बाहर गये कोई दो घण्टे हुए थे कि धूप में बैठी सन्ती को सहसा जसे एक बेचैनी सी महसूस होने लगी। उस के दिल में कोई बात आयी और वह वैसी की वैसी बाहर की ओर दौड़ उठी। साँस फूले, तड़पती हुई सन्ती जग्गू को सड़क-सड़क ढूँढ रही थी कि आखिर उस ने उसे एक पेड़ के नीचे खड़े हुए देख लिया। सामने सड़क पर उड़ती हुई एक मोटर आ रही थी और सन्ती को पता था कि जग्गू क्या करने वाला था। एक गोली की तरह भागी हुई सन्ती ने जग्गू से जा कर अपना बच्चा छीन लिया। मोटर तो नजदीक आ चुकी थी। अपने शिकार के लिए तैयार गड़बड़ा कर जग्गू स्वयं सड़क पर कूद पड़ा। जग्गू सड़क पर गया और मोटर ने उसे लपेट में ले लिया। बायें हाथ के पहिये ने उस को गेंद की भाँति उछाल कर आगे फेंका और फिर दायें हाथ का अगला पहिया भी और पिछला पहिया भी उस की गर्दन के ऊपर से गुजर गये, उस के सिर के ऊपर से गुजर गये।

और जग्गू का सारा मगज बह कर बाहर आ गया। उस के दूध से सफ़ेद कपड़े खून से मिट्टी से लथपथ हो गये। और सन्ती के देखते-देखते मोटर वाला यह गया वह गया हो गया।

# नीली

नीली रग की गोरी थी, जसे काई मक्खन के पेडे का दूध में धा कर रखे। सामने मेंहदी के पेड तले खडी कई बार जब ग्वाला पानी के छीटे मार कर उस का दूध दुहने बठता तो बरामदे में खडे मुझे सहसा शम सी आ जाती। म एकदम उस की ओर पीठ कर लेता। अपने गाँव नदी के आर-पार आते जाते, कपडे उतार कर धीरे से पानी में छिप रही किसी औरत की ओर कभी मेरी नजर जा पडती थी और फिर कितनी दर मुझे अपनाआप मैला मला लगता रहता था। कुछ इस तरह मुझे महसूस हाता नीली को देख कर।

सुदर, स्वस्थ गाय का दूध भी बढिया होता ह। ग्वाले के ढेर से डगरों में से चुन कर मेरी पत्नी ने नीली को पसन्द किया था। और फिर उसी के दूध का भाव चुकाया गया।

प्रतिदिन सुबह ग्वाला नीली को हमारे यहा ले आता और सामने मेंहदी के पेड तले खडी वह गागर भर कर चली जाती। प्रतिदिन सुबह पहले नीली आती, फिर ग्वाला आता सिर पर चारे की टाकरी उठाये। नीली के सामने चारा रखता, उस के पिंडे पर हाथ फेरता और फिर दूध दुहने के लिए बठ जाता। कुछ देर थनों को अपने खुरदुरे पोरा से सहलाता फिर पानी के छीटे देता, फिर गागर में धारों का सगीत सुनाई देने लगता।

जितनी देर ग्वाला दूध दुहता रहता नीली टाकरी में से चने, बिनौले खली आदि चारा खाती रहती। दूध का भाव चुकाने से पहले इस तरह का अच्छा चारा खिलाने की भी शात तय हुई थी। और कभी कभी मेरी पत्नी चुपक से जा कर टोकरी देखती ग्वाला अपना इकरार पूरा कर रहा ह कि नही। अच्छी खुराक डगर का मिले तो दूध अच्छा होता ह मक्खन चोखा निकलता ह।

प्रतिदिन सुबह नीली आती, जल्दी जल्दी। कभी म सोचता उसे मसालेदार चारा खाने की जल्दी होती ह, कभी मैं सोचता उसे दूध देने की जल्दी होती ह, दूध दे कर सुखरू हो जाने की खुशी।

नीली नित आती, कभी जब हम सा रहे होते कभी जब हम सो कर उठ चुके होते। चुपके से आती, पीतल की गागर में धारों का एक नग़मा छेड कर चली जाती।

कई मास इस तरह बीत गये। फिर एक दिन हम ने सुना नीली आज लात मार गयी है। नयी हुए भी तो उसे कितने दिन हो चुके थे।

पर बहुत दिन हमें नीली की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। अब नीली भी आती, नीली के पीछे नीली की बछिया भी आती—हूबहू नीली की शकल। गोरा-गोरा रंग, कोमल चमड़ी, लम्बी दुम। शर्मा शर्मा रही, हरास लाज भरी आँखें।

मेरी पत्नी की दूध की आवश्यकता जैसे नीली के दूध देने पर निर्भर हो गयी थी। जितना नीली एक समय दूध देती सब का सब हम खरीद लेते। सम्भवतः किसी और ढ्वरे का दूध हमारे घर नहीं आता था। और आज-कल मेरी पत्नी बार बार ग्वाले को कहती 'कमबख्त इस बछिया के लिए भी कुछ छोड़ा कर, बड़ी बढ़िया गाय बनेगी।' परंतु ग्वाला अपनी ही मर्जी करता। जब मेरी पत्नी उसे बछिया के बारे में याद दिलाती वह नाक में कुछ गुनगुना देता।

क्योंकि बछिया के मुंह मारने पर नीली दूध उतार लाती थी आज-कल ग्वाले ने मसाला भी लाना बन्द कर दिया था। हमारे शिकायत करने पर वह हमेशा कहता कि वह मसाला बाकायदा खिला रहा था, केवल वक्त उस ने आजकल बदल दिया था। सांझ को भूसी के साथ ही मिला कर खिला देता था।

आखिर वही बात हुई। बछिया मर गयी।

अगले दिन ग्वाला छोटा सा मुँह ले कर आया। पिछली रात बछिया मर गयी थी और नीली ने न कुछ खाया था न पिया था। एक दिन दूध का नागा होगा।

मेरी पत्नी दाँत पीस कर रह गयी। उस को पता था कि ग्वाला बछिया को जान बूझ कर मार रहा है। पर पहले ही बिचारे का नुक्सान हो रहा था। गाय चाहे तो बिलकुल ही लात मार जाये। डंगर का कुछ पता नहीं होता। और हम चुप हो गये। और फिर ग्वाले की आँखों में आँसू तो पहले ही छलक रहे थे।

'चुल्लू भर दूध बचाने के लिए कमबख्त ने बछिया गवा ली है" ग्वाला जब पल्टा मेरी पत्नी न अपने होठों में बड़बड़ाया।

अगले दिन सुबह मैं ने देखा कोठी के सामने गेट पर बाहर नीली आ कर खड़ी हो गयी। पीछे ग्वाला आ रहा था। उस के सिर पर मसाला की टोकरी थी। अकसर सुबह जब नीली आती तो सिर मार कर गेट को खोल लेती थी। आज चुपके से आ कर वह गेट पर खड़ी हो गयी। अक्सर जब कभी गेट बन्द होता तो वह अपने सींगों से गेट को खटखटाने लगती थी। आज उस ने इस तरह नहीं किया। वीरान वीरान पलकों के नीचे उदास-उदास आँखें लिये वह बुझी बुझी सी आ कर खड़ी हो गयी। जल्दी-जल्दी ग्वाला आया। उस ने गेट खोला। उस के पीछे नीली आयी। गिन गिन कर क़दम रख रही थी।

बरामदे में मैं खड़ा था। मेरे पास मेरी पत्नी खड़ी थी। मेरी पत्नी की गोद में हमारी बच्ची थी, ठुमक रही, उछल-उछल पड़ रही, किलकारियाँ भर रही, माँ की

छातियों से उलझ रहा।

मेंहदी के पेड़ तले ग्वाले ने मसाले की टोकरी ला कर रखी और उस में हाथ मार कर खली की खट्टी-खट्टी खुशबू को बिखेरने लगा। नीलो अभी तक नहीं पहुँची थी। चिन्ता में डूबी हुई, उखड़े उखड़े कदम, बेदिले-बेदिल कदम, वह आ रही थी। मेहदी तले आ कर वह खड़ी हो गयी। उस ने टोकरी की ओर देखा तक नहीं। ग्वाले ने मसाले में फिर अपनी बाँह फेरी और टोकरी को उछाल कर बिनौला को दिखाया, चनों को दिखाया। इस बार खली की खुशबू बारामदे में हमारे तक भी आयी। नीलो आगे बढ़ी। फिर रुक गयी, फिर आगे हुई, फिर उस ने मुँह मोड़ लिया। कितनी देर जसे सोचती रही, सोचती रही। सामने टोकरी में पीले-पीले चन थे बिनौले थे पीले-पीले बालाई के जैसे घूँट हों। और खली की खुशबू आ रही थी। इधर खाव उधर हजम हो जाय। और फिर खली खाव तो भूख कितनी लगी ह! किन्तु आज नीली से कुछ नहीं खाया जा रहा था। ग्वाला नीली के पिंडे पर हाथ फेरने लगा। मुँह से उसे पुचकारने लगा। कितनी देर इस तरह करता रहा। फिर टोकरी के पास बठ कर उस ने फिर उस में हाथ फेरा। खली की खुशबू फिर उठी। नीली की जसे आप ही आप गरदन उस ओर मुड़ गयी। आप ही आप उस का कदम जसे आगे हुआ और उस ने टोकरी में अपनी थूथनी को डाल दिया। कितनी देर इस तरह उस का मुँह मसाले में रहा। पर नीली से कुछ खाया नहीं जा रहा था। आज नीली से कुछ नहीं खाया जा रहा था। और फिर नीली ने अपनी थूथनी को उठा लिया। गरदन को टोकरी की ओर से मोड़ लिया। और जसे पीठ दे कर खड़ी हो गयी।

परेशान-परेशान दृष्टियों से ग्वाले ने हमारी ओर देखा और बेबस, टोकरी को सिर पर उठाये वह लौट गया। उस के पीछे-पीछे नीली चली गयी।

'चुल्लू भर दूध के लिए कम्बख्त ने अपनी गाय गँवा ली ह।" मेरी पत्नी ने अपने होठों के अन्दर फिर बड़बड़ाया और फिर अन्दर नौकर को कहने चली गयी कि डेरी से जा कर दूध ले आये।

हमारी बच्ची अब मेरी छाती क साथ लगी हुई थी। और बारामदे में टहलता मैं दूर सड़क पर आगे आगे ग्वाले को जाता देख रहा था, और उस के पीछे नीली थी, जसे कोई अँधेरे में राह टटोलता चला जा रहा हो।

'और डेरी स गाय का तनिक गोबर भी ले आना, कल सक्रान्ति ह, चौके को लेप करना होगा।' मेरी पत्नी अन्दर नौकर को समझा रही थी।

और मैं अब भी सामने सड़क पर दूर जा रही नीली की ओर देख रहा था। जसे उथले पानी में खोखली शहतीरें बिछड़ी राहों पर बेखयाली अश्रु कोई पतंग अब गिरी कि अब गिरी। वह आँखों से ओझल हो रही थी। तेज तेज आ जा रहे लोगों में गुम होती जा रही थी। कई बार सड़क पर लोग कितने तेज चलते हैं!

अगले दिन प्रातःकाल मैं ने देखा सामने कोठी का गेट खुला। आगे-आगे

ग्वाला था, सिर पर मसाले की टोकरी लिये, और उस के पीछे-पीछे नीली थी, मुँह उठाये जैसे साली की राह्टी-सट्टी सुगन्ध सूँघ रही हो। मैं ने सोचा ग्वाले ने मैदान मार लिया है। और यही बात हुई। मेंहदी तले उस ने आ कर टोकरी रखी ही थी कि नीली आग बढ़ कर टोकरी में मुँह मारने लगी। कुछ देर उस इस तरह मसाला खाने देख कर ग्वाला चटलोई ले कर नीली के नीचे बैठ गया। नीली पर हट गयी।

ग्वाले ने मुड़ कर उस के मुँह की ओर देखा। मसाला तो खा रही था। टोकरी में मुँह दिये मसाला तो खा रही थी। ग्वाला फिर नीली की ओर जरा खिसका। नीली और पर हट गयी।

ग्वाला हार कर उठ खड़ा हुआ।

नीली मसाले की टोकरी में थूथनी दिये हुए हौले हौले मसाला खाती जा रही थी। तीन दिन की भूखी थी।

और ग्वाला उस के पिंडे पर हाथ फेरने लगा। कितनी देर तक लाड से उस की पीठ पर अपनी उँगलिया को फेरता रहा। साथ साथ मुह से उसे पुचकारता भी जाता। बार-बार उसे 'नील नोल' कह कर पुकारता। कोई पाँच मिनट इस तरह करता रहा।

और फिर ग्वाला आहिस्ता से नीली के तले बैठ गया। अब नीली मसाला बडी तेजी से खा रही थी। वह हिली नहीं। एक नजर उस के मुह की ओर देख कर ग्वाले ने नीली के थनो की ओर हाथ बढाया। नीली लात झटक कर परे हो गयी।

ग्वाला फिर अपना सा मुँह ले कर उठ खड़ा हुआ। मसाला तो खाती जा रही थी किन्तु दूध का नाम नही लेने देती थी। आगे बढ़ कर ग्वाला नीली के छोटे छोटे सींगों को सहलाने लगा। फिर उस की लम्बी गर्दन को अपने पोरो से पलोसने लगा। कितनी देर इस तरह करता रहा। गर्दन से लाड करता ग्वाला पीठ पर पोले-पोले हाथ फेरने लगा। पीठ पर हाथ फेरता वह नीली की पूँछ से खेलता रहा। इस तरह प्यार करता फिर वह चुपके से नीली के पास बैठ गया। कितनी देर बैठा रहा। पूँछ को मलता रहा। नीली की पिछली टाँगो से गोबर के सूखे छीटों को अपने नाखूनो से उतारता रहा। और फिर भगवान का नाम ले कर उस ने एक थन को धीरे से जा पकडा। नीली ने बिदक कर जोर से लात झटकी और पुकारती हुई पर हट गयी।

ग्वाला क्रोध में उठा। एक नजर उस ने नीली की ओर देखा। ग्वाला की आँखों में गजब भरा हुआ था। एक साँस नीली मसाला खा रही थी जैसे कुछ हुआ ही नहीं था।

आगे बढ़ कर ग्वाले ने मसाले की टोकरी को छीन लिया और उस सिर पर रख तेज-तेज कदम लौट पडा। नीली वहीं की वहीं खडी गरदन मोड ग्वाले को देखने लगी। वह तो मसाले की टोकरी उठाये तेज-तेज डग भरता जा रहा था। दूर कोठी के गेट के पास जब वह पहुँचा नीली रँभाई। जैसे उसे बुला रही हो। ग्वाले ने परवाह

ा की। जग हाथ बढ़ा कर वह गेट को खोलने लगा नीली फिर रँभाई, जसे उसे आवाज दे रही हो। ग्वाला क्रोधवश गेट से बाहर निकल गया।

कितनी देर वैसी की वसी मेंहदी तले खडी, मुँह उठाये नीली गेट की ओर देखती रही, जस ग्वाले की प्रतीक्षा कर रही हो। बीच-बीच में कभी-कभी नीली रँभाती, जसे ग्वाले को आवाज दे रहा हो। जस नीली उस को कह रही हो मेरे मालिक, तुझे क्यों समझ नहीं आती, अभी तो दो दिन भी नही हुए मेरी बच्ची को मरे ? मेरी कोखजाई मुझ से छीन ली गयी ह। मेरे दिल का टुकडा। हाय उस की याद भुलाये नही भूलती। इस पट का क्या करूँ ? इस में तो इधन डालना ही हुआ। आज तीन दिन से मैं भूखी हूँ। तुझे क्या समझ नही आती, इन थना को मेरी लाडली के कोमल-कोमल होठ जब लगते थे तो आप ही आप मेरा दूध उतर आता था ? कसे लाड में वह मेरी खीरी पर सिर मारती थी। तुझे नही पता माँ बच्चे का क्या रिश्ता होता ह ? मैं नही कहती म उस को भुलाऊँगी नहीं। मैं उस को भुला दूँगी। म नही कहती मैं हमेशा दूध नही दूँगी। मैं दूध दूगी। पर कुछ देर और तुम सब्र कर लो। शायद एक दिन ही और। और फिर मैं अपनी जान के टुकडे को भूल जाऊँगी। फिर मुझे अपना आसपास खाली खाली नहा लगेगा। आगे-पीछे मुझे यह अँधेरा-अँधेरा नही महसूस होगा। और फिर मसाला खाती, अपने ध्यान में दूध उतार दिया करूँगी। अब दूध का मुझे करना भी क्या ह ? दूध पीने वाली ता मेरी चली गयी। तुम लौट आओ। यू मुझे भूखा मत मारो। पहले क्या मुझ पर कम अयाय हुआ ह ! तुम लौट आओ मेरे मालिक

कितनी देर मेंहदी तले वसी की वसी खडी नीली कोठी के गेट की ओर देखती रही देखती रही। ग्वाला नही लौटा।

●

*मीनू*

छुट्टी की घण्टी बजी तो बच्चे इस तरह भागते हुए बाहर गलरी में आ गये जसे किसी फल से भरपूर बेरी को झिझोडने से ढेरो के ढेर बेर किड किड करते जमीन पर आ गिरते ह।

और फिर एक एक कर के जसे बेरा को चुन लिया जाय अपने-अपने नौकरा के साथ अपने अपने माता पिता के साथ अपने अपने ड्राइवरों के साथ अपने अपने चपरासियो के साथ बच्चे छितरने लगे। और जिन्हें स्कूल की बसों में जाना था, वह या तो बसो के भीतर जा बठे या बसो के बाहर मडलाने लगे। कुछ थे जो झूला के साथ चिमटे हुए थे कुछ मदान में दौड रहे थे, कुछ खेल रहे थे कुछ व तो के साथ झूल रहे थे।

*मीनू अपनी कक्षा से निकला। दौडता हुआ वह गुलमोहर के उस पेड की ओर* लपका जिस के नीचे प्रतिदिन उस के पिता का चपरासी उस की प्रतीक्षा कर रहा होता था।

आज पेड के नीचे चपरासी नही था।

मीनू को हरानी सी हुई। ऐसा तो कभी नही हुआ था। क्षण भर वह पेड के खाली तने की ओर देखता रह गया। फिर वह स्वय ही इस निष्कर्ष पर पहुचा कि चपरासी को शायद आज देर हो गयी होगी। और मीनू बसे का बसा सामने अँगरेजी मिठाई वाले के गिर्द एकत्रित हो रहे बच्चो के पास जा कर खडा हो गया।

अँगरेजी स्कूलो में के जी सब से निचली कक्षा होती ह। के जी के भी तीन दर्जे होते ह। और मीनू सब से निचले दर्जे म था। उस का घर स्कूल से कोई डेढ मील दूर था। सुबह वह अपने पडोसी बच्चे के साथ उस की मोटर में आता, *क्योंकि दोपहर को उस बच्चे को देर से छुट्टी मिलती थी, इसी लिए मीनू के पिता का* चपरासी उसे साइकिल पर लेने के लिए आ जाता।

प्रति दिन चपरासी छुट्टी से कितनी कितनी देर पहले आ कर पेड के नीचे खडा हो जाया करता था। जब छुट्टी होती, गुलमोहर के नीचे मुसकराता हुआ वह मीनू की प्रतीक्षा कर रहा होता।

पर आज उसे न जाने क्या हुआ था?

अँगरेजी मिठाई वाले के पास मीनू खडा रहा खडा रहा। मिठाई खरीदने वाले एक एक कर के चले गये। मीनू तब भी खडा हुआ था।

फिर मीनू उसी प्रकार बस्ता गले में लटकाये, बसा के पास खेल रहे बच्चों के पास आ गया। बसों के पास खडा मीनू बारम्बार गुलमोहर के पेड की ओर देख लेता। उस का चपरासी अभी तक नही आया था। फिर बसें चलनी आरम्भ हो गयीं। एक, दो, तीन चार, पाँच, छह सब की सब बसें चली गयी।

मीनू ने देखा उस की कक्षा का एक लडका सामने झूले पर बठा हुआ था।

"तुम्हारा चपरासी आज नही आया ?" मीनू जब उस की ओर गया तो लडके न लालीपाप मुह से निकाल कर पूछा।

"नही !" और मीनू की आँखों में आँसू आ गये।

"कोई बात नही" लडका झट झूले स उतर कर उस के निकट चला आया। फिर दोना न अपनी बाहें एक दूसरे के गले में डाल दी। और उद्यान में तितलियाँ पकडने लगे। कितना समय इसी प्रकार व्यतीत हो गया। और फिर उस लडके का बाप आ कर उसे भी ले गया।

"इस का चपरासी आज इसे लेने नही आया" जाते समय मीन के उस सहपाठी ने अपने पिता को मीनू क विषय में बतलाया।

'कोई बात नही अभी आ जायेगा।" उस के बाप ने उत्तर दिया और वह अपनी मोटर में बठ कर चले गये। मीनू फिर अकेला रह गया था। गुलमोहर के नीचे चपरासी अभी तक नही आया था। मीनू ने देखा, दूर खेल के मैदान के दूसरे सिरे पर कुछ बच्चे खेल रहे थे। कडी धूप थी। बच्चे पर्याप्त दूरी पर थे, तो भी मीनू धीरे धीरे उस की ओर चल दिया।

यह तो सब अपरिचित लडके थे। गुलेहरिया के समान पेडो पर चढ जाते और छलाँगें लगा कर नीचे आ जात। मीनू कितनी देर तक चुपचाप उन की ओर देखता रहा। फिर उन की हँसी के साथ उस ने हँसना आरम्भ कर दिया। पर मीनू इतना छोटा था, वह इतने बडे थे। एक बार मीनू की ओर गिरा डडा भी मीनू ने उठा कर उन्हें दिया, तो भी उन्होंने मीनू के साथ बात न की। और उसी प्रकार खेल में रत रहे। फिर उन बच्चो के मा नौकर बुलाने आ गय, उन के माता पिता आवाजें दने लग। ऐसा प्रतीत होता था कि ये बच्चे स्कूल के गिद बना कोठरिया में रहने वाले थ। और एक एक कर के वह भी चले गये।

और मीनू फिर अकेला रह गया। कन्धे पर अपना थैला उठाये मीनू फिर गुलमोहर की ओर चल दिया। पेड के नीचे चपरासी अभी तक नहीं आया था।

धूप तेज थी। मीनू को प्यास लगनी आरम्भ हो गयी। धूप लगनी आरम्भ हो गयी। मीनू चलते चलत और खडे-खडे थक गया था। और फिर मीनू गुलमोहर के पेड के नीचे बठ गया। तने के साथ पीठ लगाय बैठा-बैठा वह सो गया।

मानू

मीनू रिजी देर तक सोया रहा। फिर अकस्मात मीनू की आंख खुल गयी। स्कूल में पूर्ण निस्तब्धता थी। बच्चे जा चुके थे। अध्यापक जा चुके थे। जमादार सफाई कर चुके थे। चौकीदार खिड़कियाँ और द्वार बन्द कर के छुट्टी कर गये थे। अप्रिय नीरवता! दीवारें जैसे खा खा आ रही थीं। पुण साफ और चुप खड़े थे। मीनू भयभीत हो गया। उस के शरीर का रक्त जैसे सार का सारा सोख लिया गया हो।

मीनू उठ कर खड़ा हुआ। उस की आंखों के सामने चक्कर आये, फिर अन्धकार छा गया। एकाएक मीनू चीख उठा। और फिर फफक फफक कर रोता वह स्कूल के फाटक की ओर हो लिया।

स्कूल के फाटक पर खड़े मीनू की आँखें छम छम आँसू बिखेरती रहीं। सामने सड़क पर रंग रंग की मोटरें गतिशील थीं। बसें जा रही थी। टाँगे जा रहे थे। रिक्शाएँ जा रही थी। लोग पैदल जा रहे थे। और फिर मीनू जैसे इस तमाशे में खो गया। उस की आँखों में आँसू सूख गये।

सड़क की गहमागहमी देखता मीनू अपने थैले को झुला-झुला कर खेलने लगा। फिर कंकरियाँ उठा कर सामने नाली में पड़े हुए डिब्बे का निशाना बनाने लगा। फिर फाटक के एक पट पर खड़ा हो कर कभी उसे खोल देता कभी उसे बन्द कर देता। फाटक की चरमराहट उसे बड़ी प्यारी लगती। फिर मीनू गेट के बाहर इंटों के चबूतरे पर बैठ कर सड़क पर आ जा रही मोटरों की गणना करने लगा। मीनू गिनता जा रहा था, गिनता जा रहा था

"बच्चे तुम्हें किस की प्रतीक्षा है?"

और मीनू को एकाएक यह बोध हुआ कि वह तो अकेला वहाँ रह गया था। आज घर से उसे कोई लेने नही आया था। वह भूखा-प्यासा खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। मीनू बार बार दूर सड़क के उस ओर देखता जिस ओर से उस के पिता की हरी मोटर आ सकती थी। उस के पिता का खाकी वर्दीवाला चपरासी आ सकता था।

'बच्चे तुम्हें किस की प्रतीक्षा है?' साइकिल वाले ने फिर पूछा।

"मुझे कोई लेने के लिए नही आया" मीनू अब भी दूर सड़क की ओर देख रहा था।

'तुम को किस ने लेने आना था?"

'मेरे डैडी के चपरासी ने।"

"और यदि वह न आया, तो?"

'मेरे डैडी आ जायेंगे।"

"तुम्हारे डैडी कहाँ काम करते है?"

"बड़े दफ्तर में।"

'तुम लोग कहा रहते हो?"

'पटौदी हाउस।"

"तुम्हें म घर छोड आऊँ ?"

'नही मेरे डडी आयेंग ।"

"तुम्हें पक्का पता ह ?"

"हाँ मरे डैडी अवश्य आयेंगे ।"

कभी बाप भी अपने बेटे को भूल सकता ह । मीनू के चेहरे पर पूण विश्वास की झलक थी । साइकिल वाला चला गया ।

मोनू का अब अपनी माँ की बात याद आने लगी । स्कल के बाहर अकेले एक कम्म भी नहा रखना । अपने चपरासी के अतिरिक्त और किसी के साथ घर नहीं आना । और मोनू का साथी बच्चो की सुनाई कई कहानिया याद आने लगी । कसे कई लोग बच्चों का पकड लेते ह । और थैलो में ब द कर के उन्हें दूर ले जाते ह । दूर बहुत दूर, जगलो में, पहाडो में, जहाँ शेर होते ह हाथी होत ह । और वहाँ बच्चे का पेड के साथ उलटा उलटा कर उस के सिर के नीचे आग जलायी जाती ह । और इस प्रकार भुने जा रहे बालक के सिर में से जो रस निकलता ह उसे 'ममियाई' कहते ह ।

'ममियाई' निकालन वाले का विचार आत ही मीनू फिर से चीख पडा । और हडबडा कर सामने सडक पर दौडने लगा । मीनू दौडता गया दौडता गया । कुछ देर बाद थक कर उस ने चलना आरम्भ कर दिया । रास्ते में एक छाबडी वाला उसे 'बूढी क बाल बेचता हुआ मिला । मीनू उस की ओर देखने लगा । खडे-खडे वह कितनी देर तक उसे देखता रहा और फिर उस की पीठ दूर सडक पर अदृश्य हो गयी ।

मीनू पुन सडक पर चलने लगा । आगे दो सडकें थी । एक दाये मुडती थी और एक बायें । मीनू ठीक बायें हाथ वाली सडक पर हो लिया ।

अभी बहुत दूर तक नही गया था कि एक गोल चक्कर पर सात सडकें आ कर मिलती थी । मीनू हमेशा मोटर पर आता था और हमेशा साईकिल पर जाता था । आज पदल जो चलना पडा तो आस पास और का और लग रहा था । गोल चक्कर के उस ओर एक सडक थी जो सीधी मीनू के घर तक जाती थी और चक्कर काटता काटता मीन गलत सडक पर पड गया ।

मीनू ज्यों ज्यो चलता सडक के किनारे के घर उसे नये नये लगत । ज्यो-ज्यो उसे घर अपरिचित से लगत त्यो त्यों वह घबराता । उस के माथे पर पसीना आता । उस का मुँह लाल होता जाता । एक कदम आगे रखता तो जसे दो कदम उस के पीछे पडते । उसे लग रहा था कि वह गलत सडक पर जा रहा था । तो भी वह चलता गया—भूखा, प्यासा, थका हारा ।

और फिर एकाएक मीनू खिल उठा । सामने वह अस्पताल था जिस में छट माह पहले उस का इलाज हुआ था । कोई एक वष हुआ यहाँ उस की माँ रही थी, जब मीनू की छोटा बहन आयी थी । मीनू ने सोचा यहाँ स अपने घर का रास्ता उसे अवश्य ज्ञात ह । और दौड कर वह सडक के पार जाने ही लगा था कि पीछे से तेज

आ रही एक मोटर चिल्लाती हुई मुश्किल से उस के पास आ कर रुक गयी। ब्रेकों के लगने पर, हार्न के शोर पर, और मोटर के इस प्रकार उस के सिर पर आ कर रुकने पर मीनू बौखला गया। उस की आँखों के सामने भयङ्कर चक्कर आये, घोर अँधेरा छा गया। पता नहीं फिर वह कैसे सड़क के किनारे फुटपाथ पर पहुँच गया। फिर पता नहीं किधर या किधर वह सड़कों में चक्कर में खो गया। एक में से एक सड़क, उस में से और सड़क मीनू को कुछ पता नहीं था कि वह किस ओर जा रहा है।

और मीनू रोने लगा।

रोता जाता और चलता जाता। मीनू को एक माली मिला। "बच्चे तुम क्यों रो रहे हो?' माली ने उस से पूछा। पर मीनू ने माली का कोई उत्तर न दिया। कुछ और आगे जा कर उस के पास से एक मोटर गुज़री। एक पुरुष और एक स्त्री उस में बैठे हुए थे। पुरुष ने स्त्री से रो रहे मीनू की ओर संकेत कर के कुछ कहा। और मोटर उसी गति से आगे निकल गयी। मीनू रोये जा रहा था और चलता जा रहा था। फिर उस को एक शरणार्थी स्त्री मिली। हाय रे बालक तू क्या रो रहा है?' उस ने मीनू से पूछा।

मीनू उत्तर दिये बिना आगे चला गया। और वह स्त्री कितनी देर ठोड़ी पर उंगली रख उस की ओर देखती रही। किसी का निर्मल मोती के समान बच्चा है और कैसे लहू के आँसू रोये जा रहा है—उस की आँखें कह रही थीं। फिर मीनू को एक सिपाही ने देख लिया। सिपाही जैसे तैसे उसे टक्सी में डाल कर थाने ले गया। मीनू चीख रहा था, चिचला रहा था। थाने पहुँचा कर पुलिस वाला ने उसे कोका कोला' पिलाया फिर मिठाई खिलायी और धीरे धीरे उस से उस के घर का पता पूछ लिया।

पुलिस का सिपाही जब मीनू के घर पहुँचा तो माता पिता दोनों सोये पड़े थे।

बात यूँ हुई कि जो चपरासी मीनू को लाता था वह छुट्टी पर था और उस का बाप बच्चे को मंगवाना भूल गया था। माँ कहीं बाहर गयी हुई थी। बाप के बाद घर लौटी। दोपहर का भोजन कर के दोनों सो गये।

और अब जब संतरी ने जा कर यह समाचार दिया तो दोनों घबराये हुए मोटर ले कर भाग आये। थाने पहुँच कर दौड़ कर माँ बच्चे को गले लगाने के लिए आगे बढ़ी। पर मीनू पीछे हट गया। माँ हैरान उस की ओर देखने लगी। फिर पिता उसे प्यार करने के लिए आगे बढ़ा। मीनू ने इस प्रकार उस को ओर देखा जैसे वह कोई अजनबी हो उस से जान-पहचान तक न हो।

'क्या बेटा यह तुम्हारे डैडी नहीं?' थानेदार ने मीनू से पूछा।

'नहीं' मीनू ने अति कठोर हो कर उत्तर दिया।

और यह तुम्हारी मा नहीं?' थानेदार ने मीनू की माँ की ओर संकेत कर के कहा। 'नहीं" मीनू ने फिर उसी कठोरता से उत्तर दिया।

और फिर मीनू फूट फूट कर रोने लगा।

# खट्टी लस्सी

"खट्टी लस्सी" तेज का यह नाम उस की बहन सोमाँ ने रखा था। सदिया की एक दुपहरी में धूप में पडा गोरा चिट्टा वह उसे ऐसा लगा मानो खट्टी लस्सी हो। और कितनी देर सोमाँ उस के छोटे-छोटे पैरो को मुँह में ले कर चबाती, उस के हाथो का चूमती-चाटती, उस के अग-अग को सहलाती, बार-बार उसे "खट्टी लस्सी" 'खट्टी लस्सी" कहती रही और वह खिलखिला कर हँसता रहा। हँस हँस कर दुहरा होता रहा।

और फिर जब कभी उसे अपने नन्हें भाई पर प्यार आता, उसे वह "खट्टी लस्सी" कह कर पुकारा करती थी।

'खट्टी लस्सी" उसे कहती और सोमाँ का अपने भया के लिए समूचा प्यार जसे उस की आँखो में उमड आता। वह उसे 'खट्टी लस्सी" कह कर पुकारती, यह सुनते ही वह मुसकराता और बहन के हाथ अपरिमित स्नेह में डब कर भाई की ओर फल जाते, और अपनी छाती से लगा कर वह उसे भींच भीच सी डालती। वह खेल रहा होता, दूर से उसे 'खट्टी लस्सी" कह कर वह पुकारती, उस का मुख जसे शहद के घूँट स भरा होता, मीठी मिश्री का स्वाद सा जसे आस पास बिखर जाता।

फिर वह बडा हुआ, और बहन भाई जब कभी अकेले होते तो वह उस से पूछा करता 'बहन तू ने मेरा नाम 'खट्टी लस्सी ' क्यो रखा था ?

बहन को कोई कारण न सूझता। वह भाई के गोरे-गोरे मुखडे की ओर बार बार निहारती एक अल्हड युवती के मुँह में इमली का नाम सुन कर जसे पानी भर जाता ह, वैसे ही अपने भाई की ओर दखते ही उस के मुँह में पानी आ जाता।

और वह उसे फिर 'खट्टी लस्सी" कहती। उसे "खट्टी लस्सी" कहती और उस को उँगलियों को धीरे से मुह में ले कर दाँतों के नीचे मानो चबा चबा लती।

फिर वह और बडा हो गया। उस की बहन और बडी हो गयी। उस की बहन का ब्याह हो गया। फिर वह अपने ससुराल चली गयी। ससुराल से बहन के पत्र आते चिट्ठी देख कर वह तडप उठता था "कहाँ सोमा ने लिखा ह "खट्टी लस्सी' को प्यार ? और खट्टी लस्सी अपना यह नाम पत्र में देख कर उसे ठडक सी पड जाती।

उस की बहन उसे 'खट्टी लस्सी" कह कर बुलाती ह यह बात एक दिन एक पडोसी लडके ने बातो-बातो में अपने स्कूल के साथियो को बता दी। 'खट्टी लस्सी'

नाम सुनते ही एक बच्चे ने हँसना शुरू कर दिया । उस को हँसता देख कर बाकी के सब लड़के भी हँस पड़े । हँसते जाते, हँसते जाते । जब हँसी जरा मद्धम पड़ने लगती तो फिर कोई कह देता "खट्टी लस्सी" और फिर सब के सब बच्चे खिलखिलाने लगते । वह उन के मुख की ओर देखता रहा, शर्माता रहा और चुपचाप कमरे में जा कर अपनी किताब खोल कर पढ़ने लग गया ।

वह चला गया । बच्चे फिर भी हँसते रहे । फिर एक लड़के को शरारत सूझी, स्कूल के सामने वाले घर में गाय थी, वहाँ से वह एक छाछ का गिलास ले आया और एक छोटी श्रेणी के लड़के के हाथ गिलास अन्दर भिजवा दिया ।

'यह खट्टी लस्सी का गिलास तुम्हारे लिए माई हीरो ने भेजा है ।' जो छोटे लड़के को सिखाया गया था कहते ही उस ने अन्दर जा कर उसे कह दिया । और सोमी का भाई तेज क्रोध भरे नेत्रों से उस बच्चे की ओर देखने लगा । बाहर खिड़कियों के पीछे छिपे हुए लड़कों ने फिर कहना शुरू कर दिया—'खट्टी लस्सी' 'खट्टी लस्सी । 'खट्टी लस्सी' कहते और हँसते जाते ।

उसी दिन पढ़ते हुए एक लड़के ने अपने अध्यापक से पूछा—'जी खट्टी को अँगरेजी में क्या कहते हैं ?' अध्यापक ने उसे बताया । दूसरा लड़का बोला—'जी लस्सी की क्या अँगरेजी होती है ?" और फिर सब लड़के हँस पड़े । अध्यापक की समझ में कुछ न आया ।

अगली घण्टी में स्वास्थ्य के नियम बताते हुए विज्ञान के अध्यापक ने कहा—स्वास्थ्य के लिए हमें दूध, दही और लस्सी का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए ।"

"मास्टर जी खट्टी लस्सी भी सेहत के लिए अच्छी होती है ?' एक लड़के ने खड़े हो कर पूछा और बाकी सब लड़के हँस पड़े ।

इस अध्यापक की समझ में भी कुछ न आया और वह पढ़ाता रहा पढ़ाता रहा ।

अगली घण्टी के शुरू में तेज एक क्षण के लिए बाहर गया । जब वापस आया तो सामने ब्लैकबोर्ड पर चाक से लिखा हुआ था—खट्टी लस्सी । उस ने यह देखा और उस का चेहरा एकदम तमतमा उठा । लड़कों ने हँसना शुरू कर दिया । इतने में अध्यापक आ गया और उस ने भूगोल पढ़ाना आरम्भ कर दिया । न इस अध्यापक को ब्लैकबोर्ड की आवश्यकता पड़ी न उस ने ब्लैकबोर्ड की तरफ देखा । इस घण्टी के सारे समय में सामने ब्लैकबोर्ड पर मोटे मोटे अक्षरों में लिखा रहा 'खट्टी लस्सी" और तेज एक पल के लिए आँखें ऊपर न उठा सका ।

स्कूल के पश्चात उस ने आँख बचा कर भागने का प्रयत्न किया पर लड़कों ने जैसे तैसे उसे घेर लिया । "खट्टी लस्सी, खट्टी लस्सी" कहते गये और हँसते गये । तेज जो अभी तक चुप था झुँझला कर एक लड़के को ठोकर मार बैठा । फिर क्या था, शेष सभी उस पर टूट पड़े और उसे खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी कहते हुए मार-पीट कर अपने अपने घर भाग गये ।

अगले दिन जब वह पढ़ने आया, स्कूल की चारदीवारी पर, हलवाई की दुकान पर, कमरे के दरवाज़े पर, ब्लैकबोर्ड पर, जहां वह बैठता था हर जगह "खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी,' लिखा हुआ था। जिधर उस की आँख उठती हरी, सफेद, लाल खड़िया मिट्टी से "खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी" के अतिरिक्त उसे कुछ भी दिखाई न देता।

सहमा-सहमा, दुबका-दुबका, एक फाख़ता की तरह अपने परों को समेटे वह कमरे के अन्दर अपनी जगह पर बैठ गया। उसे ऐसा लगा मानो उस के दिमाग़ को किसी चीज़ ने जकड़ लिया हो। जैसे उस के कंधों पर मानो बोझ टूट पड़ा हो, जैसे लाखों आँखें घूर घूर कर उसे देख रही हों, और उसे आँख झपकते ही छलनी-छलनी कर देंगी।

तेज सारे स्कूल में सब से सुन्दर, सब से कोमल और सब से ज्यादा बुद्धिमान लड़का था। जो काम दूसरे लड़के न कर सकते वह कर लेता। जो बात दूसरा की समझ में न आती वह उसे झट समझ लेता। उस का बस्ता, उस की किताबें, कापियाँ, हर चीज़ हमेशा साफ़-सुथरी होती।

यही कारण था कि लड़के उस से हमेशा ईर्ष्या करते थे। जब भी अध्यापक विद्यार्थियों पर क्रुद्ध होता तो एक वही उन के क्रोध से बचा रहता। कई लड़कों को वह अच्छा लगता था पर तेज उन से हँसता, खेलता, मिलता नहीं था। कई एक को परीक्षा में उस की नक़ल टीपनी होती और वह इस काम में उन की सहायता नहीं करता था।

उस दिन पहली घंटी में ही अध्यापक ने कोई प्रश्न पूछा। सारी की सारी श्रेणी में कोई उत्तर न दे सका। तेज को उत्तर भली भाँति ज्ञात था, पर वह लड़कों के भय के कारण चुप रहा। फिर अविरल आंसू बहाते हुए सब लड़कों के समान उस ने तड़ाक-तड़ाक दो बेंत अपनी हथेलियों पर खा लिये। बेंत लगा कर अध्यापक ने सारी श्रेणी को उत्तर लिखवाना आरम्भ किया। तेज ने जब डेस्क में से दावात निकाली तो स्याही की जगह उस में लस्सी भरी हुई थी। तेज की दावात देख कर सारे लड़के अट्टहास कर उठे। हँसते जाते हँसते जाते। अध्यापक कुछ न समझ सका। उस ने खीझ कर एक दो लड़कों के साथ तेज को भी पीट डाला और उस की लस्सी से भरी दावात बाहर फेंक दिया।

स्कूल में कमरे से बाहर जिधर भी वह जाता, स्कूल के चपरासी खोंमचे वाले माली, भंगी, अध्यापक, हेडमास्टर, सब उसे खट्टी लस्सी कह कर छेड़ते। स्कूल की दीवारें, ब्लैकबोर्ड, दरवाज़े, खिड़कियाँ, फ़र्श, 'खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी' से भरे जा रहे थे। स्कूल के लाल लेटर बक्स पर भी किसी ने खट्टी लस्सी चित्रित किया हुआ था। शहतूत के नीचे पड़े हुए पानी के मटकों पर सफ़ेद खड़िया मिट्टी से लिखने वाले बार-बार खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी लिख जाते और बार-बार कहार उन्हें मिटाता रहता।

तेज के मन में आता कि वह कहीं भाग जाये। छिप छिप कर वह रोता रहता।

हर समय उसे डर रहता कि अभी कोई उसे खट्टी लस्सी कह कर चिढ़ायगा, और आस पास खड़े सभी लोग हँस पड़ेंगे। जब कभी उस की नज़र ऊपर उठती, जहाँ भी उस की आँख अटकती वहीं खट्टी लस्सी लिखा होता।

जिस दिन उस की लड़कों के साथ मार पीट हुई थी उस दिन से कोई लड़का उस से बात नहीं करता था। तेज स्वयं भी किसी के साथ नहीं बोलता था। वैसे भी उस का स्वभाव चुप रहने का था।

श्रेणी के बाहर वह एक कदम चैन से नहीं उठा सकता था। और श्रेणी में दशा यह थी कि लड़कों को एक अध्यापक के जाने और दूसरे के आने में जो समय मिलता उस में तेज की मिट्टी पलीद कर देते।

और फिर एक दिन स्कूल के कमरे में वह फूट फूट कर रोने लगा। अगले दिन उसे ज्वर हो गया और वह स्कूल न आया। फिर प्रतिदिन स्कूल के नाम से ही बुखार चढ़ जाता। दोपहर के बाद जब उस का ज्वर उतरता तो उस का जी चाहता कि वह बाहर निकले पर जिस गली में वह जाता लड़के 'खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी" कह कर उसे चिढ़ाते। बाजार में, खेल के मैदान में हर जगह जहाँ भी कोई तेज को देख लेता, धीरे से खट्टी लस्सी कह देता और बाकी हँसना शुरू कर देते।

अपने लड़के की ओर से चिढ़ कर उस की माँ ने अड़ोस पड़ोस से लड़ना शुरू कर दिया। उस के पिता ने एक रविवार को बाजार में खड़े हो कर शरारती लड़कों के माँ बाप को गालियां दीं।

फिर क्या था जैसे एक आग सारे गाँव में लग गयी। हर जगह खट्टी लस्सी की पुकार सुनाई देने लग गयी। पंचायत के पंच इस बात पर हँसते रहते, चौपाल में बैठे युवक इस परिहास में आनंद लेते, स्त्रियाँ पानी भरती हुईं मन्दिर जाती हुईं, गली-कूचों में खड़ी "खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी" का बखान करती रहतीं।

तेज डर के मारे बाहर न निकलता। घर बैठता तो माता पिता उस पर नाराज होते। उधर स्कूल की पढ़ाई खराब हो रही थी। इस बात की चिंता स्वयं उसे खाये जा रही थी।

घर में भी बाहर आँगन में न बैठता। गली में से गुजरते छोटे छोटे बच्चे 'खट्टी लस्सी' कह कर भाग जाते और वह दाँत पीसता रह जाता। उस की माँ गालियाँ देती थी और बच्चे और ऊँचे स्वर में मिल कर कहते "खट्टी लस्सी" और फिर छिप जाते।

रात को सोते-सोते कई बार घबराया सा वह उठ बैठता। घबराहट से उस का पसीना छूट जाता। वह डरता हुआ, काँपता हुआ कुछ न कुछ बड़बड़ाता रहता।

एक साँझ लैटर बक्स में एक पत्र डालना था। उस का पिता घर पर नहीं था। उस की माता रसोई से निवृत्त नहीं हुई थी। कितनी देर से वह तेज को पत्र डालने के लिए कह रही थी। तेज टालता जा रहा था टालता जा रहा था। अन्त में

उस की मा क्रुद्ध हो उठी। तेज मा से डरता हुआ चिट्ठी ले कर घर से निकल पडा। उसे दो गलियां में से हो कर गुजरना था फिर खेल का मैदान और फिर पक्की सडक पर लेटर बक्स।

तेज एक गली में से डरता सहमता गुजर गया। दूसरी गली में लडके गिल्ली-डंडा खेल रहे थे। एक लडके ने उसे देखते ही कहा "खट्टी लस्सी" और शेष सब खेल छोड कर हँसने लगे। तेज का दिल धडकने लग गया। उस के कदम तेजी से बढने लगे। लडको ने मिल कर फिर कहा, "खट्टी लस्सी" और जैसे उस के पीछे-पीछे चलने लगे। तेज एक दम दौडने लगा। सब के सब लडके "खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी" कहते उस के पीछे हो लिये। सामने बाजार था बाजार में लोगा ने तालियाँ बजायी। आगे-आगे तेज और पीछे-पीछे बच्चे, जवान-बूढे स्त्री पुरुष "खट्टी लस्सी" "खट्टी लस्सी" कहते तेज को ऐसे लगा माना एक बाड उस के पीछे चली आ रही हो।

खेल के मैदान में और लडकों ने "खट्टी लस्सी खट्टी लस्सी" कहना शुरू कर दिया। तेज दौडता दौडता मार्ग से भटक गया, और झाड-झखाड खेत-खलिहान, पार करता गाव से बाहर निकल गया। दौडता गया, दौडता गया। उसे ऐसा प्रतीत होता जैसे सारे का सारा गाँव उस के पीछे चला आ रहा हो। आखिर एक झाडी के पास वह बेसुध गिर पडा।

अँधेरा हो चुका था, जब उस के पिता ने उसे गाँव के बाहर जंगल में पडा पाया। ज्वर से जैसे वह फुका जा रहा था। घर ला कर लाख दवाइयाँ की गयी, डॉक्टर आये, हकीम आये फिर कही तेज ने आँख खोली। आख चाहे उस ने खोल दी पर तेज किसी को पहचान न सकता था। उस की आखों से आँसू बहते जाते, बहते जाते। और डॉक्टर आये और इलाज हुआ। फिर पता चला कि तेज का दिमाग चल गया है। उस ने कपडे फाडना बाल नोचना दाँतो से काटना और गन्दी गालियाँ देना आरम्भ कर दिया। "आ गये आ गये" कहता और पलंग से उठ कर भागने लगता। न किसी के समझाये समझता, न किसी के सँभाले सँभलता। माता पिता बाँध-बाँध कर उसे रखते, जकड जकड कर उसे रखते।

माँ बाप का एकमात्र पुत्र अनेक इलाज तेज के हुए। झाड-फूँक करने वाले आये मन्त्र पढने वाले आये मालिश करने वाले सारा-सारा दिन मालिश करते रहते। अंगरेजी दवाइयाँ, देशी दवाइयाँ, किसी प्रकार के इलाज की कसर न रहने दी गयी। घर में जब वह अच्छा न हुआ तो उसे अस्पताल में दाखिल करवा दिया गया। जिस दिन वह अस्पताल पहुंचा, उसी साँझ उस की बहन सोमाँ आ गयी।

अस्पताल वालो ने उसे अकेले, शान्त, हवादार कमरे में रखा हुआ था। घर वाला को उस से मिलने की आज्ञा नही थी। पर जैसे कैसे सोमाँ चुपके से तेज के कमरे में चली गयी।

"खट्टी लस्सी" सोमाँ ने अरमान भरे स्वर में कहा और उछल कर जैसे अपने

भया के पलग पर जा गिरी। "खट्टी लस्सी" कहती और उसे चूमती। "खट्टी लस्सी" कहती और उसे छाती से लगाती। "खट्टी लस्सी" कहती और उस की उँगलियों को दाँतों के नीचे धीरे धीरे दबाती। जसे घनघोर घटाओं के पीछे से कभी सूय बलपूवक उभर आता ह, वसे ही तेज के दिमाग पर छाया गहरे अधकार का आवरण हटना शुरू हो गया। सोमा "खट्टी लस्सी" "खट्टी लस्सी" कहती और तेज के माथे से बीमारी के चिह्न मिटते जाते। उस की आँखों में चमक सी आनी शुरू हो गयी। सोमा उस के हाथों को दबाती, माथे को मलती, गालों को सहलाती, उस के बालों में उँगलियाँ फेरती बार-बार उसे "खट्टी लस्सी," खट्टी लस्सी" कह कर पुकारती मानो उसे प्रगाढ निद्रा से जगा रही हो। कोई पद्रह मिनट इसी प्रकार करते रहने के बाद जब सोमा ने खट्टी लस्सी' कहा तो तेज के मानो जकड हुए अग प्रत्यग स्वच्छन्द हो गये। उस के होठों पर मुसकराहट दौड गयी। उस ने अपनी बहन को पहचान लिया। फिर वे दोनों कितनी ही देर छोटी छोटी बातें करते रहे। खट्टी लस्सी" सोमा कहती तो उस के भैया की जसे मल की तहें उतरती जाती। 'खट्टी लस्सी" सोमा कहती तो उस का भया जसे रिमझिम फुहार में नहा रहा हो उसे ठडक पडती जाती। 'खट्टी लस्सी" सोमा कहती तो उस की रगों में जमा हुआ रक्त जसे गतिमान हो जाता। बार बार वह सिसकियाँ भरता और बार-बार वह अपनी बहन की आँखों में स्नेह का जीवन देने वाला अपार सागर उमडता हुआ देखता। उस के अग अग में शक्ति आती जाती।

उस रात सोमा वहीं रही। अगले दिन वह अपने हँसते-खेलते भया को ताँगे में बिठा कर घर ले आयी। 'खट्टी लस्सी" वह अपनी बहन को पुकारते हुए सुनता तो उस में इतना बल इतनी दिलेरी आ जाती कि तेज सोचता कि वह तो दीवारों को गिरा सकता ह लाखों से लड सकता ह।

●

# जब ढोल बजता है

ममूद ने अखाड़े में मुकाबले के पहलवान से हाथ ही मिलाया था कि आँख झपकने की देर में कुछ हुआ, और फिर तालियाँ बज उठी। ममूद चित हो गया था। दर्शक तालियाँ पीटने गये, पीटते गये। ढेरी चक्री वाला ने अपने पहलवान को कन्धों पर उठा लिया। और ममूद अवाक् सा अखाड़े में टुकुर-टुकुर देख रहा था कि यह हो क्या गया है? और दस आदमी जो उस के साथ आये थे, चुपके-चुपके छँटने शुरू हो गये।

ममूद हैरान था। ढेरी चक्री वाला उसे कैसे पछाड़ सकता था? 'मुर्रा' की भैंसों के दूध पर पला हुआ ममूद नमाजें पढ़ने वाले ढेरी चक्री के पट्ठे से हार गया। ममूद की आँखों के आगे चक्कर आने शुरू हो गये।

पूरे एक साल की मालिशें पीपे के पीपे सरसों के तेल के उस के पट्ठों में रच गये थे। पूरे एक साल की कसरतें, बैठक और डण्ड मुद्गर और 'मुरलियाँ' दावँ और पेंच। पूरे एक साल की खुराक दूध और मलाई, मक्खन के पेड़े के पेड़े और घी की मनकें जो उस के लिए घर से आती थी। पूरे एक साल की तैयारियाँ, पूरे एक साल की बाट 'गोल्डे शरीफ' के मेले की।

और अब पूरे एक साल की उपेक्षा। हारे हुए पट्ठे की बेबसी। हारे हुए पट्ठे की मेहनत।

और ममूद ने एकदम सिर हिलाते हुए अखाड़े के उस्ताद का जा पकड़ा। ममूद नहीं हारा था। लोग ठट्ठा कर रहे थे, उपहास कर रहे थे और ममूद कहता कि वह हारा नहीं था। मुकाबले की पार्टी नाच नाच उठती थी, उन का ढोल गूँज गूँज पड़ता था उन की चादरें और पगड़ियाँ हवा में उड़ उड़ जाती थीं, उन के सोटे उछल उछल गिरते थे और ममूद कहता कि वह हारा नहीं था।

लोगों ने ममूद की पीठ लगते देखी थी। ममूद के कन्धों के बीच अभी भी मिट्टी लगी हुई थी। और ममूद कहता कि वह हारा नहीं था।

पर विपक्षी तो ममूद के मुँह से हार मनवाना चाहते थे। और निर्णय यह हुआ कि दंगल फिर होगा। शर्त केवल एक ही थी कि ममूद का खलीफा' अखाड़े में हाजिर हो ताकि अगर फिर भी ममूद हार न माने तो उस के खलीफे का झूठा किया जा सके।

ममूद ने यह शर्त मान ली। दंगल अगले दिन होना नियत हो गया।

ममूद ने बात तो मान ली पर उसे अखाड से बाहर आ कर खयाल आया कि उस का गाँव तो तीस मील दूर था।

'और ममूद आँखें बन्द कर के मेले से निकल पडा। सारा दिन ममूद दौडता रहा दौडता रहा। कही अगर उसे घोडी मिल गयी तो उस ने घोडी पकड ली, कही उसे बलगाडी मिल गयी, तो बलगाडी पर सवार हो गया। और शाम को सूरज डूबत ही ममूद अपने गाँव जा पहुँचा।

गाँव पहुँच कर ममूद को खयाल आया कि उस का खलीफा तो आज कितने दिन हुए बाहर गया हुआ था। फिर एकदम ममूद को अपने खलीफे के बेटे का खयाल आया और वह वसा का वैसा दौडता हुआ जमीदार के घर जा पहुँचा।

खलीफा भी बाहर गया हुआ था खलीफे की घरवाली भी बाहर गयी हुई थी। घर में केवल खलीफे का ग्यारह साल का बेटा था, और उस की बूढी दादी।

दादी कसे अपने पोते को ३० मील दूर मेले में नीच जात के साथ भेज सकती थी ? और ममूद आँगन में फूट फूट कर रोने लगा। करमो बीबी ने ममूद को समझाया भी उस पर नाराज भी हुई पर ममूद की पूरे एक साल की मेहनत अकारथ जा रही थी और फिर वप भर का अपमान, ममूद कहता कि वह तो बच्चे को ले कर ही जायेगा।

और करमो बीबी ममूद को लाख लाख गालियाँ देती।

करमो बीबी के पारे से डर कर और कोई हवेली की तरफ मुँह न करता।

गाँव वालो के लिए बडी समस्या खडी हो गयी थी। खलीफा घर पर नही था। और यदि ममूद हार जाता ह तो सारे गाँव का इस में अपमान था। सब की पगडी उतर जाती। उधर करमो बीबी भी सच्ची थी, ग्यारह साल के बच्चे को ३० मील दूर मेले में कैसे भेज देती।

और इसी सोच विचार में रात हो गयी।

एक पहर रात बीत चुकी थी कि घर के नौकरा और मुहल्ले वालो और पडो सियों, और गाँव के बडे-बूढा ने मिल कर, सोये हुए जमीदार के बच्चे को हवेली से उठवा लिया और रातोरात घोडी पर बिठा कर ममूद के साथ मेले भिजवा दिया। सारी रात घोडी दौडती रही। और सवेरे ठीक समय पर ममूद अपने खलीफे को कधा पर उठाये हुए अखाडे में आ उतरा। लोगों ने ममूद के खलीफे को देखा और तालियाँ बजाना शुरू कर दिया। पर ममूद नाचता हुआ, झूमता हुआ, अपने खलीफे को वसा का वसा सिर पर उठाये अखाडे के उस्ताद के पास ले गया। उस्ताद ने खलीफे के साथ हाथ मिलाया। उस के गले को फूलों से भर दिया गया। और अखाडे के एक सिर पर बठ कर करमो बीबी का पोता दगल की प्रतीक्षा करने लगा। ढोल एक सुर एक ताल पूरी गमक से बज रहा था और झुण्ड के झुण्ड लोग जमा हो रहे थे। अखाड के चारो ओर कहीं तिल धरने को जगह न थी।

और उधर पीछे गाँव में करमो बीबी ने जब अपने पोते को पलँग पर न पाया,

तो सिर पीट पीट कर बेहाल हो गयी। सारा गाँव उस ने इकट्ठा कर लिया। लोग सोचते कि ममूद का बच्चा बच्चा कोल्हू में पिसवा दिया जायेगा। करमो बीबी तो उस की बोटी-बोटी चिड़ियों से चुगवा देगी। ममूद के घरवाले डर से गाँव छोड़ कर भाग गये।

करमो बीबी का क्रोध अपार था। एक बार गली में किसी ने आँख उठा कर उसी की ओर देखा था और करमो बीबी ने हट्टे-कट्टे उस जाट का उसी की पगड़ी के साथ बाँध कर, उस के मुँह को लेंडी कुत्तो से चटवाया था। जवानी में करमो बीबी अकेली भैंस को पकड़ कर उस की नाक को नथ देती। बिगड़ल सी बिगड़ैल घोड़ियाँ करमो बीबी के सामने सिर न उठाती। और अब चाहे करमो बीबी बूढ़ी हो गयी थी, उस के चेहरे की लाली वैसी की वैसी थी, उस के माथे पर दबदबा वसा का वैसा था, उस की छाती में हिम्मत रत्ती भर कम नहीं हुई थी।

और फिर करमो बीबी ने गाल्डे शरीफ के मेले की ओर घोड़े दौड़वाये ताकि उस के पोते को उसे खबर ला कर दें, घोड़े दौड़वाये शहर की ओर ताकि उस के बेटे को गाव में हुए इस अनथ की सूचना दें।

और फिर करमो बीबी ने हण्टर उठा लिया। इस्पात जैसी कठोर हथी वाला हण्टर जिस की चाबुक साप की तरह फुँकारती थी। और करमो बीबी शेरनी की तरह बिफरती इन्तज़ार करने लगी।

उधर ममूद लिश लिश करते अपने पट्ठों पर हाथ मारता हुआ अखाड़े में उतरा अपने खलीफ़े के उस ने पैर चूमे और शेर की तरह गरजता हुआ, मुकाबले के पहलवान पर जा टूटा। पत्थर की तरह सख्त ममूद के कमाये हुए शरीर पर जहा भी दूसरा हाथ डालता उस का हाथ छूट-छूट जाता। और फिर ममूद ने अपने सिर के साथ उस की छाती पर घुस मारी और ढेरी चक्री के पहलवान को टांगों से पकड़ कर उलटा दिया। आँख झपकने में ममूद उस की छाती पर जा बठा। ममूद छाती पर बठा हुआ था पर दूसर की पीठ अभी लगी नहीं थी। एक कंधे पर ममूद जोर डालता और वह दूसरा उठा लेता, दूसरे पर बोझ डालता तो वह पहला जमीन से हटा लेता। अखाड़े का उस्ताद नीचे पंजे दे-दे कर खाली जगह को बार बार देखता। पहलवाना के दम फूल रहे थे। उन के शरीर लाल हो गये थे। तमाशबीन तालियों पर तालियाँ पीट रह थे। दोनों तरफ़ लोग ऐसे तन गये थे जसे कि हर कोई स्वय कुश्ती लड़ रहा हो। और फिर ममूद ने दायें बायें, बायें-दायें, ढेरी चक्री वाले को अपनी कलाइयों से मारना शुरू कर दिया। मारता जाता, मारता जाता। नीचे पड़े हुए पहलवान की आँखें निकल रही थीं। ऐसे लगता जसे लहू उस के कंधे से फूट निकलेगा, उस की हड्डियाँ जसे पिसी जा रही थीं, पर फिर भी वह एक कंधा जमीन के साथ लगाता और दूसरा उठा लेता। दूसरे कंधे को नीचे लगाता तो पहला उठा लेता। और जब तक दोनों कंधे ठीक जमीन के साथ न लग जायें पहलवान चित नहीं समझा जाता था। और फिर ममूद ने एक नजर अपने

खलीफे की तरफ देखा और जसे अथाह बल उस में आ गया हो, वह बिजली की तरह कूदा और उल्टा हो कर अपने घुटनो को उस ने ढेरी वाले के कन्धों पर रख दिया और हाथो से उस की टांगो को सीधा कर दिया। ढेरी चक्री का पहलवान चित हो गया था। तालियों और नारो की गूँज से आकाश फटने लगा। ममूद ने अपन खलीफे को सिर पर उठा कर नाचना शुरू कर दिया। ढोल बजते, ममूद नाचता, फूलो के हार बार-बार लोग ममूद के गले में डालते, ममूद के खलीफे के गले में डालते। और फिर ममूद के साथियो ने मिल कर गाना शुरू कर दिया, नाचना शुरू कर दिया।

इस तरह गाना हो रहा था, नाच हो रहा था कि ममूद को करमो बीबी का ध्यान आया और वैसे के वैसे ममूद और उस के साथी ढोल पीटते घोडियो पर सवार गांव की ओर चल दिये।

घोडियाँ दौडती घोडियाँ ठहरती, पानी पीती चारा खाती तीस मील का फासला था आखिर पहुँचते पहुँचते ही पहुँचती। और ऐसे ही दोपहर ढल गयी।

शाम हो रही थी जब अपनी हवेली की सब से ऊंची छत पर खडी करमो बीबी ने देखा सामने गोलडा शरीफ को सडक पर कुछ सफेद कपडे दिखाई दिये। करमो बीबी के हाथ में पकडा हुआ हण्टर जसे फुँकारने लगा। उस के दाँत बार बार उस के होंठो को खा कर काटते और उस पर एक रग आता और एक रग जाता। और गांव के लोग सोचते कि आज न जाने क्या कहर बरसने वाला था। करमो बीबी चाहे तो ममूद को छत से उलटा लटका कर उस के नीचे लाल मिरचों की धूनो सुलगा दे उसे कोई पूछने वाला नही था।

और फिर दूर क्षितिज पर चीटियो की तरह दिखाई देते सफेद कपडे बढने लग गये। सारा गाँव छतो पर खडा इतजार कर रहा था। सारा गाँव आतकित था। और फिर सफेद कपडे और बढ गय। घोडियाँ दिखाई देने लगी। ये तो वही थे। ममूद और उस के साथी। ज्यो-ज्यो व पास आते लोगो न थर थर काँपना शुरू कर दिया। करमो बीबी की आँखें जसे क्रोध में फटने लगी थी।

और फिर गोलडे शरीफ की ओर से आ रहे सवार और पास हो गये। ये तो वही थे। ममूद और उस के साथी। ममूद न करमो बीबी के पोते को अपने कन्धो पर उठाया हुआ था। और ढोल पीटा जा रहा था। ये तो जीत कर आये थे। उन के गले फूलों से लदे हुए थ। डम डमा डम डम डमा डम ढोल बज रहा था। ममूद ने अपने खलीफे को सिर के साथ लगाये हुआ था। डम डमा डम, डम-डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी क चेहरे का रग बदलने लग पडा। डम डमा डम डम डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी को बूढी आँखों के सामने आ रह लाशों के गलों में फूल दिखाई देने लग पडे। डम डमा डम डम डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी को बाहर गाँव तक पहुँच चुके ममूद और साथियों के नार सुनाई देन लग पड। डम

डमा-डम, डम डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी के हाथ से उस का हण्टर फिसल कर नीचे आ पड़ा। डम डमा डम, डम डमा डम ढोल बज रहा था और विजेता गाँव में आ पहुँचे थे। करमो बीबी का चेहरा खिल कर गुलाब की तरह हो गया। डम डमा डम, डम-डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी की आँखों में खुशी के आँसू छलक आये और वह दौड़ती हुई नीचे गली में आ गयी। डम डमा डम, डम डमा डम ढोल बज रहा था और करमो बीबी ने ममूद को छाती से लगा लिया और अपने पोते को चूमना शुरू कर दिया। डम डमा-डम, डम डमा-डम, ढोल बज रहा था और करमो बीबी ने अपने अनाज के कोठे खोल दिये। और जितना किसी से उठाया जाता, लोग अनाज उठा उठा कर करमो बीबी की हवेली से ले ले जाते। डम डमा डम, डम डमा डम, ढोल बज रहा था कि बार-बार ममूद की तरफ देखती करमो बीबी कहती, "बेटा! मैं इस वक्त लड्डू कहाँ से लाऊँ। बेटा! मैं इस वक्त बताशे कहाँ से लाऊँ।"

ढोल, डम डमा डम डम-डमा डम बज रहा था, बजता जा रहा था।

●

# जीवन क्या है

देश में टिड्डीदल उतरा हुआ था। आस-पास के इलाकों से फसलों की बरबादी के भयानक समाचार रेडियो पर भी सुनने में आते थे समाचार पत्रों में भी छपते थे और सरकारी ढंढोरची भी आ आ कर लोगों को बता-बता जाते थे।

धेरा सोचता कि देश में पहले ही अनाज की कमी है और धेरे की पत्नी ईसरो का दिल डूब-डूब सा जाता। पक्की अलाटमेण्ट के बाद, उन की यह पहली फसल थी। अगर टिड्डी आ गयी तो वे स्वयं क्या खायेंगे आने वाले प्राणी के मुह में क्या डालेंगे। एक ओर वह अपना बढ़ा हुआ पेट देखती दूसरी ओर टिड्डियों की बरबादी की कहानियाँ सुनती, ईसरो सोचती, अगर धरती कहीं फटे तो वह उस में समा जाये।

उसे न खाना अच्छा लगता न पहनना। सारा सारा दिन वह विचारों में खोयी रहती। यह कैसा जीव उन के घर आने वाला है! उस की आँखों से नींद उड़ गयी।

फिर समय से पहले ही ईसरो ने काम छोड़ दिया। समय से पहले ही ईसरो पलँग पर पड़ गयी, समय से पहले ही उसे प्रसव पीड़ा शुरू हो गयी, समय से पहले ही उस के बच्चा हो गया।

शरफो दाई ने हजार जतन किये मगर ईसरो का पुत्र न हिला न बोला न उस ने आँख खोली। सुबह से दोपहर हो गयी और वह पत्थर का पत्थर पड़ा हुआ था। शरफो कभी उसे उल्टा करती, कभी उसे टेढ़ा करती कभी उस की पीठ ठोकती, कभी उस की आँखें खोलती पर वह निश्चल मांस का लोथड़ा जैसे का तैसे पड़ा रहा। जो पियूखा दाई ने बच्चे के मुँह में डाला था पता नहीं वह हलक से उतरा था, पता नहीं बाहर ही रह गया।

दोपहर गुजर गयी, शाम गुजर गयी रात गुजर गयी, फिर दिन चढ़ आया। बच्चा साँस ले रहा था, नब्ज अभी तक चल रही थी, मगर न उस ने आँखें खोलीं न वह रोया चिल्लाया, न उस ने हाथ-पाँव हिलाया।

चिंता में डूबे हुए ईसरो के पति और ईसरो की समझ में कुछ न आ रहा था कि वे क्या करें, क्या न करें कि कोई ग्यारह बजे के लगभग गाँव में हाहाकार मच गया— टिड्डी आ गयी, टिड्डी आ गयी। दौड़ कर आँगन में धेरे ने आकाश की ओर देखा। जैसे एक बदली फैल रही हो, जैसे तूफान छा रहा हो। सामने परछाईं दौड़ती

हुई आ रही थी। टिड्डीदल आ रहा था, एक तूफान की तरह, एक आँधी की तरह, एक अटल भीत की तरह।

क्षण भर के लिए शेरा आगन में खडा-खडा मानो निष्प्राण सा हो गया। उस की आँखों के आगे अँधेरा सा छा गया। उसे ऐसा लगा मानो सब कुछ उस फिर से शुरू करना होगा। बेल से टूटी तुरई की तरह उस का जी चाहा कि वह औंधा गिर पड़े।

और टिड्डी दल उस के सिर पर था, उस के आँगन में था, उस की छत पर था, सामने बबूल पर था, कमरों में घुसा जा रहा था, चुल्लू चुल्लू भर, परिश्रम से निकाल पानी पर पले हुए खेतों पर था, हाथ फला फला कर ईश्वर से माँगी हुई वर्षा की फ़सल पर था। नदीदों की तरह टूट रहा था, पुकारता फुफारता बढ़ा आ रहा था।

फिर एक दम शेरा जसे सपने में से झकझोड कर जगा दिया गया हो और सामने पड़े हुए खली के कनस्तर का उठा कर डडे से बजाता वह खेतों की ओर भाग उठा।

शेरा को इस तरह बाहर जाते देख उस की पत्नी अपनी सब चिंताओं को भूल उठ कर खडी हुई। एक दिन के बच्चे की माँ वैसे का वसा उस पत्थर को वहीं छोड बाहर खेतों की ओर निकल गयी। शेरा गया, शेरे की पत्नी गयी, उन के पडोसी गये, मोहल्ले वाले निकले, फिर सारा गाव टीन बजाता हू-हा हू हा करता मीलों तक फल गया। खतों के आस पास लोग सूखे पत्ते घास के ढेर और झाडियो को इकट्ठा कर के आग लगात और खेतों में दौड दौड कर बच्चे, मद, बूढे जवान टिड्डिया का उडाते।

दो-दो साल के बच्चे टीन उठाये हुए थे। बूढी स्त्रिया टीन बजा-बजा कर थक जाती तो अपने दोपट्टा से टिड्डिया को उडाने लगती। युवक दौड दौड कर भाग भाग कर पागल हो रह थे।

टिड्डिया के एक दल को उडात कि इतने में एक और झुण्ड आधी की तरह छा जाता।

कई कई कनस्तर, कई कई टीन कई-कई डिब्बे लागो ने पीट-पीट कर टेढे मेढे कर दिये, ताड डाले। इस तरह दौडते इस तरह शोर मचाते, दोपहर हो गयी दोपहर ढल गयी। किसानों के नगे पाँव काँटो से छलनी हो गये। स्त्रियो की कलाइया थक-थक कर सूज रही थी। बच्चे बार-बार माँ-बाप की घबराहट को देखते, इस अपरिचित शोर को सुनते, इस नये तूफान का महसूस करते और फिर अधिक तेजी से टीनों को बजाने लगते।

और शेरा खेत-खेत में भागता हुआ लागों को समझा रहा था कि यदि एक बार टिड्डियाँ बठ गयीं तो अण्डे दे कर ही उठेंगी। एक हरा पत्ता नहीं रहने देंगी। फ़सलों का हडप कर सवेरे उड जाया करेंगी और साँझ को फिर लौट कर गाव के पेडो पर बैठ जाया करेंगी। इस मूजी के पाँव जमीन पर न पडने देना! शेरा ढढोरा पीटे जा

जाता क्या है

रहा था, और शेर की पत्नी टीन खटखटाती, खेतों के एक छोर से दूसरे छोर तक एक आवेश में, एक नशे में, एक लगन में ऐसे घूम रही थी मानो उसे कुछ हुआ ही नहीं।

शेरा सोचता कहानी वाली वह बात कदाचित् ठीक ही थी। मादा से नर अधिक तेजी से हरियाली को खाता वस जसे कुतरता ही जाता। इस तरह खा खा कर बदमस्त नर मादा की ओर एक दृष्टि डाल कर अपनी जिन्दगी का सफर खतम कर लेता। और मादा तब तक जीती जब तक अण्डे न दे देती। मानो टिड्डी की जिंदगी का उद्देश्य खाना, खा कर अपनी नसल को बनाना हो।

धुएं से टिड्डियों को घबराते देख किसान अपने घरों में सँभाल कर रखे हुए इंधन को उठा कर ले आये और खेतों में धुआँ ही धुआँ कर दिया। बड़ी-बड़ी झाड़ियों को आग लगा दी गयी। धुआँ धुआँ धुआँ, जैसे चारों ओर वह टिड्डियों के साथ घमासान युद्ध कर रहा हो।

जाट मन्दिरों के घड़ियाल उठा कर ले आये, गुरुद्वारों के शंख ले आये। मोची, जुलाहे, बनिये नाई मजदूर पेशा, नौकरी पेशा, स्कूलों के अध्यापक, विद्यार्थी, लड़कियाँ, गाँव का नम्बरदार, जैलदार, पटवारी चौकीदार, जो कोई भी था खेतों में दौड़ रहा था शोर मचा रहा था। जिन की जमीनें थी व भी थे जिन की नहीं थी वे भी थे।

शेरे ने देखा छुट्टी पर आये पुलिस कप्तान की ममा की तरह गोरी चिट्टी औरत जो सुर्खियाँ लगाती थी, पौडर मलती थी, काली ऐनक पहने अपनी हवेली के पीछे अपनी रंग बिरंगी चुनरी से टिड्डियों को उड़ा रही थी। बार बार उस के सिर का रेशमी दुपट्टा खिसक खिसक पड़ता और उस के सजे हुए बाल चमक चमक उठते। और शेरे को यह बिलकुल भूल गया था कि पुलिस कप्तान की वह अप्सराओं जसी पत्नी हमेशा परदे में रहती थी जब कभी भी वह बाहर निकलती उस की मोटर के चारों ओर परदे डाले जाते थे।

कोई हवा में बन्दूक से फायर कर रहे थे, गोले छोड़ रहे थे, पटाखे चला रहे थे। मिरासी अपने ढोल ले कर आये हुए थे और पीटते जा रहे थे, पीटते जा रहे थे एक ऐसे जोर और दर्द से जो पहले कभी किसी ने नहीं देखा था।

सामने रेल की पटरी पर टिड्डियाँ ऐसे बैठी हुई थी कि जब ट्रेन आयी वह आगे न बढ़ सकी। टिड्डियों की तह की तह जमा हुई थी। और लाइनों पर से गाड़ी के पहिये फिसल फिसल पड़ते। गाड़ी अभी रुकी ही थी कि मुसाफिर उतर कर खेतों पर टूट पड़े।

रंग रंग के कपड़े भाँति भाँति के आदमी औरतें, बच्चे जैसे एक तूफान आ गया, एक भूकम्प आ गया और देखते देखते मीलों तक बैठी हुई टिड्डियों को उड़ा दिया गया या मार दिया गया।

# करामात

" और फिर बाबा नानक घूमते हुए इस जंगल के जगह में जा निकले। गरमी सख्त थी। चिलचिलाती हुई धूप। चारों ओर सुनसान पत्थर ही पत्थर रेत ही रेत, झुलसी हुई झाड़ियाँ सूखे हुए पेड़। दूर-दूर तक मनुष्य की जाति नजर नहीं आती थी।'

"और फिर अम्मी ?" मैं उत्सुक हो रहा था।

'बाबा नानक अपने ध्यान में मग्न चलते जा रहे थे कि उन के शिष्य मरदाने को प्यास लगी। पर यहाँ पानी कहाँ ? बाबा ने कहा भाई मरदाने सबर करो। अगले गाँव पहुँच कर जितना तुम्हारा जी चाहे पानी पी लेना। किन्तु मरदाने को तो सख्त प्यास लगी थी। बाबा नानक यह सुन कर चिंता में पड गये। इस जंगल में पानी तो दूर-दूर तक नहीं था और जब मरदाना जिद कर बैठता तो सब के लिए बड़ी मुश्किल हो जाती। बाबा ने फिर समझाया, मरदाने यहाँ पानी कहीं भी नहीं, तुम सबर कर लो भगवान् की इच्छा मान लो। किन्तु मरदाना तो वहीं का वहीं बैठ गया। एक कदम और उस से आगे नहीं चला गया। बाबा सोचपेज में पड़ गये। गुरु नानक मरदाने की जिद को देख कर बार बार मुसकराते हैरान होते। आखिर जब बाबा ने मरदाने को किसी तरह मानते न पाया तो वह अन्तर्ध्यान हो गये। जब गुरु नानक की आँख खुली तब मरदाना मछली की तरह तड़प रहा था। सतगुरु उस को देख कर मुसकराये और कहने लगे भाई मरदाने ! इस पहाडी के ऊपर एक कुटिया है जिस में वली कन्धारी नाम का एक दरवेश रहता है। यदि तुम उस के पास जाओ तो तुम्हें पानी मिल सकता है। इस इलाके में केवल उस का कुआ पानी से भरा हुआ है। और कहीं भी पानी नहीं।"

"और फिर अम्मी ?' मैं यह जानने के लिए बेचैन हो रहा था कि मरदाने को पानी मिलता है कि नहीं।

"मरदाने को प्यास सख्त लगी थी। सुनते ही पहाडी की ओर दौड पडा। चिलचिलाती धूप, इधर प्यास उधर पहाडी का सफर पसीना पसीना हुआ, फूले साँस मरदाना बड़ी कठिनाई से ऊपर पहुचा। वली कन्धारी को सलाम कर के उस ने पानी के लिए बिनती की। वली कन्धारी ने कुऍं की ओर संकेत किया। जब मरदाना उधर

जाने लगा तब वली कन्धारी के मन में कुछ आया और उस ने मरदाने से पूछा, भले आदमी तुम कहाँ से आये हो। मरदाने ने कहा, मैं नानक पीर का साथी हूँ। हम घूमते घूमते इधर आ निकले हैं। मुझे प्यास लगी है और नीचे पानी कहीं नहीं। बाबा नानक का नाम सुन कर वली कन्धारी को क्रोध आ गया। उस ने मरदाना को अपनी कुटिया में से वसे का वसा निकाल दिया। थका-हारा मरदाना नीचे बाबा नानक के पास आ कर फरयादी हुआ। बाबा ने उस से सारी कहानी सुनी और मुसकरा दिये। मरदाना, तुम एक बार फिर जाओ, बाबा नानक ने मरदाना को सलाह दी। इस बार तुम नम्रता से जाना। कहना, मैं नानक दरवेश का साथी हूँ। मरदाना का प्यास सख्त लगी हुई थी। पानी और कहीं नहीं था। कुढ़ता हुआ, बडबडाता हुआ फिर ऊपर चल दिया। किंतु पानी वली कन्धारी ने फिर न दिया। मैं एक काफिर के साथी को चुल्लू भर भी पानी नहीं दूँगा। वली कन्धारी ने मरदाने को फिर वसे का वैसा लौटा दिया। जब मरदाना इस बार नीचे आया तो उस का बुरा हाल था। उस के होंठों पर पपड़ी जमी थी। मुँह पर हवाइयाँ उड रही थी। यों लगता था कि मरदाना घडी है या पल है। बाबा नानक ने सारी बात सुनी और मरदाना को 'धन निरंकार' कह कर एक बार फिर वली के पास जाने के लिए कहा। हुक्म का बाधा मरदाना चल दिया लेकिन उस को पता था कि उस की जान रास्ते में ही कहीं निकल जायेगी। मरदाना तीसरी बार पहाडी की चोटी पर वली कन्धारी के चरनों में जा गिरा। किंतु क्रोध में जल रहे फकीर ने उस की बिनती को इस बार भी ठुकरा दिया। नानक अपनेआप को पीर कहलवाता है और अपने मुरीद को पानी का एक घूँट नहीं पिला सकता? वली कन्धारी ने लाख लाख ताने दिये। मरदाना इस बार जब नीचे आया प्यास से निढ़ाल बाबा नानक के चरनों में वह बेहोश हो गया। गुरु नानक ने मरदाना की पीठ पर हाथ फेरा, उस को हौसला दिया और जब मरदाने ने आँख खोली, बाबा ने उसे सामने एक पत्थर उखाडने के लिए कहा। मरदाना ने पत्थर उठाया और नीचे से पानी का झरना फूट निकला। जैसे एक नहर पानी की बहने लगी हो। और देखते-देखते चारों ओर पानी ही पानी हो गया। इतने में वली कन्धारी को पानी की आवश्यकता हुई। कुएँ में देखा तो पानी की एक सीप भी नहीं थी। वली कन्धारी बडा हरान हुआ। और नीचे पहाडी के दामन में चश्में फूट रहे थे नदियाँ बह रही थी। दूर बहुत दूर एक कीकर के नीचे वली कन्धारी ने देखा बाबा नानक और उन का साथी बैठे थे। क्रोधवश वली ने चट्टान के एक टुकडे को अपने पूरे जोर से लुढकाया। इस तरह पहाडी की पहाडी अपनी ओर आती देख कर मरदाना चिल्ला उठा। बाबा नानक ने धीरज से मरदाना को धन निरंकार कहने के लिए कहा और जब पहाडी का टुकडा बाबा के सिर के पास आया गुरु नानक ने उसे हाथ दे कर अपने पंजे से रोक लिया। और हसन अबदाल में जिस का नाम अब पंजा साहब है अभी तक पहाडी के टुकडे पर बाबा नानक का पंजा लगा हुआ है।"

मुझे यह साखी बडी अच्छी लग रही थी। पर जब मैं ने यह हाथ से रोकने

वाली बात सुनी तो मेरे मुँह का स्वाद फीका हो गया। यह कैसे हो सकता था? कोई आदमी पहाडी को किस तरह रोक सकता है? और पहाडी में अभी तक बाबा नानक का पजा लगा हुआ ह! मुझे जरा विश्वास न आया। 'बाद म किसी ने खोद दिया होगा।' म अपनी माँ के साथ कितनी देर बहस करता रहा। यह तो मैं मान सकता था कि पत्थर के नीचे से पानी फूट आये। विज्ञान ने कई ऐसे विधान बताये ह जिन से जिस स्थान पर पानी हो इस का पता लगाया जा सकता है। पर एक आदमी का लुढकती हुई आ रही पहाडी को रोक लेना म यह नही मान सकता था। मैं नही मान रहा था और मेरी मा मेरे मुह की ओर देख कर चुप हो गयी।

"कोई लुढकती हुई आ रही पहाडी को कसे रोक सकता ह?' मुझे जब भी इस साखी का ख़याल आता एक फीकी सी हसी मैं हँस देता।

फिर कई बार यह साखी गुरुद्वारे में सुनायी गयी। किन्तु पहाडी की पजा से रोकने वाली बात पर मैं हमेशा सिर मारता रहता। यह बात मैं नही मान सकता था।

एक बार यह साखी हमारे स्कूल में सुनायी गयी। पहाडी को पजा के साथ रोकने वाले भाग पर मैं अपने अध्यापक के साथ विवाद करने लगा। 'करनी वाले लोगा के लिए कोई बात कठिन नही" हमारे अध्यापक ने कहा और फिर मझे चुप करवा दिया।

मैं चुप तो हो गया परन्तु मुझे विश्वास नही हुआ। "आखिर पहाडी को कोई कसे रोक सकता ह?" मेरा जी चाहता मैं ज़ोर ज़ोर से पुकारूँ।

बहुत दिन नही गुज़रे थे कि हम ने सुना पजा साहब में 'साका' हो गया ह। उन दिनो साके बहुत होते थे। जब भी कोई 'साका' होता म समझ लेता आज हमारे घर में खाना नही पकेगा और रात को नीचे फश पर सोना होगा। लेकिन यह 'साका' होता क्या ह यह मुझे नही पता था।

हमारा गाँव पजा साहब से कोई ज्यादा दूर नही था। जब इस 'साके' की सूचना आयी मेरी माँ पजा साहब चल दीं। साथ मैं था मुझ से छोटी बहन थी। पजा साहब का सारा रास्ता मेरी माँ की आँख नही सूखी। हम हरान थे यह साका होता क्या ह। और जब पजा साहब पहुच हम ने एक अजीब कहानी सुनी।

दूर कही एक शहर में फिरगी न निहत्ते हिन्दुस्तानियों पर गोली चला कर कई लोगो को मार दिया था। मरने वाला में नौजवान भी थ, बूढ़े भी थे औरतें भी थीं, बच्चे भी थे। और जो बाकी बच गये उन को गाडी में बन्द कर के किसी दूसरे शहर क जल में भेजा जा रहा था। कदी भूखे थे, प्यासे थे और हुक्म यह था कि गाडी को रास्ते में कही भी ठहराया न जाय। जब यह खबर पजा साहब पहुँची जिस किसी ने सुना लागा को पारा बदन आग लग गयी। पजा साहब जहाँ बाबा नानक ने सुन मरदाना की प्यास बुझायी थी, उस शहर से गाडी का गाडी प्यासों की गुज़र जाये, भूखा का गुज़र जाय यह कसे हा सकता था? और फ़सला हुआ कि गाडी का रोका जायग। स्टेशन मास्टर का अर्जी दी गयी। टेलीफ़ोन हुए। तार गय। पर फिरगी का

हुक्म था गाडी रास्ते में कही भी रोकी न जायेगी। और गाडी में आजादी के परवाने, देशभक्त हिंदी भूखे थे। उन के लिए पानी का कोई प्रबन्ध नहीं था। उन के लिए रोटी का कोई इन्तजाम नही था। गाडी को पंजा साहब नही रुकना था। लेकिन पंजा साहब के लोगों का यह फ़ैसला अटल था कि गाडी को अवश्य रोक लेना है। और शहरवासियो ने स्टेशन पर रोटिया के, खीर के, पूडी के, दाल के ढेर लगा दिये।

पर गाडी तो एक अंधेरी की तरह आयेगी और तूफ़ान की तरह निकल जायेगी, उस को कैसे रोका जाये?

और मेरी माँ की सहेली ने हमें बताया, "उस जगह पटरी पर पहले वह लेटे, मेरे बच्चा के पिता, फिर उन के साथ उन के और साथी लेट गये। उन के बाद हम पत्नियाँ लेटी, फिर हमारे बच्चे और फिर गाडी आयी। दूर से चीखती हुई, चिल्लाती हुई। सीटिया पर सीटियाँ मारती हुई। अभी दूर ही थी कि आहिस्ता हो गयी। पर रेल थी, ठहरते-ठहरते ही ठहरती। मैं देख रही थी कि पहिये उन की छाती पर चढ गये, फिर उन के साथ वाले की छाती पर और फिर मैं ने आँखें बन्द कर लीं। मैं ने आँखें खोलीं तो मेरे सिर के ऊपर गाडी खडी थी। मेरे साथ धडक रही छातियो में से धन निरंकार' 'धन निरंकार' की आवाज़ आ रही थी। और फिर मेरे देखते देखते गाडी पीछे हटी। गाडी पीछे हटी और पहियो के नीचे आयी लाशें टुकडे-टुकडे हो गयी।"

मैं ने अपनी आँख से लहू की धारा को देखा। बहती बहती कितनी ही दूर एक पक्के बने नाले के पुल के नीचे चली गयी थी। और मैं हक्का-बक्का हैरान था। मुख से एक बोल न बोला गया। सारा दिन मैं पानी का एक घूँट न पी सका।

शाम को जब हम लौट रहे थे, रास्ते में मेरी माँ ने मेरी छोटी बहन को पंजा साहब की साखी सुनायी। कैसे बाबा नानक मरदाना के साथ इस ओर आये। कैसे मरदाना को प्यास लगी। कैसे बाबा न वली कंधारी के पास मरदाना को पानी के लिए भेजा। कैसे वली कंधारी ने तीन बार मरदाना को निराश लौटा दिया। कैसे बाबा नानक ने मरदाना को एक पत्थर उठाने के लिए कहा। कैसे पत्थर के नीचे से पानी का झरना फूट निकला और वली कंधारी के कुएँ का सारा का सारा पानी नीचे खिचा हुआ आ गया। और फिर कैसे क्रोध में आ कर वली कंधारी ने ऊपर से पहाड का टुकडा लुढका दिया। कैसे मरदाना घबराया, परन्तु बाबा नानक ने 'धन निरंकार' कह कर अपने हाथ से पहाड के टुकडे को थाम लिया। "लेकिन पहाड को कोई कैसे रोक सकता है?' मेरी छोटी बहन ने सुनते सुनते झट मेरी माँ को टोका।

"क्यो नहीं कोई रोक सकता?' बीच में मैं बोल पडा। आंधी की तरह उडती हुई गाडी को अगर रोका जा सकता है तो पहाड के टुकडे को क्यो नही कोई रोक सकता?" और फिर मेरी आँखों में से छल-छल आँसू बहने लगे। 'करनी वाले' उन लोगों के लिए, जिन्होंने अपनी जान पर खेल कर न रुकने वाली ट्रेन को रोक लिया था और अपने भूखे-प्यासे देशवासियो को रोटी खिलायी थी, पानी पहुँचाया था।

# टीले और गड्ढे

चमेली इस कोठी में ब्याही हुई आयी थी।

पहले साल उस का पति छुट्टी पर अपने गाँव गया तो उस ने चमेली को देखा, दूसर साल गया तो उस न रिश्ते की बात चलायी और तीसर साल उसे ब्याह लाया।

चमेली का जन्म मथुरा के एक गाँव में हुआ था। वहीं पली, वही बड़ी हुई। लेकिन जब से वह पजाब आयी, लौट कर न जा सकी।

चमेली को अपने पति के साथ इस कोठी में रहते कई साल बीत चुके थे। किरायेदार बदलते रहे कोठी का माली वही रहा।

दिन दिन भर चमेली का पति फूलो और क्यारियो तथा मेंडो की दुनिया म खोया रहता। चमेली कभी चादी के सारे गहने पहन कर खिड़की से अपने घरवाले को देखती रहती, कभी किरायेदार के बच्चो के साथ या उन की माँ के साथ बैठ कर बातो में खो जाती।

कई किरायेदार अफसरो ने आँखो ही आँखो में चमेली की पाजेबो की झकार की सराहना की थी और चमेली को यह बात बहुत भली लगी थी। चमेली के खुले घेरे वाले लहगे को कई अफसरों की पत्नियों ने मुड मुड कर देखा था और चमेली को यह बात भी बहुत भली लगी थी। चमेली का सावला रग दूधिया सफ़ेद दात, चौडा माथा, काले नयन, कई किरायेदार अफसर उचक-उचक कर देखते रहते और चमेली को यह बात बहुत भली लगती।

और इस प्रकार चमेली का जीवन शान्त, अडिग, आनन्दपूर्वक व्यतीत होता रहा। फिर उस कोठी में एक और किरायेदार आ गया।

चमेली हैरान थी कि ये नये किरायेदार कैसे थे। सरदार दफ्तर जाता था। सवेरे वह अन्दर से बाहर आता मोटर में बैठता और आँख झपकते ही ग़ायब हो जाता। रात को अधेरा होने पर वापस आता। सरदारनी डॉक्टर थी। कई बार सरदार के जाने से पहले कई बार सरदार के जाने के थोड़ा बाद, अस्पताल की मोटर आ जाती और उसे ले जाती। दोपहर को वह वापस लौटती, सफेद कोट पहने, एक हाथ में रबड की टूटी थामे दूसरे में अखबार सम्हाले अस्पताल की मोटर से निकलती और तेज-तेज डग भरती कोठी के अन्दर चली जाती। एक बच्चा था। सवेरे स्कूल की बस उसे ले

जाती, शाम को छोड जाती। घर आ कर वह जल्दी-जल्दी दूध का प्याला पीता, एक टोस्ट खाता और खेलने निकल जाता। हर रोज अँधेरा पड जाने पर नौकर उसे बुला कर लाते।

दोपहर के बाद जितनी देर सरदारनी अकेली रहती या तो कुछ पन्ती या बुनती रहती या सफाई करने में लगी रहती या फिर रसोई में उलझ जाती। अमीर स्त्रियों की तरह अपने नौकरो को या उन की स्त्रियो को अपने पास बिठा कर फालतू बातें करने की उसे आदत न थी। चमेली बहुत दिन तक देखती रही, देखती रही। आखिर वह एक दिन स्वय ही नमस्ते करते हुए बीबी जी के पास जा कर बैठ गयी। पीछे धीरे धीरे रेडियो चल रहा था। ऊपर छत का पखा घूम रहा था। कुरसी पर बैठी हुई डाक्टरनी शान्त और स्थिर भाव से अपने पैरो के नाखून साफ कर रही थी, उन पर तेल पालिश लगा रही थी। बहुत देर तक चमेली वहा बैठी बातें करती रही। डाक्टरनी अपना काम भी किये जाती साथ साथ बातें भी किये जाती। इस के बाद जब कभी चमेली का जी चाहता, जब कभी अपने क्वाटर की तनहाई से उस का जी उचटता, वह ठुमुक ठुमुक करती, झिझकती, सकुचाती, सरदारनी के पास जा बैठती। एक बार आती और न जाने कब तक वही जमी बैठी रहती।

शाम को जब बच्चा स्कूल से लौटता और यदि चमेली का दाव लग जाता वह उसे फूलो का लालच दे कर अपने क्वाटर की ओर ले जाती और देर तक उस के साथ खेलती रहती।

यदि चमेली किसी के साथ बात नही कर सकी थी तो वह सरदार था। सरदार ने उस की ओर कभी आँख उठा कर भी नहीं देखा था।

जहाज सी बडी उस की मोटर थी, जिसे नौकर धोते रहते, चमकाते रहते। जब दफ्तर जाने का समय होता ड्राइवर मोटर को बराण्डे के सामने ला कर खडी कर देता। हर रोज ठीक समय पर सरदार बाहर निकलता, मोटर में बैठता और ड्राइवर उसे उड़ा ले जाता।

छुट्टी के दिन भी वह कोठी में बने हुए दफ्तर में जा बैठता। वहाँ वह सरकारी काम करता रहता, या पढ़ता रहता, या मिलने वालो से भेंट करता रहता। बीच-बीच में टलीफोन की घण्टी बज उठती और वह देर तक अँगरेजी में बातें करता रहता। लाल रग के लम्बे कोट और तिल्लेदार पटटियों वाले चपरासी बाहर उस के द्वार पर खडे रहते। कोट पतलून, नकटाइयाँ कसे दफ्तर के बाबू आते, कुछ लिखते रहते, कुछ मशीन पर उँगलियाँ चला चला कर टाइप करते।

एक दिन जमादार दफ्तर की सफाई कर रहा था। चमेली किसी बहाने से भीतर चली आयी। नीचे पूरे फर्श पर मोटा कालीन बिछा हुआ था। नगे पर चमेली ने अन्दर कदम रखा तो उसे लगा जैसे उस के पैर कालीन में धस रहे हो। जिस कुरसी पर सरदार बैठता वह उसी ओर घूम जाती जिस ओर बैठने वाले को मुँह

करना होता था। टाइप करने की मशीन, टेलीफोन का वह भाग जिस में कोई बोलता और आवाज़ दूर दूर पहुँच जाती, टेलीफोन का वह भाग जिसे कान के साथ लगाओ तो जाने कहाँ-कहाँ की आवाज़ सुनाई देन लग जाती। सामने मेज़ पर रंग रंग की क़लमें थी, पेंसिलें थी, लट्टुआ जसी स्याही की दावातें थी।

उस दिन दोपहर को अपन क्वाटर में बठी चमेली सोचती रही, सोचती रही। अपना चौका उस ने नये सिरे से लीपा पोता, अपनी खटिया की दावन को कसा, अपने पति की खटिया की दावन को कसा। छत के एक कोने में जाने कब से लगे हुए जाल को उतारा। स दूक के पीछे चप्पा चप्पा जमी हुई मिट्टी को झाडा। तुरई, लौकी और खीरे के एक नुक्कर में लटके हुए बीजो को पिटारी में सम्हाल कर रखा। रोशनदान क शीशा पर जमी हुई कई सालो की कालिख को साफ़ किया और फिर उसे वसे का वसा खुला छोड दिया। उस शाम उस ने नल के नीचे बठ कर परा की मैल को मल मल कर उतारा। अपने नाखूनों को साफ किया, बालो को तेल लगा कर कघी की, आँखो में काजल डाला, चाँदी के गहनो से लदी पाजेबें पहने अन्दर बाहर छम छम करती रही।

*अगले दिन चमेली एक क्यारी में बठी साग तोड रही थी, पहले स्कूल की बस* आयी बच्चे को ले कर चली गयी फिर सरदार की मोटर निकली फिर सरदारनी अस्पताल की माटर में बठ कर चली गयी। आखिरी मोटर अभी मुश्किल से आँखो से ओझल हुई थी कि चमेली ने देखा, सामने सडक पर माली आ रहा था। सिर पर वसी की वसी टमाटरो की टोकरी उठाय। अभी सवेरा ही था कि वह फालतू टमाटरो को बचने के लिए मण्डी में ले गया था। लेकिन मण्डी वालों ने आज हडताल कर रखी थी और वह अपनी टोकरी को पाच मोल सिर पर उठाये वापस ले आया था जसे सिर पर उठाये सवरे ले गया था।

चमेली का घरवाला बातें करते क्यारी में ही आ बठा और फिर देर तक पति पत्नी वही बठ गप्पें मारत रह।

चमेली चार गँदलें तोडती और फिर गप्पें मारने बठ जाती। चमेली का पति लकडी के टुकडे के साथ बार बार क्यारी की एक मुट्ठी मिट्टी उखेडता बार बार उसे दबाता और धीर धीर अपनी घरवाली के सवालो के जवाब दिये जाता।

यो व बात कर रह थे कि उन का कुत्ता मोती सरदार के कुत्ते फरहाद के साथ खेलता हुआ आया और दोनों सामने घास के मदान पर किलोल करन लगे। फरहाद, सरदार का कुत्ता निवाड के पलग पर सोता था। उस के रेशमी बालो को बुरुश से साफ किया जाता था। हर रोज उस का खाना अलग पकता था। एक बार जब फर हाद बीमार हो गया था तो मवेशियों के अस्पताल का डॉक्टर दिन में दो-दो बार इस को ो के चक्कर काटता था। वही फरहाद माली के कुत्ते के साथ खेल रहा था, जसे माँ जाये खेलत है। एक दूसर के साथ लाड कर रहे थ। एक दूसरे की गरदन में गर दन डालत थ। एक दूसर को नीचे लिटा कर ऊपर लेटते थे। मिल कर गिलहरियो के

पीछे दौड़ते थे और फिर खेलते हुए लौट आते थे। आ कर फिर किलोल करने लग जाते थे।

चमेली को याद आया कि एक बार फरहाद अपने बरतन में खा रहा था कि मोती उस की ओर गया। फरहाद ने तो एक ओर हट कर मोती का स्वागत किया, पर पास बैठे हुए नौकर ने मोती को जोर से ठोकर दे मारी थी। और उस दिन से मोती बुरी तरह खाँसने लगा था।

अभी पति-पत्नी क्यारी में बैठे इधर उधर की बातें कर रहे थे कि सरदारनी काम कर के अस्पताल से वापस भी आ गयी।

एक बार रविवार के दिन चमेली बाहर घास के मैदान में बूटी निकाल रही थी कि सरदार का कोई मित्र उस से मिलने आया। इस मित्र की मोटर सरदार की मोटर से एक बालिश्त लम्बी थी। देर तक वे गोल कमरे में परदों के पीछे बैठे बातें करते रहे। कुछ उन के खाने के लिए अन्दर गया, कुछ उन के पीने के लिए अन्दर गया। और थोड़ी देर बाद वे बाहर निकले। मोटर में बैठने से पहले सरदार अपने मित्र को अपना बगीचा दिखाने लगा। गुलाब के काली पत्तियों वाले फूल, रंग बिरंगी मोटी मोटी गुलदाऊदियाँ तरह तरह के स्वीट पी के फूल, इतना बड़ा घास का मैदान जिस में सरदार कह रहा था, हर रोज बूटी को साफ किया जाता था। और यों बातें करते करते सरदार और उस का मित्र चमेली के पास से गुज़रे। चमेली ने उठ कर हाथ जोड़े और नमस्ते की। पर सरदार अपनी घास की, अपने फूलों की प्रशंसा करता गुज़र गया। चमेली को ओर किसी ने न देखा।

चमेली अपने सरदार की हलकी नीली पगड़ी की ओर देखती रही, उस के गहरे नीले सूट की ओर देखती रही, उस के चमचम करते काले बूटों की ओर देखती रही और वे बहुत दूर निकल गये।

सरदार का बच्चा कभी नहीं घूमता फिरता नौकरों के क्वार्टरों की तरफ आ जाता तो चमेली देर तक उसे बातों में उलझाये रखती। छोटी छोटी बातें, उस के खाने के बारे में, उस के वस्त्रों के बारे में, उस की माँ के बारे में, उस के बाप के बारे में, पूछती रहती। और बच्चा भी चमेली के साथ बातें करता रहता, जब तक कि उसे कोठी के अन्दर से दो चार बार आवाज़ न पड़ जाती।

फिर चमेली ने अपने क्वार्टर के सामने नीम पर झूला डाला। जिस दिन से यह झूला डाला गया स्कूल से आ कर बच्चा सारी सारी साँझ झूले से चिमटा रहता। चमेली कभी उसे झुलाती कभी क्वार्टर की दहलीज़ पर बैठी गोल गुदगुदे गालों वाले बच्चे को देखती रहती।

सरदार को जब बच्चे के इस शौक की खबर मिली तो घास के मैदान में एक ओर नयी किस्म का झूला डलवा दिया गया। इस झूले पर बच्चा अपने मित्रों के साथ झूलता रहता और उस ने नौकरों के क्वार्टरों की ओर जाना छोड़ दिया।

उस दिन रविवार था। सर्दियों के दिन थे। धूप खिली हुई थी। सरदार बाहर घास के मैदान में आ बैठा। उस के आने से पहले एक रंग बिरंगा छाता लगाया गया। दरी बिछायी गयी। एक ओर एक पर्दा ला कर रखा गया और सरदार कुरसी घुमा कर कभी छाते की छाया में हो जाता कभी बाहर निकल आता। मोटरों में बैठे मिलने वाले सदा की तरह उस से मिलने आते रहे और वह वहीं का वैसा उन से धीरे धीरे बातें करता रहा।

अपने क्वाटर की दहलीज़ पर बैठी चमेली देर तक घास के मैदान की ओर देखती रही।

फिर उस ने अपने घरवाले से पूछा कि क्या कभी उस ने सरदार के साथ बात की थी।

उस के घरवाले ने कभी सरदार के साथ बात नहीं की थी।

फिर उस ने अपने घरवाले से पूछा कि क्या कभी उस ने अपने सरदार की आवाज़ सुनी थी।

उस के घरवाले ने कभी सरदार की आवाज़ नहीं सुनी थी।

हाँ एक बार जब माली उस के दफ्तर में मेज़ पर फूल सजा रहा था सरदार ने अखबार से आँखें उठा कर माली की ओर देखा था और फिर अखबार का पन्ना पलटा था। चमेली कहती कि सरदार ने पन्ना पलटने के लिए आँख उठायी थी माली कहता कि सरदार ने प्रशंसा भरी नजर से माली की ओर देखा था, विशेष रूप से उन फूलों को निहारा था। माली के फूल भी तो ऐसे थे कि सारी सिविल लाइन में ऐसे फूल किसी की कोठी में नहीं खिले थे।

और फिर देर तक चमेली और उस का घरवाला अपने फूलों की बातें करते रहे। चमेली अपने घरवाले के हाथों की सफ़ाई पर हरान रह जाती। कितनी बरकत थी उस के हाथों में! जो बीज भी वह कभी बोता, समय से पहले चाहे देर से वह जरूर फूटता जरूर बन्ता जरूर फलता-फूलता। और चमेली को याद आते अपने बाबा के बोल किसान के हाथ में बरकत होनी चाहिए और यह बरकत आती है पवित्रता से सचाई से सच्चे जीवन से। और चमेली खुश थी। उस का घरवाला देवताओं जैसा इन्सान था। न कभी उस ने शराब मुँह से लगायी थी न कभी बीड़ी पी थी, न कभी वह औरों की तरह आधी आधी रात तक बाहर रहा था।

चमेली खुश थी बहुत खुश।

चमेली के इस शान्त स्थिर जीवन में कभी-कभी कोई झुंझलाहट सी उठती। कभी-कभी जब उस का जी चाहता कि सरदारनी के पास बैठ कर बातें करे और वह सात परदों में भीतर कहीं छिपी होती। कभी-कभी जब उस का जी चाहता कि सरदार के बच्चे को बाहों में ले कर चूमे और वह उस के उजले रेशमी वस्त्रों को देख कर झिझक जाती रुक जाती। कभी कभी जब वह पाजेबें पहने छम छम करती सरदार के

पास से गुजरती, कभी जब वह घास के मदान से बूटी निकाल रही होती और सरदार उस के पास से गुजरता, उस का जी चाहता कि एक बार नजरो हो नजरा में सरदार उस के काम की प्रशसा करे, उस के घरवाले को अच्छा कह दे, नये खिले फूलो के बारे में पूछ ले।

पर सरदार कुछ इतना अलग-अलग, कुछ इतना ऊँचा ऊँचा, कुछ इतना चुप-चुप, कुछ इतना दूर दूर था कि चमेली की समझ में कुछ न आता।

एक बार बाहर घास के मदान में बैठ कर सरदार को इतना रस आया कि हर रविवार को हर छुट्टी वाले दिन, वह बाहर ही बठता। किसी स मिलना होता तो वही मिल लेता। हर रविवार को, हर छुट्टी वाले दिन, रग बिरगा छाता लगाया जाता, दरी बिछायी जाती, परदा रखा जाता और सरदार कुरसी घुमाता कभी छाते के नीचे हो जाता, कभी बाहर धूप में आ जाता।

और चमेली हैरान होती रहती कि सरदार कचनार के नीचे क्यो नही बैठ जाता था। कचनार के नीचे छाया की छाया थी, धूप की धूप, परदे का परदा। पास ही फूलो की क्यारियाँ थी। कचनार पर रग रग के पक्षी आ कर बठते थे।

चमेली हैरान होती रहती, हैरान होती रहती।

कई बार चमेली स्वय कचनार के नीचे जा बठती। अपने घरवाले को बुला बुला कर पूछती रहती। जाडे की किसी दोपहर को कचनार के नीचे बैठने का कितना मजा था! और उस का घरवाला चमेली की हाँ में हाँ मिलाता रहता।

उसी जाडे में तब होली की छुट्टी थी। लोग कई दिन से होली मना रहे थे। छुट्टी विशेष रूप से उस दिन थी। सरदार सदा की तरह छुट्टी के दिन बाहर आ बैठा। छाता सदा की तरह लगाया गया, परदा सदा की तरह रखा गया, दरी सदा की तरह बिछायी गयी। चाहे छुट्टी थी पर सरदार सवेरे से अपने काम में व्यस्त था। कभी कुछ पढने लगता, कभी लिखने लगता, कभी मुलाकाती आ जाते।

चमेली का घरवाला सवेरे से रग की पुडिया बाँध कर कहीं बाहर चला गया था। वह अभी सो कर उठा ही था कि चमेली ने पहले से घोल कर रखे हुए रगो से उसे लथ पथ कर डाला। और वह हँसता-खेलता वैसे का वैसा बाहर निकल गया था।

चमेली अपने क्वाटर में खडी सामने सडक पर होली की रौनक देखने लगी। बाहर से साइकिलो पर दूध ले कर आते ग्वालो को खडा कर लिया जाता और वे हँसते-खेलते रग डलवा कर आगे निकल जाते। कइयो के कपडे पहले ही रगे होते, उन पर और रग डाला जाता। जो जान-बूझ कर फटे पुराने कपडे पहने नजर आते, उन पर रग म मिलाये तेल की पिचकारियाँ भर भर कर छोडी जाती। एक ट्रक आया। लडको ने हाथ दे कर ट्रक को खडा कर लिया। पहले ड्राइवर को बाहर निकाल कर रगा गया, फिर रग की बालटियाँ उठाये, पिचकारियाँ सँभाले, लडके ट्रक पर चढ गये। और फिर वे चलते हुए ट्रक के ऊपर से हँसते गाते राहगीरों पर रग की पिचकारियाँ

छोड़ने लगे। सड़क से एक टोली जाती, दूसरी आ जाती। तरह-तरह का शोर करते लोग एक मुहल्ले से निकलते, दूसरे में घुस जाते। जो भी मोटर गुजरती उस के सब के सब कोने रंग देते। एक ताँगा आया जिस में सफ़ेद कपड़े पहने एक लाला जी और उन की ललाइन बैठी थीं। ललाइन खीजती रही, नाराज़ होती रही, गालियाँ देती रही, लड़कों ने लाला जी को ताँगे से उतार कर रंगों से नहला ही दिया और जब ताँगा चला तब ललाइन पर भी पिचकारियाँ छोड़ कर उस के रेशमी सूट का नाश कर डाला। फिर एक पार्टी ढोलकियाँ और मजीरे बजाती नाचती गाती आयी। जो वस्त्र पहने थे, उन के वस्त्र कई-कई रंगों से रंगे थे, जो नंगे थे उन के शरीर पर कई-कई रंग मले हुए थे। और अभी तो वे बराबर एक दूसरे पर रंग उंडेल रहे थे, पास से गुजरने वाले को रँग रहे थे। ढोलक वाला ज़ोर-ज़ोर से थपथपाता मजीरे वाले ज़ोर ज़ोर से मजीरे बजाते, नाचने वाले नाच-नाच कर बेहाल होते। गाने वालों के गाते गाते गले बैठे जा रहे थे। फिर भी लोग गा रहे थे फिर भी लोग नाच रहे थे, फिर भी लोग हंस रहे थे फिर भी लोग खेल रहे थे।

और अपने क्वाटर की दहलीज़ पर खड़ी एकाकिनी चमेली के हाथों को कुछ-कुछ होता, उस की बाहें जैसे मचल उठीं। उस के क्वाटर में रंग की बाल्टी भरी रखी थी, गुलाल की पुड़ियाँ पड़ी थीं। वह यह नहीं समझ पा रही थी कि वह किस पर रंग डाले, किस के साथ होली खेले। सामने घास के मैदान में सरदार बैठा था सात रंगों वाले छाते के नीचे, कीमती दरी पर, रेशमी परदे की ओट में। सरदारनी और उस का बच्चा सवेरे से भीतर घुसे हुए थे। किवाड़ के पीछे द्वार, द्वारा के पीछे परदे, परदों के पीछे कमरे, कमरों के पीछे और कमरे जहाँ चमेली की पहुँच न थी। चमेली सोचती रही, सोचती रही। उसे यों लगता कि सरदार सरदारनी और उन का बच्चा जैसे कोई टीले थे, अचल अटल, दूर, उस की पहुँच से दूर। जैसे चमेली और उस का घरवाला गड्ढे थे जो भरने में ही नहीं आते थे। और सामने सड़क पर लोग नाच-नाच कर गा गा कर, रंग उछाल उछाल कर बेहाल हो रहे थे। आने-जाने वालों पर रंग डाल डाल कर थक जाते तो एक दूसरे पर रंग डालने लगते। आपस में रंग डाल-डाल कर थक जाते तो हवा में पिचकारियाँ छोड़ते। ढोरों को पानी पिलाने वाली हौदी में उन्होंने रंग घोल लिया था। बदमस्त, नशे में बेहाल लोगों को होली खेलते देख कर चमेली जैसे किसी हिलोर में आ गयी। उस की आँखें किसी सरूर से भर गयीं। एक क्षण के लिए वह अपने क्वाटर में गयी। और फिर वैसे का वैसा द्वार खुला छोड़ बाहर निकल आयी। अगले ही क्षण चमेली ने घास के मैदान में रेशमी परदे के पीछे सात रंग के छाते तले पीठ किये हुए सरदार को कन्धे से पकड़ कर उस के मुँह पर, गरदन पर सीने पर, पगड़ी पर कमीज़ पर गुलाल ही गुलाल कर दिया। चमेली पूड़े में से रंग ले कर मलती गयी मलती गयी और जब उस का रंग खतम हुआ तो वह दौड़ती हुई, हाँफती हुई फूले हुए साँस के साथ अपने क्वाटर में जा चित्त अपनी खटिया पर गिर पड़ी।

# २७ मई, दो बजे बाद—दोपहर

बिखरे बिखरे बाल, फटी फटी आँखें, मुँह पर इधर उधर चिपकी हुई दाल, बाहर बरामदे में बैठी गोविन्दी अपनेआप गा रही है

"बल्लिए रोयेंगी, चपेड खायेंगी,

चुप कर के गड्डी विच बह जा।"

( गोरी, अगर रोओगी तो चाँटा पडेगा, चुपचाप गाडी में बठ जाओ। ) -

टीन के डब्बे पर ताल देती, सिर हिलाती, फटी हुई अपनी आवाज़ में गोविन्दी गाती भी जाती ह, हँसती भी जाती ह।

"कौन ह चाटा मारने वाला? कोई मार के तो देखे? नेहरू–राजे का राज है।'

गाते गाते गोविन्दी आप से आप बोलने लगती ह

" मारेगा तो चाँटा खा लूँगी। एक तरफ मारेगा, दूसरा गाल सामने कर दूँगी। चाटा मारेगा। मार के तो देखे! मेरे मद को नही जानता? मैं ने नेहरू को चिट्ठी लिख दी ह। मेरा घरवाला मुफे ढूँढ दे। मेरा मद और मेरे दोनों बेटे। और मेरी बेटी। पता नही, कहाँ जा डूबे ह निगोडे।"

"बल्लिउ रोयेंगी, चपेड खायेंगी।"

जसे फटी हुई ढोल्क हो, अपनी बेसुरी आवाज़ में गाती हुई गोवि ी मुड-मुड कर कमरे को ओर देखती है, रेडियो क्यो नही बज रहा? हर रोज़ सुबह हर रोज़ दोपहर, हर रोज शाम, बरामदे में आ कर बठ जाती है, रेडियो सुनने को शौकीन। जितनी देर रेडियो बजता रहता है गोविन्दी बरामदे में से नही हिलती, फैल कर बठी रहती ह, कई वष हुए, रडियो पर शरणार्थियो के लिए सन्देश ब्राडकास्ट होते थे। कई वष हुए, ये सन्देश ब्राडकास्ट होने बन्द हो गये, किन्तु गोविन्दी का पागलपन—वह अब भी इस प्रतीक्षा में ह कि उस के लिए कोई सन्देश ज़रूर सुनाया जायेगा।

"बल्लिए रोयेंगी, चपेड खायेंगी" गाते गाते गोविन्दी, हर बार पल्ट कर जब कमरे की ओर देखती ह, उस की फटी हुइ क़मीज़ में से उस का अग नज़र आने लगता ह। गोरी, सूखी हुई छागल जसी छातियाँ, गोविन्दी का अनढका अग कोई नयी

बात नही। गली, महल्ले में, किस न नही उसे देखा होगा ? कभी कमीज उधड़ी हुई ह, तो कभी गिरेबान फटा हुआ। उसे या बेहाल देख अड़ोस-पड़ोस की औरतें, आठवें-दसवें दिन उस के कपड़ बदलवा देतीं। लेकिन फिर गोविन्दी वैसी की वैसी होती। टूटे हुए बटन, घिसा फटा आगा, नुचा नुचा पाछा।

"वलिए रोयेंगा, चपेड खायेंगी।"

शायद रडियो चलने में अभी कुछ समय है। गोविन्दी बगल में से पुराने अखबारो के बण्डल को खोल, एक एक पन्ने को तह कर रही ह। फिर कूड़े के ढेर स उठाये, लोगो के रद्दी खत—पत्रो मे पड़े को एक एक कर के देखती ह, जसे जाँच रही हो। फिर ऐसे सिर हिलाती ह जैसे न अखबार के पन्नो में, और न ही किसी पोस्ट कार्ड में उसे अपना सन्देसा मिला हो। फिर गोविन्दी अनाप-शनाप बकना शुरू कर देती ह। सन्देशा न भेजने वाला के माँ-बाप को रोने-पीटने लग जाती ह।

"गोविन्दी ! तू ने फिर बकना शुरू किया ?" मेरी पत्नी उसे डाँटती ह। गोविन्दी पर कोई असर नही होता। और फिर आगे बढ कर मेरी पत्नी रडियो खोल देती ह। उस ने आजमा कर देखा ह और कोई चीज गोविन्दी को चुप नही करवा सकती। रेडियो सुनते ही जसे वह सब कुछ भूल जाती।

मुझे गाविन्दी पर बडा तरस आता ह। खास तौर पर उस दिन से, जब मैं ने उसे एक चाँटा दे मारा था। बात या ह मैं बाहर दौरे से लौटा था। अन्दर घर का मद आराम कर रहा हो तो कोई रडियो कसे चलाये ? गोविन्दी को एक बार समझाया गया, दो बार समझाया गया किन्तु उस के पल्ले कुछ नही पडा। वह गालिया बकने लगी। रेडियो क्यों नही खोलते ? उस का सन्देशा ब्राडकास्ट हो गया तो कौन जिम्मेदार होगा ? 'कोई बात भी हुई" गोवि दी बके जा रही थी—"कोई बात भी हुई, म जा कर नेहरू से कहूँगी मेरा सन्देश नही सुनवाते मुझे।" यो गोविन्दी बक झक कर रही थी कि गुस्से से लाल पीला हो म अन्दर से निकला। और तडाक से एक तमाचा उस के मुँह पर जड दिया। पाच की पाँच उगलियाँ उस के गाल में खुभ गयी। और गोविन्दी हक्की बक्की मेरी ओर देखने लगी। बिट बिट आँखें, बस देखती जाये। और म शम से पानी पानी हो गया। उस पगली को क्या पता कि वह क्या कर रही थी, क्या कह रही थी। मैं भी उस के साथ दीवाना हो गया था। सारा वह दिन, गोविन्दी बरामदे में, सिल-बट्टा हो कर, चुपचाप पडी रही न कुछ खाया, न कुछ पिया। साँझ होने को आयी, जब म किसी काम से बाहर गया तो मेरी पत्नी न उस की मिन्नत समाजत कर के उसे मनाया।

कई वर्षों से गोवि दी इस बस्ती में रह रही ह। कोई कहता, यहाँ से आयी, कोई कहता, वहाँ से। पर असल बात यह ह कि शरणार्थियों का एक काफिला सडक से गुजर रहा था। एक क्षण के लिए काफिला किसी कारण रुका और गोविन्दी सडक के किनारे नल में पानी पीने लगी। पानी पी कर हटी तो देखा, काफिला आगे निकल

गया था। ट्रक वाले कम्बख्त ट्रक चला कर, चल दिये थे। शायद जान-बूझ कर इस दीवानी से उन्होंने पल्ला छुड़ाया हो। और फिर गोविन्दी इसी बस्ती की हो गयी। हमेशा यही कहती, उसे आ कर कोई ले जायेगा। उस के नाम रेडियो पर सन्देश सुनाया जायेगा। "नेहरू राजे का राज है, कोई मजाक थोडे है।" बार बार यह कहती और दिन भर, गलियों में से पुराने पोस्ट कार्ड, बीनती रहती या फिर अखबारो के टुकडे समेटती रहती।

बस्ती के हम लोग, गोविन्दी के पागलपन से तंग आ कर उसे पागलखाने छोड आते। चार दिन, और वह लौट आती। "हम तो आ भी गये", घर घर जा कर कहती, "हम तो आ भी गये, हम तो आ भी गये! नेहरू राजे का राज है। कौन मुझे बन्द कर सकता है? हम तो आ भी गये।" और बस्ती की औरतें सिर पीट कर रह जाती।

अजीब अजीब कहानियाँ, गोविन्दी के पागलपन के बारे में प्रचलित थी। कोई कहता, किसी ने उसे कुछ खिला दिया है। कोई कहता, उस पर किसी ने टोना कर दिया है। कोई कहता, इश्क की मारी हुई है। जितने मुंह, उतनी बातें। गोविन्दी सुन्दर भी तो कितनी थी। अभी तक निशानियाँ बाकी थी, अपने समय में एक परी सी रही होगी। उस का गोरा रंग, अंग-अंग की बनावट, ऊँचा लम्बा कद-बुत।

गोविन्दी की असल कहानी बडी हृदय विदारक है।

देश की आजादी के दिनों में जो लहू की होली खेली गयी थी, गोविन्दी उस का शिकार है। गोविन्दी के गांव में जब फसादी दाखिल हुए, गोविन्दी के घर उस का मर्द था, दो बेटे थे, एक बेटी थी। आँगन में घुसते ही फसादियों ने गोविन्दी को अलग कर दिया—गोविन्दी इलाके भर में जिस के हुस्न की चर्चा थी। और एक एक कर के उस के परिवार के हर व्यक्ति को उस की आखों के सामने नेजा पर उछाल दिया गया—गोविन्दी के घरवाले को गोविन्दी की बेटी को और गोविन्दी के दोनों बेटों को।

और उस रात, कहने वाले कहते हैं, शराब में बदमस्त और औंधे पडे फसादियों के मुँह पर थूक कर गोविन्दी वहाँ से भाग निकली। भूखी, प्यासी कई दिन जगलों में घूमती रही। उस के पाँव काँटों से छिल गये। उस के कपडे लीर लीर हो गये। फिर एक फौजी टुकडी की नजर उस पर पडी, और वे उसे शरणार्थी कम्प में ले आये।

वह दिन और आज का दिन, गोविन्दी आप से आप बोलती रहती। चुप होती तो घण्टों पत्थर का पत्थर पडी रहती। न खाने की सुध, न पहनने की।

अडोस पडोस की औरतें उस की उडती हुई सलवार का नीचे खीच-खीच कर, उस की पिण्डलियों को ढकती रहती। उस के बटन बन्द कर-कर के, उस की छातियों को छिपाती रहती, फिर भी उस का कोई न कोई अंग अनढका होता।

"गोविन्दी! तू औरत-जात का कोई परदा रहने देगी, कि नही?" गली-महल्ले

की औरतें उसे कोसती।

हैं! यह क्या। बरामदे में बैठी रेडियो सुन रही, गोविन्दी सामने सड़क पर झाड़ू दे रही जमादारिन के बच्चे को उठा लायी है और अपना दूध उस के मुँह में दे रही है। भूखी बिलकी छातियाँ—बच्चा बार-बार सिर हिलाता है और खीजने लगता है। लेकिन गोविन्दी उस के पीछे पड़ी हुई है। और फिर बच्चे की माँ आ कर, गोविन्दी से अपना बच्चा छीन लेती है। गोविन्दी मन-मन की गालियाँ तौल रही है। जमादारिन के माँ-बाप को गिन रही है। कितनी गन्दी, कितनी भद्दी भद्दी गालियाँ, तोबा-तोबा! और गोविन्दी का एक स्तन जो उस ने जमादारिन के बच्चे के मुँह में दिया था, वसे का वैसा गिरेबान में से बाहर लटक रहा है।

मेरी पत्नी उसे समझाती है, मैं उसे समझा रहा हूँ। लेकिन गोविन्दी एक साँस गालियाँ बके जा रही है। और फिर अचानक रेडियो का प्रोग्राम रोक कर, आँसुओं से भीगी आवाज़ में कोई एलान करता है 'भारत के प्रधान मन्त्री, जवाहरलाल नेहरू का देहान्त हो गया'

रेडियो पर यह खबर सुन कर हमारी सब की, ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह जाती है। पति पत्नी, हम दोनों रेडियो में सिर दे कर सुन रहे हैं 'सवेर तड़के उन की छाती में दर्द उठा और वह बेहोश हो गये'

विलाप करती आवाज़ में एलान जारी है। और हमारी आँखों के सामने अँधेरा छा जाता है। एक क्षण भर के लिए जैसे हमें सुनाई देना बन्द हो जाता है। और फिर गली-मुहल्ला, बस्ती भर में एक हाहाकार मच जाता है। लोग एक दूसरे को आवाज़ें दे रहे हैं। बाहर सड़क पर आवाजाही तेज़ हो गयी। मोटरों और स्कूटरों के हार्न चिल्ला रहे हैं। घबराये हुए, परेशान क़दम तेज़-तेज़ उठ रहे हैं। दुकानें बन्द हो रही हैं। गरमी की चिलचिलाती धूप में बाहर बूँदें पड़ने लगी हैं।

और मैं पलट कर गोविन्दी की ओर देखता हूँ। जहाँ बैठी थी, वहीं की वहीं बैठी है। छल-छल उस की आँखों से आँसू बह रहे हैं जैसे कोई बाँध टूट गया हो। रोये जा रही है रोये जा रही है, जैसे कोई चश्मा फूट निकला हो।

आँसू किसी की आँख में रोके नहीं रुकते। रेडियो से बार-बार एलान होता है। बार-बार जैसे कोई कलेजा का मांस नोच कर अलग कर रहा हो।

छल-छल आँसू रोती, गोविन्दी का बाहर लटका स्तन उस ने क़मीज़ के अन्दर कर लिया है। छल-छल आँसू रोती गोविन्दी क़मीज़ के बटन बन्द कर रही है। छल छल आँसू रोती गोविन्दी मुँह पर बिखरे बालों को दुपट्टे से ढक रही है। छल छल आँसू रोती गोविन्दी के चेहरे पर इधर-उधर बिखरी हुई दाल धुल गयी है। छल छल आँसू रोती गोविन्दी की नज़रें जो आठों पहर फटी-फटी रहती थीं, मुँद गयी हैं। जैसे कोई बरसों का सोया हुआ अचानक जाग जाय, गोविन्दी के चेहरे पर वहशत, बीरानगी और पागलपन के आसार मिट गये हैं।

और फिर गोविन्दी, ऊँची-लम्बी कोमलागी, हौले-हौले उठ कर मेरी पत्नी के पास आती है। "चलो बहन, पण्डित जी की कोठी चलें।" मेरी पत्नी हैरान हो रही है। गोविन्दी को जैसे कभी कुछ हुआ ही न हो। आम साधारण भले-चंगे व्यक्ति की तरह बातें कर रही है। "पण्डित जी के दर्शन करने चलते हैं, बाहर से टैक्सी ले लेंगे।" और गोविन्दी ने अपने दुपट्टे के पल्लू के साथ बांधा पाँच रुपये का नोट मेरी पत्नी की हथेली पर रख दिया है। पुराना घिसा हुआ, फिरंगी के जमाने का नोट, जिसे गोविन्दी कितने वर्षों से सँभाल सँभाल कर रखे हुए थी।

और फिर गोविन्दी की नजर शीशे पर जा पड़ती है—"हाय मैं मरी! यह हाल मैं ने क्या बना रखा है अपना ?" उस के मुँह से सहसा निकलता है। "तोबा-तोबा, जैसे कोई पागल हो।"

•

# अनाथ

लहू लुहान, हाँपता हुआ टोरू दहलीज पर खड़ा है। और फिर अड़ोस-पड़ोस के बच्चों ने आ कर बताया, डब्बू के साथ उस की झड़प हो गयी थी। गुड्डो के आँगन के सामने से टोरू गुज़र रहा था कि डब्बू इस पर आन झपटा। गुड्डो अपने क्वार्टर की खिड़की में खड़ी देखती रही देखती रही। और उस के कुत्ते ने टोरू की खाल उधेड़ दी। यदि गुड्डो का बापू उधर न आन निकलता, शायद डब्बू आज टोरू को जान से मार डालता।

स्तम्भ के साथ लग कर खड़ा सुन्दर जैसे स्तम्भ हो रहा था। जिस दिन से गुड्डो ने भरे महल्ले में सुन्दर को चाँटा दे मारा था, गली महल्ले के किसी लड़के की मजाल नहीं थी कि उस की ओर पलट कर देख जाये।। पाँचों की पाँचों उँगलियाँ उस के गाल में उभर आयी थी। सुन्दर बस उस के पास से गुज़र रहा था, शायद इस का कन्धा उस के कन्धे से छू गया हो, एक ओर कूड़े का ढेर था दूसरी ओर भैंस बंधी हुई थी, उधर से साइकिल वाला आ रहा था। गुड्डो कहती—इस ने जान-बूझ कर मेरे कन्धे से कन्धा भिड़ाया है। मैं इस का तिक्का-बोटी कर दूँगी। और सुन्दर लाख-लाख कसमें खाता, उस ने कन्धा नहीं मारा था। उस ने कन्धा जान-बूझ कर नहीं मारा था।

और फिर सुन्दर सोचता—शायद उस का कन्धा गुड्डो के कन्धे के साथ भिड़ हो गया हो। गुड्डो उसे अच्छी भी कितनी लगती थी। साँवला रंग, धूएँ जैसा [illegible] बिखरी हुई लटें गालों पर पड़ रही। सुन्दर उसे देखता और इस का जी चाहता उस की लटों समेत, उस के गालों को नोच ले। दाँतों में दबा कर बोटी की बोटी काट ले और किरच किरच खा जाये।

लेकिन गुड्डो का बाप—तौबा-तौबा! बात-बात पर झाड़ू उठा कर दूसरे के सिर हो जाता। क्या मजाल जो कोई उसे भंगी कह जाये। वह तो हरिजन था। महात्मा गान्धी ने तो इन का दिमाग़ सातवें आसमान पहुँचा दिया था। गुड्डो खुद कौन सी कम थी। कतरनी की तरह उस की जबान चलती थी। गाली के बगैर बात न करती। जवान-जहान लड़के उसे 'बिजली' कहते थे।

और तो और गुड्डो के कुत्ते डब्बू के दिमाग का ठिकाना नहीं था। नौकरों के क्वाटरों के कुत्ते उस की आँख से आँख नहीं मिला सकते थे। अपने आँगन में बैठा, दूर-दूर बस्तियों के पराये कुत्तों पर भूँकता रहता। कोई उस के क्वाटर के सामने से गुज़र

जाये उस पर गुर्राने लगता। जब से आया था सरकारी मेहमानखाने के नौकरो के क्वाटरों में, जितने पिल्ले पैदा होते, उन की खाल पर सफेद और काले धब्बे होते।

शेरू वसे का वैसा निढाल, सामने हाँफ रहा ह। बेबस उस का मालिक लज्जित सा, उस की ओर देख रहा ह। गुड्डो को मुँह लगाना मुसीबत। कौन बला मोल ले। बात बाद में करती थी, जूती पर उस का हाथ पहले जाता था। सुन्दर को तो उस ने चाँटा ही मारा था, छोटू की मरम्मत उस ने जूतो से की थी। रात को गुड्डो ने उसे जूतो से पीटा। अगली सुबह कही वह निकल गया। छोटू के माँ-बाप उसे ढूंढ-ढूँढ कर हार गये थे।

दद से शेरू कराह रहा ह। क्या उस ओर गया था ? सुन्दर को गुस्सा आने लगा। लेकिन फिर सुन्दर सोचता—कसे कोई उधर न जाये। क्योंकि उस ओर वह चुडल रहती ह, कोई उस ओर जाना ही छोड दे! कभी या भी हुआ ह!

सुन्दर इस तरह असमजस में पडा था कि उस की नज़र सरकारी मेहमानखाने की छत पर जा पडी। काँप रहे हाथ, घबराया हुआ गोरखा चौकीदार मेहमानखाने की छत पर लहराते हुए तिरगे को भुका रहा था।

और फिर चारो ओर वावेला सा मच गया। प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू का स्वगवास हो गया ह। लाग एक दूसरे को बार बार बता रहे थे। पर जसे किसी का एतबार न आ रहा हा। सामने झण्डा भुका दिया गया था, पर जसे किसी को विश्वास न होता हो। और फिर लोग अपने अपने क्वाटर बन्द कर के प्रधान मन्त्री की कोठी की ओर चल दिये। आँख झपकते ही सारा महल्ला भायँ भायँ करने लगा। जस सारा शहर टूट कर आन पडा हो। तीनमूर्ति की ओर जा रही सडकें, चीटिया की तरह चल रही थी। चिलचिलाती धूप थी प्रधान मन्त्री की कोठी के गेट बन्द थे, तो भी लोग खडे थे, तो भी लोग आ रहे थे—मोटरा पर ताँगों पर, स्कूटरा पर साइकिला पर, पैदल, चुप चुप, सहमे-सहमे, पीले जद चेहरे बेजान जसे परछाइयाँ बढती आ रही हो।

प्रधान मन्त्री की कोठी की ओर आ रही सडकें जहाँ तक नज़र जाती चप्पा चप्पा भर चुकी थी। इन में औरतें थी, बच्चे थे बूढे थे नौजवान थे। अमीर थे, गरीब थे, मालिक थे, नौकर थे, अफ़सर थे मातहत थे। विकत यविमूढ, हिरासे हुए, सहमे हुए।

"जवाहरलाल अमर ह !" किसी ने नारा लगाया।

आगे-पीछे खड लोग बिट बिट उस की ओर देखने लगे। नारे को किसी न नही उठाया। लोग आँखें फाड फाड कर उस की ओर देख रहे थे। अमर ता कोई मर कर ही होता ह। क्या वह सचमुच मर गया ह ? और फिर एक सफेद दाढी वाला बूढा फूट फूट कर रोने लगा। उस के इद गिद खड लोग फटी-फटी आँखो से उस की ओर देख रहे थे।

गुलमोहर क पड के नीचे पानी का प्याऊ था। हर रोज़ आते जात राहगीर खडे हो कर, इस प्याऊ से पानी पीते थे। आज सडक भरी हुई थी लेकिन कोई पानी नहीं माँग

रहा था। मटके घने थे भरे पड़े थे। "माता जी पानी।" "पानी भाई साहब ?" बहन पानी पिओगी ?" "पानी पी ले बच्चे।" प्याऊ वाले भी कोई बात नहीं सुन रहा था।

'तुम्हें पता है, मैं उसे थोड़ा थोड़ा इन्न करती थी।' लिपस्टिक से रंगे होंठ अपने पति के साथ कोठी के बाहर, गेट के पास खड़ी एक औरत को नज़र जमे कह रही हो। "सारी उम्र मन ही मन में उसे थोड़ा थोड़ा इन्न करती रही हूँ।" उस की कजराई आँखों में चित्रित था। बार-बार उस का पति उस के हाथ को पकड़ कर उस से पूछता 'डार्लिंग ! तुम्हारे हाथ क्यों ठण्डे हो रहे हैं इस तरह ?" हर बार उस की पत्नी सामने से कुछ इस तरह का जवाब देती।

सुन्दर ने देखा सामने बिजली के एक खम्भे का सहारा ले कर गुड्डी खड़ी थी। मगे पाँव पसीना चू रहा—कनपटियों से गालों से, ठोड़ी से। गुड्डो के कुर्ते को देख कर, दोरू सुन्दर की टाँगों में दुबकन लगा।

'जवाहरलाल अमर हैं !' दूर किसी ने फिर नारा लगाया। लोग एड़ियाँ उठा उठा कर उस की ओर देखने लगे। नारे का जवाब किसी ने नारे में नहीं दिया। कुछ देर यों ही चुप्पी छायी रही। और फिर एक औरत धड़ाम से औंधी जा गिरी। 'पानी ! पानी !" लोगों ने बेहोश हुई औरत को सँभालने की कोशिश की। इस से पहले कि पानी आ सकता औरत ठण्डी हो गयी थी। दोपहर ढल रही थी। हवा रुकी हुई थी। एक पत्ता तक नहीं हिल रहा था।

पिछली बार चाचा नेहरू विलायत गये थे दीदी ?' एम पी फ्लैट के बरामदे में एक बच्ची ने अपनी बहन से पूछा।

'अब चाचा नेहरू मर गये हैं, दीदी ?'

'इस बार जब लौट कर आये दीदी, मैं उन की गाड़ी पर फूल फेंकूगी। पिछली बार विलायत से आये थे तो मैं ने कहा था चाचा नेहरू जिन्दाबाद !"

'चाचा नेहरू का मुँह डैडी जैसा है दीदी।'

चाचा नेहरू की आँखें अम्मी जैसी हैं दीदी।'

'चाचा नेहरू के होंठ '

बच्ची बोले जा रही थी बोले जा रही थी। और फिर उस की दीदी की आँखों में आँसू नहीं रुक सके।

भीड़ और बढ़ती जा रही थी। लोग तीनमूर्ति की ओर कदम-कदम सरकते आ रहे थे। परछाइयाँ ढल रही थीं किन्तु गरमी वैसी की वैसी थी। आकाश से जैसे आग बरस रही हो। धरती से आँच निकल रही थी। हवा सहमी हुई कहीं रुक गया थी। हर माथे पर पसीना था। होंठ छिलकों की तरह सूखे हुए थे। मर्द चुप थे। औरतें चुप थीं। उँगलियाँ पकड़े बालक चुप थे। छातियों से चिपके बच्चे चुप थे।

यह गेट क्यों नहीं खोलते ?' एक सिक्ख टैक्सी ड्राइवर ने आखिर झुंझला कर कहा।

"हा, हाँ! गेट तो खुलना चाहिए।" उस के पास कोई अखाड़े का पहलवान बोला।

"गेट खोल देना चाहिए, लोग दर्शन कर सकें अपने महबूब नेता का।" बन्द छाता पकड़े एक पादरी ने राय दी।

"गेट खोल दो!" एक मुसलमान ताँगे वाले ने आवाज़ दी।

"गेट खोल दो!" उस के पीछे कई आवाज़ें गूँज उठीं।

"गेट खोल दो! गेट खोल दो!" सारी भीड़ चिल्लाने लगी।

"गेट खोल दो, गेट खोल दो!" पुकारते हुए लोग आगे बढ़ते जाते।

"गेट खोल दो गेट खोल दो!' चारों ओर से आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। और लोग आगे बढ़ रहे थे, और आगे।

लेकिन गेट तो बन्द था। और फिर आगे से जैसे धकेल कर भीड़ को पीछे किया जा रहा हो। पीछे वाले आगे बढ़ रहे थे। आगे वाले पीछे हट रहे थे। सामने लोहे के गेट अचल खड़े थे।

"गेट खोल दो, गेट खोल दो" की पुकार और ऊँची हो गयी। और फिर जैसे समुद्र का एक रेला होता है, या लगा जैसे भीड़ लोहे के गेट को तिनकों की तरह चूर चूर कर के रख देगी। लेकिन गेट के पास खड़े लोग, प्रधान मन्त्री के गेट पर कैसे जब्र आने दे सकते थे? "गेट खोल दो गेट खोल दो," चिल्लाती हुई भीड़ ने एक क़हर का हल्ला बोला और कई लोग पाँव के नीचे कुचल कर रह गये।

"गेट खोल दिया जायेगा।" अन्दर से आवाज़ आयी, "गेट कुछ देर बाद खोल दिया जायेगा।"

और लोग जहाँ थे, वहीं रुक गये। चुप-चुप, लज्जित-लज्जित, आँखें नीची किये। जैसे उन्होंने कभी कुछ किया ही न हो। और पुलिस वाले घायलों को अस्पताल पहुँचा रहे थे, जो लोग कुचल कर मर गये थे उन की लाशों को सँभाला जा रहा था।

सुन्दर ने देखा सामने सड़क के किनारे पर गुड्डो का बापू बार-बार उस की चुनरी खींच कर जैसे गुड्डो को घर लौट चलने को कह रहा हो। लेकिन गुड्डो सुनी अनसुनी कर रही थी। गुड्डो का कुत्ता डब्बू घूर घूर कर गुड्डो के बापू की ओर देख रहा था। और फिर गुड्डो का बापू, गुस्से में दाँत पीसता चला गया। गुड्डो वैसी की वैसी खड़ी सामने लोहे की सलाखों वाले गेट की ओर देख रही थी।

और फिर एक हवाई जहाज़ दिखाई दिया। दूध सा सफ़ेद। दूर बहुत दूर जैसे आकाश में तैर रहा हो। एकदम सारी नज़रें आकाश में गड़ गयीं। जैसे झरोखे में से उन्हें कोई देख रहा हो।

"जवाहरलाल अमर है।' एक आवाज़ उभरी।

"जवाहरलाल अमर है!" लोगों ने नारा लगाया।

और फिर जैसे सारी धरती गूँज उठी—'जवाहरलाल अमर है। जवाहरलाल अमर है।"

अनाथ

दीवारों से छतों से आवाज आ रही थी—' जवाहरलाल अमर है ।"

आकाश से, हवाई जहाज ओझल हो गया । लेकिन लोग बार बार नारे लगा रहे थे—जवाहरलाल अमर है ।

' जवाहरलाल अमर है । जवाहरलाल अमर है ।" पुकारते हुए लोगों के गले बैठ चले थे । लेकिन नारे थे कि रुकने में नहीं आ रहे थे । ऊंचे और ऊंचे उस से भी ऊंचे ।

इस तरह सांझ हो गयी । सुंदर नारे लगाता लगाता थक गया था । निढाल हो गया था । भूखा प्यासा, थका-हारा, चिंताओं में डूबा, एक अथाह गम की खाइ में खोया सुंदर अपने घर की ओर चल दिया । लोकसभा सेक्रेटेरियट फिर राजपथ, हौले हौले कदम उन सडकों पर चल रहा था जिन पर से उस की मोटर गुजरा करती थी जो चला गया था । उन जगहों पर खडा हो हो कर आगे पीछे देखने लगता जहाँ खडा हो कर कई बार उस ने उस के दर्शन किये थे । लेकिन वह तो कहीं भी नहीं था । अब वह कभी इन सडकों पर से नहीं गुजरेगा । अब सुंदर उस की प्रतीक्षा में घण्टों सडक के किनारे नहीं खडा हुआ करेगा । और सुंदर का गला रुंध रुंध जाता । शेरू कभी उस के पीछे-पीछे चलता कभी उस के आगे आगे चलने लगता । टूटे हुए कदम राजपथ से होता सुंदर आखिर उस मोड पर पहुँच गया जो सडक उस के घर की ओर जाती थी ।

सामने गुडडो बैठी थी । एक पेड के नीचे । अकेली । गुडडो के कुत्ते डब्बू ने शेरू को देखा और आगे बढ कर जैसे उस का स्वागत करने लगा । देखते ही देखते शेरू डब्बू के घावों को चाटने लगा । डब्बू शेरू के घावों को चाट रहा था । सुबह ही तो उन्होंने एक दूसरे को काट-काट कर खाया था ।

हल्का हल्का अँधेरा हो चला था । कुत्तों को यों लाड करते देख, सुंदर की नजर सामने गुडडो पर जा पडी । वैसी की वैसी गुलमोहर के तने के साथ पीठ लगाये, थकी-हारी निढाल सी बैठी थी । सुंदर की नजर गुडडो के उदास उदास चेहरे पर जम कर रह गयी । साँवला रंग । बिखरी हुई लटें जैसे कोई पत्ता झड कर टहनी से नीचे आ गिरा हो । सुंदर गुडडो की ओर देखता रह गया । उस का मन कहता, चाहे अब वह आगे बढ कर उस के पास बैठ जाये, गुडडो उसे कुछ नहीं कहेगी । सुंदर का मन कहता चाहे अब वह आगे बढ कर गुडडो का हाथ अपने हाथ में ले ले, गुडडो उसे कुछ नहीं कहेगी । अँधेरा कदम-कदम बढ रहा था ।

●

# एक औरत

"माफ करना, मैं "

'आप वाह को पहचानेंगे !" एक हाथ स्टेयरिंग पर, और दूसरे से उस ने मोटर का दरवाजा खोला, और म उस के साथ सीट पर बठ गया। पिछली ओर से प्याजी रग की एक मोटर मेरे पास आ कर रुक गयी थी।

'कोई छह महीने हो गये हैं आप को दिल्ली आये हुए। पहले तो आप मोटर में इण्डिया गेट सर के लिए जाते थे। कई बार मैं ने आप को देखा आप की मोटर खिसक कर के मेरे पास से गुजर जाती। अब कुछ दिनो से आप पदल होते हैं। आप की मोटर जनपथ वाले वर्कशाप में है यह भी मुझे पता ह "

मोटर चला रही, बिना मेरी ओर देखे बातें करती जा रही थी। फशनेबल, सजी सँवरी तराशे हुए बाल कधा पर नाच रहे थे। बला की प्यारी आवाज, जैसे कोई गा रहा हो।

' मैं ने सोचा, आजकल इसे पकडा जा सकता ह। और आज मैं सफल हो गयी। माफ करना, म आप को इण्डिया गेट पहुँचाने नही जा रही, मैं आप को अपने घर ले जा रही हूँ। मेरे बच्चे सिनेमा देखने गये हुए ह। बच्चों का बाप कई दिना से दौरे पर ह। और मैं अकेली हूँ "

म ने उस की ओर एक नजर देखा। कोई तीस-पैंतीस की उम्र, पर जसे किसी ने अपनेआप को समूचा सँभाल-सँभाल कर रखा हो--कोमल सी काया, फूल-पत्तिया जसे होठ, बोले जा रही थी, बोले जा रही थी।

" बिलकुल अकेली हूँ मैं। सारी उम्र मैं ने अकेले काट ली लेकिन यह जाडा, मुझे महसूस होता कि अकेले नही कटेगा और वही बात हुई आज मैं ने आप को पकड लिया है '

मैं ने फिर उस की ओर देखा। उस की आँखो पर काला चश्मा लगा हुआ था। चश्मा न होता तो शायद उसे पहचानने में इतनी मुश्किल न होती। पोठोहारो लबो-लहजा। लेकिन यह ह कौन ? पोठोहार की मेरी एक-एक दोस्त की तसवीर मेरी आँखों के सामने घूमने लगी। 'जस्सी' नही हो सकती। 'तेजो' नहीं हो सकती। 'शम्मो' नही हो सकती। 'सत्ता' नही हो सकती। 'कुन्ती' नही हो सकती। 'पम्मो'

नहीं हो सकती। 'बनी' नहीं

" गैराज से मोटर बाहर निकल रही, मेरे दिल ने कहा, अगर आज वह मिल गया तो उसे मैं नहीं छोड़ूँगी। यह ज़िन्दगी कितनी अजीब चीज़ है। अगर तुम आज न मिलते तो शायद मेरी सारी उम्र अपने पति को एक वफ़ादार बीवी के रूप में कट जाती। और अब "

एक हाथ से अपने बटुए में से सिगरेट निकाल उस ने अपने होंठों में रख ली और मेरे हाथ में माचिस दे कर सिगरेट सुलगाने के लिए इशारा किया। मैं ने उस के लिए दियासलाई जलायी और उस ने लम्बा सा कश लगाया। और फिर सिगरेट को अपनी उँगलियों में पकड़ जीभ पर लगी तम्बाकू की एक पत्ती को हटाने लगी।

आप को पता है, मेरे बड़े बच्चे की शक्ल आप पर है। हूबहू आप का मुँह माथा। उसे देखती हूँ तो मुझे आप याद आने लगते हैं। बाप साँवला माँ साँवली और बेटा गोरा। एक बार मैं ने उसे कहा, यह बच्चा तुम्हारा नहीं। यह बच्चा उस का है जिस मैं ने सब से पहले अपना दिल दिया। और वह जल भुन गया।

और फिर वह हँसने लगी। हँसती गयी हँसती गयी। मैं बार बार उस के मुँह की ओर देख रहा था लाल-सुर्ख हो गयी थी। अभी तक मैं उसे पहचान नहीं पाया था।

'कमबख्त! तुम अभी तक वसे के वसे हो। पाँच मिनट हो गये हैं तुम्हें मेरे साथ अकेले मोटर में बैठे हुए, अभी तक तुम ने मेरा एक प्यार नहीं लिया। सीट पर यों सरक कर बैठे हो जैसे पति-पत्नी बैठते हैं—एक दूसरे को रात दिन देख-देख कर थके हुए बोर हो चुके, ठण्डे-ठार। कभी हफ्ते दस दिनों में रात के अंधेरे में जिन की मुहब्बत जागती है और वे एक दूसरे को नोच-नाच लेते हैं। मेरी जान! तुम तो मेरे पास बैठे हो। अपनी निक्की के पास।'

और उस ने मेरे कन्धे पर हाथ रख मुझे अपनी ओर खींच लिया और अपनी बाँह को वसे का वसा मेरे कन्धे पर रख दिया। जैसे किसी को बुखार चढ़ा हो उस का अंग अंग तप रहा था।

"तुम्हें डर लग रहा है? सारी उम्र तुम ने डरते काट दी। अगर तुम डरते नहीं तो आज यह हाल ही क्या होता? कोई और होता तो उन दिनों कहीं का कहीं पहुँच जाता। चाहे मुझे पेट ही कर देता। और फिर मेरी मा को खुद ही मानना पड़ता। बेचारा विधवा औरत कहाँ-कहाँ कुँआरी लड़की का इलाज करवाती फिरती। मैं लड़का होती तो ज़रूर यों करती। खास तौर पर तब जब मेरी माँ ने इस लिए इनकार किया कि लड़के के माँ-बाप इतने अमीर नहीं। कोई बात भी हुई!"

अब मोटर मुड़ी और जहाज़ जसी बड़ी एक कोठी में जा घुसी। मुश्किल से मैं सम्भला ही था कि मोटर कोठी के बीच में जा रुकी। मोटर रुकी और वह पट-पट करती मुझे अपने गोल कमरे में ले गयी। गोल कमरे में घुसी और उस ने एक हाथ से दरवाज़े की चिटखनी लगा दी और दूसरे से मुझे अपनी ओर खींच लिया।

और फिर गोल कमरे के चारो ओर लगे परदों के हलके-हलके अंधेरे में दीवानों की तरह मुझ प्यार करने लगी। होंठो पर होंठ, दांतों में दांत, जीभ पर जीभ, प्यार करती हुई वह सामने दीवान पर ढेरी हो गयी। एक एक कर के उस के ब्लाउज के बटन खुलते गये। कसे बहुत से वह प्यार कर रहा था। मेरी नेक्टाई को खोल कर उस ने दूर फेंक दिया, और मेरी कमीज को खोलते, एक आवेश में उस ने एक, दो, तीन मेरे सारे के सारे बटन तोड दिये। बार-बार मेरी छाती को दांतों से काटने लगती, जगह जगह निशान डाल रही थी जगह जगह मोल डालती जा रही थी।

क्षण क्षण उस का आवेग बढ़ता जा रहा था। होंठों को प्यार कर के हटती और पलकों को चूमने लगती। पलकों से हटती तो कानों को काटना शुरू कर देती और फिर एक बवण्डर की तरह वह मुझे अपने साथ उडा ले गयी।

जैसे अथाह सागर में तूफ़ान उमड आये! बला का झकड़, बादल, बिजली, मेंह और ओले। और इस तूफान में जैसे कोई नाव लहरों के थपेडों में घिर जाये। उठा उठा फेंके, उछाल-उछाल फेंके झपटा झपटा कर फेंके। अंधेरा, घोर अंधेरा, और दूर, बहुत दूर किसी घायल अबाबील की करुण पुकार।

और फिर जैसे धीरे से खिल खिल हँसता चाँद कहीं से निकल आये। चारो तरफ़ एक खामोशी एक सकून।

एक लम्बे स में आँखें मूँदे वह मदहोश पडी थी। कितनी देर मैं उस के चेहरे की ओर देखता रहा। कमरे में हल्का हल्का अंधेरा था। यह कौन है? मैं अभी तक उसे पहचान नहीं पाया था। कोई भी हो, एक अजीब चीज है। और मुझे उस पर बेहद प्यार आया। उस के माथे पर बिखरे बालों को हटा कर मैं ने उसे धीरे से चूमा। मैं ने उसे चूमा और जैसे नशे में चूर मन मन भारी हो रही पलकों को उस ने आहिस्ता से खोला और मेरी ओर देखने लगी। एकटक देखे जा रही थी।

और फिर एकदम जैसे किसी को कुछ याद आ जाये, "मेरी जान! तुम्हारे बायें गाल के नीचे एक तिल होता था?' उस ने मुझ से पूछा।

'तिल?"

'बायें गाल पर तुम्हारे तिल नहीं होता था?

"नहीं तो।'

और फिर सहसा जैसे कोई विस्फोट हुआ हो। "तुम, तुम वह नहीं?' और वह चीख मार कर मेरी बाँहों से निकल सामने कालीन पर औंधी जा पडी। नग्न घायल अबाबील की तरह मेरी ओर देखे जा रही थी। बार-बार "तुम वह नहीं," तुम वह नहीं" कहती और मेरी ओर इस तरह देखती जैसे नजरों ही नजरों से मुझे बींध कर रख देगी। अलफ नंगी सामने सोफ़े के तकिये के साथ अपनेआप को ढकने की कोशिश कर रही थी। उस ने मुझे फिर धोखा दिया। एक बार फिर धोखा!" और अब वह फूट फूट कर रो रही थी, फरियाद कर रही थी।

# मेघदूत

" जसे धुआँ होता ह, बादल यूँ तरते हुए सातवी मजिले मे मेरे इस कमरे में आ रहे ह। यो जब बादल उमडते ह, घटा घिर आती ह, मुझे कुछ कुछ होने लगता ह। और नही तो मैं किसी दोस्त से टेलीफोन पर बातें करने लग जाता हूँ। तुम्हें बोर तो नही कर रहा? बोर कर रहा हूँ, तो क्या! मुझे तो इस वक्त कोई साथी चाहिए। जिस का नम्बर मिल जाये उसी से बातें करने लग जाता हूँ। मैं ने सोचा तुम घर पर ही होगे। यो जब रिमझिम फुहार पडती है। घरों वाले घर पर ही होते हैं, बाहर हो, तो अपने ठिकाने पहुँच जाते ह। और एक मैं हूँ—पर नहीं, मेरी बात और ह। मैं ने तो सूनी राहो से दोस्ती पाली ह। जब बादल गरजते ह बिजली चमकती ह, ठण्डी मीठी हवा चलती ह मुझे अपने कमरे का अकेलापन खाने को दौडता है। वर्षा, तुम्हारी ओर भी तो हो रही होगी। रिमझिम, रिमझिम। शायद तुम्हारे फ्लट में बादल यो नही आते होंगे। पहली मजिल पर धरती की सुगन्ध होती ह। नहा रहे पेडो की सुगन्ध घुल रहे पत्तो की सुगन्ध। कई कलियाँ तो एक बूँद पा कर ही सरशार हो जाती ह। कई वृक्ष तो बादलो की परछाइ देख कर बहकने लगते ह। निचली मजिल से धुली धुली सडक दिखाई देती ह। दूध से लदी, निचुड निचुड रही ग्वालिनें। जितना ज्यादा भीगें, उतना ज्यादा पानी उन की गागरो में भरता ह। हमारे यहाँ एक ग्वालिन आती थी, जब उस की गाय सूखने लगती उस का अपना दूध हरा हो जाता। कचनार' नाम था उस का। कितना प्यारा नाम ह—कचनार! म अपने किसी नायिका का नाम कचनार रखूगा। काजल—मेरा मतलब ह कचनार नाम कितना प्यार ह।

हाँ, गौतम तुम्हें बोर तो नही कर रहा? बोर कर रहा हूँ तो भी क्या! अब एक बादल धीरे धीरे आया ह और मेरी पलकों को सहला रहा ह, उन को कोरा पर जसे सुस्ता रहा हो। ये आँसू नही, ये तो बूँदें ह पानी की—जो बादलो के दामन से लिपटी हुई, तरती हुई आ रही है। कोई इस समय मेरे कमरे में आये तो समझेगा, शायद मैं भावुक हो रहा हूँ। ये आँसू नही। आसुओ का जिक्र कर के मेरी आवाज कुछ और की ओर हो गयी है—लेकिन ये आँसू हरगिज नही। इस तरह का मौसम हो तो आदमी हसता ह, गाता ह कविता लिखता ह, जाने क्या क्या करता

है। कोई रोता थोड़े ही है। ऐसे ही गला रुँध गया था। शायद बादल का कोई टुकड़ा मेरे कण्ठ में अटक गया है। कालिदास को मेघ देख कर अपनी प्रेयसी की याद सताने लगती थी। उसे पीछे छोड़ कर देश की यात्रा के लिए निकला, कवि व्याकुल हो कर बादलों के हाथों से सन्देश भेजने लगता। मुझे लगता है, कालिदास के वे सन्देश अभी तक बादलों के पल्लू में बँधे रखे हैं। अभी तक जब बादल उमड़ते हैं, मेरे कानों में कोई नगमे गूँजने लगते हैं।

गौतम! तुम सुन भी रहे हो या मैं दीवानों की तरह आप ही आप बके जा रहा हूँ। मुझे लगता है, एक हाथ में चोंगा अपने कान से लगाये, दूसरे हाथ से तुम दफ़्तर से लायी कोई फ़ाइल निपटा रहे हो। शायद ठकेदारों के बिल पास कर रहे हो। शायद मिसल पर दस्तख़त कर रहे हो। शायद किसी मातहत की अर्ज़ी नामंज़ूर कर रहे हो। उसे पीछे गाँव जाना है अपने गौने के लिए और तुम उसे छुट्टी नहीं दे रहे। हर क्षण, हर पल उस की राह देख रही आँखों में से काजल घुल घुल जा रहा है। गौतम! मुझे कजरारे बादल अच्छे लगते हैं। बादल सभी मनमोहक होते हैं लेकिन कजले बादल मुझे मुग्ध कर देते हैं। कौन, 'काजल' तुम्हें आवाज़ दे रही है? अच्छा मेरा सलाम उस से कह देना। टेलीफ़ोन बन्द करता हूँ। बन्द तो मुझे अपनी खिड़कियाँ, दरवाज़े करने चाहिए। रोशनदान बन्द करने चाहिए। अपनेआप को जकड़ लेना चाहिए अपने कमरे में और फिर चाहे किसी का दम घुट जाये। यों छलाँगें तो नहीं कोई लगा सकेगा। या तो चाहे कोई खिड़कियों में से फलाँग कर बाहर निकल जाये। या तो चाहे कोई रोशनदानों में से चुपके से खिसक जाये। जिस ओर से रोशनी आती है, उस राह से कोई उड़ जाये—दूर बहुत दूर नीले आकाश में। उड़ना कितना आसान होता है। मुश्किल है, बँध कर रहना। मुश्किल है अपनी राह चलते जाना, अपने क़दमों पर अडिग खड़े रहना। बड़ा मुश्किल होता है यह! कभी कभी तो आदमी बेकल हो उठता है। बदन टूटने-टूटने लगता है। मैं भी क्या बकवास कर रहा हूँ। तुम्हें काजल बुला रही है। मेरा सलाम उसे कहना। मुझे कोई सलाम नहीं भेजता। जब बादल यों गरजते हैं, बिजली यों चमकती है, या घिर घिर कर काली घटा आती है, लगता है जैसे मुझे कोई याद कर रहा हो। मेरा अंग-अंग किसी को ढूँढ़ने लगता है पुकारने लगता है। शायद 'काजल' तुम्हें फिर आवाज़ दे रही है। अच्छा, बाबा, मैं बन्द करता हूँ। काजल भी क्या कहती होगी, किस दीवाने का टेलीफ़ोन उस के घरवाले को आया है।'

●

"दीवाना है सचमुच! शेखर का टेलीफ़ोन था। बोलने जो लगा, बोलता ही चला गया है। चाय पड़ी-पड़ी ठण्डी हो गयी। मुझे पता था, चाय ठण्डी हो रही होगी। मालूम नहीं, क्या कह रहा था! मेरे तो पल्ले कुछ नहीं पड़ा। कि काली घटा छा रही है। हमेशा इन दिनों काली घटा छाती है। कि मेंह पड़ रहा है।

भई, जब काली घटा छाती है, मेंह तो पड़ता ही है। मुझे तो जहर लगता है, जब यह बादल पीछा ही नहीं छोड़ते। कोई बात भी हुई! हमारी ओर बारिश होती थी, *थया थया करती आती, जल थल कर के चली जाती। कि रिमझिम फुहार पड़ रही* है! मैं कहता हूँ काजल! यह बारिश कितनी कमीनी है। जाड़ा जान का नाम नहीं ले रहा। कि जब यों मेंह पड़ता है, मर दिल को कुछ-कुछ होने लगता है। कचनार नाम की कोई ग्वालिन थी, उस के हर साल बच्चा होता था। भई ग्वालिनों के बच्चे होते ही हैं, किसी को कटोरा भर दूध दोना वक्त मिले, बच्चे तो होंगे हैं। कोई कालिदास शायद हुआ है। तुम्हें पता होगा मैं ने तो हिन्दी नहीं पढ़ी। उस का जिक्र कर रहा था। सिर फिरा शायर था कोई शायद। किसी परायी लड़की से इश्क करता था, उसे चिट्ठियाँ लिख लिख कर बादलों की तरफ़ उड़ाता रहता था। मैं सोचता हूँ, शेखर की छत कहीं चूती तो नहीं। शायद बौछार पड़ती होगी उस के कमरे में। शायद उस की मरजी थी, उसे मैं, शाम खाने के लिए बुला लूं। कि घर मुझे *अकेला अकेला लगता है। कमबख्त तुम शादी करो, घर अकेला नहीं लगेगा। बौछार* भी तुम्हारे कमरे में नहीं आयेगी। घरवाली होगी तो सारा प्रबन्ध करेगी। और फिर किसी सफ़र का जिक्र कर रहा था। कि राह पर चलना मुश्किल है उड़ना आसान है, राह से भटकना आसान है। कोई बात भी हुई। उड़ना आसान, और राह पर चलना मुश्किल। मेंह है कि बरसता ही जा रहा है। मुझे तो ठण्ड लग रही है। हाँ सच मेरे गरम कपड़े भी किसी ने छत से सँभाले हैं। दोपहर को गरम कपड़े मैं ने हवा लगने के लिए छत पर डाले थे। बेड़ा गर्क। मेरे सारे सूटों का सत्यानाश हो *गया होगा। अरे भुण्डू! भुण्डू कमबख्त जाने कहाँ डूब मरा है। मैं खुद ही जाता हूँ।* कपड़ों पर कब से पानी पड़ रहा है। तोबा! तोबा! इस घर में किसी को होश ही नहीं।

●

"होश कैसे रह सकता है, जब इस तरह की वर्षा हो रही हो। रिमझिम रिमझिम फुहार पड़ रही हो। यों जब आकाश की आँख भीगती है, मेरे आँसू छलक छलक पड़ते हैं। मुझ पर खुमार सा छा जाता है। मैं अपनेआप को कमरों में बन्द कर *कर लेती हूँ। जैसे धुआँ होता है बादल यों तरते हुए आ रहे हैं।* मेरे कानों में आ कर सरगोशियाँ करने लगते हैं, जैसे कोई मुझे सन्देश भेज रहा हो। आस पास में से नग़मे फूट फूट निकलते हैं। जब यों बादल छाते हैं या घटा उमड़ती है मुझे कोई याद आने लगता है। रिमझिम रिमझिम फुहार पड़ रही है। किसी को कोई याद न आये तो क्या? बादल गरजते हैं। ठण्डी मीठी हवा चल रही है किसी को कोई याद न आये तो क्या? एक बादल धीरे धीरे आया है और मेरी पलकों को सहला रहा है। उन की कोरों पर आ कर जैसे सुस्ताने लगा हो। ये आँसू नहीं, यह तो याद है किसी की। इस तरह का मौसम होता है तो मुझे कोई याद आने लगता है। शायद बादल का

कोई टुकडा मेरे गले में आ कर अटक गया है। कालिदास को बादल देख कर अपनी प्रेयसी की याद सताने लगती थी। बादलों के हाथ उसे सन्देश भेजता था।

पता नहीं मेरी आवाज़ किसी तक पहुँचती भी है या नही। कई बार जब मैं सो कर उठती हूँ, मुझे अपनेआप में से एक खुशबू सी आ रही महसूस होती है। मेरे होंठों में से, मेरे बालों में से, मेरे पोरों में से। यों जब बादल घिर कर आते हैं, कजरारे बादल, तो शायद मैं किसी को याद आने लगती हूँ, इस लिए कि मेरा नाम काजल है। एक कहानी में काजल नाम की एक लडकी है। जैसे मैं हूँ। जब भी मैं वह कहानी पढ़ती हूँ मैं बार-बार शृंगार मेज के सामने जा कर खडी हो जाती हूँ। और मेरा जो चाहता है, कहानी लेखक से कभी पूछूँ तुम्हारी कहानी की वह लडकी कहीं मैं तो नहीं? जैसे किसी का बुत कोई तराश कर रख दे। हवा का एक झोका आया है और बूंदें मेरे मुँह पर एक छींटा मार कर जैसे चली गयी है। और मेरी आखें मुँद गयी हैं। मैं विभोर हो गयी हूँ। मुझे लगता है जैसे खिडकी में खडा कोई वर्षा को मां बरस रहे देख कर, मुझे बुला रहा है। और जैसे मेरे पाँव फिसल फिसल जायें। जैसे किसी की राह गुम गुम जाये। राह खो देना कितना आसान है। बडा कठिन है अपनी राह चलते जाना। यह बात किसी को नहीं पता। वह जो अब आ रहा है, अपने निचुड रहे कपडों का बोझा उठाये। सीढियां उतर रहा है। आज की इस वर्षा ने उस के कपडों के साथ अजीब खिलवाड किया है। आँसू हैं कि थम ही नहीं रहे। मुझे कोई याद आ रहा है। कौन? जब रिमझिम रिमझिम फुहार पडती है, कोई याद तो आता है। अब वह इधर आयगा और पूछेगा—अभी तक रसोई में काम करते तुम्हारी आँखें भीग भीग जाती हैं? और मैं चुपचाप उस के मुह की ओर देखती रह जाऊँगी। हाँ, हां, अभी तक

# चीनी, रेशम, खुली मुहब्बत

मैं हँस रही हूँ। हँस हँस कर मेरा पेट दुखने लगा है। कच्चा मैं खोयी हुई, समाचार-पत्र देख रही, शृंगारमेज के सामने खड़ी मुझे टेलीफ़ोन पर सुनी बात याद आ जाती है और सहसा मेरी हँसी फूट पड़ती है। हँस-हँस कर मैं दीवानी हुई जाती हूँ। मेरे हाथ का काम धरा का धरा रह जाता है।

हँसते-हँसते अचानक मेरी हँसी रुक जाती है और मेरी आँखों से छल-छल आँसू बहने लगते हैं।

रोने वाली बात तो है।

अजीब बात है रोने वाली भी है हँसने वाली भी।

मुझे अभी अभी एक टेलीफोन आया है। पहले तो मैं सिहर सी गयी। वह जानी-पहचानी आवाज और मुझे टेलीफोन। हाँ, वही थी मुझे क्षण भर के लिए जैसे अपने कानों पर विश्वास न हो रहा हो।

यह तो वही आवाज थी, मधुर सी मीठी शहद जैसी। वही थी, जिस को सुनने के लिए मैं बरसों तड़पती रही हूँ।

मर्द की मोहब्बत मेरे लिए एक खिलौना सा बनी रही, जब से मैं ने होश सभाला। मेरी एक मुसकान के लिए मेरी एक नजर के लिए, लोगों ने जैसे क्यू लगा रखे हों। मर्द की मोहब्बत मेरे लिए जैसे लाल-लाल बेरों की भरी पिटारी हो जो जी चाहे, कोई मुँह में डाल ले। मर्द की मोहब्बत मेरे लिए जैसे रंग बिरंगे फूलों की महकती क्यारी हो जो जी चाहे कोई चुन कर अपने बालों में लगा ले। मर्द की मोहब्बत मेरे लिए जैसे फूट रहे चश्मे का मोतियों जैसा पानी हो, जब किसी का जी चाहे, उस में डुबकी लगा ले।

लेकिन यह मर्द!

तोबा! तोबा! जब मैं सोचती हूँ, मेरा अंग-अंग कसकने लगता है, जैसे किसी मंजिल तक पहुँचने के लिए चलते-चलते किसी की एड़ियाँ घिस गयी हों। जैसे किसी राह पर खड़े-खड़े, किसी के पाँव थक गये हों, जैसे किसी की प्रतीक्षा में किसी की आँख दुखने लग गयी हो।

घण्टों शृंगारमेज के सामने खड़ी मैं सजती रहती, सजी हुई अपनेआप को

देखती रहती, कभी अपनी नज़रों से, कभी उस की नज़रों से। उस के पास जा रही, राह में हर दृष्टि जब मेरे रूप में उलझ कर रह जाती। लेकिन एक बार भी तो उस ने कभी यूँ नहीं देखा जैसे कोई किसी को देखता है और किसी की सारी मेहनत सफल हो जाती है। मैं लाख तयारियाँ कर के उस के पास जाती, मुझे सामने बिठा कर वह अपनी पत्नी को टेलीफ़ोन करने लगता, अपने बच्चों के साथ गप्पें लगाने लगता। अपनी पत्नी का वफ़ादार मालिक, अपने बच्चों का प्यारा बाप! मुझे जैसे और चिढ आती। मैं सोचती, एक बार इस मद को हरा कर छोडूँगी।

लेकिन नही। कई महीने बीत गये, और फिर मुझे लगता, जसे उसे मिलने का मेरे पास कोई बहाना न बचा हो।

और मैं ने उस से एक फ़रमायश की। मुझे उस के दफ्तर में एक नौकरी चाहिए थी। उस ने सुना और हँस दिया। वह नौकरी मुझे कैसे मिल सकती थी! उस नौकरी के लिए तो पश्तो भाषा का ज्ञान ज़रूरी था, और मैं दिल्ली में जन्मी, पली। मैं ने कहा—मेरा पति पेशावर की ओर का है। मेरी सास के साथ वह प्राय पश्तो में बात करता है। खबर की ओर के कई लोग, उस के दोस्त हैं। कई बार वे उस से मिलने आते हैं और कितनी-कितनी देर वह पश्तो में बक-झक करते रहते हैं। मैं पश्तो सीख लूँगी। पश्तो सीखना भी कोई कठिन है!

"अच्छा, अगर पश्तो आप को आ जाये तो मैं आप को मदद कर दूँगा।" मुझे मालूम था, उस ने मुझे टालने के लिए यह कहा था। उस को विश्वास था कि न मुझे पश्तो आयेगी, और न वह मुझे नौकरी दिलायेगा।

दो महीनों में किसी को कोई नयी भाषा थोडे ही आ जाती है। मैं उस के दफ़्तर के एक कर्मचारी की सहायता से पश्तो सीखती रही। अपने पति से उन दिनों मेरी बनती नहीं थी, घर में पश्तो सीखने का सवाल ही नहीं था।

अपने पति से बनती नहीं थी तभी तो मैं ने बाहर झक मारने के लिए मुँह उठा लिया था। मैं सोचती, अगर इस मद की जगह कोई और होता तो आज मैं गली-गली ख्वार होती फिरती। औरत जात, एक बार पाँव फिसल जाये तो नीचे ही नीचे धँसती जाती है।

दो महीने बाद, मुझे पश्तो तो कोई खास नही आयी, लेकिन उस आदमी ने नौकरी मुझे दिलवा दी।

मुझे लगता है जसी उन दिनों मेरी मानसिक दशा थी, जिस परेशानी में से उन दिनों मैं गुज़र रही थी, इस का उस को कुछ न कुछ आभास ज़रूर था।

मैं सोचती हूँ, अगर मुझे वह नौकरी न मिलती तो मेरे बच्चे भूखे मर जाते। उन के बाप ने तो एक हज़ार मील दूर तबदीली करवा ली थी—और न कभी उस की चिट्ठी आती थी, न कभी उस ने कोई पैसा भेजा था।

सचमुच अगर यह नौकरी न होती तो हमारा बुरा हाल होता। और नौकरी

भी कोई मामूली नही थी। पाँच सौ रुपये महीना वतन था। और पाँच सौ में हमारा गुजारा अच्छा हो जाता था।

एक महीना, दो महीने, चार महीने, साल। मेरे वच्चों के पिता ने हमारी सुध न ली। और फिर लोगो ने खुसर-फुसर शुरू कर दी। जितने मुंह उतनी बातें। कोई कुछ कहता कोई कुछ। प्राय लोग मेरा ही कसूर बताते। सब से बडा मेरा गुनाह, मेरा रूप था। और फिर उस पर मुझे सजने का कितना शौक था। लोग यही सोचते मैं ने कही बाहर दिल लगा रखा ह। कौन सा पति अपनी घरवाली की इस तरह की बेहूदगी सहन कर सकता ह।

और फिर लोगो ने कहना शुरू किया कि मैं दफ्तर में अपने अफसर के साथ फसी हुई हूँ। तभी तो उस ने मुझे नौकरी दी ह। ऐसी बढिया नौकरी कोई यूँ ही किसी को थोड़े ही दे दिया करता ह। और फिर वह नौकरी फरसी जानने वाले के लिए थी, और मुझे फरसी कोई खास आती नही थी। इस तरह की खुसर-फुसर दफ्तर में भी शुरू हो गयी।

और जरूर यह बातें उस के कानो तक भी पहुँचती होगी। चिक उठा कर जब मैं उस के कमरे में घुसती मेरा दिल काँपने लगता। इस लिए कि बेकार में उसे मैं बदनाम कर रही थी। और इस लिए कि मैं उसे मोहब्बत करती थी। ज्यो-ज्यो दिन बीतते जाते, वह मुझे और भी अच्छा अच्छा लगने लगा था। दिन रात म उस के सपन देखती रहती।

और क्या मजाल उस ने मली नजर से कभी मेरी ओर देखा हो। किसी की बेहूदगी, बदनाम कोई और। सब से बुरी बात यह थी कि हम दोनो एक ही दफ्तर में काम करते थे। वह अफसर था दफ्तर का मालिक। उस ने मुझे नौकरी दी थी। और फरसी मैं अभी तक ठीक ठीक सीख नही पायी थी।

लोग बाते न करें तो क्या हो। बातें करन वाली बात तो थी।

उधर मैं अपने दिल से मजबूर थी। हर समय मरे दिमाग पर वह सवार रहता।

और फिर अभी तक जीवन में म ने कभी हार नही मानी थी। जिस को मैं ने चाहा उस को म ने पाया। लेकिन वह था, जसे टस से मस न हो रहा हो।

म उस के कमरे में जाती। आदर से मुझे बिठाता। हमेशा चाय, काफी कोका कोला से मेरी खातिर करता। दफ्तर के काम में मदद देना। कई बार छुट्टी के समय मैं उस के पास बठी होती मुझे अपनी मोटर में बिठा कर घर तक छोड जाता।

मैं मिन्नतें करती रहती मुझे उतार रहा कभी खुद मोटर से न उतरता। मेरा जो चाहता, एक बार कभी अन्दर आ कर वह मर गोल कमर को देखे। मेर गोल कमरे के गलीचे, मर गोल कमरे के परदे सामने रडियोग्राम पर मैं ने उस की तसवीर रखी हुई थी। "यह तसवीर आप न कहाँ से ली ?" उस के इस सवाल का जवाब हमेशा म



)

अपने मन में गढ़ती रहती। कभी कुछ, कभी कुछ। लेकिन वह कभी हमारे यहाँ आता तब न!

उसे अपने घर लाने के लिए मैं सफल नहीं हुई। हमेशा यही कहता—आप के पति आ जायें, जरूर एक शाम हम इकट्ठे होंगे।

और फिर मेरी दीवानगी ने एक अजीब हरकत की। मैं सोचती हूँ और अब भी पानी-पानी हो जाती हूँ। बात यूँ हुई मैं अपनी एक सहेली को मिलने के लिए गयी। पाँचवीं मंज़िल पर उस का फ्लैट था। गर्मियों के दिन थे। दोपहर ढल रही थी। और सामने लिफ्ट खराब हुई पड़ी था। इतनी दूर से मिलने के लिए आयी, मैं सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। और मैं सोच सोच कर हैरान होती हूँ पाँचमंज़िली उस इमारत की सीढ़ियाँ चढ़ रही मुझे वह याद आने लगा। सुनसान सीढ़ियाँ, कहीं ठण्डी-ठण्डी, कहीं अँधेरी अँधेरी। अकेली ऊपर चढ़ रही, मुझे बार-बार वह याद आ रहा था। और मुझे अपने पर दया आने लगी। कोई बात भी हुई! अकेली सीढ़ियाँ चढ़ती किसी औरत को, कोई मर्द याद आने लग जाये। अगले दिन उस के कमरे में किसी कारण गयी, बातों बातों में मेरी उस सहेली का जिक्र आ गया। वह भी उसे जानता था। उन के यहाँ कुतिया बियायी थी और वह उन के यहाँ एक पिल्ला लेने जा रहा था। मैं ने सुना और खिल सी गयी। मैं भी इस के साथ जाऊँगी। मैं भी इस के साथ जाऊँगी। पाँच मंज़िली इमारत की कहीं तंग, कहीं अँधेरी कहीं टेढ़ी सीढ़ियाँ। कोई जरूरी है, आज भी लिफ्ट खराब हो? मेरे अन्दर एक तूफान आया हुआ था। तीसरे पहर जब दफ्तर बन्द हुआ उस की मोटर में बैठी, मैं बार-बार अपने मन को टटोल रही थी, मैं इतना खुश क्यों थी उस दिन! मेरे गाल लाल हो रहे थे। बार-बार मेरे बालों की एक लट मेरी पलकों पर आ पड़ती। मेरे हाथ निचल्ले नहीं रह रहे थे। डशबोर्ड पर कभी मैं किसी चीज को छेड़ती, कभी किसी को। और फिर मोटर मेरी उस सहेली के घर के सामने जा रुकी। लिफ्ट अभी तक खराब थी। मेरा दिल धक धक करने लगा। औरत का सम्मान, एक सीढ़ी आगे दो सीढ़ी आगे, सुनसान, तंग अँधेरी ठण्डी सीढ़ियाँ हम चढ़ते गये। अपनी सहेली के यहां बैठी चाय पी रहे बार बार मेरी नज़र उस पर जा पड़ती। मेरा दिल कहता, आज का दिन बिना कुछ हुए नहीं गुज़रेगा। और फिर वही बात हुई। सीढ़ियाँ उतरते हुए एक अँधेरे टुकड़े में मैं रुक गयी, और मैं ने उस से कहा 'आप आगे हो जाइए। लगता है जैसे मुझे चक्कर आ रहे हों।" और जब वह मेरी सीढ़ी से गुज़र रहा था, सचमुच मेरी आंखों के सामने अँधेरा छा गया और मैं उस के कंधे पर ढेर हो गयी। वह रत्ती भर नहीं घबराया। वैसे का वैसा मुझे सँभाल कर उस ने मुझे नीचे मोटर में ला बिठाया। और हमेशा की तरह मुझे मोटर में घर छोड़ गया। वैसी की वैसी, समूची, जैसे कोई अमानत हो।

अगले दिन मैं दफ्तर नहीं जा सकी। उस से अगले दिन भी नहीं। उस से

अगले दिन भी नहीं। उस से अगले दिन भी नहीं।

और फिर मेरे घरवाले की तबदीली उसी शहर की हो गयी। और हमारी ग़लतफ़हमियाँ दूर होने लगीं। घरवाले से रंजिश दूर हो गयी तो मुझे नौकरी की क्या जरूरत थी। मैं ने अपने काम से छुट्टी पा ली।

नौकरी छोड़ दी लेकिन इतने वर्ष मेरा एक अरमान था। वह आदमी, जिस ने जरूरत के समय मेरी मदद की थी उस के लिए मैं कुछ कर सकती। उस का एहसान मैं किसी तरह उतार सकती। लेकिन कभी उस ने मुझे अवसर नहीं दिया। इतना भी नहीं कि मैं उस से यह कहूँ कि मैं आप की बहुत-बहुत आभारी हूँ। और फिर यूँ उस की ओर देखूँ जैसे कोई तश्तरी में रख कर अपनाआप को किसी को भेंट कर देता है।

और तो और इतने वर्ष घुल-मिल कर हम रह गये, वह हमारे यहाँ कभी चाय तक पीने नहीं आया। कभी कोई बहाना कभी कोई बहाना। शायद बहाना न भी हो। इतना बड़ा अफ़सर उसे फ़ुरसत ही कहाँ मिलती थी।

कई वर्ष बीत गये और आज उस का टेलीफ़ोन आया है। कोई एक घण्टा हुआ। और मैं हँसती जा रही हूँ। हँस हँस कर मेरा पेट दुखने लगा है। हँसते-हँसते छल-छल मेरे आँसू बहने लगे हैं।

आज उस का टेलीफ़ोन आया है मिसेज सिंह! आप को एक तकलीफ़ देने लगा हूँ। हमारे यहाँ तीन दिन से चीनी खत्म है। शाम की चाय पर कई लोग आ रहे हैं। अपने पति से कह कर एक किलो चीनी तो हमारे यहाँ भिजवा दें।

मेरा पति आजकल सिविल सप्लाई के महकमे में काम करता है न मालूम इस बात का पता उसे कैसे चल गया।

मैं सोचती हूँ और मेरी हँसी फूट पड़ती है। हँस-हँस कर मैं दीवानी हो रही हूँ। मैं सोचती हूँ और मेरे आँसू बहने लगते हैं। छल छल जैसे सावन की झड़ी लगी हो।

●

# कृत करम के बीछड़े

गुरो रात फ़सला कर के सोयी थी कि आज तड़के वह नही उठेगी। किन्तु अभी मुँह-अँधेरा हो या कि उस को आँख खुल गयी। मुर्गे ने बाँग कितनी देर बाद में दी और वह कब की पलग पर करवटें बदल रही थी। कभी उस का मुँह दीवार की ओर हो जाता—सामने बाबा नानक का चित्र टँगा था। गुरु नानक समाधि में अन्तर्धान, एक ओर मर्दाना रबाब बजा रहा, दूसरी ओर बाला चँवर कर रहा, पीछे पीपल पर एक पिंजरे में तोता। अभी तो अँधेरा था, गुरो की दीवार पर टँगा चित्र थोड़ा दिखाई दे रहा था। चित्र दिखाई नही दे रहा था, फिर भी गुरो उस को देख रही थी। बाबा नानक की दूध सी सफेद सुदर दाढी। और उस के मुँह में से निकल निकल जाता—धन्य बाबा नानक ! धन्य बाबा नानक !! और कितनी देर वह यूँ सुमिरन करती रही। कभी गुरो करवट लेती और उस का मुँह दूसरी ओर हो जाता। सामने पलँग पर राय साहब सो रहे थे—उस का सिरताज ! उस के बच्चो का पिता। कितना स्नेह उन में था ! तीस वष ब्याहे हो गये थे, तो भी इतना खयाल एक दूसरे का ! राय साहब का एक बाजू कम्बल से बाहर नगा हो रहा था। गुरो ने लपक कर उसे कम्बल के पल्लू से ढक दिया। सारी रात जाग जाग कर उन्हें कम्बल से ढकती रहती। कभी उन का पाँव बाहर होता, कभी उन की टाँग बाहर होती। गुरो सोचती, सोये सोये उसे कैसे पता चल जाता था कि राय साहब का कम्बल कहाँ से हट गया ह। ह बाबा नानक की ओर उस की पीठ हो रही थी ? और गुरो ने सहसा करवट बदल ली। चित्र की ओर देखती श्रद्धा से उस की आँखें मुँद गयी। हर रोज सोने से पहले वह यूँ करती थी। सामने चित्र में बाबा नानक की ओर देखती-देखती उस की आँख लग जाती। सुबह उठती और सामने उसे चित्र में मनमोहिनी मूरत गुरु महाराज के दर्शन होते और गुरो का अग-अग विभोर हो उठता। और आज उसे नींद नही आ रही था, लाख उस ने रात को फसला किया था कि आज तड़के वो नही उठेगी लेकिन और उस से सोया नहीं जाता था, और उस से आज करवटें नही ली जाती थीं। और गुरो पलँग से उठ खड़ी हुई।

गुरो क्यो सुबह-सुबह उठ गयी थी ? इतना तड़के उठ कर वह क्या करेगी ? क्यों उस की इतनी सवेरे आज आँख खुल गयी थी ?

चाहे संक्रान्ति थी, वह गुरुद्वारे नही जायेगी। बेशक संक्रान्ति हो। रात को

राय साहब ने भी यही कहा था। गुरुद्वारे अब वह नही जायेगी। गुरुद्वारा उस ने अपना घर जो बना लिया था। कोठी का एक कमरा खाली करवा, उस ने गुरुग्रन्थ की स्थापना कर ली थी। ऊपर मखमल की चाँदनी, नीचे दरी, चादरें, रेशमी रुमाल, चँवर, धूप, अगरबत्तियाँ, खण्डा, कृपाण, शख, सब कुछ ही तो उस ने खरीद लिया था। और हर रोज सुबह एक ग्रथि आ कर एक घण्टा पूरा उसे गुरुवाणी का पाठ कर के सुनाता था। ग्रथि की उस ने तनख्वाह बाँधी हुई थी। अब उस ने गुरुद्वारे जाना छोड दिया था।

कौन टाँगें दुखा कर या मोटर का पेट्रोल फूक कर जाये और वहाँ अपने पति को और अपने बेटा को प्रतिदिन बुरा भला कहा जाता सुने? कोई बात भी हुई! हर रोज़ हिन्दी-पजाबी का किस्सा। हर रोज हिन्दू खराब। हर रोज़ सिक्ख अच्छे। हर रोज़ गुरमुखी अच्छी। हर रोज़ नागरी बुरी। गुरो सोचती उस के लिए क्या फ़र्क था। उस के लिए तो जैसा गुरमुखी वैसा ही नागरी। वो तो सारी आयु न गुरमुखी सीख सकी न नागरी। उस के लिए तो काला अक्षर भैंस बराबर था। लेकिन ये लोग कैसे लड रहे थे! भाई भाइयो से लड रहे थे।

हाँ भाई भाइया से ही तो लड रहे थे। गुरो का सब से बडा भाई सिक्ख था। बाकी सब मौने थे। गुरो की माँ ने अपना पहला बेटा गुरु को भेंट किया था। अब उत्तम के बच्चे पजाबी पजाबी करते थे और उस के भाइयो के बच्चे हिन्दी का शोर मचाये हुए थे। कैसे दिन आ गये थे! पडोसी पडोसियों से भाई भाइया से आँख नही मिलाते थे। कितना अधेर था!

गुरो खिडकी में जा खडी हुई। अभी अधेरा था। सामने सडक पर आवाजाही शुरु हो गयी थी। आज सक्रान्ति जो थी। दूध वाले दूध जल्दी ले जा रहे थे। सैर वाले सैर के लिए सवेर निकल पडे थे लौट कर गुरुद्वारे जो पहुँचना था। खिडकी में खडी गुरो सोच रही थी अपनी जिन्दगी में हर सक्रान्ति को गुरुद्वारे जाती रही थी। अपनी याद में हर सक्रान्ति सुबह तडके प्रसाद तयार करवा कर वह गुरुद्वारे जाती रही थी क्या मायके क्या ससुराल। सक्रान्ति के दिन गुरुद्वारे जाना उस ने कभी नही भूला था। और अब जब गुरुग्रन्थ की स्थापना अपने घर में करवा ली थी ये तो उस ने कभी नही सोचा था कि सक्रान्ति वाले दिन भी वो गुरुद्वारे नही जायेगी। सक्रान्ति वाले दिन कितना बडा दीवान लगता था। कहाँ कहाँ से चल कर सगत आती थी! कितनी लम्बी अरदास! कितना सारा प्रसाद! कितने सारे फूल! कितने सारे हार! सक्रान्ति के दिन हमेशा बाहर से रागी जत्थे आते थे, ज्ञानी आते थे सन्त महात्मा आते थे, बारह माह की कथा होती थी—कृत करम के बीछड़े—

यों सोच में खोया हुई गुरो ने मुह में दातून ले लिया। दातून के बाद स्नान कर लिया, स्नान के बाद कपडे बदल लिये। कघी कर चोटी में बल देती फिर वह खिडकी में आन खडी हुई।

दिन अभी भी नहीं निकला था। क्यों इतनी सुबह आज वो तयार हो गयी थी?

वो तो गुरुद्वारे नही जा रही थी। हां गुरुद्वारे वो नही जायेगी। रात राय साहब ने भी यही कहा था।

मीठा मीठा कीतन हो रहा होता, स्वाद-स्वाद में खोयी वो बठी होती, चारों ओर रिमझिम रिमझिम जसे अमृत की वर्षा हो रही हो, और कोई उठ कर हिन्दी पजाबी का क़िस्सा छेड देता था। और फिर एक के बाद एक हिन्दू सिक्ख नही। सिक्ख हिन्दू नही। महाशय बुरे हैं। हिन्दू पराये हैं। गुरो सोचती—यदि हिन्दू बुरे होते तो दशम गुरु अपने पिता को इन के लिए क्यों कुर्बान कर देते ? कश्मीर के पण्डित जब फरियाद ले कर आये तो गुरु गोविन्द क्यो अपनेआप को यतीम बनाने के लिए तैयार हो गये ? और आज ये लोग हिन्दुओ को बुरा-बुरा कहते थे ! कितना ज़हर उगलते थे। हर रोज़ अरदास में 'पन्थ' की जीत ! 'पन्थ' की जीत बेशक हो लेकिन अपने भाइयों, अपने पड़ोसियों को दुतकारना उसे अच्छा नहीं लगता था। गुरो सोचती—वह अपने घर वालों को कसे छोड दे ? अपने बटा से कसे पराई हो जाये ? वो गुरुद्वारे नही जायेगी। हिन्दुओ का बुरा भला कहते सुन-सुन कर उस के तो कान भी पक गये थे। और अब कितने दिनो से उस ने गुरुग्रन्थ की स्थापना अपने घर में ही करवा ली थी। दशन ही करने होते थे। गुरुवाणी का पाठ ही श्रवण करना होता था। दोनो मतलब उस के घर में ही पूरे हो जाते थे।

सडक के उस पार सामने कोठी का गेट खुला। सरदार गुरमुख सिंह छडी लिये गुरुद्वारे चल दिये थे। गुरो ने सरदार जी को देखा और सिर पर दुपट्टा ले लिया। अँधेरा कम हो रहा था। खिडकी में वैसी की वैसी खडी गुरो सोचती—यदि गुरुद्वारे में सिक्ख मिल कर न बठें तो और कहाँ बैठें ? यदि गुरुद्वारे में अपनी समस्या की चर्चा न करें, तो और कहाँ करेंगे ? 'सिंह सभा लहर' के समय, "अकाली लहर" के समय, अभी कल जब देश का बँटवारा हुआ, मशवरे कहाँ होते थे ? आज क्यों कि गुरो को आँच आती थी तो उसे बुरा लग रहा था ! और इन का क्या बर था पजाबी के साथ ? कोई अपनी माँ की बोली से भी नफरत करता ह ? घर में, बाजार में पजाबी लेकिन जब कोई पूछे कि तुम्हारी मातृभाषा क्या ह तो कह देना कि हिन्दी। कोई बात हुई !

गुरो पाँव से सिर तक काँप गयी। कितनी देर तक उस के होंठ हिलते रहे। गुरो सोचती—कोई बात तो जरूर होगी कि हिन्दू अपनी मातभाषा का विरोध कर रहे थे। जरूर कोई बात होगी इस बूढी आयु में जो उसे समझ नही आ रही थी। आखिर कोई बात तो होगी ही। बेटे बेटियाँ उस के ब्याहे गये थे अपनी अपनी नौकरियाँ, अपने अपने घरों में बस गये थे। उसे समझाने वाला कोई नहीं था। राय साहब तो न किसी के भले में, न किसी के बुरे में, न पजाबी, न हिन्दी, राय साहब तो उर्दू का अखबार पढ़ते थे। बेटों को चिट्ठियाँ भी उर्दू में ही लिखते थे, दुकान का हिसाब भी उर्दू में ही रखते थे। गुरो को कुछ समझ नहीं आ रही थी।

ह, सूजी के भुनने की खुशबू ! शुद्ध देशी घी में सूजी भूँजी जा रही थी। ये तो उस

का अजना नौकर था। रसोई में सूजी भूँज रहा था। मिसर को किस ने कहा था कड़ाह प्रसाद तैयार करे ? उस ने तो ऐसी कोई हिदायत नहीं की थी। क्या कि आज सक्रान्ति थी, वह सुबह-सुबह प्रसाद तैयार कर रहा था। जब से इस घर में आया सक्रान्ति वाले दिन हर महीने वो प्रसाद तैयार करता था। इस लिए आज भी बिना कहे सूजी भुन रहा था। आज कौन उस का प्रसाद ले कर गुरुद्वारे जायेगा ? पगला ! गुरुद्वारे जाने वाले ने फसला कर लिया था, वो गुरुद्वारे नहीं जायगी और ये अपना प्रसाद तयार कर रहा था। तडके उठा होगा। पहले उस ने चौके को लेप किया होगा, फिर बरतनो को माजा होगा, फिर स्वय नहाया होगा और अब प्रसाद तयार कर रहा था। प्रसाद तयार करता, सतनाम' 'सतनाम' करता रहता था। जपु जी' जो कठस्थ नही।

देशी घी में भुनी जो सूजी की खुशबू आ रही थी। गुरो सोचती—सचमुच वह गुरुद्वारे कभी नही जायेगी ? सक्रांति का दिन था जब उस की माँ ने हाथ जोड कर बाबा नानक से गुरो माँगी थी। पाँच बेटे हुए थे और उस के आँगन में एक भी बेटी नही खेलती थी। और उस की माँ ने बाबा के सामने हाथ जोड और उस की मुराद पूरी हो गयी सक्रांति का दिन था जब अपने गले में दुपट्टे का पल्लू डाल कर गुरो ने प्रार्थना की थी—ए बाबा नानक, मेरा होने वाला पति सुन्दर हो, नेक हो ! और विवाह के बाद जब वह ससुराल आयी अपने खाविन्द की ओर देखती उस की भूख नही मिटती थी। सक्रांति का दिन था जब उस ने माथा रगड रगड कर गुरु नानक से विनती की थी कि उस के पति को ठेके में घाटा न पडे, वो तो कहता था उस की सारी उमर की कमाई नष्ट हो जा रही थी। और बाबा नानक ने उस की प्रार्थना सुन ली थी। घाटा घाटा करते उस के घरवाले की कमाई सवाई हो गयी थी। हूँ ! ये ड्राइवर मोटर क्यों गैराज से निकाल लाया था सवेरे ? सोचता होगा—बीबी को गुरुद्वारे जाना है। दीवाना ! इसे पता नही कि अब बीबी गुरुद्वारे नही जायेगी। कभी भी नही। और गुरो की पलकें भीग गयी। गुरो ने सोचा शायद सुबह की हवा ठण्डी थी।

देसी घी में भुनी जा रही सूजी की खुशबू आ रही थी। गुरो सोचती रही—सक्रान्ति का दिन था, जब एक बार उस ने गुरुद्वारे से चरण धूलि ला कर अपने बेटे के पेट पर मली थी कितनी देर से उस का पेट फूला फूला रहता था, कोई कुछ कहता, कोई कुछ कहता, चरण धूलि एक बार लगा और बच्चा भला चंगा हो गया सक्रांति का दिन था जब गुरुद्वारे में एक बार उस ने हाथ जोडे थे कि उस के आँगन में लगी अंगूर की बेल में फल आ जाये। कोई नही कहता था उस वक्त बेल फलेगा। लेकिन चार दिन और बेल में बौर आ गया। जो कोई देखता, देख-देख कर अचम्भा होता सक्रांति का दिन, जब उस ने अपने मन की एक मुराद माँगी थी संगत में खडे हो कर। क्या माँगा था उस ने ? उस के होठों तक कभी वो बात नहीं आयी थी। जब भी घट घट के जानने वाले ने समझ ली थी। कोई भी नहीं जानता था कि उस की मनोकामना क्या थी किन्तु उस की मुराद पूरी हो गयी थी। कभी वह निराश नहीं लौटी थी। कभी भी नहीं।

और गुरो की आँखों में मोटे-मोटे से अश्रु ढलकने लगते। गुरो ने पाया हवा प्याला ठण्डी हो रहा थी शायद।

हैं! सिगरेट का धुआँ? राय साहब उठ गये थे। साथ के कमरे में खिड़की में खड़े हर रोज की तरह सिगरेट पी रहे थे। और गुरो वहाँ से हट कर सामने वाली खिड़की में जा खड़ी हुई।

अब गुरो को सड़क साफ़ दिखाई दे रही थी। रजाई में प्रसाद सवार हो गया था। बाहर पोर्च में ड्राइवर मोटर लिये खड़ा था। दूर बहुत दूर सायरन का शंख बज रहा था। गुरो सोचती, क्या सचमुच वो गुरुद्वारे नहीं जायेगा। अब कभी वो गुरुद्वारे नहीं जायगा। और फिर छम-छम उस के अश्रु बहने लगे। उस के चेहरे की झुर्रियों में से काँप-काँप कर गिर रहे अश्रु अटूट लड़िया की तरह बह रहे थे। शंख एक बार बन्द हुआ, अब फिर बज रहा था।

"गुरांदेई" "गुरांदेई"!! राय साहब पुकार रहे थे। गुरो की आवाज गुरो का के अश्रु नहीं रुक रहे थे। "गुरांदेई"! राय साहब उसे ढूँढ रहे थे। "गुरांदेई" गुरो सोचती—हाँ उस गुरु ने ही तो दिया था, बाबा नानक ने। उस की माँ ने लंगर में फिर हाथ जोड़े थे, अरदास की थी और फिर गुरो फफक-फफक कर रोने लगी, बच्चों की तरह फ़रियाद करती वह सामने सोफ़े पर औंधी जा पड़ी।

•

पिछली जंग में जब नाज़ी इंग्लैण्ड पर बमबारी कर रहे थे, तो हर रात साइरन की आवाज़ पर उठ कर भागने की जगह लोग अपने बिस्तर ले कर, खाइयों में जा सोते थे। खाइयों में और तहखानों में। जो लोग ज़मीन-दोज़ रेलगाड़ियों के स्टेशनों के पास रहते थे, उन्होंने प्लेटफ़ार्मों के बेंचों पर कब्ज़ा कर लिया था, फ़र्श पर खाली जगह को बाँट लिया था। इन ज़मीन-दोज़ ठिकानों पर कई बच्चे पैदा हुए, इन ज़मीन-दोज़ ठिकानों पर कई घर बसाए हुए। लोग सोते किसी बिस्तर में, जागते किसी बिस्तर में। आतंकित चेहरे हर किसी को दूर सोयी पड़ी परायी औरत अच्छी-अच्छी लगती।

यूँ पिछले विश्वयुद्ध की पिछली घटनाएँ सोचते, मैं अपने आप में खोया जा रहा था कि अचानक मेरी नज़र फिर सामने लॉन पर जा पड़ती है। खाइयों में खेल रहे बच्चे एक लड़के को घेर खड़े हैं। 'पाकिस्तानी छाताधारी!'' "पाकिस्तानी छाताधारी!'' चिल्ला चिल्ला कर उसे परेशान कर रहे हैं। यह तो हमारे पड़ोसी का बेटा है। लड़का कभी हँसता है कभी गम्भीर हो जाता है। यूँ उसे छेड़ रहे बच्चे एक साथ, 'पाकिस्तानी छाताधारी!'' 'पाकिस्तानी छाताधारी!!'' पुकार कर उसे खिझाने लगते हैं। तालियाँ बजाते गोल गोल चक्कर काटते कभी उसे 'पाकिस्तानी,' कभी उसे छाताधारी' कहते, बच्चे जैसे दीवाने हो रहे हैं। पड़ोसी-बच्चा अब रुआँसा हो रहा है। कोई उस के बाल नोचता है कोई उस का कुरता खींचता है, कोई उस के पाजामे को हाथ डालता है। तंग आ कर बच्चा भागने की कोशिश करता है। यों उसे खिसक रहा देख, बच्चे उस पर टूट पड़ते हैं। पड़ोसी-बच्चा ठोकर खा कर खाई में औंधा जा गिरा है। और उस के पीछे लगे बच्चे बहनियों की तरह उस पर कूद पड़ते हैं। एक के बाद एक खाई में छलाँग लगा रहे हैं। पड़ोसी-बच्चा तो नीचे कुचल कर रह गया होगा। मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा। मेरे हाथ-पाँव जैसे मन मन भारी हो रहे हों। जैसे मुझे अपनी आँखों पर विश्वास न आ रहा हो। चक्कर, चक्कर अँधेरा अँधेरा। यह मैं क्या देख रहा हूँ। फिर बच्चे जल्दी जल्दी खाई से बाहर निकलते हैं और खाई के इर्द गिर्द पड़ी मिट्टी को धकेल धकेल कर खाई में गिराना शुरू कर देते हैं जैसे किसी की कब्र को भर रहे हैं।

कीमतें !'' हमारा पड़ोसी मुझे अकेला खड़ा देख कुछ कहना चाहता है कि मैं बाड़ को फलाँग कर उसे गिरेबान से पकड़े पागलों की तरह सामने लान की ओर ले जाता हूँ। हमें यूँ उधर आ रहा देख बच्चे आँख झपकते तितर बितर हो जाते हैं।

खाई में ताज़ा पड़ी मिट्टी को हटा कर, हमारी जान में जान आती है। पड़ोसी-बच्चे की नब्ज़ अभी रुकी नहीं है, अभी उस की साँस चल रही है। अपने बेहोश बच्चे को बाँहों में उठाये हमारा पड़ोसी हैरान, मेरी ओर देख रहा है—यह क्या हुआ? यह कैसे हुआ?

०

# पहला और आखिरी खत

मेरे बच्चे !

तेरे नाम यह मेरी पहली चिट्ठी ह । पहली भी और आखिरी भी । ह न अजीब बात ! कोई अपनी जान के टुकडे से कभी इस तरह कहता ह ?

तरे नाम यह मेरी पहली चिट्ठी ह । अभी तो कल की बात ह जब मुझे तेर होने के बारे में बताया गया । कल ही की तो बात ह जब हम पति पत्नी सनतथा की बाट की ओट में खाना खा चुके थे, तेरी मा ने झिझकते हुए मुझे यह खबर दी, और मेरे हाथ में से नारगी की फाक उचक कर नीचे जा गिरी । मेरा मुँह खुला का खुला रह गया । तेरी माँ की नजरें कह रही थी, मैं ने जान-बूझ कर पहले नही बताया कही आप का खाना न खराब हो । और वही बात हुई । एक अपराधी की तरह वह मेरी ओर देख रही थी, जसे कोई अपने दोष को स्वीकार कर रहा हो ।

दोष तो यह ह । बिना सोचे समझे हमारे देश में एक और मुँह बढ रहा ह । बत्तीस दाँतो वाला एक सु दर मुँह जिसे अन्न की आवश्यकता हागी, कपड की आवश्य कता होगी, घर की आवश्यकता होगी, रहने के लिए—उस देश में जो आबादी की दृष्टि से दुनिया म दूसर नम्बर पर ह, पर क्षेत्रफल के लिहाज स कही सातवें स्थान पर । जिस देश में दुनिया के पद्रह प्रतिशत लोग हैं और जिन के रहने के लिए केवल २ २ प्रतिशत भूमि ह । १९५१ में हम ३५ कराड थे, १९६७ में ५० करोड ह । १९८१ में ७२ करोड हो जायेंगे १९५१ से दुगने । जवाहरलाल नहरू ने एक बार कहा था—जिस तेजी से हम इस देश म अपनी गिनती बढा रहे ह, हम ने ता पशुओं को भी शर्मि दा कर दिया ह । तुम सोचते होगे कि मैं कसी बातें कर रहा हू । जसे काई दहलीज पर खडे मेहमान को अ दर बठक में ले जाने की जगह इधर उधर की हाँकने लगे । कोई सैकडा मील चल कर आया ह, कोई युगयुगा तर स मिलने के लिए आतुर हो और कोई द्वार पर खडा गिनती गिनना शुरू कर दे ।

यह बदतमीजी ह । बदतमीजी सी बदतमीजी ! लेकिन बेहयाई तो नही, ग़ैरतम द आदमी की आँखों की शम, मरे लाडले ! मैं तुझे एक आपबीती सुनाता हूँ और फिर तुम फसला कर लेना कि मेरी जगह किसी को क्या करना चाहिए ।

उस दिन हमार स्कूल में एक विदेशी महिला आयी थी, किसी पश्चिमी राज

दूत की पत्नी। बडी मिलनसार बडी सुसभ्य बडी मिठबोली। कितनी देर निरीक्षण करते हुए स्कूल की छोटी छोटी जरूरतों का जिक्र करती रही। बनी हमदद। और फिर उसे स्कूल के बच्चा के साथ मिलाया गया। सारे स्कूल के बच्चे एक स्थान पर इकट्ठे हुए। इस से पहले कि वह भाषण देने के लिए उठे, हमारे स्कूल के एक अध्यापक ने अपन मेहमान का बच्चा से परिचय कराया।

"बच्चो! तुम्हें मालूम है कि जो अन्न तुम खाते हो, वह कहाँ से आता है?"

बच्चे चुप।

'बच्चो! तुम्हें मालूम ह कि जो रोटी तुम खाते हो उस के लिए गेहूँ कहाँ से आता ह?'

बच्चे चुप।

'वह अनाज उस देश से आता ह जिस देश से हमारी आज की यह मेहमान आयी है अगर वह देन हमें अन्न देना बन्द कर दे तो हम भूखे मर जायें"

मच पर एक ओर बठा मैं पानी-पानी हो रहा था। मच और मच के सामने तालिया पीट पीट कर मेहमान का स्वागत किया जा रहा था। मुझे लग रहा था कि अगर धरती जगह द तो म उस में समा जाऊँ। विदेशी मेहमान स्वय भी लज्जित हो रही थी पर बच्चे तालियाँ पीटे जा रहे थे। स्कूल के अध्यापक तालियाँ पीट रहे थे।

चुल्लू भर पानी में डूब मरने को बात ह या नही! मेर बेटे। तू खुद ही बता! तू जा एक गरतम द बाप को औलाद ह। तू खुद ही बता इस से तो कोई मर जाये, इस से तो कोई भूखा रह ले।

और हम भूखे रह रहे ह। सप्ताह म एक बार हमारे घरा में, हमारे होटला में अनाज नही पकता। सरकार का यह फरमान ह। अनाज के दाने दाने को राशन कर दिया गया ह। गेहूँ और चावला के लिए हमार यहाँ जो क्यू लगने ह उन में कोई घिर जाये तो उस का दम घुट के रह जाता ह।

ऐसी जिन्दगी कौन जीना चाहेगा?

क्या? फिर भी जी सकना एक अनमोल उपलब्धि ह? यह तेरी माँ ह। तेरी माँ तर भीतर स बोल रही ह। बिल्कुल वही नाद।

यह उल्टे सीध पाठ तुम कब सीखने रहे हो? नही, वह नहीं हो सकती। वह तो मुद बचारी परशान ह। जिस क्षण से उसे पता चला उस के तो होश हवास उड़े हुए हैं। कई दिनों से वह खोयी खोयी लग रही थी। और म सोचता था कि इसे हो क्या गया ह? वह नहीं हो सकती। उस ने तो अपनी आँखों से बगाल का अकाल देखा ह। हजारों लोग कीडों की तरह तडप-तडप कर मर गये। जब आदमियों ने कुत्तों को खाया कुत्ता न आदमियों को खाया। और आज रूखे सूखे के कारण बिहार में क्या हो रहा ह? उत्तर प्रदेश में क्या हो रहा ह? उन दिनों रियालसीमा में क्या हुआ था!

सामन तुम्हारी बहन अपनी आया का उगली पकड पार्क में सैर के लिए

जा रही ह ।

उसे सगी की जरूरत ह । उसे भाई की जरूरत ह जिसे गोद में ले कर वह खिलाया करेगी । जिस के लिए वह गाने गायेगी । जब वह दूल्हा बन कर बारात के साथ निकलेगा । जिस पखेरुओं के द्वारा वह सन्देश भेजेगी अपनी ससुराल से । जिन्दगी के हर पड़ाव पर जिसे किसी की याद आयेगा । हर मुश्किल में अपने माँ जाये का सहारा ढूंढेगी । औरत मा बन सकती ह—जितनी बार उस की इच्छा हो । लेकिन औरत 'बहन नही बन सकती अपनेआप से । एक मासूम बच्ची से उस का बहन बनने का अधिकार छीन लेना, उस के साथ अन्याय ह ।

तौबा ! तौबा ! कितनी बातें तुम्ह आ गयी ह ! इतनी बातें तुम कहाँ से सीखते रहे हो ?

अपनी माँ से ।

झूठी बात । उस के मुँह में तो जबान नही । बेचारी गऊ जैसी ह ।

अपनी हर अनकही बात का बयान एक औरत अपन बच्चे में लेती ह । मै तो वह हूँ जिस के साथ वह अपने खिलौना में खेलती रही—अपने बचपन से । मैं तो वह हूँ जिस का अरमान अपने सीने में छिपाये वह दुल्हन बनने की तैयारिया करता रही । मैं तो वह हूँ जिसे अपने सपना में उस ने लाख बार चूमा ह । उठा उठा कर अपनी आँखो से लगाया ह ।

तुम भावुक हो रहे हो, मेरे बच्चे ! य पुरानी दकियानूसी बातें ह । इस तरह की बातें न कोई आज-कल करता ह और न सुनता ह ।

मैं बेटा हू ! हर मा के कलेजे में बेटे के लिए उमग होती ह ।

आज-कल बटे और बेटी में क्या फक ह ! बेटी डॉक्टर बन सकती ह, इजीनियर बन सकती ह, फौज में भरती हो कर अपने देश का रक्षा कर सकती ह । हवाबाज बन कर हवाई जहाज़ उडा सकती ह । अन्तरिक्ष की यात्रा कर सकती ह । समुद्रा की सीमा लाँघ कर एक देश से दूसर देश तक तैर सकती ह ।

बेटी सब कुछ हो सकती ह लेकिन खेती नही कर सकती । म किसान बनूगा । चिलचिलाती धूप में खेतो में हल जोतना, बीज बोना, रात रात भर जाग कर खेतो की रखवाली करना । और फिर अनाज को गाडियो में लाद कर मण्डी ले जाना यह सब एक मद का बूता है । अपन देश में अन्न की कमी को दूर करने में मेरा एक सजग कदम होगा ।

हर बच्चा जो इस देश म जन्म लेता ह वह यही सोच कर पैदा किया जाता ह । और हम कहाँ से कहाँ पहुँच गये ह !

मैं आप की सूरत हूँ । आप की तरह मोटी-मोटी काली आँखें, आप जसा मुँह आप सा माथा, आप के जसी उँगलियाँ—कोमल और नरम । आप की हँसी निश्छल और बेरोक । आप के हर अरमान आप के हर सपने का रूप ले कर मैं आ रहा हूँ ।

आप के नाम को पीढ़ी दर पीढ़ी चलाने के लिए।

तू फिर भावुक हो रहा है! नहीं, मेरे बच्चे तुझे यह शोभा नहीं देता। सोच तो सही कि तू किस बाप का बेटा है? तुझे इस तरह भावुक नहीं होना चाहिए।

क्या मैं स्वयं भावुक हो रहा हूँ? मेरी आवाज़ भर्रा सी रही है। मेरा गला डूबा सा जा रहा है। नहीं तो मेरी पलकों से आँसू ढुलक रहे हैं। नहीं तो, नहीं तो!

मैं अपनेआप को तेरे अन्दर देख रहा हूँ? क्यों कि तू मेरे अंग का अंग है, मेरे लहू का लहू। मेरे कलेजे का टुकड़ा, मेरी जान की जान।

नहीं नहीं नहीं मेरे लाडले यह सब व्यर्थ बेकार की बात है। वह देख! सामने कोठी के गेट में एक मोटर आयी है। अब समय हो गया। हम फिर मिलेंगे। कभी फिर! किसी और नक्षत्र में। किसी और युग में। जहाँ इस तरह का अभाव नहीं होगा। इस तरह की कमी नहीं होगी, इस तरह की अंधी बाट नहीं चलेगी, फिर कभी

अच्छा मेरी जान अलविदा! मोटर अब सामने पोर्च में आ चुकी है। और उस में से सफ़ेद कोट पहने हुए लेडी डॉक्टर अपना बैग उठाये ठक ठक कदम रखती तेरी अम्मी के कमरे की ओर बढ़ी जा रही है।

अब उस के कदमों की आवाज़ रुक गया है। अलविदा मेरे लाडले! तू और मेरी ओर इस तरह मत देख। खुदा हाफ़िज।

तेरा,

बदनसीब हिन्दुस्तानी बाप

●

# मेरी अब क्या करे ?

मेरी आज कल बेकार ह । कइ दिना से उस के पास कोई काम नही । हमारे घर के पिछवाडे, खुले लॉन में बठी धूप खा रही मेरी अब खुशबूदार सिगरट के कश नही लगाती । कश लगा कर, आँखें मूदे धुएँ के गोल गोल छल्ले नही बनाती, जसे पिछले से पिछले जाडों में वह करती थी । बेबी को सामने झूले पर बिठा कर, खुद बच्चा-गाडी से पीठ टेक कर बठ जाती और सिगरेट पीती रहती एक के बाद एक । मैं उस स कहता— मेरी तुम इतने सिगरट क्यों पीती हो ? और सामने से हँस कर जवाब देती— साहब ! मैं ने एक ही ऐब पाला हुआ ह । अल्ला की कसम और कोई इल्लत नही मुझ में ।' अब तो मेरी नाक झुलसाने वाली बीडी पीती ह । और अपने गुसल खाने में खडे शीशे की खिडकी में स उसे देखते हुए मेरा दम घुटने लगता ह । मेरे गले म जस गोखरू के कांटे चुभ रहे हों । बीडी मेरी सुलगा रही ह और इधर खाँसी मेरे उठ रही ह । और मैं मेरी को देखना ब द कर के दाँत साफ करने लग जाता हूँ ।

तुम मेरी का नौकर क्या नही रख लेती ? आज-कल बेचारी बकार ह ।" मैं अपनी पत्नी स सिफारिश करता हूँ और वह मुझे सामने से घूर घूर कर देखने लगती ह । मेरी समझ में कुछ नही आता । ' मैं कहता हूँ कि तुम इस आया को नौकर क्यों नही रख लेती ? ' मैं फिर अपनी सिफारिश दोहराता हूँ ।

"क्या मतलब ? ' और इस बार मेरा पत्नी मेरी ओर यूँ देखती ह जैसे ऊँची लम्बी सारी की सारी वह प्रश्नसूचक चिह्न बन गयी हो । और मुझे उस की झुंझलाहट का कारण पता चल जाता ह । आया को नौकर रखने का मतलब ह एक और बच्चा पदा किया जाये । और दो बच्चे हमारे पहले से हो हैं । सरकारी अफसरो की इस कालोनी में एक बच्चे वाले लोग सब से ज्यादा फ़शनेबल गिने जाते ह दो बच्चो वाले उस से कम, तीसरा बच्चा पैदा करना गँवारपन ह । तीसरे बच्चे का सोचना यूँ है *मानो कोई भरे बाज़ार में नग धडग खड़ा हो जाये । "इन को कोई और काम ही नहीं ।"* तौबा ! तौबा !!

मेरी को बेरोज़गार हुए कई महीने गुज़र गये ह । जाडा बीत गया, अब गरमी आ गयी ह । आज कल मेरी शहतूत के नीचे बठती ह । बेकार बठी आँखें मूँदे कुछ सोचती रहती ह ।

शायद मेरी को वह दिन याद आ रहे हैं, जब वह माइकल साहब के यहाँ नौकरी करती थी। प्रायः यूँ होता कि उन के अतिथि मेरी को मिसेज माइकल समझ बैठते थे और मिसेज माइकल को उन की आया। और मेरी का चेहरा लाल सुर्ख हो जाता। "नो सर।" "नो सर" कहते हुए उस के पसीने छूट पड़ते। और फिर इसी बात से चिढ़ कर मिसेज माइकल ने उसे नौकरी से निकाल दिया। कहती तो चाहे यही थी—मेरी बच्ची बड़ी हो गयी है, लेकिन मेरी को पता था कि भीतर से किस बात का उसे रंज है।

या फिर वह दिन जब वह सरदारों के यहाँ नौकर थी। एक दिन बच्चे को गोद में लिये वह बाहर बरामदे में निकली। सामने कोई मुलाकाती बैठा सरदार साहब की प्रतीक्षा कर रहा था। मेरी को देख कर आदर सहित उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़ कर 'सत श्री अकाल' की। मेरी पानी पानी हो गयी। सामने पोर्च में जहाज जितनी बड़ी उस की मोटर खड़ी थी। सरदारों के तो प्रायः यूँ हो जाता था। प्रायः उन के मेहमान मेरी को घर की मालकिन समझ लेते थे। और उन के घर मेहमान भी कितने आते थे। एक बार एक ठेकेदार ने मेरी की मुट्ठी में सोने के कंगन ला रखे। मेरी बच्चे को बाहर टहला रही थी। मेरी के कानों से धुआँ निकल गया। मेरी ने उसे बताया—सरदारनी जी गुरुद्वारे गयी हुई हैं। आज संक्रांति जो है। तौबा! तौबा!! कहाँ सरदारनी और कहाँ मेरी। सरदारनी में से तो तीन मेरियाँ निकल आयें। पर मेरी को सरदारनी बनना बड़ा अच्छा लगता था। मेरी को सरदारनी कहलाना बड़ा अच्छा लगता था। चाहे पल के पल को जब कोई सरदारनी कह कर उसे बुलाता उस के रोंगटे खड़े हो जाते।

और फिर शेख साहब के यहाँ तो एक बार हद ही हो गयी। उस रात वह बहुत देर कर के लौटे थे। शराब में धुत। मोटर अपने गराज में रख लड़खड़ाते कदमों से वह कोठी की ओर आये। एक बरामदे में मेरी की चारपाई थी उस के पास बेबी का पालना था। दूसरी ओर बरामदे में बेगम साहब और शेख साहब के पलंग बिछे थे। पता नहीं वह रात ज्यादा अँधेरी थी पता नहीं उन्होंने दारू ज्यादा पी लिया था लड़खड़ाते कदमों से शेख साहब आये और उन्होंने सोयी पड़ी मेरी का मुँह चूम कर लिया। मुँह चूम कर उन्हें पता चला कि वे क्या कर बैठे थे। और तब जब वह अन्दर कपड़े बदलने के लिए चले गये। कपड़े बदल कर अपने पलंग पर जा लेटे। दो मिनट और उन के खर्राटों की आवाज आने लगी। उस सारी रात मेरी को नींद नहीं आयी। और शेख साहब मजे से सोते रहे। अगली सुबह बेगम ने मेरी को नौकरी से निकाल दिया। न जाने औरत को कैसे पता चल जाता है जब उस का मर्द उस का हक मारता है। चुपचाप मेरी अपनी पगार ले कर उन के घर से निकल आयी। एक बार भी उस ने कहा नहीं कि इस में उस का कोई कसूर नहीं। उन दिनों मेरी को नौकरी की क्या परवाह थी। एक नौकरी छोड़ता दूसरी उस की राह देख रही होती। उन दिनों बच्चे

पदा करना वडाई समझी जाती थी। जितना वडा खानदान, जितनी ज्यादा आमदनी, उतने ज्यादा बच्चे।

शहतूत के नीचे बठी मेरी सोच रही ह कि अब तो बच्चे पदा करने का रिवाज हो नही रहा। पिछले तीन साला से सरकारी अफसरो की इस कालोनी में एक बच्चा भी पैदा नहीं हुआ। इन घरा में चार अफ्सर कम वेतन वाला कोई रह नही सकता और जब तक किसी को इतनी तनख्वाह होती ह एक आधा बच्चा जो उन्हें पैदा करना होता ह वह हो चुका होता ह। इस कालोनी में तो अब स्कूल की बसें आती हैं। लडके लडकिया सुबह शाम लान में क्रिकेट खेलते रहते ह। कहीं कोई बच्चा गाडी नजर नहीं आती। बच्चा गाडी वालो का तो व्यापार ही ठप्प हो गया होगा।

जसे मेरी का अपना हो गया ह। आज कितने महीने हो गये हैं—मेरी को बेकार बठे हुए। बेकार बठ कर मक्खिया मारती रहती ह।

तौबा तौबा, मेरी का कितना नखरा होता था। कैसे बालों में गाठ लगा कर जूडा बनाती थी और फिर बाल्टिश्त भर पूछ वसी की वैसी छोड देती। सुबह शाम ताजा खिली कली तोड कर जूड में खोंस लेती। जिन दिना फूल न होते फूल वाले पौधों के पत्ते ही बाला में सजा लेती। अफसरा की पत्निया मेरी के घन सुनहरी बाला का जूडा देखती और उन के मुह में पानी भर आता। मन ही मन में सोचती—जरूर मेरी की मा ने किसी फिरगी की नौकरी की होगी। जभी तो मेरी का कद इतना ऊँचा ह। कालोनी की औरतें उसे घोडा कह कर पुकारती था। कहता फिरें उन के मर्दों की तो एक बार मेरी का देख कर आँखें फटी की फटी रह जाती थी। धोबी के धुले हुए कपडे पहनती साडी हो चाहे सलवार कमीज। नौकरी की उस को पहली शत यह होती—सुबह बेड-टी जरूर मिले और धोबी के धुले कपडे पहनने के लिए। मेरी के नाक की कील झिलमिल झिलमिल करती रहती।

सारी उम्र अफसरों के बच्चों को पालती रही मेरी का नौकरो के क्वाटरा की ओर देखने का जी नही चाहता था। सारी उम्र यार लोग आहें भरते रहे। मेरी ने किसी को अपने पास फटकने नहीं दिया। नौकर तो नौकर, मेरी तो छोटे मोटे अफसरा की बीवियों को पल्ले नही बाँधती थी।

उस दिन तो मेरी ने हद ही कर दी। उन दिनों मेरा काहलियों के यहाँ नौकर थी। एक दिन रात का उन की कोठी से मिसेज काहली की चीखा की आवाज सुनाई दी। अडोस-पडोस वाले जाग कर अपने अपने बरामदा में खडे हो गये। साफ़ लग रहा था कि मिस्टर काहली अपनी पत्नी को पीट रहे थे। लेकिन इतनी रात गये पराये घर में जाने की किसी की हिम्मत नही पड रही थी। और फिर लोगा ने देखा कि एक मोटर आयी। यू लगता था कि मिसेज काहली ने टेलीफ़ोन कर के अपने भाई को बुला लिया था और वह आ कर बहन को अपने घर ले गया। गोदी की बच्ची भी मिसेज काहली अपने साथ ले गयी। लेकिन उस से वडा को पीछे छोड गयी।

सुबह सदा नियम के अनुसार मेरी बच्ची को उँगली से लगाए, पार्क में लिवाने ले गयी। लौट कर के लौटी तो किसी पड़ोसिन ने उस से पूछा—

"आया! तुम्हारे यहाँ रात को क्या हुआ था ?"

"कुछ भी तो नहीं।'

'क्यों रात को तेरे साहब ने तेरी बीबी को नहीं पीटा ?"

'नहीं तो।"

"क्यों झूठ बोलती हो आया ?' एक और पड़ोसिन बोल उठी।

और मरी न उस का मुँह सिर नाप लिया। कहने लगी—'यूँ ही मेम साहब सोयी सोयी बेहोश हो गयी थी। आज-कल उन की तबियत ठीक नहीं रहता।'

और मिसेज कोहली अपने भाई के घर बैठी टकोरें करवा रही थी।

दहलीज के नीचे बैठी मरी सोची है, यूँ ही इन बेहूदा लोगों के लिए वह अपनी जान खपाती रही। न मिसेज कोहली ने अब कभी बच्चे का सोचा है न उस की पड़ोसिनों ने, फ़ैशनों की मारी, अपने सजने सँवरने से ही इन्हें फ़ुरसत नहीं मिलती। यूँ ही इन लोगों के लिए उस ने अपनी ज़िन्दगी बरबाद कर ली।

●

# कलियों पर क्या बीती

मुझे वह बहुत अच्छी लग रही थी। हलकी गरम धूप था। गरमियों में पहाडी शहर की ठण्ड। कोई ग्यारह बजे होंगे। कोठी से जरा परे, नीचे एक अकेली जगह पर हम एक टीले की ओट में बठे थे। टीला हवा रोकता था। बायीं ओर जगल में स यख-ठण्डा हवा बह रही थी। दायीं ओर, पल-पल उभर रहे सूरज की धूप उस के गन्दमी जसे रग के साथ खेल रही थी। जब इस तरह धूप उस के मुँह पर, माथे पर, सुनहरी बाहो पर आ कर पडती, मुझे लगता जसे वह किसी परी कथा की राजकुमारी हो, समूची सोने की बनी हुई। कोई उसे हाथ लगाये तो वह लाप हो जायेगी। और जब मुझे इस का ध्यान आता, मैं सिर से ले कर पाँव तक काँप जाता। उस की ओर आँख उठा कर न देखता। जहाँ तक सम्भव होता उस से दूर दूर रहता। अपनेआप को बचा-बचा कर रखता।

उस सुबह, मैं बठा 'यामा दि पिट" पढ रहा था। इस तरह के उपन्यास पढना उन दिनों मुझ बडा अच्छा लगता था। कही न कही से इस तरह की कोई किताब म ढूँढ लाता और हम लुक छिप कर, बारी बारी से पढते रहत। पर मरा मन आज उपन्यास में नही लग रहा था। पिछली रात उस ने इस उपन्यास को पढा था। सारी रात वह पढती रही थी। सुबह उस की आखों में नीद भर रही थी। मुझे निद्रा स भरी आँखो में वह बडी अच्छी लगती और मैं बार बार उस की ओर देखने लग जाता। गेहू की बाली की मस्त मस्त खुशबू। मुझे लगता कि उपन्यास का जो हिस्सा पिछली रात उस ने पढा था मानो मेरा पढा हुआ सा हो। उपन्यास उस ने पढा था और कहानी जानी-पहचानी मुझे लग रही थी। अजीब बात थी। और मेरा उपन्यास में मन नही लग रहा था। मैं बार बार उस की ओर देखने लग जाता। चम्पा की लता सपनो के खुमार में चुप चुप। मैं उस से हमेशा कहता तुम इस तरह खामोश न बठा करो। इस तरह होठ सी कर बठी मुझे लगता जसे उलाहने दे रही हो शिकायतें कर रही हा। मेरा क्या कसूर था ? और मेरे गुनाहों की सघन काली घटा मेरी पलको के सामने तरने लग जाती। मेरे, मेरे बाप के, मेरे बाप के बाप के बाप ! फिर म एकदम उठा, सामने लगे गुलाब की एक अधखिली कली तोड कर म ने उसे भेंट की और फिर वसे का वैसा उपन्यास पढने लग गया। वे पन्ने जो पिछली रात उस ने पढे थे। यामा दि पिट। मैं

गयी, अनछुई किताब को पढ़ सकता हूँ। या फिर किसी उस की पहले पढ़ी किताब, जिस का अध्ययन मुझे पुस्तक से अधिक प्रिय हो। कभी किसी पन्ने पर लगी अँगूठे की छाप, मुझे लगता है, जसे किसी के खूबसूरत हाथ में मैं पड़ाव-पड़ाव गुजरता चला जा रहा हूँ। और भीनी भीनी खुशबू गुलाब की कली का एक टुकड़ा मरे होंठों पर आ लगा। मैं ने उपन्यास से निगाह हटा कर उस की ओर देखा अँगूठे के पास वाली उंगली की पोर पर कली का एक और टुकड़ा रख कर वह अपने अँगूठे के नाखून से झटक रही थी, मैं ने सिर उठाया और कली का वह टुकड़ा मेरे माथे पर आ लगा। वह चुपचाप एक अजीब खेल खेल रही थी। गुलाब की कली का एक टुकड़ा लेती और अंगूठे के पास वाली उँगली के पोर पर झटक कर मेरी ओर फेंक देती। कभी टुकड़ा मुझे आ लगता कभी मेरे आगे-पीछे गिर जाता। गुलाब की कली फिर गुलाब के पत्ते मरोड कर उन की गोलियाँ बना लेती और फिर गुलाब की डण्डी के दाँतों से काटे टुकड़े। कितनी देर तक वह यह खेल खेलती रही। और मैं उपन्यास पढ़ता रहा 'मामा दि पिट'। कली तोड़ते हुए गुलाब का एक काँटा मुझे चुभा था। और मेरा पोर अभी तक दर्द से कसक रहा था।

●

मुझे वह बहुत अच्छी लग रही थी। मैं ने उसे अपने कमरे में बुलाया था ताकि उस को डाँटू पर वह तो मुझे अच्छी लगने लग गयी थी। मोहब्बत कर रही लड़की। मोहब्बत में औरत पर एक अजीब निखार आ जाता है। और मैं कभी उस के मुँह की ओर देखता कभी सामने तिपाई पर रखे गुलदान की ओर। चालाक माली लोगों से कहता था—हमारा अफसर बड़ा भोला है। उस के कमरे में हर रोज सवेरे ताजा खिले फूलों की कलियाँ लग जायें वह समझता है कि सारा बगीचा भरपूर खिला हुआ है। फिर चाहे माली सारा दिन ताड़ी पी कर पड़ा रहे। लोगों ने फूलों से मेरी मोहब्बत का प्राय अनुचित लाभ उठाया है। और मैं एकदम सावधान हो गया। मैं ने तो उस को डाँटने के लिए बुलाया था। कोई बात भी हुई। कई दिनों से उस की शिकायतें मेरे कानों में पड़ रही थी। माना वह ईसाई थी पर थी तो आदिवासी। आदिवासी लोग बड़े जालिम होते हैं। अगर कहीं उन को पता चल जाये कि उन की कोई लड़की किसी ब्राह्मण लड़के से मुँह काला कराने को फिरती है तो वे तो तीर कमान ले कर सारे के सारे शहर को तहस-नहस कर डालेंगे। हर रोज दफ्तर में जब उस का काम खत्म होता बाहर लड़का उस की बाट देख रहा होता, और दोनों कभी किसी ओर कभी *किसी ओर निकल जाते।* कभी रिक्शा में कभी पैदल। इस शहर की भद्दी बालिश्त भर रिक्शा की सीटें। जवान लड़का लड़की बैठें तो उन का ईमान धर्म कभी कायम रह सकता है। फिर बाहर चाहे कोई बेशक खाक फाँके मेरे दफ्तर में इस तरह की गन्दगी फैलाने का किसी को कोई हक्क नहीं था। मैं सोचता, अगर वह न समझी तो मैं उस चुडल को नौकरी से निकाल दूँगा। पर वह तो मुझे अच्छी लग रही थी। मेरे

सामने खडी, स्याह काले बाल, काला रग, एक अकथनीय बेफिक्री आँखें, दिन रात दिन रात लोक गीत गा गा कर मधुराये होंठ, आदिवासी नृत्य नाच नाच कर तिरछाये अग लम्बो ऊँची, जसे किसी ने चन्दन के शहतीर में से गढ कर निकाली हो। नही, नही, नही! म ने एकदम अपनेआप को सभाला। और अपनी आँखो में क्रोध भर कर एक ही साँस में उस पर बरसने लग गया—यह दफ्तर ह? कजरखाना नही? और पता नही क्या का क्या बक गया। मैं उस को डाटता जा रहा था—कभी अँगरेजी में, कभी हिन्दी में, मैं उस को डाँटता जा रहा था। और वह सन्थाल लडकी बिट बिट मेरी ओर हक्की-बक्की देख रही थी। और फिर वह फूट-फूट कर रोने लगी। जसे आँसुओ की धार वह निकली हो। रोती जाये, रोती जाये। एकदम डाटना बन्द कर के मैं उस की ओर देख रहा था वह लडकी क्से छल छल आँसू रा रही थी। मैं ने उसे कुरसी पर बठ जाने का इशारा किया। वह कुरसी पर बठ गयी, पर वह रोये जा रही थी। फिर मैं ने उसे प्यार से समझाना शुरू किया। वह और भी हिचकियाँ भर कर रोने लग गयी। मैं खामोश हो गया। कितनी देर बठी वह रोती रहा। जैसे कोई बुलबुल बिल बिला रही हो। छल छल आँसू बहा रही वह मुझे और अच्छी लग रही थी। रो रो कर चुप हुई वह मुझे और अच्छी लग रही थी। मेरे साथ इकरार कर रही कि आगे से वह कोई ऐसी बात नही करेगी जिस से हमारे दफ्तर को बदनामी हो, वह मुझे और भी अच्छी लग रही थी। और इस से पूव कि वह मेरे कमरे से बाहर गयी, मैं अपनी कुरसी से उठा और सामने गुलदान में से एक अत्यन्त सुन्दर कली चुन कर उसे भेंट की, शायद उस के रूप की प्रशसा म, शायद इस लिए कि मझे विश्वास हो गया था कि अब मेरे दफ्तर की नेकनामी को कोई खतरा नही। और फिर मैं इस किस्से को बिलकुल भूल गया दफ्तर में इतना काम होता था। कभी दिल्ली से मशवरा। कभी प्रान्तीय सरकार से परामश। उन दिनो चीन ने हम पर हमला किया हुआ था। हर रोज सवेरे दफ्तर आता, अँधेरा होने पर कही मेरी छुट्टी होती। हमेशा की तरह उस दिन भी शाम को अँधेरा हो गया था जब मैं दफ्तर से निकला। मेरी मोटर बाहर गेट से निकल कर मोड मुड रही थी कि मोटर की रोशनी अँधेरी सडक पर सामने पेड के नीचे पडी। पेड के नीचे हमारी सन्थाल लडकी अपने प्रेमी ब्राह्मण लडके के साथ खडी थी। और गदन घुमा कर अपने बालो में खोंसे फूल की सुन्दर कली उसे दिखा रही थी। नौजवान प्रेमी ने कली को देखा सन्थाल लडकी के सुन्दर जूडे को देखा और अथाह प्यार में उस ने बाला को उस की कली को अपने आलिंगन में ले लिया। इतने में मेरी मोटर आगे निकल गयी।

●

मुझे वह बहुत अच्छी लग रही थी। गरमियो के दिन थे। चिलचिलाती धूप थी, जब कौवे की आँख निकलती ह। हमारे घर क बाहर फट फट करता एक स्कूटर आ कर रुका। दरवाज़ा खटखटाया और वे हमारे कमरे मे थे, पति-पत्नी हसते हुए

प्यार मचाते हुए। जब जब भी ये लोग आते हमारे घर ऐसे घर में जैसे एक भूचाल आ जाता। तेज धूप में आने से उस का मुंह लाल सुर्ख हो रहा था। स्कूटर में पीछे बैठ कर आने से उस के बाल बिखर रहे थे। हमेशा स्कूटर में पीछे बैठ कर जब वह आती, उस के बाल इस तरह बिखर जाते और इस तरह बिखरे हुए बालों में मुझे वह बड़ी अच्छी लगती। पर आज तो एक अजीब हुस्न उस पर निखर रहा था। पति के नीचे जा कर खड़ी कनपटियों से नीचे तो चू रहा पसीना सुखाने के लिए अपनी साड़ी के पल्ले से अपना मुंह को झल रही थी। उस का कद, उस का बुत उस का जोबन, तोबा! तोबा! उस की ओर देखा न जाता। पता नहीं क्यों कोई औरत किसी मर्द को इतनी सुन्दर लगने लगती है कि प्यार जान तक दे दे। अजीब बात है मुझे औरत बीमार हो तो अच्छी लगने लगती है परेशान हो तो अच्छी लगने लगती है, जरूरतमन्द हो तो अच्छी लगने लगती है। और अब रजनी अच्छी लग रही थी क्योंकि उस का पसीना सूख नहीं रहा था। कड़कती दोपहरी में आयी उस का पसीना इस तरह चू रहा था जैसे कोई फव्वारे के नीचे नहा कर निकला हो। मैं घर में अकेला था। बाकी सब लोग पहाड़ पर गये थे। सुबह से अकेला पड़ा-पड़ा पढ़ रहा तीन बार घण्टी बजा कर मैं नौकर से पूछ चुका था कि शाम को हमारे यहाँ क्या पक रहा है। और फिर वे आ गये। बाहर स्कूटर रुका तो मुझे लगा कि वे होंगे। और वही थे। उस के पति का इधर से गुजरते हुए याद आया कि उस को मुझ से कोई सिफ़ारिश करवानी है। और बिना इत्तला किये वे आ गये थे। बार बार वह मुझ से माफी माँगने लग जाती। कोई बात नहीं थी, आखिर मैं अकेला ही तो था। अच्छा हुआ कि वे आ गये, मेरा दिल कुछ देर के लिए बहल गया था। उस के पति ने झिझकते झिझकते सिफारिश की बात छेड़ी। इतनी सुन्दर पत्नी के मर्द को कोई कैसे इनकार कर सकता है। और मैं ने उस से कहा पास के कमरे में टेलीफोन कर के देखें कि उस का अफसर घर पर ही है या नहीं। मैं शाम को उस के यहाँ चला जाऊंगा। उस का पति स्टडी में टेलीफोन करने गया और वह मेरे सामने खड़ी थी। ऊँची लम्बी जैसे लचक लचक जा रही हो। उस की रेशमी साड़ी का पल्लू उस की छातियों पर सटा हुआ, घूम कर सेंटर-टेबल पर रखे एक मुगलोत की तसवीर देख रहा मुझे वह अत्यन्त सुन्दर लगा और मैं ने सामने गुलदान में से एक अत्यन्त प्यारी कली चुन कर उस को भेंट की। उस की साड़ी से मिलता हुआ—रंग! इतने में उस का पति आ गया। उस का अफसर घर पर नहीं था। उस ने सन्देश छोड़ दिया था। जब वह घर आयेगा तो मुझे टेलीफोन कर लेगा। गुलाब की कली हाथ में पकड़ हुए मुझे लगा जैसे रजनी परेशान परेशान हो। कभी नीचे फर्श की ओर देखती, कभी फूल की ओर देखती। एकदम खामोश हो गयी थी। उस के हाथों पर, माथे पर फिर पसीना आ गया था। पंखा पूरी रफ्तार से चल रहा था पर उस के हाथों और उस के गालों पर जैसे पसीने की धारा फूट रही हो। और फिर वे चले दिये। मैं ने जो यह सोचा था कि इतनी

सुन्दर फूल की कली ले कर वह खिल उठेगी, झट अपने अंजुलि जितने बडे, भारी भारी जूडे में खोस लेगी मैं निराश हो रहा था। मैं सडक तक उन्हें छोडने के लिए निकला किसी गहरी सोच में जैसे वह डूब गयी हो। रजनी गिन गिन कर कदम रख रही थी। जैसे किसी गहरे असमजस में हो। मैं और परेशान हो रहा था। और फिर वे अपने स्कूटर तक पहुँच गये। मैं उन को विदा कर रहा था। अजीब औरत है, मेरा दिल सोच रहा था। और फिर मैं ने देखा, वह आगे बढी और उस ने वह फूल की अत्यन्त सुन्दर कली अपने पति के कोट क कालर में पिरो दी, और स्वय उछल कर उस के स्कूटर पर जा बैठी। अपने पति के कन्धे पर उस ने हाथ रखा और स्कूटर यह जा, वह जा, हो गया। सहसा अपने मुह का स्वाद मुझे फीका फीका लगने लगा। इस बात को हुए कई दिन बीत गये ह, पर अब भी जब मुझे गरमियो की उस बादन्दोपहर की याद आती ह मेरे मुँह का जायका कडवा कडवा हो जाता ह।

●

# इस से तो

"इस से तो ..."

मुन्नी का पिता मुंह ही मुंह में बुड़बुड़ाता है।

'मुन्नी !'

'मुन्नी बेटी !'

'मुन्ना !'

मुंह में दातुन दबाये मथुराप्रसाद बाहर से आवाजें दे रहा है। अभी मुंह अंधेरा है। अभी अखबार वाला अखबार डाल कर नहीं गया। अभी ग्वाले की साइकिल की घण्टी नहीं बजी। अभी सुबह होने में देर है। आज मथुराप्रसाद की आंख शायद जल्दी खुल गयी है।

बच्ची अभी सो कर नहीं उठी। पर इस में क्या है! बच्ची तो हर रोज अभी सो ही रही होती है, जब पड़ोसी महाशय आ कर उसे पुकारने लग जाता है। हर रोज जल्दी जल्दी मुन्नी की मां बच्ची को उठा कर तयार करती और फिर अकल प्रसाद की गोद में थमा आती। अकसर भीतर आ कर मां फिर सो जाती।

मथुराप्रसाद की आदत सुबह उठने की है। सुबह उठता और सब से पहले मुन्नी को आवाजें देने लग जाता। अभी अपने बिस्तर में होता और 'मुन्नी' 'मुन्नी' की रट लग जाती। कब फिर वह बाहर जाता कब उस की आवाज मुन्नी की मां के कानों पड़ती कब वह मुन्नी को उठाती तयार करती मुन्नी अकल की गोद में पहुँचती तब कहीं जा कर वह आवाजें लगाना बन्द करता। और फिर मुहल्ले वालों को मथुरा प्रसाद के खिल खिल हंसने की आवाज सुनाई देती रहती मुन्नी के किलकारियां भरने की आवाज आती रहती। कभी मुन्नी मथुराप्रसाद के कंधे पर चढ़ी हुई है। कभी मुन्नी मथुराप्रसाद के बालों से खेल रही है। कभी मथुराप्रसाद मुन्नी के मुंह में अंगुलियां डाल कर उस के छोटे छोटे दांतों से अपनेआप को कटवा रहा है। कभी मुन्नी को नहलाया जा रहा है। कभी मुन्नी को सजाया जा रहा है। कभी मुन्नी को खिलाया जा रहा है। मथुराप्रसाद की स्त्री अपने पति की खुशी से खुश, सारा दिन मुन्नी के चाव पूरे करती रहती।

मथुराप्रसाद के घर कोई बच्चा नहीं। पहले तो कई साल से इन्तजार करते

रहे। उस की अपनी सेहत अच्छी भली थी, उस की पत्नी की सेहत भली चगी थी, पर उन के कोई बच्चा नही होता था। बाट देख-देख कर उन्होंने इलाज करवाना शुरू किया। डॉक्टर, हकीम, वैद्य जादू टोने करने वाले, हर हीला कर चुके, पर मथुरा-प्रसाद के घर सन्तान नही हुई। कोई कहता फलां दरगाह पर जाओ, कोई कहता अमुक स्थान पर जा कर स्नान करो, कोई कहता यह व्रत रखो श्रीमती मथुराप्रसाद को जो कुछ कोई बताता वही करती, पर उस के पेट में बच्चा नही आया। मथुरा प्रसाद खुराक खा खा कर हटता तो कसरत करने लग जाता, इस से निपटता तो ताक़त की गोलियाँ फाँकता रहता। और सब कुछ था अपना अलग का व्यापार, नौकर-चाकर, मोटर टेलीफोन पर उन के आँगन में बच्चा नही खेलता था।

औलाद की तलाश में मथुराप्रसाद का साथी शेख खुदाबख्श था। छावनी में माल रोड पर दोनों की दूकानें आमने सामने थी। दोना के यहाँ कोई बेटी बटा नहीं हुआ। शेख खुदाबख्श ग़लीचों का व्यापार करता था। मथुराप्रसाद की बजाजी की दूकान थी। शेख उर्दू के अखबार में कोई इश्तहार देखता तो दौडता हुआ मथुरा प्रसाद के पास आता। मथुराप्रसाद हिन्दी के समाचार-पत्रो के विज्ञापन पढ कर शेख खुदाबख्श को सुनाता रहता। दिन में दूकानो पर उन का यही दस्तूर होता, सुबह शाम घर में उन का यही ढग होता। एक ही मोहल्ले में तो वे रहते थे। चार घर छोड कर शेख खुदाबख्श का मकान था।

दो साल चार साल, दस साल, आखिर हार कर खुदाबख्श ने और ब्याह रचा लिया। उस की पहली बीवी ने माथा पीट पीट कर बुरा हाल कर लिया। गली, मोहल्ले में बडी चर्चा हुई। जो कोई सुनता, खुदाबख्श का बुरा भला कहता। जिस दिन वह विवाह कर के दूसरी बीवी को लाया, उस की पहली से सहानुभूति रखने वाली मोहल्ले की स्त्रिया ने न कुछ खाया न कुछ पिया।

और फिर उन्होंने शेख खुदाबख्श का उस मोहल्ले में रहना दूभर कर दिया। मोहल्ले की हर औरत उस से पर्दा करने लगी। उस की नयी ब्याही बीवी को कोई न बुलाता। शेख खुदाबख्श से लेन देन, उन के घर आना जाना सब ने बन्द कर दिया। तग आ कर शेख उस मोहल्ले से चला गया। उस का अपना मकान खाली पडा था और वह कही और जा कर किराये पर रहने लग गया।

मोहल्ले से चला गया था, पर फिर भी जब कभी उस का जिक्र आ जाता तो मोहल्ले की औरतें और मर्द खुदाबख्श के दूसरे ब्याह की निन्दा करते रहते। और फिर जब उस के घर नयी आयी बीवी की कोख से बच्चे पैदा होने लगे, हर बार जब उन के बच्चा होता, इस मोहल्लेवालियों को जसे और आग लग जाती।

खुदाबख्श का सब से ज्यादा ठट्ठा मथुराप्रसाद करता। हर रोज कोई न कोई उस की कहानी ला सुनाता। आज खुदाबख्श लेडी डॉक्टर को ताँगे में बठा कर घर ले जा रहा था। आज खुदाबख्श फीडिंग बाटल खरीद रहा था। आज खुदाबख्श

झुलसने का मोल कर रहा था।

खुदाबख्श के दूसरे ब्याह के बाद लोगो के दिलो में मथुराप्रसाद के लिए इज्जत और बढ गयी। हर कोई उस की शराफत की, सज्जनता की कहानियां सुनाता रहता। मोहल्ले की आँख मथुराप्रसाद को भलामानस और मथुराप्रसाद की पत्नी को देवी कहते नही अघाती।

हर कोई अपने बच्चे को मथुराप्रसाद के घर भेजने को राजी था। हर माँ अपने बच्चे के साथ मथुराप्रसाद को खेलते हुए देख कर खुश होती। जैसे जसे समय बीतता गया खुद अपने बच्चे के लिए हर हीला कर के हार चुका मथुराप्रसाद पडोसियो के बच्चो से अपना मन बहलाने लग गया। सुबह शाम किसी न किसी बच्चे को गोद में उठाये, उगली पकडे हँसता-खेलता रहता।

पर पिछले कुछ महीनो से पडोसियो की बच्ची मुन्नी से मथुराप्रसाद का मेल मिलाप कुछ ज्यादा बढ गया था। जसे मुन्नी का दीवाना हो। धीरे धीरे उस ने मोहल्ले के दूसरे बच्चो को बुलाना बन्द कर दिया। बाहर गली म खडा मुन्नी को आवाजें लगा रहा होता और पास से ग्राम में पडे सर के लिए जा रहे किसी और बच्चे की ओर पलट कर न देखता। कई बार मुन्नी अपनी मा के साथ बाहर गयी होती, निराश हो कर अपने घर को लौटते हुए रास्ते में यदि कोई और बच्चा अकल' को आवाज लगाता तो मथुराप्रसाद सुनी अनसुनी कर देता।

मुन्नी छह महीने की हुई, मुन्नी साल भर की हुई, मुन्नी डेढ साल की हो गयी। अब दो साल की होन वाली थी। मथुराप्रसाद की जसे मुन्नी में जान हो, दिन रात उस को गले से लगाये रहता।

बाजार में कोई नया खिलौना आता चाहे कितना ही मँहगा हो मथुराप्रसाद मुन्नी के लिए खरीद लाता। छुट्टी वाले दिन मोहल्ले में जितनी बार आइसक्रीम वाला चक्कर काटता मुन्नी खाये या न खाये मथुराप्रसाद उस के लिए आइसक्रीम जरूर खरीदता। और बच्चे पास खडे मुह देखते रहते। और मुन्नी आईसक्रीम के दो चार नवाले ले कर नाली में फेंक देती।

उस साल मुन्नी का जन्म दिन मथुराप्रसाद ने मनाया। रोशनी की गयी दावत हुई। बहुत बच्चों को बुला कर कठपुतली का तमाशा दिखाया गया। मुन्नी को परियों जस कपड पहनाये गय। उस को कितने ही तोहफे मिले। मथुराप्रसाद ने उस शाम सैकडों रुपये बहा दिय। गली में जितने भिखारी आय, उन को सन्तुष्ट कर के लौटाया गया।

मथुराप्रसाद का मुन्नी से इतना मेल-जोल कुछ समय बाद मोहल्ले वालों को अजीब अजीब लगने लगा। जब मुन्नी मथुराप्रसाद के यहाँ से लौटती उस के हाथ में कोई न कोई चीज होती। हर समय कुछ न कुछ चरती रहती, ला-ला कर अपनी माँ को दिखाती रहती कभी केक, कभी पेस्ट्री कभी कुछ कभी कुछ।

सारे मोहल्ले में मुनी का प्रेम सब से बढ़िया थी, प्रेम अकल मथुराप्रसाद ने खरीदी थी। सारे मोहल्ले में मुनी की ट्राइसिकल सब से सुन्दर थी। ट्राइसिकल अकल मथुराप्रसाद ने ला कर दी थी। दिन में तीन-तीन बार मुनी फ्राक बदलती। बजाजी की दूकान मथुराप्रसाद की अपनी थी।

अगर मथुराप्रसाद मन्दिर जाता, मुनी उस के साथ होती। अगर मथुराप्रसाद बाजार जाता, मुनी मोटर में पहले बैठती। अगर मथुराप्रसाद किसी दोस्त रिश्तेदार से मिलने जाता, मुनी का साथ उस से ज्यों का त्यों बना रहता।

प्राय दोपहर को मुनी सोती थी। उस दिन छुट्टी थी। बार बार मथुराप्रसाद आ कर जैसे कुरेद जाता, 'सो रही है? सोने दो।" कुछ ही क्षण गुजरे कि फिर आ पहुँचा "मुनी सो रही है? जगाना नही, खफा हो जायेगी।' कोई दस मिनट बीते तो दूसरी ओर खिड़की में खड़ा था, 'मोती सोती हँस रही है। सोयी रहने दो। कोई सपना देख रही होगी।" मुनी की मा कघी कर रही थी, घने, घुँघराले उस के बाल, जिस दिन सिर धोती, बालों को सुल्झाती खीझने लगती। "उठी नही अभी?" चौथी बार अब फिर मथुराप्रसाद परदा उठा कर पूछ रहा था, मुनी की मा खिलखिला कर हँसने लगी। इतने में मुनी उठ गयी और अकल मथुराप्रसाद उसे अपने साथ बाहर ले गया।

कितनी ही देर कघी हाथ में पकड़े बाल बसे कन्धों पर बिखेरे हुए, मुनी की माँ सोचती रही क्यों उन का पड़ोसी मुनी से इतना प्यार करता है। आखिर मोहल्ले में और बच्चे भी तो है। मुनी में जैसे उस की जान हो। क्यों? आखिर क्यों?

और मुनी की माँ को बचपन में सुनी कहानी याद आने लगी। एक फरिश्ता आता है। और माओं के पलँगों पर बच्चे छोड़ जाता है। मुनी की मा सोचती, पता नही मुनी पड़ोसियों की बच्ची थी गलती से कोई उन को उस के घर छोड़ गया है। मथुरा प्रसाद तो मुनी को उस के अपने पिता से कही ज्यादा प्यार करता था। और मुनी की माँ कितनी देर इसी तरह विचारों में डूबी हुई बैठी रही। उस के बाल उस के मुँह पर गिर रहे थे।

गरमियों के दिन थे। एक शाम मुन्नी की माँ ने देखा, सामने अपने घर के लान में मथुराप्रसाद लेटा हुआ था। और मुनी उस के पेट पर बैठी हँस रही थी। बार बार मथुराप्रसाद के सीने पर घूसे मारती और हँसती जाती। कुछ देर बाद मथुरा प्रसाद को घोड़ा बना कर मुनी उस की पीठ पर चढ़ गयी और मथुराप्रसाद चौपाया की तरह लान में उस को सैर करवाने लगा। फिर मुनी मथुराप्रसाद के कन्धों पर बैठ गयी और दीवार से लगे बोगन विल्ला के फूलों के गुच्छे तोड़ने लग गयी। चुपके से पीछे खड़ा मुनी का पिता भी यह तमाशा देख रहा है।

अन्दर मेज पर बैठे उस शाम चाय पीते हुए पति पत्नी ने एक दूसरे से कोई बात नही की। न मुनी की माँ का कोई बात सूझी, न मुन्नी के पिता का जी चाहा

इस से तो

सोच रही थी कि शायद उस का पति अपने बच्चे को प्यार ही नही करता ह। और एक मथुराप्रसाद ह जो परायी बच्ची पर जान देता है। हा, शायद यह ठीक था, उस के पति का अपनी सन्तान से कोई लगाव नही ह और बबुआइन के मुँह का स्वाद फीका फीका हो गया। कितनी देर उदास उदास वह अपने बरामदे में टहलती रही। फिर गली में टक्सी आ कर रुकी। टैक्सी में उस का पति था। बाहर सडक पर खेल रहे अपने बच्चे को भी वह टक्सी में अपने साथ बठा लाया था और उस के बच्चे का पिता सामने खडा था, अपने बच्चे का कधे पर उठाये, और बबुआइन खिलखिला कर हँस पडी। बच्चा इतना बडा हो गया था फिर भी बाप उस को कधा पर बठा लेता। वह कैसे उस के सिर को पकड कर मजे से बठ जाता था। बच्चा भी हँस रहा था, बच्चे का बाप भी हँस रहा था, बच्चे की माँ भी हँसने लग गयी।

मथुराप्रसाद की गोद में सवार मुन्नी मुह का बाजा बजा रही था। कभी मुन्नी बजाती और कभी बाजा मथुराप्रसाद के मुह में दे देती। मथुराप्रसाद वैसा का वैसा लारो से भागा बाजा होठो में दबा कर बजाने लग जाता। चौबारे की खिडकी में खडा देख रहा बबुआइन का बेटा भी भागता हुआ गया और अपना बाजा निकाल लाया। घटिया सा देसी बाजा था, पर बाजा तो था और बबुआइन का बेटा मुक़ाबले में एक ही साँस में बाजा बजाये चला जा रहा था। बजाता-बजाता जब वह थक गया, तो उस ने अपने मुह से बाजा निकाल कर पास खडे अपने पिता के मुह की ओर बढ़ाया। वह टाल गया। कुछ देर बाद बच्चा माँ की गोद में चढ बैठा और बाजा पिता के मुह में देने लगा। उस के पिता ने मुह फेर लिया। बच्चा थोडी देर और बजाता रहा। फिर शायद थक कर उस ने बाजा अपने पिता के मुह की ओर बढाया। "क्या जूठा, थूक से भरा बाजा मेरे मुह में ठूसे जा रहा ह। बबुआइन का पति खफा हो कर खिडकी स हट गया। और सामन शायद यह दसवीं बार था कि कभी मुन्नी बाजा बजाती, कभी मथुराप्रसाद बाजा बजाने लग जाता। बबुआइन के कान भी खाये जा रहे थे। मुन्नी कोई घण्टे भर से बाजा बजा रही थी। जिस दिन से बाजा आया था, हर समय टुन टुन करती रहती। कोई बात भी हुई। बबुआइन के सिर में दद होने लगा था। खिडकी में खडी बबुआइन ने अपने कानो में उँगलिया दे लो। थकी थकी, खोजी खोजी बीमार बीमार आखो से वह शून्य में देख रही थी। उस का पति कितना रूखा रूखा है। बच्चे को लाड नही करता। अगर करता भी है तो इतना नही जितना मथुरा प्रसाद मुन्नी स करता ह। परायी बच्ची को। कैसे थूक में सना उस का बाजा मुह में ले कर बजा रहा था। और सिर हिला हिला कर दोनो जसे मस्त हो रहे थे। सचमुच उस का पति, बाबू, अपने बच्चे से उतना प्यार नही करता जितना मथुराप्रसाद मुन्नी से करता ह। खिडकी में खडी-खडी सोच रही, बबुआइन को लगता जसे उस के आसू छल-छल बह निकलेंगे। और फिर बबुआइन को अन्दर से बच्चे के हँसने की आवाज आयी। गोल कमरे के फश पर उस का पति सिर के बल खडा हो कर बच्चे को तमाशा

इस से तो

दिखा रहा था। पिता का इस प्रकार खड़ा देख कर बच्चा भी बार बार उसी तरह खड़ा होने की कोशिश करता। हर बार गिर नीचे रख कर वह टाँगें उठाता और लुढ़क कर दूसरी ओर जा गिरता। इस तरह उल्टबाजियाँ लगाते हुए बच्चा भी हँस रहा था, शीर्षासन का करतब दिखा चुकने के बाद बच्चे का पिता भी हँस रहा था। बबुआइन भी उन्हें देख कर हँसने लगी। बाप-बेटा किस प्रकार खिलवाड़ कर रहे थे और फिर माँ भी उन के खेल में शामिल हो गयी।

बबुआइन के पास वाले घर में मिस जैदी रहती थी। मिस जैदी मुस्लिम गर्ल्स कालेज में मनोविज्ञान पढ़ाती थी। घर वाले चिल्ला चिल्ला कर थक हार गये, पर मिस जैदी ने विवाह नहीं कराया था। बात को बात कर के चक्कर पैदा करने लग जाती। कितनी वाहियात बात है। हमेशा वह यही कहती और मथुराप्रसाद को मुन्नी के साथ इस प्रकार खेलता हुआ देख कर मन ही मन में वह सोचती कोई बात जरूर है। वह मुन्नी नहीं मुन्नी की माँ है जिस की इतनी खातिर होती है। मर्द जात का कोई एतबार नहीं। और सामने अपने बरामदे में मथुराप्रसाद की पत्नी टहल रही थी। ऊँची लम्बी गोरी चिट्टी कजरी कजरी आँखें इस पर से तो चाहे कोई दस मुन्नों की माँयें फेंक दे। जैसे उस ने अपनआप का सम्हाल सम्हाल कर रखा है। और मिस जैदी के होठों पर एक मुसकान खेलने लग गयी। जिस बात पर पड़ोसिन बबुआइन खिलखिला कर हँसती मनोविज्ञान की लेक्चरार मिस जैदी के मुँह पर एक मुसकराहट दिखाई देती और बस!

और फिर एक दिन मिस जैदी का कलेजा धक से रह गया। सर्दियों के दिन थे। कालेज से जब वह लौटी, हलका हलका अंधेरा हो रहा था। रिक्शा से उतर रही मिस जैदी ने देखा, हमेशा की तरह मुन्नी को गोद में उठाये मथुराप्रसाद गली में टहल रहा था। फिर जैसे अपने घर में से मुन्नी की माँ निकली। मुन्नी को मथुराप्रसाद से लेते हुए मिस जैदी को लगा जैसे मथुराप्रसाद ने मुन्नी की माँ की बाँह पकड़ ली हो। मिस जैदी का ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का साँस नीचे रह गया। वह पसीना पसीना हो गयी उस के हाथ-पाँव काँपने लग गये। उस की आँखों के आगे चक्कर आने लगे। और फिर उस के कानों में मुन्नी के पिता की आवाज आयी। यह तो मुन्नी का बाप था। ठण्ड में अपनी पत्नी के शाल में उस ने मुँह सिर ढका हुआ था। और मिस जैदी अपने घर को जाती हुई आप ही आप खिल खिल हँसने लग गयी। हँसती जाये, हँसती जाये। तौबा तौबा, इस तरह तो मिस जैदी कभी भी नहीं हँसी थी। और फिर जब भी मिस जैदी को अपनी गलती का ध्यान आता उस की हँसी फूट निकलती।

इस तरह की एक हँसी सारे मोहल्ले में मोहल्ले के हर घर में, घर के हर प्राणी के हृदय में गुदगुदी करती रहती। फिर दिन हफ्ते और महीने गुजरने लगे। और फिर जैसे लोग हँस-हँस कर थक गये हों।

मुन्नी!

"मुन्नी बेटी !'

"मुन्नी ।'

बाहर मथुराप्रसाद मुँह में दातुन दबाये आवाजें दे रहा है । अभी मुँह अँधेरा है । अभी अखबार वाला अखबार डाल कर नही गया । अभी ग्वाले की साइकिल की घण्टी नही बजी । अभी सुबह होने में देर है । मथुराप्रसाद की आँख आज शायद जल्दी खुल गयी है ।

'इस से तो ।' मिस जैंदी अपने दिल ही दिल में सोचती है ।

'इस से तो ' बबुआइन के मुँह से निकल जाता है ।

"इस से तो " मुन्नी का पिता मुँह ही मुँह बुडबुडाता है ।

"क्या इस से तो ?" मिस जदी का दिल उस से पूछता है ।

"क्या इस से तो ?' बाबू अपनी बबुआइन से सवाल करता है ।

'क्या इस से तो ?" मुन्नी की माँ मुन्नी के पिता से कहती है ।

"इस से तो यह आदमी और दूसरा ब्याह ही कर ले ।" अपने अपने घर अपने अपने पलँग पर, अपने अपने बिस्तर पर पडे मिस जदी बबुआइन मुन्नी के पिता के मुँह से एक साथ बोल निकलते हैं ।

●

# लड़ाई नहीं

गढ़ी अरबाब में आज बहुत शोर था। शाहज़ाद खान लड़ाई से लौट आया था। हवल- दार भरती हो कर गया और अफ़सर बन कर वापस आया। उस की कमर में सात गोलियों वाला पिस्तौल लटक रहा था। उस के कंधे पर बंदूक थी। सीने पर कई फ़ीते लगे हुए थे। उस के पीछे दो अरदली थे। जीप में बैठ कर आया था जो गाँव के बाहर सड़क के किनारे पीपल के नीचे खड़ी थी।

शाहज़ाद खान के बाप अरबाब के धड़े के लोग खुश थे। शाहज़ाद खान उन का सहायक था।

शाहज़ाद खान के बाप अरबाब के दुश्मनों के चेहरों पर एक रंग आता एक रंग जाता। जब भी वे शाहज़ाद खान को फौज में मिले ऊँचे ओहदे की कहानियाँ सुनते उस की मोटर, उस के हथियारों, उस की तरक्क़ी की बातें सुनते उन के जैसे होश हवास उड़ जाते।

गढ़ी अरबाब का सारा गाँव दो धड़ों में बँटा हुआ था। यह लड़ाई कई पीढ़ियों से चली आ रही थी। कभी बढ़ जाती, कभी कम हो जाती।

और जब शाहज़ाद खान ने अपने बाप से पूछे बिना ही फौज में नाम लिखवा लिया था तो भले ही उस के मुँह से एक बोल न फूटा हो, पर मन ही मन खान खून के आँसू रोया था।

और उस के सभी डर सच्चे निकले। उधर शाहज़ाद खान भरती हो कर गया इधर दुश्मनों को शह मिली। कैसे-कैसे उन्होंने शाहज़ाद खान के बाप को सताया था, यह बात गढ़ी का बच्चा-बच्चा जानता था।

शाहज़ाद खान को भरती हुए चार दिन भी नहीं हुए थे कि दुश्मनों ने अपने ढोर उस के बाप की फसलों में छोड़ने शुरू कर दिये। खान अरबाब देखता और अन देखा कर देता। और इस तरह सामने वाले और भी अकड़ जाते। कुछ देर बाद खान अरबाब का घोड़ा खुल गया, फिर उस की पंज कल्याण भैंस कहीं निकल गयी। खान अरबाब सब समझता था, सब कुछ जानता था, लेकिन उस ने शिकायत न की। उस की फसलों में पानी दिया जा रहा होता लोग इसे चोरी छिपे काट लेते। खान अरबाब के मुज़ारे दाँत पीस कर रह जाते, कूद कूद पड़ते, उछल उछल कर निकलते पर वह

उन्हें हमेशा रोक रखता । सब से बडी ज्यादती जो दुश्मन के धडे ने उस के साथ की, वह यह थी कि उस की नयी फसल के खलियान को आग लगवा दी । रात भर खान खलियान को जलते देखता रहा । उस की बीवी हाथ मल मल कर, छाती पीट-पीट कर, फरियाद करते करते थक गयी । पडोसी और मिलने वाले, दोस्त और रिश्तेदार खान अरबाब की तरफ देख देख कर चकित रह जाते, उस के हौसले पर हैरान होते लेकिन न उस ने मुह से कुछ कहा न किसी को कुछ कहने दिया, न हथियार उठाया, न उठाने दिया ।

और इस तरह खान अरबाब ने चुपचाप कई साल गुजार दिये, कई चोटें सह ली, कई घावों का खयाल तक न किया ।

और आज सवेरे जब से उस का बेटा शाहजाद खान घर लौटा, भीतर कोठे में बैठा खान अपनी बन्दूक को साफ कर रहा था ।

और जो कोई भी शाहजाद खान से मिलने आता, देर तक अन्दर उस के बाप के पास बैठा खुसर-पुसर करता रहता ।

और फिर जैसे गाँव भर में आग सी लग गयी । खान अरबाब के देर से दबे पिसे साथियो ने अकड कर चलना शुरू कर दिया । फिर घर घर बन्दूकें साफ होने लगी । फिर घर घर पटिया में से लाग गोलियाँ भर भर कर कारतूस निकालने लगे । फिर नेजा की नोका पर हवाइया फिरती सुनाई देने लगी । फिर खान अरबाब के साथी अपने दुश्मनों को ललकारने लगे । फिर लोगो ने मूछो को ताव देना शुरू कर दिया, हवा में गोलिया चलानी शुरू कर दी अली अली करते हुए ऊँचे ऊचे नारे लगाने शुरू कर दिये ।

और खान अरबाब के साथी कहते कि वे अपनी हर एक चुरायी हुई घोडी के बदले दुश्मनों की चार चार औरतो को उठा लायेंगे, अपनी हर एक खोयी गयी भैंस के बदले वे दुश्मनो को दस दस बहू-बेटियो को गायब कर देंगे । और यह तो सब को पता ही था कि जब भी गढी के इन दो धडो की लडाई होती थी खून की नदिया बह निकलती, लाशो के ढेर लग जाते ।

और खान अरबाब के दुश्मनो के चूल्हों में आग नही जली थी । उन्हें भूल कर भी तो खयाल न आया था कि शाहजाद खान इतनी जल्दी लौट आयेगा । पहले जितने लोग भी कभी इस गाँव से भरती हो कर गये थे, या तो कभी उन की खबर तक नही मिली थी या बस यह सुनने में आता था कि वे दूर किसी बडे शहर में बस गये थे । और जो लौट कर आते थे किसी की टाँग लँगडी होती थी, किसी की कोई भी नही होती थी, किसी की आँखें झुल्सी सी हुई होती, किसी की कमर टूट चुकी होती गरदन टेढी हो गयी होती । और खान अरबाब का बेटा लौट कर घर ही नहीं आया था वह तो इतना बडा अफसर हो गया था । कोई कहता कि वह 'लफटन' है कोई कहता 'कप्तान' है । और कहने वाले कहते कि अपने पिस्तौल से शाहजाद खान चाहे जितनो को गोली से उडा दे उस से कोई कुछ नही पूछ सकता था ।

और खान अरबाब के दुश्मनों ने सिरा पर जसे कफन बाँध लिये। जा-जा जुल्म उ होने पिछले सालो में ढाये थे, उन सब का उन्हें पता था। और अब, जब खान अरबाब अपनी ब दूका को साफ़ कर रहा था, और अब, जब उस के साथी नेज़ों को तेज कर रहे थे तो गाँव के लोग सोचते कि खान अरबाब के दुश्मना का सफाया हो कर रहेगा।

और फिर माओ के बेटो ने अपना पिया हुआ दूध बख्शवाया, फिर बीबिया के खावि दा ने अपने अपन महर साफ करवाये। फिर बाजुओ पर तावीज बाँध गये, फिर मुरीदों ने खानगाहों पर हाथ फला कर दुआएँ माँगी, माथे रगड कर भूलें बख्शवायी। फिर बहादुर पठानिया ने जी भर भर कर अपने घरवालो को देखा। फिर बलिष्ठ पठानो न अपने बच्चा को बार बार गले लगाया।

और उधर आकाश पर पहला तारा निकला ही था कि खान अरबाब के साथियो ने गोला छोड दिया। और फिर ढोल बजाना शुरु हो गया।

शाहज़ाद खान जो कभी का चौबारे में बठा अपनी नौजवान बीवी को जग की कहानिया सुना रहा था, इस तरह इस वक्त गोले की आवाज़ पर चौंक उठा। और उस का ऊपर का साँस ऊपर और नीचे का साँस नीचे रह गया और वह दौड कर बाहर आ गया। उस की बीवी को सब कुछ मालूम था। वह उसे पकड कर फिर अन्दर ले गयी।

और उस ने सारी कहानी एक शेरनी की तरह बिफर बिफर कर शाहज़ाद खान को सुनायी। ज़िल्लत की मौत जैसी वह ज़िन्दगी, जो कभी किसी पठान बच्चे ने नही गुज़ारी थी। जब खान अरबाब बार-बार अन्दर जा कर अपनी बन्दूक को उठाता और शाहज़ाद खान की नौजवान बीवी को देख कर बार बार उसे किल्ली पर लटका देता। जब खान अरबाब के साथी उस के मुँह की तरफ देखते, दाँत पीस पीस कर होंठ दबा-दबा कर अपन मह को घायल कर लेते।

शाहज़ाद खान की बीवी ने नाम ले-ले कर भसे गिनायी जो दुश्मनों ने इधर उधर कर डाली थी नाम ले ले कर घोडियाँ गिनायी जो उन्होने खुलवा ली थी। जो फसलें तबाह कर दी गयी थी, जो खलिहान जलाये गये थे। जो ताने दुश्मन देते थे, जो मज़ाक व कहते थे। शाहज़ाद खान की बीवी का दहेज म मिली एक वक्त दस सेर दूध देन वाली गाय दुश्मनो ने कही रोक ली। तीन दिन तक खान अरबाब के साथिया ने सारे इलाके का चप्पा चप्पा छान डाला, और चौथे रोज दुश्मना ने गाय के गले की माला उन के घर भिजवा दी। रात भर शाहज़ाद खान की बीवी की आँख नही सूखी थी। और सवेरे उस के सिरहाने को खान अरबाब ने हाथ लगा कर देखा था।

शाहज़ाद खान सुनता रहा, सुनता रहा, और फिर वह एकदम खडा हो गया। कमर से बाहर निकलने से पहले जब वह खम्भे के पास से गुज़र रहा था जसे उछल कर खम्भे ने उस पकड लिया हो। और शाहज़ाद खान एक गहर सोच म डूब गया।

चारपाइ पर बठी उस की नौजवान बीवी आँखो ही आँखा में उस से कह रही

थी—बेशक अब तुम लडते हुए मर जाओ, मुझे मुकलावे के बाद तुम्हें बस जी भर कर देखना ही था, और मैं ने तुम्हें देख लिया। बेशक अब तुम लडते हुए मर जाओ। तुम्हारी मीठी याद की निशानी अब मेरे होठो पर सोयी हुई पडी है। पठान बच्चे की तरह अपने बाप दादा की आबरू की खातिर या दुश्मन को मार आओ या खुद मर जाओ—लडत लडते, मैं तुम्हे रोकूँगी नही। पर शाहजाद खान खम्भे के साथ खडा अपने विचारो में खोया खोया सा जसे खम्भा ही हो गया था।

उस की आँखो में लडाई के वे भयानक दृश्य जो उस ने जग में देखे थे एक फिल्म की तरह घूमने लगे। लाशो के ढेर, खेतो के खेत मुर्दों से भरे हुए, अटे हुए जिन्हें कुत्ते खा-खा कर थक जाते थे, गिद्ध नोच नोच कर हारे जाते थे। बेवा हुई औरतें, यतीम हुए बच्चे, भेडा बकरियो की तरह भूखे प्यासे तडपते, चिल्लाते गलियो में भटकते। भूख, गरीबी, बीमारी और महगाई, जरूरतें। शाहजाद खान को याद आ रहा था हँसता खेलता, खुश खुश, ऊँचे महलो, लम्ब चौड गिरजाघरो हस्पतालो और कॉलिजो वाला एक शहर जिसे उस न चार दिन पहल देखा था और उस की आखें खुली की खुली रह गयी थी। और चार दिन बाद जब वह वहाँ से गुजरा तो बस वहा जगह जगह मल्वे का ढेर लगा हुआ था। न वहा कोई आदमी था, न वहाँ कोई मवशी था। सिफ पेड ही थे, रुण्ड मुण्ड, झुलसे हुए कही कही खडे थे। शाहजाद खान ने जग में माओ की फरियादें सुनी थी जिन के जवान बच्चे छिन गये थे फरियादें सुनी थी उन जवान लडकियो की जिन के सुहाग टूट गये थे, और बच्चे देखे थे मरी हुई माओ का दूध टटोलते हुए। जब बम बरसते थे तो किस तरह की चीख पुकार सुनाई देती था।

और बाहर ढोल बजाया जा रहा था। खान अरबाब के साथी अपने लीडर के इशारे का इतजार कर रहे थे। और फिर उन्हें टट कर हमला कर देना था। बहादुर पठानो के नेजे उतावले होने लगते उन की बन्दूकें बेकरार हो उठती।

और सोच में डूबा हुआ शाहजाद खान खम्भे क पास वसे का वस खडा था। इनसान के शरीर स निकले हुए लहू का लाल रग उस की आँखो के आगे घूम रहा था। गोलियो की चोटो से टुकड टुकडे होती इनसान की हड्डियो की आवाज जसे उस के कानो में गूँज रही थी। सास निकलन से पहले किसी नौजवान का तडपना, किसी का एक टाग के साथ चलना, किसी का दोनो टागो के बिना धड का घसीटना किसी का एक बाजू के साथ काम चलाना किसी का दोना बाजुओ बिना मजबूर हो कर रह जाना, किसी की कमर टूट जाना, किसी की गरदन टेढी हो जाना—

शाहजाद खान सोचते-सोचते चीख उठा। दौड कर उस ने ढालियो के हाथ से ढोल छीन लिया। ब न्दूकचियो से बन्दूकें नीचे रखवा ली, और अपने बाप खान अरबाब के सीन से लग कर धाडें मार कर फरियादें करने लगा ' लडाई नही! लडाई नही!!

और खान लडाई स लौटे अपने बेटे की तरफ देख-देख कर हरान हो रहा था।

●

# पागल

पागलखाने में वे लोग रखे जाते हैं जो पागल होते हैं। मच्छरदानी से बाहर मच्छर रहते हैं। मच्छरदानी के अन्दर लोग मच्छरों से बचने के लिए लेटे हैं सोते हैं।

रांची के पागलखाने में जब जब मैं गया मेरा रह रह कर यह खयाल आता कि मच्छरदानी के अन्दर मच्छर नहीं होते।

और फिर मेरा दिल मुझ से पूछता कहीं मैं यह तो नहीं सोच रहा था कि पागलखाने के बाहर सब लोग ठीक ठीक हैं और पागलखाने के अन्दर कुछेक ठीक दिमाग वालों को पागलों से बचा कर रखा जाता है?'

जब भी मैं किसी पागलखाने को देख कर आता कितनी कितनी देर तक इस तरह के खयाल मुझे घेरे रहते।

रांची में दो पागलखाने हैं। फिरंगी के जमाने में बनाये गये थे। एक अंगरेज पागलों के लिए दूसरा देसी पागलों के लिए। है कि नहीं यह बात पागलों वाली? फिर जब देश आज़ाद हुआ एक पागलखाने को अमीर पागलों के लिए सुरक्षित कर दिया गया दूसरा गरीब पागलों के लिए इस्तेमाल होने लगा।

एक दिन मैं गरीब पागलों के पागलखाने के अधिकारी से मिलने गया। उस के सामने बेंच पर आँखें नीची किये एक नौजवान बैठा था। नौजवान के एक ओर एक अधेड़ उम्र की औरत थी जिस की जबान कैंची की तरह चलती थी और दूसरी ओर एक दुलहिन सी लड़की गहनों से लदी हुई थी।

अधेड़ उम्र की औरत बार बार कहती 'यह लड़का पागल है। रात को सोते सोते उठ कर चीखने लगता है। दरवाजे खोल कर बाहर गली में भाग जाता है। अपनी पत्नी को पीटने दौड़ता है। एक से अधिक बार इस ने मुझ (अपनी सास) पर भी हाथ उठाया है।' गांवों के पंचों ने तसदीक की थी। बार-बार यह औरत पंचों के परवाने को अधिकारी के सामने रखती। सब के अंगूठे लगे थे। और जब अधिकारी की नजर नौजवान पर पड़ती रस्सी से जकड़ी हुई कलाइयों से वह हाथ जोड़ने की कोशिश करता और बार बार कहता "डाक्टर साहब! मैं भला चंगा हूँ। यह झूठ है सरासर झूठ!" और जब नौजवान यह कहता उस के दायीं ओर बैठी दुलहिन सी लड़की अपने होंठों ही होंठों में कुछ बड़बड़ाती। यूँ लगता था कि किस्सा काफी देर से चल रहा था। मैं

अन्दर घुसा ही था कि कुछ देर इन्तजार के बाद मेरे दोस्त ने उन्हें बाहर रुकने के लिए भेज दिया।

अच्छा हुआ तुम आ गये। मुझ ये लोग एक घण्टे से परेशान किये हुए है।" वे जब चित्र से बाहर हुए, तो मेरे दोस्त अधिकारी ने मुसकराते हुए मुझ से कहा।

लेकिन यह मामला क्या है?' मैं ने उत्सुकता से उस से पूछा।

"मामला साफ है। इस बुढ़िया ने अपनी बेटी का इस नौजवान के साथ विवाह किया। इस से ढेर सारे गहने बनवाये। विवाह से पहले नकद रकम भी ली होगी। अब इसे पागल क़रार दे कर पागलखाने में भरती करवा देगी और अपनी बेटी को किसी और को बेच देगी।'

'क्या तुम इस नौजवान की कोई मदद नहीं कर सकते?'

नहीं। सारी पंचायत ने लिख कर तसदीक की है। इस बेचारे को मुझ पागलखाने में रखना ही होगा।

'और फिर पागलखाने में यदि वह पागल नहीं भी है तो हो जायगा।' मैं ने कहा और फिर हम दोनों फीकी सी हँसी हँस दिये।

एक दिन मैं अमीर पागलों के पागलखाने में किसी मरीज से मिलने जा रहा था। मेरे साथ वहाँ की लेडी डाक्टर थी। हम घास के एक विशाल लान के पास से गुजर रहे थे कि एक पेड़ के नीचे मैं ने देखा एक अत्यन्त सुन्दर लड़की बेंच पर बैठी थी जैसे संगमरमर का बुत हो। गोरी चिट्टी, नीली-नीली आँखें घने काले बाल कन्धों पर बिखरे हुए, जैसे आकाश से उतरी कोई परी हो। मेरी नजर उस लड़की पर टिक गयी। चिलचिलाती धूप में सफेदे की छाया में अकेली बैठी थी।

बेचारी बदकिस्मत लड़की है,' मुझे उस की ओर यूँ देखते हुए पा कर लेडी डाक्टर ने कहा, 'सर मुखर्जी की पोती है।'

भली-चंगी लगती है। मेरे मुँह से निकला।

'हाँ कोई खराबी नहीं इस लड़की में। बस, बोलती नहीं। आँखें फाड़-फाड़ कर देखती रहती है। न किसी की सुनती है और न किसी से बात करती है। बिट बिट खुली आँखें। ऐसे ही सो भी जाती है। न खाने पीने की सुध न कपड़ा पहनने की। बस, एक बात बिना नागा किये करती है। हर रोज शाम को चाहे आँधी हो चाहे तूफ़ान चाहे गरमी हो चाहे ठण्ड, अकेली किसी कोने में बैठ कर छल छल आँसू बहा लेती है। जैसे आँसुओं की धार बह रही हो। पूरा एक घण्टा यूँ आँसू बहा कर इस की पलकें अपनेआप सूख जाती है।

'लेकिन इसे हुआ क्या है? मैं अभी तक उस लड़की की ओर ही देख रहा था। कोई सोलह-सत्रह की आयु जैसे चमचम करता कोई मोती हो।

'अजीब कहानी है इस बेचारी की। दसवीं में पढ़ती थी। बहुत अमीर खान

पोती जमींदार घर की है। इसे पढ़ाने के लिए एक नौजवान स्कूल मास्टर आता था। यूँ लगता है कि इन की जान पहचान गहरी हो गयी। लड़की कहती कि मैं तो मास्टर साहब के साथ ब्याह करूँगी। इतने बड़े ज़मींदार माँ बाप को यह कब स्वीकार होता। उन्होंने लड़की के साथ इकरार किया कि तू दसवीं पास कर ले फिर तुम्हारी स्कूल मास्टर के साथ बाकायदा मगनी करेंगे, और फिर सजधज के साथ बाकायदा ब्याह रचायेंगे। लड़की मान गयी। कुछ दिनों के बाद घर वालों ने हज़ारों रुपये स्कूल मास्टर को पकड़ा कर उस का ब्याह कहीं और कर दिया और उस शहर से उस का तबादला भी करवा दिया। जिस क्षण इस लड़की ने यह सुना, यह जैसी थी वैसी की वैसी, शिला सी अचल बन गयी। बिट बिट खुली आँखें आगे-पीछे देखती, न बोलती, न सुनती बस शाम को मास्टर के आने के समय एक ओर बैठ कर जी भर कर रो लेती। हर रोज़ एक घण्टा नियम से। और किसी चीज़ का इसे होश नहीं। जवान-जहान लड़की घर वालों ने तंग आ कर इसे यहाँ दाखिल करवा दिया। अब इस का यहाँ कई महीनों से इलाज हो रहा है।"

इलाज तो शायद उन का होना चाहिए जिन्होंने इसे पागलखाने भिजवाया।' मेरे मुँह से निकला।

●

गरीबों के पागलखाने में एक सरकारी कर्मचारी था। बड़े दफ्तर से मुझे हिदायत हुई कि मैं उसे कभी कभार मिल कर उस की खैरियत पूछ लिया करूँ। पहली बार जब मैं उस से मिलने गया तो उस की माँग थी "मुझे अमीरों के पागलखाने में रखना चाहिये। मैं केन्द्रीय सरकार का मुलाज़िम हूँ राज्य सरकार का नहीं।" मैं ने उस की तबदीली दूसरे पागलखाने में करवा दी। उस पागलखाने में जब मैं उस से मिलने गया उस की शिकायत थी मुझे बाकी पागलों के साथ एक बैरक में रखा जाता है। मुझे अलग कमरा मिलना चाहिए। मैं भजन पाठ करने वाला आदमी हूँ बाकी तो निरे पागल हैं। मैं ने सिफारिश कर के उसे अलग कमरा दिलवा दिया। कुछ दिनों के बाद जब मैं उस से फिर मिलने गया तो वह बड़ा खुश था। मुझे देखते ही सामने अलमारी में से एक बही निकाल लाया और कई पन्नों पर अंकित गढ़ खाता पढ़ कर मुझे सुनाने लगा, 'सरकार की ओर मेरे एक लाख बाईस हज़ार तीन सौ पैंतीस रुपये और तेरह पैसे निकलते हैं।' पचीस साल से वह नौकरी कर रहा था। जहाँ भरती हुआ, अभी तक वहीं का वहीं था। उस के साथी तरक्की पा कर कहीं के कहीं पहुँच गये थे। उस के साथ अन्याय हुआ था।

इतने साल मैं सरकार का मुँह देखता रहा हूँ। अब मैं दीवानी में मुकद्दमा दायर कर के सारी रकम धरवा लूँगा। वह कहने लगा। "पचीस सालों में उस ने ब्याह किया था। पचीस सालों से उस के माता पिता बूढ़े बन कर उस पर बोझ बन गये थे। पचीस सालों से एक बहन विधवा हो कर उस के घर आ बैठी थी। जिम्मे

दारियाँ हर साल बढ जाती थी और वतन वही का वही रहता था। अब उस ने स्वय अपनी बाकायदा तरक्की कर के हर नयी पदवी के अनुसार अपना वेतन जोड लिया था। जा मासिक कटौती हाती वह काट कर, जितनी रकम उस की सरकार की ओर बनती थी, वह कहता कि उसे मिल जानी चाहिए नही तो उस के माँ बाप भूखे मर जायेंगे उस के बच्चे सडको पर दर दर भीख माँगेंगे ''

बेंच पर बैठ कर म उस सरकारी कमचारी के साथ बातें कर रहा था कि पीछे से अचानक किसी ने मेरे कधे पर हाथ रखा, ' योर हाईनस ! मुझे आप से एक बात करनी ह।''

''क्या ?'' मैं ने चौंक कर पूछा।

''योर हाईनस ! मुझे आप से परदे में एक बात करनी ह।' और वह सामने पेड के नीचे जा खडा हुआ।

''यह कौन ह ?' म ने सरकारी कमचारी से पूछा।

''सनकी ह।'' उस ने अपनी राय दी।

''योर हाईनेस ! मैं आप की बाट देख रहा हूँ।'' पेड के नीचे से वह आदमी मुझे पुकार रहा था।

मले कीचड कनवास के बूट फटे हुए मोजे, खाकी निकर, चमडे की पेटी, ऊपर दो जेबा वाली खाकी कमीज सिर पर सोला हट।

''योर हाईनस ! विश्वस्त सूत्रों से पता चला ह कि चीन की फौजें हमारी उत्तरी सीमा पर जमा हा रही हैं।'' जब मैं उस के पास पहुँचा तो वह मेरे कान में कहने लगा, देखिए सामने ! आप को कुछ नजर नही आ रहा ?' और वह एडिया उठा कर दूर क्षितिज की ओर देख रहा था। ''चीन हम पर हमला करेगा। चाहे आज करे, चाहे कल।'

पागल ह। मेरे मन ने कहा। और मैं मुसकराता हुआ उस के कधे पर हाथ रख कर लौट आया।

' योर हाईनेस ! मेरी बात का यूँ न गवा देना।' उस आदमी ने फिर दोहराया।

' पागल है।'' मेरा दिल बार-बार कह रहा था। हिन्द और चीन को दोस्ती हजारा साल पुरानी ह। ''हिन्दी चीनी भाई भाई ' के नारे जो कुछ दिन पहले मैं ने दिल्ली में सुने थे मर कानो में गूँजने लगे। उन दिनों चीन का प्रधान मन्त्रा राजधानी में आया हुआ था। हर सडक हर चौक पर चीन और भारत के झण्डे साथ साथ लहरा रहे थे। और फिर हिमालय की ओर से भी कभी हम पर हमला हो सकता ह ! ''वो सन्तरी हमारा, वो पासबाँ हमारा ' इकबाल के नगमे के ये बोल मुझे याद आने लगे। मोटर में बठे घर की ओर लौटते हुए बार बार मुझे उस साँझ की याद आने लगती। हैदरा-बाद हाउस में दिल्ली के साहित्यकार चीन के प्रधान मन्त्रा से मिलने के लिए इकट्ठे हुए

थे। उस सभा में मैं ने अपनी पुस्तका का एक सट अपने पड़ोसी देन के नता का भेंट करते हुए कहा था, "मैं महान् चीन देश को सलाम करता हूँ।" और चीन के प्रधान मन्त्री ने अपने भाषण में ऐलान किया था कि चीन और हिन्द का मित्रता हिमालय के पहाडा जसी पुरानी ह, हिमालय के पहाडा जसी मजबूत ह।

इस बात को हुए कई महीने बीत गये। मैं सब कुछ भूल बठा था कि अचानक खबर आयी, "चीन ने भारत पर हमला कर दिया ह। चींटिया की तरह चीनी फ़ौजें हिमालय पवत को लांघती हुई, भारत की सीमाओ के अन्दर घुस आयी ह। हमारे देन के उत्तर में हजारा वगमील इलाका उन्हाने अपन अधिकार में कर लिया ह।" सकडा सिपाही जान पर खेल गये। दिन रात चीनिया के रडियो स्टेनन भारत के विरुद्ध जहर उगलने लगे। चीन के इस अचानक हमले के विरुद्ध सारे देन में उत्साह की एक लहर दौड गयी। सारा देश एक मट्ठी हो गया। औरता ने अपने गहने उतार कर रक्षाकोष के लिए दे दिये। बच्चा ने अपना जेब खच देश की रक्षा क लिए भेंट करना शुरू कर दिया। हर नौजवान फौज में भरती होने के लिए तयार था।

उन दिनो बार बार मुझे राँची के पागलखाने में उस मरीज की चेतावनी याद आती, योर हाईनेस ! विश्वस्त सूत्रा से पता चला ह कि चीन की फौजें हमारी उत्तरी सीमा पर जमा हो रही ह चीन हम पर हमला करगा चाहे आज करे चाहे कल '

और मुझे लगता जैसे मैं पागल हो रहा हूँ।

●

# आउट-गेट से अन्दर

देवीयानी अपनी जहाज जसी कोठी के बाहर टहल रही है। इस तरह के मखमली घास पर जूता पहन कर चलना, उसे गवारपन लगता है। रेशम से मुलायम, नरम-नरम घास पर टहलते हुए देवीयानी को साँझ होने लगी है। यूँ अकेली टहलते हुए उसे लगता है मानो हल्का हल्का यह अँधेरा किसी दिन उसे अपनी बाँहों में समूचा भर लेगा और वह तरती तरती दूर किसी तारे में पहुँच जायेगी। फिर एक और देवीयानी का जीवन जीने के लिए।

पिछले कई दिनों से देवीयानी को ऐसा महसूस हो रहा है जसे जिन्दगी उस के हाथों से खिसकती चली जा रही हो धीरे धीरे जस कोई आँचल को सरका रहा हो। और फिर वह एक एक चीज को सँभालने-समेटने लगती है। उस का पति उस के मुँह की ओर देख कर हैरान होता रहता है, लेकिन देवीयानी ने जीवन में सदा अपनी मन मर्जी की है। उसे कोई नहीं टोक सकता।

पिछले सप्ताह वकील को बुलवा कर उस ने अपनी वसीयत लिखवायी है, अपनी और अपने पति की। एक कोठी बेटे के लिए एक कोठी बेटी के लिए। बैंक का आधा रुपया बेटे के नाम आधा बेटी के नाम। जब तक यह जीवित हैं, इस कोठी में रह सकते हैं, इन के बाद कोठी बेटे को चली जायेगी। जब तक 'यह' जीवित हैं, बैंक से पसा निकलवा सकते हैं इन के बाद सारा धन बच्चों का हो जायेगा।

जितनी बार माँ अपनी वसीयत का बच्चों से जिक्र करती दोनों आगे से हँस देते। पिछले दिनों आये हुए थे। अब अपने अपने घर चले गये हैं। बेटा लन्दन में रहता है, किसी विदेशी फर्म में नौकर है। इस आयु में उस का वेतन अपने बाप से दुगुना है। जिस तनख्वाह पर बाप रिटायर हुआ, बेटा इस उम्र में उस से कहीं अधिक तनख्वाह पाता है। बेटी अमरीका में पढ़ते हुए अपने अध्यापक से प्रेम करने लगी वहीं उस ने ब्याह किया और वहीं बस गयी। अब हर दूसरे वर्ष जाड़ों में माँ-बाप से मिलने आती है। बेहद दौलत! उस का पति कॉलेज का प्रोफेसर, किसी अमीर व्यापारी का बेटा है। देवीयानी के बेटे को न माँ-बाप की जायदाद की परवाह है और न देवीयानी की बेटी को उस की कोई खास जरूरत।

अब अपने देश में देवीयानी और उस का पति अकेले हैं जन्म मरण के

साथी। उस का पति सुबह बक गया था। रास्ते में शायद उसे ठण्ड लग गयी। पता नही कहाँ से जुकाम ले आया ह। अब अन्दर पडा है। शहर के बाहर इतनी बडी कोठी में देवीयानी और उस का पति एकान्त में रहते ह। पति सारी उम्र काम कर के थका अब आराम कर रहा ह। देवीयानी जैसे सारी उम्र उस की बाट देखती रही हा और अब जी भर कर उस की निकटता का आनन्द ले रही हा।

नगे पाँव घास पर चलना देवीयानी को हमेशा अच्छा अच्छा लगता रहा ह। बचपन में नदी के किनारे घास पर चला करती थी। सुनहले सुनहले ताज़ा ताज़ा फूटे घास के तणा पर धीमे धीमे पग धरते हुए देवीयानी को लगता जसे कोई सोये बच्चे के गाल सहला रहा हो। बाकी लडकियाँ पानी में तरने की शौकीन थी लेकिन देवीयानी शबनम में धुले घास पर घण्टो टहलती रहती।

देवीयानी का पति हमेशा उसे टोकता रहता ह—सुबह शाम नगे पाँव यू घास पर चलती हो, तुम्हें ठण्ड लग जायेगी कभी। लेकिन देवीयानी को घास पर चलन से कोई नही रोक सकता। गरमी हो या सरदी नगे पाव घास पर चलन से देवीयानी को कोई मना नही कर सकता।

हाँ एक बार

और वह शाम अब देवीयानी को याद आने लगी ह। पतझड की वह शाम दिल के किसी कोने में दबी पडी थी अब अचानक देवीयानी को याद आन लगी ह।

कितने ही वष होने को आये ह!

यू ही अपने कमरे के बाहर लान में वह उस दिन टहल रही थी। टहलते टहलते बार-बार उस की नजर सामन कोठी के गेट पर जा पडती। अभी तक वह नही आया था और देवीयानी अपन दिल से पूछने लगी कि उसे हा क्या रहा था। कुछ दिनों स उस के आने के समय वह उतावली क्या होने लगती थी। एक एक क्षण जसे आयु जितना लम्बा होता जा रहा हो। कमर के अन्दर उस का दम घुटन लगता। बार बार वह खिडकी के बाहर झाँकन लगता। यू बार बार झाँकत हुए जब वह थक जाती ता बाहर लॉन में आ कर टहलन लगती उस की प्रतीक्षा में। बार-बार मुड कर देखती कि वह इतनी देर क्या कर रहा ह। ऊँचा लम्बा गोरा चिट्टा सामोन-सामोन शान्त गम्भीर। उस के बोल देवीयानी के कानों में गूँजने लगते जसे कोई नगमा सुन रहा हा। उस की मुसकान देवीयानी की आँखा के सामन खेलने लगता। उस के मोती जस दाँत देवीयानी उस क दाँता को देखता और मन हा मन में कहती—कमबख्त! इतन सुन्दर दाँत तू मुझ द दे। मर्दों का एस दाँता की क्या जरूरत ह! और फिर देवीयानी को लगता कि वह तो उसे समूचा अपनाना चाहती था दिल के किसी पवित्र सिंहासन पर बिठान के लिए।

और वह बुखार दिन ब दिन बढन लगा। जस कोई मीठा दद हा। उस क आन स कितना पहले वह उस का बाट देखना शुरू कर देता उतावली होत

लगती। हर सुबह उसे अच्छी अच्छी लगती, हर साझ उस के अरमानः की पिटारी म नये फूल छोड जाती। और फिर एक दिन उस की छोटी बहन ने जमे उस के मुह पर चपत दे मारी हो।

"दीदी! तुम्हें मास्टर जी का इतजार ह?"

'नही तो!"

"तो फिर तुम यूँ बार बार गेट की ओर क्यो दखती हो?'

"नही तो, नही तो।"

"मास्टर जी के आने में अभी पौन घण्टा बाकी ह।"

और वह बेचन, बाहर लान म टहल रही थी। टहलते-टहलते बार-बार उस की नजर सामने गेट पर जा पडती जिस ओर स उसे आना होता था। हमेशा आउट गेट से अन्दर आता। कई बार देवीयानी जब यह सोचती तो सिर से पाव तक काप जाती। फिर देवीयानी का मन कहता—पदल चलन वाले के लिए इन-गेट और आउट-गेट बराबर होते ह। इन गेट से बाहर जा सकते हैं, आउट गेट से अन्दर आ सकते ह। 'इन' और 'आउट' का अन्तर तो मोटर वालों के लिए होता ह।

और वह मोटर वाला नहीं था। बेचारा गरीब स्कूल मास्टर जिसे शाम को ट्यूशन पढ़ा कर गुजारा करना होता था। एक दिन देवीयानी ने सुना। उस की मां को वह बता रहा था—कोई ढाई सौ रुपया मैं बना लेता हूँ।

ढाई सौ रुपया! और फिर देवीयानी को जब वह बहुत अच्छा लगता बार बार उस के कानों में जसे कोई फूकने लगता—ढाई सौ रुपया! ढाई सौ रुपये से ज्यादा पाने वाले तो कई उस के पिता की दुकान पर नौकर थे। और तो और मरियल सा मुनीम जो बहीखाता रखता था उस का वेतन ढाई सौ रुपये था। और देवीयानी के मुँह का स्वाद फीका-फीका हो जाता। कुछ दिनो से उस के अन्दर यह जो मीठी मीठी कसक महसूस होने लगी थी, आप से आप धीरे धीरे खो गयी।

और ठण्डी ठार देवीयानी ने अपने भाई चारे में एक अमीर लडके स विवाह कर लिया। देवीयानी से भी कहीं ज्यादा पैसे वाले। एक बच्चा एक और बच्चा और जिन्दगी खुशी खुशी बीतने लगी। सब कुछ था—घर-बार, नौकर चाकर, पता-आदर! पर कभी कभी बठे बठे देवीयानी को लगता जस कोई चीज़ उस के जीवन में से एकदम निकल गयी हो। एक कसक जो कई वर्ष हुए उस के अन्दर पनपने लगी थी, वह मीठी आग फिर कभी उसे महसूस नहीं हुई। वह खोया खोया सा रहना वह उखड़ा उखड़ा सा रहना। जीवन में किसी चीज का अभाव। किसी को पाने की तड़प। कोई इन्तजार। कोसा कोसा कोई आँसू।

जब कभी देवीयानी को इस का ध्यान आता, अपनेआप उस के कदम बाहर लान की बढने लगते और वह कितनी कितनी दर नगे पाँव घास पर टहलती रहती, टहलती रहती।

अपनी कोठी के बाहर लान में टहलते हुए, देवीयानी को अचानक आज याद आता है—बैंक में से पैसे निकलवाने गया उस का पति, इस महीने के खर्च के लिए ढाई सौ रुपये लाया था। ढाई सौ रुपये गिन कर इस ने बटुए में रखे थे। पिछले महीने भी उस ने ढाई सौ रुपये निकलवाये थे। पति-पत्नी, इन का खर्च ही क्या था? कोठी में ढेर सी सब्जियां उन्होंने उगा रखी थी, घर का दूध दही। और मनुष्य की जरूरत ही क्या होती है? उस का पति न शराब पीता था, न सिगरेट-पान की ही लत थी।

और फिर देवीयानी को कई वर्ष पहले की एक बात याद आने लगती है—'कोई ढाई सौ रुपये मैं बचा लेता हूँ।" ऊँचा लम्बा, गोरा चिट्टा खामोश खामोश शांत गम्भीर, मोती जैसे दाँतों वाला। 'कोई ढाई सौ रुपये मैं बचा लेता हूँ।"

जिन्दगी की साँझ ढले देवीयानी को आज लग रहा है जैसे वह ठगी गयी हो।

ढाई सौ रुपये ही उस के पति का बैंक में से क्या निकलवाने थे! पिछले महीने भी उस ने ढाई सौ रुपये निकलवाये थे। ढाई सौ में उन्होंने गुज़ारा किया था। इस महीने भी ढाई सौ में वह गुज़ारा कर लेगी। ठण्डे ठार ढाई सौ रुपये, मनफी वह धीमी धीमी कसक मीठा मीठा दर्द बनने को बेताब! और देवीयानी को लगता जैसे कि वह ठगी गयी हो।

•

# मोतियो वाले

पीछे हमारे गाव में कुछ घर रजवाडा के थे। हम लोग उन को "मोतियो वाले" कहा करते थे। रजवाडों के ढोर किसी खत में चर सक्ते थे। गाँव में से आना जाना रजवाडा किसी को भी कोई फरमाइश कर सक्ता था और सुनने वाले को वह बात पूरी करनी होती थी। रजवाडों की मली नजरें गाव में किसी भी स्त्री पर पड सकती थी और उन का कोई कुछ नहीं कह सकता था। अपना सतीत्व सँभालने की जिम्मेदारी हर स्त्री की अपनी थी और गाँव की बहू बेटियाँ ढकी लिपटी बाहर निकलती, छुक छिप कर जीवन गुजार लेती। रजवाडा की भीएँ का अंग्रेज सरकार ने मामला माफ किया हुआ था। मवेशियो की मण्डी में हर मगल को जितना टक्स इकट्ठा होता रजवाडा को वह खजान में जमा नही करना होता था। रजवाडा के कपडे हमेशा दूध से सफ़ेद होते थे जिन को धोने की जिम्मेदारी गाव के बरेठों की थी। किसी की कोई चीज किसी रजवाडे के मन भा जाती, उसे वह चीज उन की भेंट करनी होती थी। बाजार में से गली मुहल्लो में से, रजवाडा का चाहे कुत्ता भी गुजर, लोग बठे हुए खडे हो जाते थे। रजवाडे हँसते तो सारा गाँव हँसता, रजवाडा के दुख में सारा गाव दुखी होता। जो बात रजवाडे करते वही बात अच्छी मानी जाती। "मोतिया वाले' जा वह ठहरे।

और फिर देश आजाद हो गया। देश की आजादी के साथ देश का बाँट भी दिया गया। देश के बँटवारे के समय जो फसाद हुए वह किसी को भुलाये नही भूलते। हमारे गाव के रजवाडा ने अपने हिन्दू सिखों को जसे अपने परों के नीचे छुपाये रखा। और फिर जब लोग उन से बेक़ाबू हो गये तो वह हम सब को अपने साथ ला कर सरहद पर छोड गये। बिछुडते समय उन की आखो से आँसू बह रहे थे और 'मोतिया वाले—मोतियों वाले' कहते हमारे जसे मुँह न थक्ते हो।

अमृतसर में जो घर हमें एलाट हुआ वह शहर से जरा हट कर था। हमारी कोठी के साथ पाँच सात और कोठियाँ थी और बस। हमारे साथ वाला कोठी में किसी देशी रियासत का एक राजकुमार रहता था। उस ने छह कोठिया खरीद रखी थी। एक में स्वय रहता था शेष पाँच को उस ने किराये पर चढ़ा रखा था। कुछ दिन हमें इकट्ठे रहते हुए कि राजकुमार के बच्चे हमारे बच्चा के साथ खेलने लग गये।

राजकुमार की पत्नी हमारे यहाँ आता, हमार यहाँ से उन के यहाँ जाती। उन को किसी चीज की आवश्यकता होती तो हमार यहाँ स मँगवा लेते, हमारे यहाँ कोई चीज कम पड जाती तो हम उन के घर से पुछवा लेते। कई बार खेलते-खेलते हमारे बच्चे उन के बच्चों को पीट आते कई बार खेलते खेलते उन स मार खा आते। राजकुमार की पत्नी हमारे आँगन में बैठी कई बार कितना कितनी देर गुजर हुए समय की बातें करती रहती। महलों का जीवन राजाओं के ठाठ हुकमरानी के मजे। अब भी हम लोग राजकुमार की पत्नी को 'टिकारानी" कह कर बुलाते थे। राजकुमार को 'टिका साहब' पुकारते थे। एक मामूली सरकारी कर्मचारी के पन्शन में एक देसी रियासत का राजकुमार रहता था! टिकारानी को जो टिका साहब स कोई शिकायत होती तो हमारे यहाँ आ कर अपने मन को शान्त कर लेती। टिकारानी को अपने बाकी परिवार से कोई निराशा होती तो हमारे यहाँ आ कर अपना दुख रो लेती। नौकरों स तो उस हमेशा शिकायत रहती थी। कोई चोर था, कोई गुस्ताख या कोई बदतमीज या कोई निकम्मा था और मजाल है उन के यहाँ कोई नौकर टिक जाये। बस एक आया थी जो पुराने समय से उन के यहाँ चली आ रही थी और जो अब टिकारानी का बस एक सहारा थी उस के सुनहरी समय की एक मीठी याद। एक रोज मैं अपने बगीचे में टहल रहा था। पडोसियों की आया उन के बच्चे को वहाँ खिला रही थी। मोतियों वाले' 'मोतिया वाले" वह बै वह उस को पुकारती। बच्चा बार बार वही बात करता जिस से वह उसे रोकती। आया फिर उसे "मोतिया वाले' मोतिया वाले कहती। उस का मुह जैसे न थकता हो।

और मुझे गाव के रजवाडा का खयाल आन लगा जिन को हम 'मोतिया वाल' पुकारा करते थे। जिन के ढोर किसी खेत में चर सकते थे। जिन की मैली नजरें किसी भी औरत पर पड सकती थी और उन को कोई कुछ नही कह सकता था। जिन के कपडे हमेशा दूध स सफेद होते थे जिन को धोने की जिम्मेदारी गाँव के बरेठा की थी।

इस बात को कई साल गुजर गये। नौकरी के चक्कर में हम एक से ज्यादा शहर घूम कर अमृतसर से भी बडे एक शहर में आये हुए थे। कई दिन से इस शहर में बडी गहमा गहमी थी। म्युनिसिपल कमेटी के चुनाव होने वाले थे। हर रोज शाम को जलूस निकलता। जिन्दाबाद" जिन्दाबाद" करते लोग झण्डे लिये हमारे सामने सडक पर से गुजरते रहते। रात गये तक दूर बाजार में लाउडस्पीकरों पर लोगो के बोलने की आवाजें आती रहती। कभी कोई गाने लगता कभी कोई कविता सुनाने लगता। एक जलूस टको पर निकला इस पार्टी की निशाना ट्रक था। एक जलूस ताँगों पर निकला इस पार्टी की निशानी ताँगा था। एक जलूस बलगाडियों पर निकला इस पार्टी की निशानी बलगाडी थी। एक पार्टी के लोग सडक से गुजर कर जाते और दूसरी पार्टी के लोग आ जाते। यह लोग कहते कि तीसरी पार्टी वाले थया-थया करते

कहाँ से निकल आते। बड़ों को देख कर बच्चे भी उन के साथ शामिल हो जाते और जो भी पार्टी आती उस के साथ "जिन्दाबाद जिन्दाबाद" करते रहते।

कई दिन इसी तरह होता रहा। फिर एक रोज म्युनिसिपल कमेटी के कर्मचारी आये और हमें चुनाव के कागज दे गये। एक वोट मेरी थी, एक वोट मेरी पत्नी की। उन्होंने बताया कि तीन रोज के बाद वोट डालना है। हमारा बूथ सामने वाले बाज़ार को छोड़ कर बच्चों के स्कूल में था।

जिस दिन वोट डालना था उस रोज शहर के सब दफ्तरों में छुट्टी हो गयी। सुबह जब हम उठे तो हम सोचने लगे कि वोट किस को देंगे।

'हमें तो किसी ने पूछा भी नहीं", मेरी पत्नी कहने लगी।

और मुझे भी खयाल आया कि न एक पार्टी का, न दूसरी पार्टी का और न तीसरी पार्टी का, हमारे पास तो कोई भी नहीं आया था।

"हमारे यहाँ जो भी आया" मेरी पत्नी बोली, "मेरी तो शर्त यह है कि पहले हमारे सामने के नाले को पक्का कराया जाये फिर मैं वोट दूँगी।"

हाँ, नाला गन्दा तो बहुत है" मैं ने उत्तर में कहा, 'नाला तो साफ़ होना ही चाहिए।

"नाला और इस ओर का खुला मैदान", मेरी पत्नी फिर बोल रही थी, "इस मैदान में तो हमेशा कूड़ा करकट पड़ा रहता है। यहाँ सड़क को कोई नहीं साफ़ करता कूड़ा होता है हवा से उड़ जाता है वर्षा से घुल जाता है। और फिर कमेटी वालों को चाहिए कि सड़क पर वृक्ष लगायें, उन के जंगले बनवायें माली रखें खाद का प्रबन्ध हो पानी का प्रबन्ध हो और सड़क पर ये लोग फलों वाले वृक्ष क्या नहीं लगवाते ? साये का साया और फल के फल। साल के साल फलों का ठेका दे दिया जाये। मुझ से कोई पूछे तो मैं आमों के पौदे सड़क सड़क लगवाऊँ।"

आमों का खयाल आते ही मेरी पत्नी का मुँह मज़े से जैसे भर गया और वह चुप हो गयी।

पर हमें तो वोटों के लिए किसी ने पूछा भी नहीं—मुझे फिर खयाल आया।

बरामदे में बैठे हम अखबार पढ़ते रहे। सारी सुबह गुज़र गयी। दोपहर हो गयी। हमारे सोने का समय आ गया। दोपहर को खाने के बाद मेरी पत्नी ज़रूर सोती थी। पर कोई भी तो नहीं आया। न एक पार्टी का, न दूसरी पार्टी का और न तीसरी पार्टी का।

हम अभी तक प्रतीक्षा कर रहे थे।

फिर अपने काम काज से अवकाश पा कर हमारे नौकर छुट्टी के लिए आये। रसोइया आया, माली ड्राइवर अर्दली, जमादार सब वोट देने जा रहे थे। मैं ने उन से पूछा किस को वोट दे रहे हैं। किसी ने किसी के साथ वादा किया हुआ था किसी को किसी की सिफारिश आयी हुई थी।

कोई पन्द्रह मिनट प्रतीक्षा कर के मेरी पत्नी अन्दर सोने के लिए चली गयी। और मैं ने सोचा बेकार बैठा क्या करूंगा, एक चक्कर दफ़्तर का ही लगा आऊँ, आज की डाक आयी होगी।

और मैं दफ्तर चल दिया। कोठी के गेटके बाहर सड़क पर मैं ने देखा कई रिक्शा खड़े थे। और सामने हमारा बैरा था, बैरे की पत्नी थी। आया थी, आया का पति था। माली था, माली की दो घरवाली थीं। ड्राइवर था, ड्राइवर का भाई था, भाई की पत्नी थी। अर्दली और उस की औरत थी। जमादार था, जमादार की माँ थी, जमादार का पिता था, जमादार की तीन जवान बहनें थीं। और किसी उम्मीदवार का एजेन्ट उन्हें एक ओर खींच रहा था किसी उम्मीदवार का एजेन्ट उन्हें दूसरी ओर खींच रहा था। 'मोतिया वालो इधर आओ" तीसरा उम्मीदवार स्वय उन के हाथ जोड़ रहा था, 'मोतियों वालो मैं खुद हाजिर हुआ हूँ स्वय चल कर आया हूँ, मोतियो वालो " और ढेर से रिक्शा इन ढेर सी वोटों की प्रतीक्षा कर रहे थे।

मोतियो वाले! अकेला अपनी एकमात्र वोट को जेब में डाले दफ्तर की ओर जा रहा मुझे बार बार अपने गाँव के रजवाड़ा का खयाल आने लगा, जिन्हें हम "मोतिया वाले' कह कर पुकारते थे। जिन के ढोर किसी भी खेत में चर सकते थे जिन की मैली नज़रें किसी भी औरत पर पड़ सकती थीं और उन को कोई कुछ नहीं कह सकता था। जिन के कपड़े दूध से सफेद होते थे जिन को धोने की जिम्मेदारी गाँव के बरेठों की थी। 'मोतियो वाले।" दिवा साहब टिवारानी और उन का बच्चा, जिन की छह कोठियाँ थीं। एक रहने के लिए थी, शेष पाँच का व किराया खाते थे। जिन का महलों का जीवन, राजों के ठाठ, हुकमरानी के मज़े अभी तक नहीं भूले थे। जिन की आया हमेशा जिन के बच्चो को 'मोतियो वाले' "मोतिया वाले ' कह कर पुकारती थी। मोतियों वालो! मैं स्वय चल कर आया हू मोतियो वालो! एक खद्दरधारी महोदय की आवाज़ फिर कितनी देर मेरे कानों में गूँजती रही।

•

# भगवान और रेडियो

वैसे उसे कोई छुट्टी नहीं होती थी। उस का काम ही कुछ इस तरह का था। छुट्टी के दिन तो सड़कों पर और भी अधिक छिड़काव की आवश्यकता होती। जितने अधिक लोग बाहर घूमने को निकलते उतनी ही अधिक धूल उड़ती। नगर कमेटी ने पानी के छिड़काव के लिए मोटरें रखी हुई थी। इन्हीं तरह की एक मोटर का वह ड्राइवर था।

कई बार तो कई कई महीने आकाश की आँख से पानी की एक बूंद न टपकती थी और सुबह शाम सुबह शाम सप्ताह के सातों दिन वह शहर की लम्बी-लम्बी सड़कों पर पानी का टंकियाँ भर भर कर खाली करता रहता। गरमियों की दोपहरी में झुलसी हुई धरती पर जब वह पानी का छिड़काव करता हुआ मोटर को चलाये जा रहा होता, तो उसे अपने आस पास की धरती से एक सुगन्ध सी आती, एक ऐसी सुगन्ध जो किसी शिशु को अपनी माँ के शरीर से आती है और वह बार बार अपना मुँह उस के स्तनों के आगे पीछे मारता रहता है। सर्दियों में तो कई बार उसे सड़क के किनारे पत्तों पर पड़े कोहरे का जैसे ताड़ना होता। कड़ाके की सर्दी होती। इस सर्दी में भी उसे बार बार टंकियाँ पानी से भरनी पड़ती और भर भर कर सुनसान सड़कों पर खाली करनी होती। इस तरह कई बार इस सुबह शाम के एक से नीरस जीवन से ऊब कर वह सोचता—काश कहीं बारिश हो जाये! जिस रात बारिश होती, उस से अगले दिन उसे छुट्टी हो जाती। जो काम उसे करना होता था वह काम उस का भगवान कर देता।

कई बार रात को सोने से पहले वह सोचता—आज भगवान् वर्षा कर दे तो कल दोपहर तक सोने का मजा आ जाये! कई बार जब वह यों सोचता तो वर्षा हो जाती कई बार वर्षा न होती। और जिस रात को पानी बरसता सवेरे वह सो-सो कर जागता और जाग जाग कर सोता। वह लेटा रहता, लेटा रहता जब तक उस के शरीर का अंग अंग ऊब न जाता थक न जाता।

*फिर उस का विवाह हो गया।*

उस की पत्नी लाजवन्ती भोली सी, अल्हड़ सी एक गाँव की रहने वाली थी। सवेरे जब उस की आँख खुलती तो उस के साथ वाली चारपाई पर उस का पति न होता। मुँह अँधेरे ही वह अपने काम पर निकल जाता था। शाम को जब उस की पड़ोसिनें अपने अपने घरवालों के साथ बाज़ार में घूमने के लिये निकलतीं, सैर करने

उस के बच्चे का पिता आ गया। छोटे मोटे कामों में इधर उधर की बातों में रात हो गयी।

सोने के लिए जब लाजवन्ती ने करवट ली, तो एक बार फिर उसे दुपट्टे का गोटा याद आया और फिर एकाएक उस के मुख से निकल गया, 'हे भगवन्! कहीं आज रात तू वर्षा कर दे तो '

और फिर सहसा उसे अपने ऊपर जैसे लज्जा सी आयी। ऐसी लज्जा जो उसे बचपन में अपने मुहल्ले के गुरुद्वारे के भाई से दूसरी बार प्रसाद लेते हुए आयी थी। रात भर लाजवन्ती सपनों में भूखी-प्यासी रेत के मैदानों में घूमती रही, पहाड़ियों पर चढ़ती रही, गड्ढा का पार करती रही, और सुबह मुँह-अंधेरे जब वह अपने बच्चे की किलकारी सुन कर उठी तो उसे अपनी आँखों पर विश्वास न आया बाहर वर्षा हो रही थी। बाहर वर्षा हो रही थी और लाजवन्ती को अपनेआप से डर लगने लगा। खिड़की में खड़ी वह देर तक कांपती रही। रिमझिम रिमझिम पड़ती बूँदों को देख कर उस की आँखों में छम छम आँसू बरसते रहे।

और फिर उस ने अपने बच्चे को तयार किया स्वयं तयार हुई। इतने में वर्षा थम गयी वह अपने पति को साथ ले कर मन्दिर की ओर चल पड़ी।

मन्दिर से लौटते हुए एक गोटा क्या वह तो पूरे दस रुपये का सामान खरीद लायी।

फिर उस की बहन और बहनोई आये। जिस दिन व आये दिन भर वर्षा होती रही। अगले दिन भी वर्षा हो रही थी। उस की बहन बहुत बेचैन होने लगी। उन्हें गाड़ी पकड़नी थी और वर्षा रुकने का नाम न लेती थी।

लाजवन्ती को ऐसे लगता मानो वह कहेगी और वर्षा रुक जायेगी। जैसे उसे बस संकेत ही करना हो। ज्यों-ज्यों उस की बहन खीजती लाजवन्ती को हँसी आती। उस का पति बार बार अतिथियों की बेबसी पर लज्जित सा होता। लाजवन्ती के कपोलों से जैसे मुसकराहटें फूट फूट पड़ती।

उन को ग्यारह बजे की गाड़ी से जाना था और अब नौ बज चुके थे। इस तरह सब को घबराया हुआ देख कर लाजवन्ती के मुख से सहसा निकला "दस बजे तक वर्षा थम जायेगी फिर चले जाना।"

लाजवन्ती का पति कहता कि यह वर्षा थमने वाली नहीं। उस की बहन कहती वर्षा की यह झड़ी तो शायद सात दिन तक न रुके। और उस का बहनोई इस कमरे से उस कमरे तक उस कमरे से इस कमरे तक निरर्थक टहल रहा था। उसे कुछ समझ में न आ रहा था कि वह क्या करे क्या न करे।

ठीक दस बजे वर्षा थम गयी।

उस की बहन और बहनोई खुशी-खुशी चले गये। इस बात पर किसी ने ध्यान ही न दिया कि जैसे लाजवन्ती ने कहा था वर्षा पूरे दस बजे रुक गयी थी।

कभी कभी जब वह अपने बच्चे को सवार रही होती, अपने पति के कपड़े धो रही होती, अपने आँगन में झाड़ू देती सामने गली तक को बुहार कर मुड़ रही होती, वर्षा के हो जाने और वर्षा के रुक जाने की बात सोच कर लाजवन्ती को अपनाआप अच्छा अच्छा सा लगने लगता। अकेली अपने क्वाटर की खिडकी में बैठी कभी कभी लाजवन्ती आकाश की ओर देखती और उसे ऐसा लगता जैसे उसे देख देख कर कोई हँस रहा हो, जैसे उसे कोई ऊपर बुला रहा हो। घर के काम-काज से निबट कर हमेशा वह, मदमाती सी, खिडकी में बैठी रहती।

इस प्रकार नशे-नशे से भरपूर जिन्दगी एक मधुरता के साथ बीतती गयी।

लाजवन्ती का बच्चा अब बडा हो रहा था। जब वह अपने वर्षा कर देने वाले और वर्षा रोक देने वाले भगवान के ध्यान में मग्न बैठी होती तो उस का बच्चा आ कर कभी उसे तंग नही करता था बाहर दालान में अपनेआप खेलता रहता था।

पर एक वस्तु जो कुछ दिनो से लाजवन्ती की इस अलौकिक लगन में विघ्न डाल रही थी वह था पडोसियो का नया खरीदा हुआ रेडियो। सवेरे दोपहर साझ हर समय वे रेडियो लगाये रखते।

झाड़ू देते हुए नहाते हुए, रसोई में काम करते हुए कपडे धोते हुए बरतन साफ करते हुए, सोते हुए, सो कर जागते हुए हर समय उस के कानो में रेडियो की आवाज सुनाई पडती रहती। लाजवन्ती बहुत खीजती। बार बार वह अपने कानो पर हाथ रखती, बार बार अपनी आँखें बन्द करती। पर रेडियो की आवाज तो जैसे सब परदे चीर कर आती रहती। कभी कभी वह अपने मुहू पर हाथ रख लेती, कानों में उँगलियाँ दे लेती, पर रेडियो की आवाज जैसे बलात उस की ओर दौडी आ रही हो। उस के अग-अग में पोर-पोर में जैसे वह रचती जा रही हो।

और फिर लाजवन्ती को रेडियो के गाने अच्छे लगने लगे। बार बार सुनने से कई गीत तो उसे कण्ठस्थ हो गये कई गीतो की वह मन ही मन में प्रतीक्षा करती रहती। अकेली खिडकी में बैठी वह कभी देर तक किसी नये सुने हुए गाने को बार बार गुनगुनाती रहती। लाजवन्ती का बच्चा तोतले स्वर से रेडियो के किसी गीत को गाने का यत्न कर रहा उसे बडा प्यारा लगता। लाजवन्ती हैरान होती, दूध देने वाला आता, वह भी धीरे धीरे रेडियो का कोई गीत गा रहा होता, सब्जी देने वाला आता वह भी नाक में कोई तर्ज गुनगुना रहा होता, कोई ऐसी तर्ज जो लाजवन्ती ने रेडियो पर सुनी होती थी। और वही तर्ज नाली साफ करते समय जमादारिन भी सुबह शाम गुनगुनाती रहती।

एक दिन किसी काम से लाजवन्ती पडोसियो के घर बैठी हुई थी। कितनी देर रेडियो पर गाना होता रहा। फिर लाजवन्ती ने किसी को सूचना देते हुए सुना—"आज अमुक अमुक स्थान पर वर्षा होगी, बादल गरजेंगे बिजली चमकेगी और यह भी सम्भावना है कि ओले भी पडें।"

वर्षा का एलान रेडियो पर सुन कर लाजवन्ती हैरान सी रह गयी। उस के हृदय पर एक धक्का सा लगा। उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो उस से किसी ने मजाक किया हो। रेडियो वालों को कैसे पता चल सकता है कि आज वर्षा होगी या नहीं होगी ? यह कैसे हो सकता है ? यह क्योंकर हो सकता है ? और इन्हीं विचारों में डूबी हुई वह उस रात सो गयी। अभी वह थोड़ी देर ही सो पायी थी कि उस की आँख खुल गयी। बादल बहुत ज़ोर से गरज रहे थे, बिजली चमक रही थी, आकाश जैसे टप-टप, टप-टप कर रहा हो। और अभी लाजवन्ती अपनी आँखें मल ही रही थी, उसे पूरा विश्वास भी नहीं हुआ था कि वर्षा शुरू हो गयी।

उस सारी रात लाजवन्ती सो न सकी। उस की समझ में नहीं आ रहा था कि उसे हो क्या रहा है। उसे एक टीस सी अंग अंग में अनुभव होती।

और लाजवन्ती की समझ में कुछ न आता। उसे अपना मन कभी खाली खाली लगता कभी भरा भरा।

इस प्रकार जीवन व्यतीत होता गया। एक पूनम को लाजवन्ती का बहुत जी चाहा कि वह मन्दिर जाये। वह सोचती कि यदि वर्षा हो जाये तो वह अपने पति को मना ही लेगी। और सारी रात लाजवन्ती हाथ जोड़ती रही। सारी रात आकाश की ओर देख कर प्रार्थना करती रही, पर तारे वैसे के वैसे ही झिलमिलाते रहे, चाँद वैसे का वैसा ही मुसकाता रहा, न बादल आये न वर्षा हुई।

एक मास बीत गया।

अगली पूनम को लाजवन्ती को फिर अपना भगवान् याद आ रहा था। एक बवण्डर सा उस के हृदय में जैसे बार-बार उठता। और फिर वह रात भर प्रार्थना करती रही माथा रगड़ती रही, मनौतियाँ मानती रही। पर आकाश की आँख से एक बूँद भी न टपकी।

हर साँझ लाजवन्ती पड़ोसियों का रेडियो सुनती। हर रोज़ वह बोलता कि मौसम खुश्क रहेगा।

एक मास और बीत गया।

अगली पूनम को लाजवन्ती ने न कुछ खाया न कुछ पीया। सारा दिन सारी रात अपने मन-मन्दिर में जैसे उस ने एक ज्योति जगाये रखी, पर वर्षा न हुई बिल्कुल न हुई।

उस की पड़ोसिनें अगली सुबह अपने पतियों के साथ हँसती-हँसती मन्दिर जा रही थीं, और लाजवन्ती का पति हर रोज़ की तरह हँसता-खाँसता उस के देखते ही देखते अपने काम पर चला गया। क्या मजाल है कि एक मिनट भी लेट हो जाय !

उस दिन आकाश पर छिटके तारों को देख कर लाजवन्ती ने अपने मन से कहा—
"इस निगोड़े भगवान् को न जाने क्या हो गया है ?"

●

# दस्तक

लहू-लुहान उँगली में से तड तड खून बह रहा, छल छल आँखों में से अश्रु फूट रहे बिट्टी ने फिर अपनी उँगली की पोर को ब्लेड से छील लिया है। और मेरी जान का टुकडा, हमारी बच्ची, मेरे सामने आ खडी हुई है। होंठों पर रत्ती भर फरियाद नहीं इस बात से डर रही कि मैं खफा हूँगा। मैं जो हमेशा कहता रहता हूँ—"बिट्टी तुम यूँ ब्लेड से हर समय पेंसिल मत बनाती रहा करो।" लेकिन ब्लेड और पेंसिल इन दो चीजों का साथ बिट्टी से नहीं छूट सकता। पढ रही, लिख रही एक ब्लेड, एक पेंसिल हमेशा वह अपने साथ रख लेती है।

लहू लुहान उँगली में से तड-तड खून बह रहा, मैं ने अपनी बच्ची को सीने से लगा लिया है। और मैं पुकार पुकार कर बच्ची की मा डाक्टर को बुला रहा हूँ।

मेरी पत्नी खफा हो रही है—"अच्छा हुआ, तुम्हारा इलाज ही यही है। और ब्लेड से खेल! मैं तुम्हारे सारे ब्लेड उठा कर नाली में फेंक दूँगी। कोई बात भी हुई। हर वक्त पेंसिल बना रही! एक सतर लिखी और फिर पेंसिल को बनाना शुरू कर दिया, एक अक्षर लिखा और फिर पेंसिल को छीलना शुरू कर दिया। कोई बात भी हुई?" मेरी पत्नी बच्ची का बह रहा खून बन्द करने की कोशिश भी कर रही है साथ साथ उस पर खीझ भी रही है।

अपने पिता की विशाल बाँहों में हमारी बच्ची खामोश पडी है। माँ बोले जा रही है, बोले जा रही है।

लहू रुक गया है। पट्टी बाँध कर बिट्टी की मा फिर अपने काम में लग गयी है। और एक फाख्ता की तरह सहमी हुई मेरे सीने के साथ लगी बच्ची को मैं समझा रहा हूँ—"यूँ ब्लेड के साथ नहीं खेलते। पहले भी कितनी बार यूँ तुम्हारी उंगली की पोर छिल चुकी है। और फिर पेंसिल की नोंक इतनी पतली रखने की जरूरत भी क्या है? हर समय पेंसिल को ब्लेड से बना रही तुम्हारी पोर खुरदरी सी लगती है। या ब्लेड से पेंसिल बना रही या ब्लेड से नाखून काट रही। नाखूनों को यूँ बार बार तुम क्यों छेडने लगती हो?'

मेरी बातें सुन रही हमारी बच्ची सो गयी है। मासूम!

साँझ हो चुकी है। पूरे चाँद की चाँदनी रोशनदान से छन छन कर बच्ची के

घने बालें बालों पर पड़ रही है। जैसे नूर बरस रहा हो।

बच्ची की अम्मी बाहर लान में टहलने को निकल गयी है। और मैं अकेला हूं। मुझे लगता है, जैसे बाहर दरवाजे पर कोई दस्तक दे रहा हो।

कोई भी तो नहीं।

कोई नहीं।

दस्तक की आवाज तो आयी थी।

कोई नहीं।

शायद हवा थी।

मुझे एक कविता याद आ रही है। किसी के दरवाजे पर दस्तक होती है, लेकिन वो सुनी अनसुनी कर देता है। दस्तक फिर होती है। लेकिन वो आलस में सोया रहता है। सुबह उठ कर जब वो दरवाजा खोलता है, बाहर दहलीज पर फूलों की एक माला टूटी पड़ी है। और कोमल पांवों के चिह्न लौट कर चले गये दिखाई देते हैं।

और मुझे कई वर्ष पहले की एक याद आ रही है। मेरे सामने जैसे कोई खिल खिला कर हँस रहा हो। आज ये चांद कहाँ से निकला?

शबनम! तुम भी या ब्लेड से खेला करती थी। एक हाथ में ब्लेड, एक हाथ में पेंसिल। हर पंक्ति लिख कर तुम पेंसिल को तिरछाने लगती। कभी ब्लेड से नाखूनों को छेड़ने लगती अपनी उँगलियों की पोरों का तुम ने सत्यानाश कर लिया था। और मैं यूं ही तुम से खफा हुआ करता था। ब्लेड के साथ भी क्या खेलना हुआ! यूं कई बार तुम अपनी उंगलियों को लहू-लुहान कर लिया करती थी। और मैं यूँ तुम्हें कष्ट में देख कर तड़प कर रह जाता था। कोई जवान जहान लड़का किसी जवान जहान लड़की के जख्मी हाथ को पकड़ कर उस की पोरों का लहू थोड़े ही बन्द कर सकता है!

शबनम! तुम्हें हमारी पाक मुहब्बत की कसम! कभी हम ने सत्य और धर्म की सीमाओं को लांघा था? कभी भी नहीं।

तेरे पास बैठा शबनम मुझे लगता जैसे कोई स्वच्छ शीतल पानी में नहा रहा हो। जैसे रिमझिम सावन की फुहार पड़ रही हो। तेरे पास बैठा शबनम मेरे कानों में नगमें सुनाई देते रहते। मेरी पलकें एक उन्माद में मुंद मुंद जातीं। तेरे पास बैठा शबनम मैं फूल की तरह हल्का महसूस करने लगता, जैसे कोई सुगंधियों में लिपटा हुआ उड़ रहा हो।

शबनम तुम्हें हमारी पाक मुहब्बत की क़सम! कभी हम ने फीका बोल बोला था? एक दूसरे के पास बैठ कभी हम ने कोई भद्दा सपना देखा था? कभी भी नहीं।

दीवानगी के वो दिन! सुबह गैलरी में खड़ी हो कर तुम नीचे सड़क पर मुझे गुजरता हुआ देखा करती थी। फिर दोपहर को हम किसी न किसी बहाने कहीं न कहीं मिल लिया करते। और हर शाम हमारी इकट्ठे गुजरती। हर रोज इस हमारी मुलाकात को रात के अँधेरे या फासले की दूरी की मजबूरियाँ तोड़तीं। बस एक दूसरे के

जीवन में हम घुल मिल गये थे ! पत्थर और दीवार हमारी मुहब्बत को लालसा भरी नजरों से देखा करती थी।

और फिर क़िस्मत ने हम से छल किया। तुम्हें किसी ने जा कर कहा—मैं फलाँ झील की छाती पर एक औरत के साथ नाव में बैठा सैर करता देखा गया था। तुम ने सुना और चारो कपड़े तुम्हें आग लग गयी। जिसे तुम्हारी मोहब्बत हासिल हो, वो किसी और को आँखों तले लाये ये कैसे हो सकता ? और तुम ने एक शब्द मुख से कहे बिना अपने किवाड मुझ पर बन्द कर लिये। मैं किसे अपनी सफ़ाई पेश करता ? कैसे अपनी सफ़ाई पेश करता ? और मेरी मुहब्बत रातें जाग जाग आकाश के तारे गिन गिन कर फरियादें करती। लहू के मेरे अश्रु देख पत्थर तक पसीज जाते, किन्तु मेरा ये दर्द तुम तक न पहुँच सका।

आज जब एक उमर गुजर चुकी है, शायद ये बात अब बतायी जा सकती है। ये राज जो मैं इतने दिन अपने सीने में छुपाये हुए था, शायद आज बेनकाब किया जा सकता है।

शबनम ! जब मैं छोटा था, बहुत छोटा, वो औरत हमारे गाव में नयी-नयी ब्याही हुई आयी थी। शहर की लड़की, एक गाँव में हर घर की चर्चा बन गयी। आँखों में काजल डाले, होंठों पर सुर्ख़ी लगाये, बालों में तोते मैना बना कर जब वो अपनी ड्योढ़ी में बैठती, बस्ता उठाये स्कूल जा रहा हर रोज मेरी नजर उचक कर उधर उठ जाती। लेकिन मैं तो तब छोटा था बहुत छोटा। और मेरा जी चाहता उस लड़की के पास जा कर देखूँ कैसे वो होंठों को रँगती थी, कैसे वो बालों में फन्दे बनाती थी, जिन में मेरी नजर जैसे उलझ कर रह जाती। और कहानी की हर परी मैं सोचता वो लड़की होगी, हर कहानी की शाहज़ादी मैं सोचता, वही लड़की होगी।

और अब जब मैं जवान हो गया था। अब, जब मैं ने मोटर चलाना सीख ली थी। अब, जब मैं अपनी मन मरजी का मालिक था। अब जब मैं जहाँ चाहूँ जा सकता था। मेरे बचपन की वो परी एक दिन हँसते-हँसते कहने लगी— कभी हमें भी तो सैर करवाओ अपनी मोटर में। चारों ओर फिरकिनी की तरह इसे घुमाये फिरते हो।" अब उस के बालों में तोते मैना नहीं बने हुए थे जिन को उस के पास जा कर मैं देखने के लिए उत्सुक रहता था। अब उस के होंठों पर सुर्ख़ी नहीं थी, जो मेरे मासूम लबों पर मीठे शहद का स्वाद भर दिया करती थी। और मैं उस औरत को अपनी मोटर में बिठा, सैर के लिए चल दिया। उस सुगन्ध की याद में जो कभी मुझे उस की ड्योढ़ी में से आया करती थी।

शबनम ! तुम खुद ही बताओ, कोई इस तरह की फ़रमाइश कैसे टाल सकता है ?

लेकिन झील पर पहुँच कर मुझे लगा जैसे मैं ने अपने समाज के साथ अन्याय किया है। एक नौजवान लड़के को एक औरत के साथ—चाहे वो औरत उम्र में दस

साल बड़ी हो—यूँ बाहर नही निकलना चाहिए। और मैं ने उसी क्षण उसे टक्सी में बठा कर लौटा दिया।

उस शाम पाक में तुम्हारी याद ने मुझे बसे सताया था! हरे भरे बागीचे में एक भयानक सूनापन मुझे खान को दौड़ रहा था। हर सुन्दर दृश्य में मुझ तुम्हारी झलक दिखाई देती। झील के मोतिया जसे पानी में तुम तरती हुई मुझे नजर आयीं। पहाडी के शिखर पर नाचते हुए मं ने तुम्हें देखा। फूलों के रगों में मुसकराती हुई तुम मुझे दिखाई दी।

लेकिन पाक से जब मैं लौटा तुम मुझ से बहुत दूर जा चुकी थीं। तुम्हारी गरत य क्रुफ कसे गवारा कर सकती थी? और मैं अपनी सचाई को अपन ईमान को छाती से लगाये, उस दिन का इन्तजार करने लगा जब तुम्हें मेरी मुहब्बत की पहचान आ सके। तुम्हें जब यक़ीन आ सके कि कीचड में रह कर भा कमल कीचड़ से ऊपर होता ह।

लेकिन वा दिन कभा नही आया। कभी भी नहीं।

पढाई के दिनो में इम्तिहानों का डर जब मुझे खाने को दौडता था मं ने तब तुम्हारी प्रतीक्षा की। तुम नही आयी।

इम्तिहाना के बाद का अवकाश मैं ने अपने अकेलेपन में कसे-कसे तुम्हें नही पुकारा। लेकिन तुम तक मेरी आवाज नही पहुँची।

फिर नौकरी के इन्तजार में स्वप्ना की भरमार—मैं ख्वाबों के महल बनाता थक थक जाता। तुम्हारा साथ मुझे हासिल नही था।

फिर जिन्दगी की हर सफलता जिन्दगी की हर खुशी फिर जिन्दगी को हर बहार, मैं तुम्हें अपने आस-पास के सूनेपन में ढूँढता रहा तुम कही भी नही थी।

और अब, जब मैं एक परियो जसी पत्नी का पति हू और अब जब म लाला जसे दो बच्चा का पिता हूँ हमारी बेटी का यू ब्लेड के साथ खलना, हर समय पेंसिल को ब्लेड से बनाने रहना, हर सतर पर पेंसिल की नोंक को तिरछाने लगना जसे कभी तुम किया करती थी, शबनम! ठीक वसे का वसे ब्लड के साथ नाखूना को छीलते रहना, रगड रगड कर पोरों का सत्यानाश कर लेना, जसे कभी तुम्हारी आदत थी, शबनम! और फिर उस का ब्लेड से हर दूसरे रोज़ अपनी उगली का लहू-लुहान कर लेना जसे तुम्हारी पोरा को लहू-लुहान देख कर मैं तडप उठता था। कोपल जसी हमारी बच्ची की उँगली में से तड तड लहू का बहना शबनम, क्या तुम सोचती हो ये अमाम नहीं? मर अन्दर के पिता से क्या तुम सोचती हो य जुल्म नही? तुम खुद ही बताओ शबनम।

अच्छा सोच कर फिर बता देना। अब मेरे बच्चा की माँ पूरे चाद की चाँदनी में टहल कर बाहर लान से अन्दर घर में आ रही ह।

खुदाहाफ़िज शबनम।

## गोरी दा चित लगा

एक ओर दराती जो कलग नाग का चिह्न थी और एक ओर लटठे का कासनी रग में रगा रूमाल रतनो की फरमाइश, और कुजू तेज तज डग भरता अपने घर की तरफ जा रहा था। वह सोचता शायद आज फिर वह कुछ अधिक लुगडी पी गया था। उस के पग बार बार लडखडा रहे थे।

फिर कुजू सोचता, हमेशा वह लुगडी ज्यादा पी लेता था जब रतनी उस का नाच देखने नही आती थी। बाकी सब गहिनें आयी थी। गहना से लदी हुई, रग बिरगे रूमालो को लहराती, परन्तु उस की रतनो नही आयी थी। चचलो भी आयी थी, जो वस्त्र धोते हुए साथ साथ रोती रहती थी। और रतनी नही थी। आज फिर आयी। जब रतनी उसे आगे पीछे खडी हुई दिखाई न देती तो बार-बार कुजू का नशा उतर-उतर जाता। और बार-बार वह लुगडी क मटके स जा मुँह लगाता।

और जब नाच खत्म होता सारी शाम की पी हुई लुगडी का नशा जसे एकदम उसे चढ जाता। और घर लौटते के उस के पाव लडखडाने रहते। जितनी वह जल्दी करता उतने ही उस के पग देर करते।

फिर कुजू गाने लगा
गोरी दा चित लगा चम्बे दियाँ धाराँ।
घर घर टिकलू घर घर बिंदलू।
घर घर बाँकियाँ नाराँ।
गोरी दा चित लगा चम्बे दिया धराँ

रतनी वाह वाह बाँकी गहन थी! बरमोर की सारी वादी में रतनी जसी कोई दूसरी औरत नही थी। चचलो तो अब अधेड उम्र की हो गयी थी। कपडे धोते रोती रहती अपने कुजूए के लिए जो कहो परदेश चला गया था। कई बार कुजू ने चचलो का कहा था 'तू मुझे ही अपना कुजू समझ ले" और वह हमेशा आँखें भर कर उत्तर देती थी 'तुम तो रतनी के कुजू हो।" सब गाँव वाले उसे रतनी का कुजू कह कर पुकारते थे।

आज-कल बरमार की वादी कसे सजी हुई थी! लाल फूलो की झाडियाँ और सुगध सुगध सी चारों ओर! ऐसे ही दिन थे जब पहली बार कुजू ने रतनी को देखा

था। चाँदी के गहनों से लदी हुई अखरोट के पेड़ के तले तने से लग कर खड़ी थी। उसी दिन तो वह परली ओर से धौलाधार को पार कर के आया था। पूरे एक मास का सफर। और उसे यूँ लगा जैसे छह मास जाने के बाद अखरोट के उस पेड़ के नीचे खड़ी उस की प्रतीक्षा करती रही थी, उस की राह देखती रही थी। और कुजू की सारी थकान उतर गयी।

वह दिन और आज का दिन कुजू ने रतनो को सर पर उठा लिया था। दिल के रंगीले पलंग पर बिठा लिया था। आठों पहर वह उस की आँखों में, पलकों में बसी रहती। सोते-जागते वह रतनो के स्वप्न देखता रहता। किसी गद्दी ने अपनी गद्दन को इस तरह प्रेम नहीं किया होगा।

और रतनो हँसती कैसे थी, जैसे घुँघरुओं की भरी हुई गागर छलक पड़े। काँच की चूड़ियों की शौकीन। मेले से हमेशा काँच की चूड़ियाँ खरीदती। कोई आ रहा जा रहा होता बस काँच की चूड़ियाँ मँगवाती रहती। कुहनियाँ कुहनियाँ तक उस की बाँहें ढकी होतीं। काँच की चूड़ियाँ और रंग बिरंगे रेशमी रूमाल। सिर पर रूमाल, गले में रूमाल, कमर की दायीं ओर रूमाल, बायीं ओर रूमाल जिधर हाथ डालती नये से नया रूमाल निकाल लाती। रूमालों की शौकीन! उस के रूमालों में से कितनी प्यारी सुगन्ध आती थी!

और जब कुजू को रतनो पर प्यार आता, उसे पता नहीं लगता था वह क्या करे। और वह उस की चम चम करती चूड़ियों की ओर उस के सुगन्धों से अटे रंग बिरंगे रूमालों की ओर देखता रहता।

एक बार बावली में नहा कर निकली रतनो उसे कितनी प्यारी लगी थी! गोरी चिट्टी, जैसे दूध में से धुला हुआ उस का अंग-अंग, कोमल-कोमल, साफ साफ, जैसे हाथ लगाने से मैली हो। और वह उस के नहाये नहाये अंगों की ओर, और वह उस के धुले धुले हाथों की ओर कितनी देर देखता रहा! उस रात उसे इतनी गरमी लगी थी, इतनी गरमी जितनी एक बार पहाड़ की खोह में लगी थी जब तीन भेड़ों को अपने ऊपर ले कर वह सो गया था।

रतनो हमेशा उसे चचलो के ताने दिया करती थी। चचलो जो कपड़े धोते छाज छाज अश्रु रोती रहती थी। और कुजू हमेशा उसे कहता 'चचलो का कुजू और था वह परदेश चला गया।' पर रतनो को कभी विश्वास नहीं हुआ था। टीले के उस ओर रहती चचलो एक बार गा रही थी 'मैं तेरी मिन्नत करती हूँ पहाड़ के ओ टीले! तुम ज़रा झुक जाओ मैं अपने प्रीतम के घर को एक नज़र देख लूँ।' और रतनो ने अपने कानों उस गाती को सुना था। गाती और छल-छल अश्रु रोये जाती।

यह चचलो क्यों उस के दिमाग पर फिर आज सवार थी? जब वह लुगड़ी अधिक पी लेता था चुपके चुपके चचलो के खयाल उसे आ कर घेरने लगते थे। कोई बात भी हुई? एक चचलो? कुजू तो चचलो जैसी दस गद्दनों को रतनो के पाँव की

धूल पर कुरबान कर दे। और फिर कुजू गाने लगा।

'गोरी दा चित लगा चम्बे दियाँ धारां।''

घर घर चकर घर घर बकर।

घर घर भौर बहारां।

गोरी दा चित लगा चम्बे दियाँ धारां।''

कुजू सोचता शायद आज वह बहुत ज्यादा पी गया था। एक मामूली रोडे से टकरा कर वह वहाँ आ गिरा था। कसे औधा जा पडा था। आज वह लुगडी ज्यादा पी गया था।

और फिर कुजू का आँखो के सामने रतनो की तीखी नाक, शोख नन, परिया जैसा कोमल मुखडा घूमने लगा। भेडों के घने दूध पर पली रतनो हँसमुख थी। हमेशा उस छेरुआ' और 'भेऊआ कह कर बुलानो। और कुजू के दिल पर छुरी चल जाती थी, और उन के काना में मुरली का सगीत गूँजने लगता था।

आज फिर उस ने खीर पकायी थी। जब भी इसे शाम को बाहर जाना होता वह जरूर खीर पकाती थी। और कटोरा भर कर उस के लिए खीर का रखती थी। कुजू सोचता, उसे ठण्डो खोर खाना कितना अच्छा लगता था।

पर यह काला बीर जब से उसे चिपटा था, सिम्बल के पेड का वन-बीर रतनी और की ओर हो गयी थी। कम्बख्त कई बार इस के लिए रखी खीर में भी मुँह मार जाता था। और फिर कुजू सिर से ले कर पाव तक काँप गया। काले बीर के कहर से हर एक डरता था। नरसिंह और काला बीर। यह दानो बडे दुष्ट वन बीर सुने जाते थे। इधर से घर का मालिक घर से निकला उधर आ कर वह घर की स्त्री को तग करना शुरू कर देते। और यह जो घर में घुसते ही वह अन्दर से कुडी बन्द कर लेते यह कुजू को बहुत बुरा लगता था। परिया जसी उस की पत्नी पर उस ने जादू कर लिया था। उस के पुरोहित को काले बीर को खुश करने का ढग नही आता था। काला बीर जा पहाड की ढल्वाना पर रहता था उस का पुरोहित केवल बताल को खुश कर सकता था। 'बताल' जिस का निवास झरना और दरियाओ में होता है। और शेरुग नाग की निशानी दराती कुजू हर समय अपने पास रखता था।

और कुजू सोचता किसी दिन वह काले बीर को अपनी दराती से काट डालेगा, जैसे कोई ज्वार के टाडे की एक झटके से ढेरो कर देता है। और फिर उस के हाथ पसीना पसीना हो गये। डर से उस का बदन कापने लगा। काले बीर को कौन मार सकता था? कुजू को ऐसा लगा जसे उस का सारे का सारा नशा उतर गया है।। चाँद की चाँदनी में उस अपने घर की राह साफ दिखाई देने लगी। चारों ओर था ओर तो कोई आँख उठा कर नही देख सकता था। काला बीर और नरसिंह दोनों बडे दुष्ट थे। चाहें तो आदमी का रूप धारण कर लेते। पर यह काला बीर [illegible] क्यो बन्द कर लेता था? और लोग कहते यदि घरवाला ऐसे समय [illegible] आय

गोरी दा चित लगा

जब काला चोर मनुष्य में रूप में होता है, तो चोर के क्रोध से पति की मृत्यु भी हो सकती है। क्रोध में आ कर काला चोर किसी को भस्म कर सकता है।

इस तरह सोचते हुए कुजू के हाथों में और पसीना आ गया। उस की बगलों में से पसीने की धारें चूने लगा। हिरासे हुए उस के शरीर का सारा रोम-रोम जग गया। और उसे सामने अपना घर दिखाई दे रहा था। डबिया की तरह लिपा-पुता, साफ सुथरा उस का घर। रतनी अपने घर को कितना सवार कर रखती थी! चूल्हा फूकता भी कौन? एक रतनी और एक कुजू। कुजू सोचता भूखा तो अब हुआ करेगा।

है! उस के घर का दरवाजा बन्द था! कहीं काला चोर न हो। और कुजू दौड़ कर आगे हुआ। अन्दर से कुंडी लगी हुई थी।

यह तो काला चोर था!

दरवाजे के बाहर खड़ा कुजू पानी-पानी हो गया। यह तो काला चोर था। अन्दर से रतनी की चूड़ियों की झनकार आ रही थी। बार बार वह अपनी बाँह खाट की पट्टी पर झटकती बार बार चूड़ियों की झनकार सुनाई देती।

और कुजू वहीं का वहीं ढेरी हो गया। सिर पकड़ कर दरवाजे के सामने बैठ गया। रतनी कैसे बाँहों को पटक रही थी! उस की चूड़ियों की यह आवाज। और फिर कुजू को जैसे सुनाई देना बन्द हो गया। उस की आँखों के सामने अजीब चित्र घूमने लग पड़े।

विवाह का दिन, कुजू के शरीर पर उबटना मला गया। फिर उस की दायीं कलाई पर ऊन के तीन काले तागे बाँधे गये। लाल दुपट्टा में ढक कर फिर उस को माँ उसे आँगन में ले गयी। फिर उसे नहलाया गया। नहाने से पहले ऊन के तागे उतार लिये गये। और फिर एक चप्पन में सुलग रहे कोयला को कुजू ने अपने पाँव से उल्टाया। फिर पण्डित ने आ कर मौली बाँधा। कुजू को घी और गुड़ खाने को दिया गया। अब उसे जोगिया वाले वस्त्र पहनाये गये। कानों में बालियाँ कमर पर धोती और कन्धे पर झोली। फिर पण्डित ने उस के हाथ और पाँव धोये, उस के मुँह पर पानी के छींटे दिये। और फिर उस ने अपने सम्बन्धियों से भीख माँगी। किसी ने उसे कुछ दिया और किसी ने उसे कुछ देने का इकरार किया। और फिर उसे टोकरे में बिठाया गया। उस के सिर पर सूखी घास रख कर उस पर एक छुरी रखी गयी। फिर उस के सिर में तेल डाला गया। उस का मामू सरसों के तेल का गड़वा भरवा लाया था। फिर उस ने तीर कमान ले कर बकरी का निशाना लगाया। बकरी चाहे पहले ही मरी हुई थी किन्तु कुजू का निशाना चूका तो नहीं था! अब उसे फिर घी और गुड़ खाने के लिए दिया गया। और उस ने सफेद साफा बाँध लिया, सफेद कुरता पहन लिया, लाल चादर उस के हाथों में आगे ही थी। और फिर उस की भाभी ने उस की आँखों में काजल लगाया। उस को सेहरा बाँधा। ब्राह्मण ने जातों वाली

थाली का उस के सिर से तीन बार घुमाया। उस की मा ने तीन रोटिया उस से वार कर तीन ओर फेंकीं। और फिर वह पालकी में बैठ गया। उस की मा ने उसे अपना स्तन चूसने के लिए दिया। और चार कहार पालकी को उठा कर एक लकडी के तोत के पास ले गये, जिस की उस की माँ ने और कुजू ने पूजा की। और फिर पानी और पत्तों से भरा एक घडा उस के सामने रखा गया। कुजू ने घडे में पैसे डाले, और बारात रतनी के घर की ओर चल दी।

रतनी की माँ ने ड्योढी के बाहर उन का स्वागत किया। जलती हुई जोता की एक थाली का सात बार उस के सिर से वार कर आगन में तीन रोटिया फेंकी। और फिर रतनी के पिता ने कुजू के गले म एक दुपट्टा आन डाला। उस के पाँव धो कर उस की पूजा की गयी। पुरोहित ने एक पत्ते पर चावल, अखरोट और फूल रख कर कुजू को दिये। फिर सामने बरामद में कुजू को रतनी के पास ला कर बिठा दिया गया। ब्राह्मण ने तीन बार उन के कधा को आपस में टकराया। रतनी के कधे से जब उस का कधा लगता था तो उसे क्या हो जाता था! बार-बार वह आखें खोलता बार बार उस की पलकें जुड-जुड जाती। फिर उन्हें एक दूसरे पर बेसन उडाने के लिए कहा गया। कुजू से तो एक बार भी आक्रमण न हो सका और रतनी उस के देखत देखते कई हमले कर गयी। रतनी कितनी चचल थी! और फिर रतनी ने उसे चमेली की सात कलियाँ दी, जिन्हें उस ने पाँव के नीचे मसल दिया।

और फिर रतनी न उस के पाव धोये। और फिर पूजा हुई। कुजू ने रतनी की चादर पर लाल रग फेंका। पण्डित ने चार पैसे अखरोट, दूब, फूल और चावल रतनी को दिये। फिर कुजू ने अपने हाथ रतनी के हाथा पर रख दिये और पुरोहित ने उन पर कपडा डाल दिया। पुरोहित ने ऊपर कपडा डाला ही था कि रतनी ने उस के हाथा को चुटकियाँ नोचना शुरू कर दिया। कुजू बोल भी ता नही सकता था। बार बार वह चुटकियाँ नोंचती। रतनी कितना चचल थी!

और फिर उन को अन्दर कमरे में ले गये। कामदेव की मूर्ति के सामने उन्ह बिठा कर रतनी के बालों को कघी की गयी। रतनी की मा और रतनी की बहन कघी करते गाती जा रही थी। रतनी के बाल कितने लम्बे थे, कितने काले थे! उन में से कितनी प्यारी सुगध आ रही थी! और कुजू का जो चाहा था अब यदि पुरोहित परना कर तो वह रतनी के हाथ में ऐसी चुटकी ले कि रतनी तडप ही उठे। परन्तु यहा तो सब यो घूर घूर कर उस देख रहे थे!

और फिर उस के दुपट्टे स रतनी की चादर का कोना बाध दिया गया। रतनी के मामू ने रतनी का उठा कर चबूतरे पर ला बिठाया। और फिर हवन हुआ। रतनी के पिता ने रतनी और कुजू के पर धाये। गणेश ब्रह्मा विष्णु और कुम्भ चार कुपिया और चार वेदो की पूजा हुई। फिर एक छाज में भुने हुए जौ उस के पास लाये गये। कुजू ने तीन बार मुट्ठी भर कर तीन ढेरियाँ बनायीं। और रतनी के भाई

ने बरिया को छोड़ दिया। फिर फेरे हुए। जब वह अग्नि के गिर्द घूम रहे थे, आगे पीछे खड़ी स्त्रियों ने गाना शुरू कर दिया। उन में मंगलों की आवाज़ कितनी ऊंची थी! पगली जो बदन पर ढोल रोती रहती थी। और फिर वह रतनी को डोले में डाल कर अपने घर ले आया था।

इस घर में उस की मां ने नव विवाहित जोड़े की पूजा की। और फिर कामदेव की मूर्ति के सामने रखे मिट्टी के दीये के गिर्द रतनी और कुजू ने चार फेरे लिये। मिट्टी के दीये के पास एक पानी का घड़ा, एक गुटीला और अनार रखे हुए थे। और फिर पुरोहित ने रतनी का घूंघट उठा दिया। और उन की कलाइयों पर बंधे तागों को ढीला कर दिया।

उस रात जो दावत हुई थी! उस रात जो गाना हुआ था! उस रात जो नाच हुआ था! कितनी लुगड़ी लोगों ने पी थी! कुजू मित्रों को पिलाता था, कुजू के मित्र उसे पिलाते थे। पीते-पीते सब औंधे हो गये थे।

और इस तरह सोचता-सोचता कुजू पांव के बल बैठा लुगड़ी के नशे में ऊंघने लग गया। कितनी देर उस के खर्राटों की आवाज़ आती रही। और फिर जैसे सहसा वह बड़बड़ा कर उठा। उसे ऐसे लगा जैसे अन्दर से कुंडी खुली हो और रात के अंधेरे में कोई उस के पास से गुजर कर बाहर गली में निकल गया था। चांद की पीली-पीली चांदनी में कुजू नशे में चूर अपनी पलकों को उंगलियों से खोल-खोल कर देखता कि काला बीर कितना काला था। किन्तु उसे अपने आंगन में किसी के केवल पगचिह्न दिखाई दिये और कुछ नजर नहीं आया। जो कोई था वह तो कभी का निकल गया था।

और फिर कुजू सोचता, यदि वह काला बीर था और काले बीर को यदि उस ने देख लिया था तो वह बचेगा नहीं। आज की रात वह मर जायगा। काले बीर को मनुष्य के रूप में कोई देख ले तो वह बच नहीं सकता।

और फिर कुजू सोचता उस ने उसे देखा थोड़ा ही था। यह तो लुगड़ी का भ्रम हो, उस की पलक ही नहीं खुली थी। आज तो उस ने उस दिन से भी ज़्यादा पी ली थी, जिस दिन वह रतनी को ब्याह कर लाया था।

और फिर लड़खड़ाते हुए कदम जैसे तैसे वह अपने कोठे में चला गया। उस ने सोचा रतनी बेचारी अकेली होगी। रात भी तो आधी गुजर चुकी थी।

•

# प्रतिध्वनियाँ

एक

"हम ने कमेटी बनायी जो बाहर निकलेगा उस का खाना पानी अलग कर दिया जायेगा। क्या फसादियों से डर कर हम अपने घर छोड़ जायें ?"

'मैं ने अपने देवर को कहा तेरे भाई को मरे छह साल हो गये हैं। मैं उस के सत में रही हूँ। भाई की इज्जत के लिए हमें, माँ बेटी को, तू मार दे। उस ने मेरी बेटी का गला तो काट दिया पर मुझे न मार सका और वहां से भाग गया।'

'बच्चियाँ भूख प्यास से रोतीं और मैं उन के मुँह में कपड़े दे दे कर चुप कर वाती, बाहर शहर नष्ट हो रहा था।'

'जब हम ने देखा हमारे घर को आग लगा रहे हैं तो हम ने शुरू किया जल कर मर जायेंगे। पर मेरी तेरह साल की बच्ची रो पड़ी और हम लकड़ियों में छुपी हुई पकड़ी गयीं।"

"मेरे माता पिता हाथ जोड़ते अगर ले जाना है तो हम सब को ले चलो लेकिन वह बूढ़ा सिर्फ मुझे ही पकड़ कर ले गया।

'अपनी बारह साल की बच्ची को लँगड़ी बना कर उस की इज्जत बचाती रही।'

"मैं ने मुश्किल से अपनी मरी हुई माँ को सलवार पहनायी अपनी बच्ची की छातियों को ढका।'

'पानी की हमें परवाह न थी। 'कलगी वाले' के बच्चे भी तो पानी के लिए तड़प-तड़प कर मर गये। हमें चिन्ता थी अपनी इज्जत की।"

"वही पिछली रात मेरे बच्चा हो गया। मैं ने उसे वहीं रहने दिया। मैं तो पहले दो को सँभालने से आतुर थी।"

"ट्रक में जगह नहीं थी। मेरी बच्चों को मुझ से छीन कर बाहर फेंकने लग पर मैं ने मुकाबला किया और मेरी बच्ची मेर साथ आ गयी।"

"मुझ मेर भया को गाड़ी में से खींच कर दो फसादियों ने निकाल लिया।"

"एक मुसलमान जो मेरा भाई बना हुआ था मुझे सँभाल कर अपन घर ले गया।'

'जहाँ चाहते हमें ठहरा कर हम से बुरा भला करते।"

उस ने जब मुझ देखा तो पहचान लिया। वह हमार गाँव का ही तो था।"

## दो

'कत्लेआम के बाद उन्होंने औरतों को बाँटना शुरू कर लिया। वही दस पठान और छह औरतें।"

"पठानों से बचने के लिए मैं ने एक सिपाही की शरण ली, वह मुझे मुसलमान बनने के लिए कहने लगा।

"लड़कियाँ अपनी शक्लों को कोयले मिट्टी और कीचड़ से खराब कर लेती। मुझ भी पकड़ा गया पर पसन्द न आने पर छोड़ दिया गया।'

हम एक खाइ में चले गये जहा मेर पति के सामने मरा बच्चा हुआ।"

हम ने सलाह की जहलम से गुजरते हुए दरिया में कूद जायेंगी।

एक दिन भारतीय जहाज को देख कर मैं ने कहा "वारी जाऊँ इस जहाज के जिस में सिख मेर भाई ह। पीछे एक फसादी ने सुन लिया और मेरे बच्चे को उठा कर जमीन पर दे पटका।

"पहले, स्कूल मास्टर जो ब्राह्मण था, उसे मुसलमान बनाया गया फिर हम सब मुसलमान बने ।"

"हम ने कहा अगर सात दिन हमारा पिता न आया तो हम मुसलमान हो जायेंगी । पर हमारा पिता न आया ।"

"गाल खीच-खीच कर पठान, लोगो को बताते यह मजे की पट्ठी ह और इस तरह हमें बेचते ।"

"जेलदार की बीवी मेरी शकल बदलना चाहती थी । एक दिन उस ने मेरे हाथ पकडे, और एक पडोसिन ने मेरे गज गज लम्बे बाल काट दिये । म रोयी-पीटी । जब घरवाले कपडे पहनती जो मेरी माँ की निशानी थे तो वह मुझे पीटती । आखिर उस ने मेरे कपडे जला दिये ।"

"कभी-कभी वहाँ आटा न होता और हमें बाहर जगल में ले जाते और बेरिया के बेर खाने के लिए कहते ।"

"मुझे धीरे-धीरे प्यार से अपनाने लगा । पर मैं सोचती मेरे माता पिता, मेरे भाइयों को मारने वाले, मुझे अनाथ बनाने वाले, जबरदस्ती मास खिलाने वाले मुझ से बलात्कार करने वाले, मेरा जीवन नष्ट करने वाले मुझे प्यार नही कर सकते, यह सब धोखा है ।"

"महल्ले वाला ने मेरे बच्चे की सुन्नत कर दी ।"

"जब पठान को पता लगा कि पुलिस वाले मुझे निकाल कर ले जायेंगे तो उस ने मुझे एक फ़ौजी कप्तान के यहाँ बेच दिया जिस के मैं बरतन माँजने लगी ।"

"फिर मैं ने एक से ब्याह कर लिया और अब एक को वासना के लिए रह गयी ।"

"गुजरात में कुछ लडकिया पीर को भेंट की गयी । पीर ने चार लडकिया से तो निकाह किया और बाक़ी को रोटी पकाने के लिए रख लिया ।"

"थानेदार ने मेरे बयान लिये । मैं ने कहा कि, अगर मेरी रायें पूछते हो तो जसे

हरतनगार ने मेर भाई को गाली स उलाया है इस का भी बन्दूक से उड़ा दिया जाये। थानेदार हँसा और साथ पे सिपाही स कहने लगा, 'काफिर का हौसला तो देखा !"

"अगर कोई बच्चा कम्प में पशाब-पाखाना कर देता तो उसे उस की माँ-समत मारते।"

"गाय का मास जिन से न खाया जाता उन को गाय के मांस का पुलाव खिलाते।"

"मैं दरिया की ओर चल दी पर बच्च का खयाल कर के आत्मघात न कर सकी।"

'एक दिन पानी भर कर जा मैं लौटी तो मैं ने देखा मरी बटी की आँखें निकली हुई थी। मैं पडोसिना के जा कर रोयी धोयी और वह कहने लगे जो हो गया सो हो गया।"

जब सुनते कि पुलिस आने वाली है तो हमें भेड़ बकरियों की तरह खत्ता में छुपा दिया जाता।

'मैं आठ दिन भूखी रही। बाकी तो उन का जूठा खा लिया करते थे, पर मुझ से न खाया जाता।

'अगर कोई सुन्दर लड़की होती तो उस का सत भंग करते। जब वह रोती तो हँसते। पता नही भगवान् कहाँ गया था।'

चारपाई के पाया के नीचे मेरे हाथ रख कर ऊपर बैठ जाता और मुझे नमाज पढने के लिए कहता।'

उस के घर एक बूढी थी। मैं दौड कर बूढ़ी को माँ कहते हुए उस के गले लग गयी। और उस बूढी ने मुझ अपने बेटे के जुल्म से बचाये रखा।

'पाकिस्तानी अडोसिन-पड़ोसिने हम पर जादू टोने कर के वहाँ रखने की कोशिश करती।

"कुजाह कम्प ! कुजाह जहाँ की औरतों की सुन्दरता प्रसिद्ध ह।"

"लुक छुप कर रोती क्योंकि मार का डर था।"

"म एक सैयद के पास बेची गयी।"

"मैं ने समझा कि मुझे मुसलमान बना रहे ह, पर मेरा तो ब्याह हो रहा था।"

'कम्प में चूना मिला हुआ आटा मिलता जिस खा कर कई मरे।"

"महल्ले में एक सहेली बन गयी।"

## तीन

"कहते सिखों के जत्थे आ रहे ह। हम ने अपने बच्चे भेज दिये हैं। तुम हमें उन से बचाना।"

'बूढी औरतों को न मारते क्योंकि ऊपर से हुक्म आया था अगर इधर स औरतें न गयी तो उधर से न आ सकेंगी।"

'वह कहता जब तू मेरे लिए नहीं रहेगी तो म तुम्हारी चमडी की जूतियां सिलवा लूँगा।"

'मजर के घर म सत्याग्रह कर के बैठ गया।"

'मेरा खाविन्द और मैं दोनों मुसल्मान हो गये। मेरे खाविन्द का कई परायी औरतों से सम्बन्ध था और हर रोज हमारे यहाँ लडाई-झगडा होता। फिर उस ने पुलिस को इत्तला दी और मुझे निकलवा कर इधर भेज दिया और आप उधर ही मजे कर रहा ह।"

"मेरा पिता जिन्दा रहने के लिए वहाँ मुसल्मान हो गया। पर उस का उधर जी न लगता।

"हिन्द में नमक दस रुपये सेर, आटा पन्द्रह रुपये सेर। वहाँ सिख हिन्दुओं को आने नहीं देते। हिन्द में जा कर क्या करोगी?"

... ...

"मुझे इधर कैम्प में आये डेढ़ महीना हो गया है। अभी तक मुझे कोई सम्बन्धी लेने के लिए नहीं आया।"

"मेरा जी सेना में भरती होने को चाहता है। अगर हमारे पास बन्दूक होती तो हम पर इतने अत्याचार न होते। मैं पाकिस्तान में से अपनी बहनों को निकालने जाऊंगी।"

"मेरा घर उधर रह गया जिस के बाहर मैं ने कभी कदम नहीं रखा था।"

"मेरा लड़का, दो दामाद और तीन भाई मारे गये।"

"अब मेरा इलाज हो रहा है।"

"मेरे पिता गान्धी-वनिता-आश्रम में भरती हो गये ताकि मुझे पाकिस्तान से निकलवा सकें। अब हम यहाँ से चले जायेंगे।"

●

# फूलों वाली रात

रूबी को हमारे यहा आये बहुत दिन हुए थे। सारा परिवार दिन भर उस के साथ लगा रहता। अब रूबी यह कर रही है, अब रूबी वह कर रही है, अब रूबी वहाँ बैठी है, अब रूबी सो रही है। रूबी ने पानी पीया कि नही ? रूबी के बालो का ब्रश अभी तक नही आया। रूबी का लायसेंस बनवाना है, रूबी को अस्पताल ले जा कर टीके लगवाने होगे। आज रूबी उदास उदास है। अम्मी, रूबी मेरा मुँह चाटती है। रूबी बच्चो की गुड़िया उठा कर बाहर लान में ले गयी है। रूबी यहाँ बैठो।

दिन भर घर में रूबी, रूबी होता रहता।

कई महीने हुए हम एक मित्र के फ़ार्म पर सैर को गये। हमारे बच्चे को रूबी बहुत पसन्द आयी थी। तब रूबी बहुत छोटी थी। अब बडी हो गयी थी, सयानी हो गयी थी और मेरे मित्र ने हमारे बच्चे के लिए इसे भिजवा दिया।

जिस दिन रूबी आयी, कोई एक घण्टा नहीं हुआ था कि सँगली तुड़वा कर वह खुल गयी। सारे घर में खलबली मच गयी। हलका-हलका अँधेरा हो चुका था। नौकर चाकर, सारी कोठी में शोर मच गया। रूबी कहाँ गयी, रूबी कहाँ गयी। कोठी के लान में, बग़ीचा में, पीछे, आगे कोना-कोना छान डाला। रूबी पता नही कहा चली गयी थी। कोई बाहर सडक की ओर दौड पडा। पीछे खेल के मैदान में ढूँढा गया। देखते-देखते गायब हो गयी थी ?' कोई कुछ कहता, कोई कुछ कहता। अँधेरा और बढ गया था और फिर मेरी दृष्टि सामने खडी मोटर पर जा पडी। देखूँ, तो रूबी मोटर के नीचे बैठी हुई थी। चारों ओर से मोटर को घेर लिया गया और क्या बच्चे और क्या बच्चों की माँ और क्या मैं, हम सब खडे मिन्नतें करने लगे। रूबी, रूबी आ जाओ। कोई आधा घण्टा इस तरह खुशामद करवा के रूबी दुम हिलाती निकली और हम ने उसे बाँध कर ठण्डा सास लिया।

और फिर कोई उसे बिस्कुट खिलाने लगता, कोई उस केक के टुकडे काट कर देता। कोई उस के लिए दूध ला रहा था, कोई कहता कि दूध में डबल रोटी डालनी चाहिए, कोई कहता कि डबल रोटी नहीं डालनी चाहिए। मेरी पत्नी कहती "क्या इसे खिला खिला कर मार रहे हो ?" मैं कहता "नहीं खिलाने दो, बच्चो के साथ इसी तरह हिलेगी।'

रूबी खाकी रंग की थी, नहीं खाकी रंग में गुलाबी सी झलक। किसी सुन्दर औरत के पीछे पीछे फिरने वाली जात। एक बालिश्त कद अगली और पिछली टाँगों में कोई दो बालिश्त छरहरा सा कोमल शरीर, बीच में से ढलका हुआ, चबूतरा मुंह। आँखें जैसे हर क्षण कुछ सोच रही हों। रूबी की खाल इतनी नरम इतनी चिकनी, इतनी मुलायम थी जी चाहता कोई उस की पीठ पर हाथ फेरता हा रहे। उस को सहलाता ही रहे। और रूबी का लाड कराने को इतना जी चाहता था कि मचल मचल कर मचलती। कभी उंगलियां को चाटती, कभी थुथनी केहुनियों पर रगड़ती, कभी उछलती और पंजा को उठाती। एक बार खेलना शुरू करती तो फिर कितनी कितनी देर खेलती ही रहती।

रूबी के लिए कई प्रोग्राम बनते। फिर उन्हें बदल दिया जाता। रूबी को रातब कितनी बार मिलनी चाहिए? किस किस समय मिलना चाहिए? रूबी को कितनी बार खोलना चाहिए? कब-कब खोलना चाहिए? रूबी को रातब कौन खिलाये? कौन से बरतन में खिलाये? एक बार जो रातब खिलाये फिर हमेशा उसी को खिलाना चाहिए? एक बार जिस बरतन में खिलाया जाये फिर हमेशा उसी में खिलाना चाहिए। जो रूबी को खोले उसी को फिर बाँधना चाहिए। रूबी को कौन नहलाये? कब कब नहलाये? जो नहलाये उसी का ब्रश करना चाहिए। ब्रश प्रतिदिन होना चाहिए, नहाना नित्य जरूरी नहीं। मेरी पत्नी अपने सारे डाक्टरी नियमों का ध्यान कर के रूबी के सम्बन्ध में राय देती। मैं ने जितना कुछ मनोविज्ञान की विद्या का पढ़ा था उस सब के आधार पर प्रयोग करता रहता। मैं ने बच्चों को बताया कि जो नौकर रूबी को रातब खिलाता है, ठीक अपने समय पर रूबी उस को ढूंढा करेगी। कोई दस दिन हमारे यहाँ रहने के पश्चात सब हैरान होते। इधर घड़ी शाम के सात बजाती, उधर रूबी जमादार को ढूंढती हुई आ जाती और कभी उस के पाँव को सूँघती, कभी उस की टाँगों पर उछल उछल पड़ती। चाहे कहीं हो वह दौड़ती हुई आती। एक मिनट इधर उधर न होने देती। घड़ी गलत हो सकती थी पर रूबी कभी गलती न करती।

फिर मैं ने बच्चों को कहा जिस बरतन में रूबी को रातब खिलाया जाता है उस बरतन को बजाने से रूबी के कान खड़े हो जायेंगे उस के मुंह में पानी आ जायेगा। चाहे रातब का उस का समय हो चाहे न हो। बच्चे वैसे ही झूठ मूठ खाली उस बरतन को उठा कर रूबी के सामने जाते। वह दुम हिलाती हुई खाने के लिए तैयार हो जाती। रूबी के सामने और कोई बरतन ले जाओ उस पर कोई प्रभाव न पड़ता।

यह आवश्यक था कि जो नौकर रूबी को खोले वही उसे दोनों समय बाँधने के लिए भी बुलाये। पहले तो कोई दता था बाँधने के लिए वह उस के पीछे फिरता रहता और रूबी किसी के हाथ नहीं आती थी। जब इस का निश्चय हो गया कि एक विशेष व्यक्ति ही उस को खोलता है उस को आज्ञा करता है उस व्यक्ति का कहा मान कर वह बंधने के लिए भी तैयार हो जाती।

कुत्ते और बिल्लियों का बैर बहुत पुराना है। जब रूबी हमारे यहां आयी तो बच्चों को यह चिंता हुई कि अब "पूसी" का क्या बनेगा। रूबी को खोला जाता तो पूसी को छुपा दिया जाता। पूसी को छोड़ना होता तो रूबी को बांध दिया जाता। एक दिन मैं रूबी के सामने पूसी को ला कर पुचकारता रहा। अगले दिन रूबी बँधी हुई थी, मैं ने पूसी को ला कर बरामदे में छोड़ दिया। उस के बाद प्रतिदिन उसी बरामदे में पूसी बैठी धूप खाती रहती, उसी बरामदे में रूबी खेलती रहती। कई बार रूबी और पूसी या लाड करने लगतीं जैसे माँ जाई, बहनें हों।

और बच्चे आश्चर्य होते रूबी की सूझ पर। एक बार उसे समझाओ, एक बार किसी बात से रोको मजाल है वह बात वह फिर कर जाये!

एक शाम जब हम सैर कर के लौटे तो नौकरों ने बताया रूबी बांधने के लिए क़ाबू में नहीं आ रही थी। उस के समय से भी एक घण्टा अधिक हो गया था।

"ज़रूर कोई बात होगी", मैं ने कहा।

नौकर क़समें खाने लगे। कोई भी तो बात नहीं हुई थी। जो नौकर हर रोज उसे बांधता खोलता था वह बुला बुला कर हार गया था। पर रूबी जैसे सुन ही न रहा हो। फिर नौकरों ने मिल कर उस को घेरना चाहा किंतु रूबी किसी के हाथ न आयी। एक बार जब वह बिल्कुल बेबस हो गयी तो जमादार को जैसे काटने के लिए लपकी। वह पीछे हट गया और रूबी भाग कर गैरेज में जा छुपी।

मैं ने कहा—कुछ देर रूबी को बुलाना बन्द कर दिया जाय।

नौकर प्रतीक्षा करते रहे प्रतीक्षा करते रहे। रूबी के रातब का समय हो गया। रातब ला कर पहले की तरह रख दिया गया। रूबी न आयी। नौकरों ने फिर रूबी रूबी करना शुरू कर दिया। दोनों बच्चे बरामदे में खड़े तोतली तोतली अपनी जबानों से उस को बुला रहे थे। पर रूबी किसी की आंख से आंख न मिलाती। एक तरफ से आती दूसरी ओर निकल जाती। उधर उसे कोई देखता तो बाहर खिसक जाती।

मैं हैरान था, इस को हो क्या गया है। फिर हम सब ने खाना खाया। खाने की मेज पर हर कोई यह सोचता रहा कि आज रूबी भूखी है। मैं बार बार नौकरों पर खफा होता। कोई गलती अवश्य इन लोगों से हो गयी होगी।

यों चिन्ता करते करते हमारे सोने का समय हो गया। रूबी अभी तक फरार थी। किसी बात पर नहीं मान रही थी। उस की सगरी बाहर बरामदे में जैसे हारी हुई पड़ी थी। उधर उस का रातब रखा था वैसे का वैसा।

रूबी कभी कोठी के बाहर जाती, कभी अन्दर आती। पेड़ों के तनों के साथ लग-लग कर छुपती। कभी किसी कोने में जा खड़ी होती कभी किसी कोने में खो जाती।

रात ज्यादा हो गयी। नौकर अपने अपने काम निबटा कर चले गये। बच्चे कभी के सो चुके थे। बच्चों की माँ सो चुकी थी। पढ़ते पढ़ते मेरी भी आँख लग गयी।

कोई आधी रात को मेरी नींद खुल गयी।

बायीं ओर की दीवार में लगे रोशनदान से चाद की चाँदनी या एक सागर जसे उमड कर सामने पलँग पर बेसुध सोयी मरी पत्नी पर पड रहा था। सारे का सारा कमरा जसे मुसकानें बिखेर रहा हो।

और मुझे याद आया कि आज तो कार्तिक की पूनम थी।

चाँद की चाँदनी की जैसे चप्पा चप्पा तह मेरी पत्नी के पलँग पर जमी हो। दूध सी सफेद समुन्दर की झाग में जसे सन्दल का टुकडा लिपटा हो। चाँदनी बालो में, चाँदनी बालो की खशबू में, चाँदनी पलको में पिरोयी हुई चादनी होठों पर खेल रही, चादनी गोरी गोरी अनढकी कलाइयो पर। जसे सौन्दय सारी रात प्रतीक्षा कर कर के भी हारा न हो। चादनी लट्ठे की चादर पर जसे आँख मिचौली खेल रही!

मैं चाँदनी के इस खेल में खो रहा था कि सहसा मुझे रूबी का खयाल आया। मैं ने सोचा उठ के देखूँ उस ने रातब भी खाया ह कि नही, इस समय कहा ह सोयी ह बैठी ह क्या कर रही है, कही भाग तो नही गयी!

और मैं ने बाहर बरामदे में जा कर देखा। रात के सूनेपन में जसे चाँद नीचे उतर आया हो। बगीचे के सारे फूल खिले हुए थे। सारे पेड सुचेत खडे थे। ओस की नन्ही नन्ही बूदो में चमक रही चादनी की किरणें जसे लाख चाद नाच रहे हो। फूलो पर चादनी, पत्तियों पर चादनी, चाँदनी धूल मिट्टी के मलेपन पर चादनी रेत की ककरिया के उजलेपन पर। चादनी सौ बार चबायी हुई कोने में पडी हड्डी पर, चादनी कोमल शगूफों के सजरेपन पर, जिन्होंने अभी तक सूय का मुह नही देखा था चादनी या बिखर रही फल रही जसे सुन्दरता उन्माद में अपनेआप को लुटा रही हो। चादनी गुलाब की पत्तियो पर खेल रहा, हँस रही। चाँदनी मोनिये की कलियो में मुग्ध हुई, नशा-नशा में उन्मत्त। चाँदनी मेंहदी के जमुर्दी गुच्छो में चुप चुप शरमायी शरमायी। चाँदनी लेटी हुई फली हुई घास के मदान पर। चादनी ऊचे लम्बे सरुआ के साथ बद मिला रही। चाँदनी आँखें मटका रही, होठ सुकेड रही, इशारे कर रही बाहुपाश में ले रही। चादनी चादनी के पेड में आ कर खुशबू बन गयी। इश्कपेंचे की घनी बेलो में सोयी-सोयी। चाद की चाँदनी के इस जादू को देखता मैं रूबी को भूल ही रहा था कि मेरी दृष्टि लॉन के एक एकान्त कोने में जा पडी। मालटे के पेड की धीमी धीमी, खट्टी-खट्टी सुगन्ध में अलसायी अगले दो पजो पर थुथनी रख रूबी बठी थी। उस के पास वसे ही अलसाया हुआ अगले दो पजों पर थुथनी जमाये पटसिया का 'रावण' बठा था। खाकी रग का यह जोडा चाद की चाँदनी में एसे लग रहा था जसे दो दिस्हुटा पर खुश हो रहे किसी बच्चे की हसी खेल रही हा।

कितनी देर रात गये मैं वसे का वैसा खडा उन को देखता रहा, दखता रहा। कार्तिक की पूनम की चाँदनी को देखता रहा देखता रहा।

अगले दिन नौकरों ने बतलाया जब तडके वह आये रूबी बरामदे में अपने स्थान पर सगली क पास सोयी हुई थी। उस के रातब का बरतन खाली था।

# नीली झील और बुरी बात

इस शहर में फिर हमें रहने के लिए फ्लैट मिला था।

कोई करे भी तो क्या? देश इस तेजी के साथ प्रगति कर रहा है। हर शहर में भीड़ बढ़ गयी है। छोटे छोटे कस्बे बड़े-बड़े शहर बन गये हैं। दस दिन बाद किसी गली में से गुजरो, और गली नहीं पहचानी जाती। पलट कर किसी पिकनिक-स्थल पर जाओ, वहाँ पर बाँध बन चुका होता है या बिजलीघर। जिधर आँख उठाओ, नजर धुएँ की चिमनियों के साथ टकरा कर रह जाती है। हर शहर के साथ पड़ी खाली जगह को लोग कुतर कुतर कर बेचे जा रहे हैं।

घर चाहे छोटा था लेकिन एक बात गनीमत थी। गोल कमरे की खिड़की में से सामने नीली झील दिखाई देती थी। खिड़की में जा कर कोई खड़ा हो तो आँखों को ठण्डक पड़ जाती। नीली झील, झील की छाती पर तैर रही नौकाएँ, नौकाओं में बैठे मछेरों के गीत, प्राय झील की ओर से मीठी मीठी हवा आ रही होती—ठण्डी और मीठी, झील के आस-पास हरे खेतों का सुगन्धियों से लदी हुई।

इस घर में आये अभी बहुत दिन नहीं हुए थे कि हम ने महसूस किया, बच्चू अक्सर चिड़चिड़ाया रहता, बिसूरता रहता। कई बार उसे गुस्सा आ जाता और गुस्से में वह कोई हरकत कर बैठता, जिस से हमें भी लज्जित होना पड़ता, उसे भी बाद में उसे परेशानी होती।

बच्चू के बिगड़ रहे मिजाज पर हम पति-पत्नी दोनों परेशान थे। सोच सोच कर हम इस नतीजे पर पहुँचे कि उस के चिड़चिड़े मन का एक कारण यह घर था—पहली मंजिल का फ्लैट, जिस में रहते बच्चू दबा-दबा, घुटा घुटा, बन्द बन्द सा महसूस करता था। धरती से उस का स्पर्श छिन गया था। और दूसरा कारण शायद यह था कि उस की बहन अब घुटनों चलने लगी थी। हर जगह हाजिर होती। अजीब दिलचस्प उम्र! कहीं हँस रही, कहीं खेल रही, कहीं उसे लाड़ किया जा रहा। और बच्चू को लगता जैसे उसकी जायदाद उस से बटाई जा रही हो।

कोई भी कारण हो, बच्चू का यूँ बात-बात पर खीझना हमें जरा पसन्द नहीं था। और हम ने एक दिन उसे अपने पास बिठा कर समझाया। फ़ैसला यह हुआ कि जब भी उस का मूड बिगड़ रहा होगा, हम उसे बुरी बात पुकार कर याद दिला दिया करेंगे

कि उसे गुस्सा आ रहा है। और फिर भी यदि वह अपनेआप पर काबू न पा सके तो वह गोल कमरे की खिड़की में जा कर, सामने नीली झील को देखा करेगा—झील में झिलमिला रहे पानी को, झील पर तर रही नौकाओं को, झील के आस-पास हरे खेतों को। और ऐसे उस का गुस्सा ठण्डा हो जाया करेगा।

और हमारी यह तरकीब बडी सफल रही। कई बार हम ने देखा, बच्चू को हम याद दिलाते—'बुरी बात'' और वह सँभल जाता। कई बार हम ने देखा, जब उसे ज्यादा गुस्सा आता वह गोल कमरे की खिडकी में जा खडा होता, और सामने झील को देखता। छम छम उस के आँसू बह रहे होते। कई बार सुबक-सुबक कर वह अपने मन की भडास निकाल लेता।

बच्चू के लिए बनाया यह तरकीब हमें खुद भी बडी काम आयी। पति पत्नी जब हमें स्वय क्रोध आ रहा होता, जिसे क्रोध आता वह गोल कमरे की खिडकी में जा खडा होता, और सामने नीली झील का जादू अवश्य हो के रहता।

एक दिन हम ने देखा लोमडी की तरह शिकार की तलाश में 'बिट्टो'' इधर उधर झांक रही थी। फिर उस की नजर बच्चू की स्याही की दवात पर जा पडी। हमारे देखते ही देखते उस ने दवात को बच्चू की कापी पर उलट दिया। बच्चू ने देखा तो जैसे उसे चारा कपडे आग लग गयी। गुस्से में वह बिट्टो को ओर लपका कि तिपाई साफ कर रही उस की माँ ने उसे याद दिलाया— बुरी बात'। और बच्चू उन्ही कदमों से गोल कमरे की खिडकी में जा खडा हुआ। सामने नीली झील को देखते, आँसू उस की पलकों की कोरों से ढलकने लगे।

बहुत दिन नहीं बीते थे कि स्कूल से लौट कर बच्चू क्या देखता है कि उस की सब से प्यारी कहानियों की किताब की तस्वीरें निकाल कर बिट्टो ने अलग कर दी थी और बाकी पन्ने अलग। बच्चू दाँत कँपकपा कर रह गया। बार-बार वह किताब को देखता बार बार उस का गुस्सा भडक उठता, बार-बार उस की माँ को याद दिलाना पडता—'बुरी बात', बुरी बात''। और फिर अकेले गोल कमरे की खिडकी में खडे उसे साँझ हो गयी। उस रात बच्चू ने खाना नहीं खाया।

मेरी पत्नी का विचार था कि बिट्टो की नसरी अलग होनी चाहिए बच्चू के लिए पढ़ने का कमरा अलग। लेकिन इस फ्लैट में ये सब कुछ कहाँ सम्भव था। इस फ्लैट में तो बस एक खिडकी थी। सामने झील पर खुलती। और नीली झील का नजारा सुबह और होता दोपहर को और और शाम को और। नयी दुल्हन की तरह जाड बदलती रहती नये नये रूप निखारती हर रंग में और सुन्दर लगती।

एक दिन शाम को हम चाय पी रहे थे। छुट्टी का दिन था। सो कर उठे बडे इत्मीनान से मेज पर बैठ हम गप्पें भी हाँक रहे थे चाय भी पी रहे थे। बच्चू बाहर खेलने के लिए गया हुआ था। फिर वह अपना बैडमिंटन का बल्ला उठा कर आया और मेज के पास खडा हो कर हमारी बातें सुनने लगा। कोई मक्खी थी, जो बार बार चाय

की केतली पर आ बैठती। बच्चू बार बार अपने बैट से उसे उड़ाता। मक्खी फिर आ कर वही बैठ जाती। हम दोनों बच्चू को मना कर रहे थे, बैट से वह यूँ न खेले। मेज बरतनों से भरा हुआ था। मक्खी फिर आयी और बच्चू ने फिर उसे उड़ाने के लिए अपना बल्ला घुमाया। और इस बार मक्खी के साथ चायदानी भी लुढ़क कर उस की माँ की गोद में जा गिरी। चाय के गरम पानी से उस की माँ के कपड़ों का सत्यानाश हो गया। गुस्से में वह चिल्लायी। चायदानी नीचे फर्श पर गिर कर टूटी और मुझे भी गुस्सा आया। और मैं बच्चू पर गरजा। वैसा का वैसा खड़े बच्चू ने पहले अपनी माँ की ओर देख कर कहा—"बुरी बात", फिर मेरी ओर देख कर कहा—'बुरी बात", और फिर हम दोनों हँसने लगे। कुछ देर बाद अपनी माँ की झुलसी हुई बाँह को देख कर इतनी सुन्दर चायदानी के टुकड़े-टुकड़े देख कर बच्चू को अपनेआप पर गुस्सा आया और वह कितनी देर गोल कमरे की खिड़की में जा कर खड़ा रहा।

इस घर में हमारे नौकर प्राय आदिवासी होते थे। आदिवासी नौकर बड़े ईमानदार होते हैं। सोने की डली पड़ी रहे, पलट कर उस की ओर देखेंगे नहीं। ईमानदार और सफाईपसन्द। घर को हर समय जैसे माँज कर रखते। आदिवासी औरतें जैसे इस्पात को ढाल-ढाल कर किसी ने उन्हें गढ़ा हो। मुसकान बिखेरते नयन, बालों में फूल हँसमुख, गान और नाचन की शौकीन, काम करती गाती रहती। काम से फुरसत मिलती, नाचने लगती। और सब गुण थे, लेकिन एक ही दोष था। पता नहीं कब नौकरी छोड़ कर गाँव लौट जायें। मेरी पत्नी को इस बात का बड़ा मान है कि हमारे यहाँ कोई नौकर आ जाये तो वह जहाँ तक हो हमें छोड़ कर नहीं जाता। इस घर में बिट्टो की आया एक बार चार दिन की छुट्टी ले कर गयी और पूरा महीना लगा कर लौटी। अब फिर दो दिन की छुट्टी ले कर गयी थी और महीने से ऊपर होने वाला था। एक दिन मैं ने अपने रसोइये से पूछा और वह आगे से हँसने लगा। उस ने हमें बताया—आया का घरवाला भी कहीं शहर में काम करता था। दो चार महीने शहर रहता और अपनी पत्नी को छोड़ देता और फिर और की और बातें करने लगता। आया पीछे गाँव जाती, वह गाँव लौटता और वह इकट्ठे रहने लगते। फिर शहर नौकरी करने आते, फिर दो-चार महीने बाद वह वैसे ही करता। यह तीसरी बार थी, वे शहर में एक दूसरे से अलग हो कर पीछे गाँव में फिर एक दूसरे के साथ बस रहे थे। अब चाहे आया शहर आये ही न। हम बातें ही कर रहे थे कि आया हँसती हुई गलरी में आ खड़ी हुई। आते ही उस ने अपना काम शुरू कर दिया।

उस दिन आया का काम करते देख, बार-बार मेरा दिल कहता, आया और आया के घरवाले के जीवन में कोई नीली झील होना चाहिए।

और रसोइया जो इतनी बात करता था, एक दिन उस की नालायकी भी सुनने में आयी। उस शाम जब मैं दफ्तर से लौटा, सीढ़ियों में एक शोर सुनाई दिया। पूछने पर पता चला रसोइये के गाँव के पंच थे। इतने दिनों से शहर नौकरी कर रहा था।

दूर रहा। असल बात यह, अपने चाचा के साथ अकेला था। जब से [illegible] का बाप मरा उस के घर का बड़ा उस का चाचा हो गया था। और जिस दिन से उस ने ऐसे कामों घरों के साथ मजिस्ट्रेट के रसाल थे। उस का चाचा कहता, चाहे उस को खाने में घंटों को घंटी रखना उस की ड्योढ़ी पर हो रखी था, लेकिन उस का असल [illegible] के साथ बिट्टो खिलाना और पैर छिलवाते हुए बच्चे का अहसास था। [illegible] को मर्दानी को भाग करने के लिए उस कमरे लिया जाता था। और रसोइया [illegible] था, आँखें नीची डाले खड़ा था जैसे किसी ने पाप अपराध किया हो। उस का चाचा बार बार कहता सारा गाँव इस को बदनाम कर रहा था। जहाँ कहीं से इस के घर के गुजरते लोग उस को देख कर बातें करते लग।।

अगले दिन जब मैं ने रसोइये से पूछा, तो वह कहने लगा 'साहब मेरी मति का ही कुछ हो गया। मुझ से बड़ा भारी अपराध हुआ है। वह [unclear] हैरान था, उस से यह बदतमीजी हो कैसे गयी! उसे कुछ समझ नहीं आ रहा था।

फिर हम ने सुना हमारे घर के सामने बच्चों के लिए एक सिनेमाघर बनने वाला था। नीचे लायब्रेरी और बच्चों का अजायबघर, पहली मंजिल पर सिनेमा, दूसरी मंजिल पर बच्चों का क्लब और छत पर बच्चों के नहाने का टब। बच्चू ने सुना और वह खिल सा गया। हम सुन कर सुन थे। और फिर हम ने देखा, खुदाई शुरू हो गयी चिनाई शुरू हो गयी। नीली झील के आस-पास, खाली पड़ी सारी जगह टुकड़े-टुकड़े कर के बेच दी गयी। एकाएक कालोनी में बच्चों की लायब्रेरी बच्चों का अजायबघर, बच्चों का सिनेमा बच्चों का क्लब और बच्चों के नहाने का टब विशेष आकर्षण थे। और हमारे देखते-देखते कालोनी में इमारतें खड़ी होनी शुरू हो गयीं। पहली मंजिल, दूसरी मंजिल, तीसरी मंजिल, 'शिशु विहार' तैयार हो गया। उस का उद्घाटन हुआ। हमारा बच्चा, सब से पहले बच्चों में से था, जो उस क्लब के मेम्बर बने।

और फिर स्कूल से लौट कर, या लायब्रेरी, या सिनेमा, या क्लब, या नहाने का टब, बच्चू का खूब दिल लग गया था इस शहर में। घर लौटता और घण्टों क्लब की बातें करता रहता। लायब्रेरी से किताबें ले आता और अकेला बैठा पढ़ता रहता। नये-नये खेल सीख कर आता और अपनी छोटी हो रही बहन को सिखाता रहता। बच्चू के ढेरों दोस्त बन गये। कभी वे इस के आये रहते, कभी यह उन के गया होता।

फिर एक शाम जब मैं सैर कर के घर लौटा, आगे एक हंगामा मचा हुआ था। बिट्टो ने बच्चू की किसी चीज को छेड़ा था और गुस्से में आ कर बच्चू ने उसे तमाचा दे मारा था। बिट्टो बिलबिला उठी। बिट्टो को यूँ रोते हुए देख कर उस की माँ को क्रोध आया और उस ने बच्चू की खूब पिटाई की। और यूँ माँ से पिट कर बच्चू भी चिल्ला रहा था। इस तरह माँ का क्रोध में आ कर बेटे को मारना जब मैं ने सुना तो मुझे भी गुस्सा आया, बार बार मेरे होंठ काँपने लगते। और फिर कितनी देर से भूली बिसरी खिड़की का मुझे खयाल आया और मैं गोल कमरे की ओर लपका।

नीली झील तो कहीं भी नहीं थी। न नीली झील, न नीली झील में तर रही नौकाएँ, न नौकाओं में बैठे मछेरों के गीत। कुछ भी नहीं था।

शिशु विहार की तीन मंज़िल की बिल्डिंग और उस के आस पास नयी बसी कालोनी, नीली झील कहीं भी नहीं थी।

और फिर अक्सर हमारे घर में कुहराम मचा रहता, बिट्टा बिलबिला रहा, बच्चू चीख रहा, उस की माँ ख़फ़ा हो रही, मेरे हाथ काँप रहे। हर रोज़, हर दूसरे रोज़ घर में एक आफ़त सी आ जाती। हम इस फ्लैट के जीवन से बड़े बेज़ार थे।

•

# अब सीढियाँ साफ है

अब सीढियाँ साफ ह । घर आओ तो पहली चोज सामन टूटी हुई सायकिल नही दिखाई देती। सीढियाँ चढते ऊपर सूखने को डाले कपडा को निचुड रही छीटा से अब बच बच कर नही गुज़रना होता । ऊपर खिडकी के पास पडोसियो के नौकर का मला कोचड लिहाफ अब नही पडा रहता जिस में रात को वह सोता था जिस में से सुबह तडके ही मालिक की आवाज नोच कर उसे निकाल लेती थी। और फटा हुआ लिहाफ वसे का वसा पडा रह जाता था।

अब सीढियाँ साफ ह। मरी पत्नी मुझे बता रही ह कि सात पानिया से उस ने सीढियो को धुलाया ह। पानी और फीनल। अगले दिन पी डब्ल्यू डी वाले आ कर कलई कर जायेंगे। म्युनिसिपल्टिी वालो को डी डी टी के लिए भी उस न कह दिया था। 'कितना गन्द कितना मल कितनी बदबू, छत जालो से भरी हुई " मेरी पत्नी बोले जा रही ह।

अब सीढियाँ साफ ह। और खिडकी में खडा सामन झील के मातियो जसे साफ पानी पर कजराये बादला को उमड रही घटा को देख रहा हू। पिछले कई महीनो के कुछ चित्र एक एक कर के मेरी आखो के सामने स गुज़र रहे ह।

सकिट हाउस म रहते हम थक गये थे। हफ्तों एक ही कमर में पड रहना। और फिर मह्कमे वाला की चिट्ठिया भी तो आ रही थी। एक खास मियाद से ज्यादा कोई अफसर सकिट हाउस में नही रह सकता। फिर मुझे किसी ने बताया, एक फ्लट खाली हुआ ह। और म पहली फुरसत में इस फ्लट को देखन के लिए आया। दो कमरे, एक बरामदा ढका हुआ और बस। दो छोटे छोटे कमरे। बरामदा, जिस में तीन आदमी बठें और चौथे के लिए गुजाइश नही रहती।

इस फ्लट में कसे हमारा गुज़ारा हागा? और मैं इनकार म सिर हिलाता बाहर निकल आया।

इस फ्लट में ता हमारा गुज़ारा मुश्किल " फ्लट दिखाने के लिए आये कमचारी को मैं कह ही रहा था कि सीढियाँ उतरते मेरी नज़र सामन वाले फ्लट के सामन्वन्द दरवाज़ से अन्दर कमर में जा पडी।

पीढी पर एक औरत बठी थी। दूध से छलक रही जिस को छातिया म से एक

बच्चा दूध पी रहा था। एक और बच्चा, दूध पी रहे बच्चे से ज़रा बड़ा, सामने खड़ा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँता म टिका रहा था और उस से बड़ी लड़की पीढ़ी के पीछे खड़ी माँ के बालों को कघी कर रही थी। घने काले गज़ गज़ लम्बे बाल उस से सँभाले नही सँभलते थे।

एक आँख झपकने में म ने देखा और मेरे बोल—"इस फ्लैट में तो हमारा गुज़ारा मुश्किल " जसे मेरे होठों पर रुक कर रह गये।

सर्किट हाउस वापस आ कर मैं ने अपनी पत्नी से जिक्र किया। उस की मर्जी थी कि जब तक ठीक ढग का घर न मिले, हमें सर्किट हाउस में ही रहना चाहिए। दो कमरों में कैसे हमारा गुज़ारा होगा? मिलने मिलाने वालो का भी तो ख्याल करना ह। दो कमरो में हमारा गुज़ारा कैसे होगा?

लेकिन कमरे तो तीन थे। तीसरा कमरा चाहे बरामदे को ढँक कर बनाया था। तीन आदमी बठें तो जिस में चौथे के लिए गुंजाइश नही रहती थी। उस जसे ही कमरे—सामान वाले फ्लट—में तो वो औरत बठी थी। दूध स भरी छलक रही जिस की छातियों में से एक बच्चा दूध पी रहा था। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से ज़रा बड़ा सामने खड़ा अपना अधचबाया बिस्किट मा क दाता में टिका रहा था और उस से बड़ी एक लड़की पीढ़ी के पीछे खड़ी माँ के बालों को कघी कर रही थी। घने काले गज़ गज़ लम्बे बाल उस स सभाले नही सँभलते थे।

और मेरी राय थी ये फ्लैट हमें अपने हाथा से नही जाने देना चाहिए। एक दिन दो दिन और फिर मेरी पत्नी भी राज़ी हो गयी। सर्किट हाउस के एक कमरे से अपने दो कमरे तो हर हालत में बेहतर थे, मैं उसे बार बार याद दिलाता। और फिर इस फ्लैट म तो तीन कमरे थे, तीसरा छोटा ही सही पर कमरा तो था।

और हम सब फ्लैट में आ गये।

फ्लैट में आये बाद में और हमारा दम घुटने घुटने लगा। मेरी पत्नी बार-बार खफा होती, बार बार कुढने लगती। दरिया कालीन बडे थे कमरे छोटे थे। पलगा को अन्दर करना मुश्किल था। बडे स दूकों को टेढ़ा कर क अन्दर घुसाया गया। रेफ्रिजरेटर के लिए कोई जगह नही थी क्योकि बरामदा इस घर में नही था। बरामदे की कुरसियो का क्या किया जाये? हार कर मैं ने कालीन रफ्रिजरेटर बरामदे की कुरसियाँ, मेज और शेष ढेर सा फर्नीचर दफ्तर के गोदाम में जा रखा। अब मेरी पत्नी को समझ न आती कि सोने का कमरा कौन सा बनाये खाने का कमरा कौन सा और गोल कमरा कौन सा। कमरे तो तीन म दो ह' वह बार बार कहती। कमरे दो क्या थे? बरामदे को ढँक कर बनाये कमरे स बठक का काम लिया जा सकता था। जिस कमरे में सामने के फ्लैट की वो औरत बठी थी—दूध स भरी छलक रहा जिस की छातिया म से एक बच्चा दूध पी रहा था। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से ज़रा बड़ा सामने खड़ा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँतों में टिका रहा था और

उस से बड़ी एक लड़की पीढ़ी के पीछे खड़ी माँ के बालों को कंघी कर रही थी। घने काले गज गज लम्बे बाल उस से सँभाले नहीं सँभलते थे।

एक दिन दो दिन और हम ने अपनेआप को फ्लट की मजबूरियों के मुताबिक ढाल लिया। कुछ अपनी जरूरतों को कम कर लिया, कुछ अपने मन को समझा लिया।

एक तो फ्लट तंग था दूसरे, ये पड़ोसी शोर किया करते थे। हर समय चीख चहाड़ा मचा रहता—सुबह शाम। इधर से दिन निकलता उधर वो नौकर को आवाजें देने लग जाते। नौकर उठते उठते उठता लेकिन मालिक एक बार पुकारता और फिर जैसे उस का मुँह बन्द ही न होता। आवाजें लगाता खफा होने लगता। मेरी पत्नी सुनती और कानों में उंगलियाँ दे लेती। यूँ ही एक दिन सुबह वह दफ्तर जा रहा था कि पीछे से किसी कारण एक बच्चे ने उसे आवाज दी—"बाबू जी!" और बाबू जी ने लौट कर उसे दायें-बायें चाँटे मारने शुरू कर दिये। काम पर जा रहे उसे पीछे से आवाज क्यों दी गयी थी? बच्चा चीखा। दूसरा उसे छुड़ाने के लिए बढ़ा, उस को भी एक दो लग गये। और फिर घर में कोहराम मच गया। इस तरह का शोर हर वक्त होता रहता। मेरी पत्नी बार बार मुझे कहती, मैं उसे समझाऊँ। इस तरह हर समय चीख चहाड़ा मचाना कोई शराफत नहीं थी। मैं हमेशा इकरार कर देता। कई बार यूँ भी होता आते जाते कहीं हमारा पड़ोसी मुझे मिल जाता शिकायत मेरे होंठों तक आती पर वो चित्र—पीढ़े पर एक औरत बैठी। दूध से भरी छलक रही जिस की छातियों में से एक बच्चा दूध पी रहा। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से जरा बड़ा सामने खड़ा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँतों में टिका रहा और उस से बड़ी एक लड़की पीढ़ी के पीछे खड़ी माँ के बालों को कंघी कर रही। घने काले गज गज लम्बे बाल उस से सभाले नहीं सँभलते।—ये चित्र मेरी आँखों के सामने आता और मुझे सब कुछ भूल जाता। मैं अपने पड़ोसी के मुँह की ओर देखता रहता। वो मेरी ओर देख कर मुसकरा देता।

एक तो शोर बड़ा करते थे, दूसरे गन्दे थे—बेहद गन्दे। तनिक जो उन्हें खयाल हो कि साथ के फ्लट में भी कोई रहता है। सुबह शाम चूल्हा सुलगा कर सीढ़ियों में रख देते। धुआँ टूट कर जैसे हमारे घर में आ घुसता। हम खिड़कियाँ दरवाजे बन्द करते लेकिन धुआँ तब भी भर जाता। हर रोज मेरी पत्नी खफा होती, हर रोज मैं कुढ़ता। सीढ़ियाँ तो जैसे उन की निजी जायदाद हों। सीढ़ियों के नीचे उपले इकट्ठे किये जाते थे कोयला रखा जाता था और घर का फालतू सामान वहाँ जमा किया हुआ था। मुर्गे मुर्गियाँ शाम को वहीं आ कर बैठते थे, वहीं बीटें करते थे। और जो जगह बचती थी, उस पर बाबू जी की साइकिल रहती थी। सीढ़ियाँ उतरते चढ़ते उन के बच्चे दीवारों पर अनाप शनाप जो मन में आता लिखते रहते। कहीं किसी फिल्मी गाने के कोई बोल कहीं कोई गाली, जो उन्हों ने किसी से सीखी होगी। सीढ़ियों में ही बच्चे खेलते थे, एक दूसरे से लड़ते पट-पट सीढ़ियाँ उतर जाते, खट खट

सीढियाँ चढ आते। सीढियों में ही थूकते थे, नाक साफ करते थे। घर से मार खा कर आये घण्टों बैठ कर रोते रहते। और सीढिया चढ कर ऊपर वाले स्थान पर उन का नौकर विराजमान होता, अँधेरे सवेरे सोया रहता था या उस का बिस्तर बदबू छोड रहा होता।

और फिर एक दिन तो हद ही हो गयी। सीढियों के मोड पर जरा सी जो जगह फालतू थी, वहाँ पडोसियों के नौकर ने एक मुर्गी काटी। वही उस का लहू गिरा, वहीं उस ने मुर्गी को साफ किया, उस के पख उतारे, उस के पजे काटे। और फिर ऊपर जा कर उस ने मुर्गी को बनाना शुरू कर दिया। मेरी पत्नी किसी काम से नीचे गयी और वही कदम लौट आयी। सीढियों में वैसे के वैसे पख फैले हुए थे, वह का वैसा खून जमा हुआ था। मेरी पत्नी बार-बार उस की चर्चा करती और बार-बार कानों को हाथ लगाती। सिलसिला यह था कि एक दिन गुजर गया, दूसरा दिन गुजर गया—अभी तक उन्होंने सीढिया साफ नहीं करवायी थी। और मेरी पत्नी बजिद थी कि वो पडोसिन को बुला कर कहेगी। आखिर कोई हद भी होती है फूहडपन की! सीढिया साझी थी। सीढिया केवल उन की ही मिल्कियत नहीं थी। मेरी पत्नी कहती—मैं उस का बुरा कर दिखाऊँगी कि क्या हाल सीढियों का हो रहा है। मैं भी उस से सहमत था। जितनी बार मैं सीढियों से उतरता चढता उतनी ही बार लहू मेरे जूते के तले पर लग जाता। अब तो पख सारी सीढियों पर फैल चुके थे। और मुझे हमेशा डर लगता कहीं मेरा पाव ही न फिसल जाये। और फिर वही बात हुई। मैं दफ्तर जा रहा था कि किसी पख पर मेरा पाव आया और मैं लुढकता हुआ पाँच सीढियाँ नीचे जा गिरा। मेरी पत्नी ऊपर देख रही थी। जल्दी से आ कर उस ने मुझे सँभाल लिया। मेरे कपडे छिल गये थे। बार-बार मेरी पत्नी पडोसियों को बुरा भला कहती बार-बार मैं उन के फूहडपन को कोसता। और हम ने फैसला किया कि मेरी पत्नी उन से बात करे। इस में लिहाज की कोई बात नहीं थी। अगर इसी तरह वो सीढिया को गन्दा रखेंगे तो फिर कोई बीमारी भी फैल सकती थी। उस दिन मेरे दफ्तर जाने तक मेरे अग सूज गये। अत्यन्त पीडा हो रही थी। बार बार टीस उठती, बार बार मेरी आँखों के सामने वह चित्र—पीढे पर एक औरत बैठी। दूध से भरी छलक रही जिस की छातियों में से एक बच्चा दूध पी रहा। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से जरा बडा सामने खडा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँतों में टिका रहा और उस से बडी एक लडकी पीढे के पीछे खडी माँ के बालों का कघी कर रही। घने काले गज-गज लम्बे बाल उस से सँभाल नहीं सँभलते थे।—वह चित्र बार-बार मेरी आँखों के सामने आता। और फिर मैं ने अपनी पत्नी का घर टेलीफोन किया।

"तुम्हारी पडोसिन से बात हुई?"

"नहीं, अभी नहीं, मैं नौकर को उन के पास भेज रही हूँ।" मेरी पत्नी ने जवाब दिया।

"मैं सोचता हू, तुम न बात करो। मैं ही उन को टेलीफोन कर देता हूँ।'

और फिर बार बार मुझे याद आता, मुझे पडोसी में दफ्तर टेलीफोन कर के उस से शिकायत करनी थी, बार बार मैं टाल जाता। जब कमरे में दद होता, जब सीढियों में लगी चोट के कारण कन्धे में टीस उठती मेरा हाथ टेलीफोन के चोगे की तरफ बढता पर फिर वो चित्र मेरी आँखो के सामने आ जाता—पीढ़ी पर एक औरत बठी। दूध से भरी थलक रही जिस की छातियों में से एक बच्चा दूध पी रहा। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से जरा बडा सामने खडा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँतो में टिका रहा और उस से बडी एक लडकी पीढी के पीछे खडी माँ के बालों को कघी कर रही। घने काले गज गज लम्बे बाल उस से सँभाले नही सँभलते।—यह चित्र मेरी आँखो के सामने आता और हर बार मैं टाल जाता।

वो दिन और आज का दिन मैं पडोसी को टेलीफोन नही कर सका। और फिर उन की बदली भी हो गयी। वो लोग चले भी गये।

और अब सीढियाँ साफ हैं। घर आओ तो पहली चीज सामने टूटी हुई साइकिल नही दिखाई देती। सीढियाँ चढ रहे ऊपर सूखने को डाले कपडो की निचुड रही छीटो से अब बच-बच कर नही गुजरना होता। ऊपर खिडकी के पास अब पडोसियों के नौकर का मला कीचड लिहाफ नही पडा रहता जिस में रात को वो सोता था जिस में से सुबह तडके ही मालिक की आवाज नोच कर उसे निकाल लेती थी और फटा हुआ लिहाफ वसे का वसा पडा रह जाता था।

अब सीढिया साफ है। मेरी पत्नी मुझे बता रही है कि सात पानिया से उस ने सीढियो को धुलाया है। पानी और फीनल। अगले दिन पी डब्ल्यू डी वाले आ कर कलई कर जायेंगे। म्युनिसिपैलिटी वालो को डी डी टी के लिए भी उस ने कह दिया था। 'कितना गन्द कितना मल कितनी बदबू, छत जाला से भरी हुई—मेरी पत्नी बोले जा रही है।

अब सीढिया साफ है। और खिडकी में सामने झील के मोतियो जसे साफ पानी पर कजराये बादलो को उमड रही घटा को देखता हूँ। और एक चित्र बार बार मेरी आँखो के सामने आ रहा है—पीढी पर एक औरत बठी। दूध से भरी थलक रही जिस की छातियो में से एक बच्चा दूध पी रहा। एक और बच्चा दूध पी रहे बच्चे से जरा बडा सामने खडा अपना अधचबाया बिस्किट माँ के दाँतो में टिका रहा और उस से बडी एक लडकी पीढी के पीछे खडी माँ के बालो को कघी कर रही। घने काले गज गज लम्बे बाल उस से सँभाले नही सँभलते—यह चित्र बार बार मेरी आँखो के सामने आता है और टप टप मेरी पलको से आसू बहने लगे है।

●

## मजीरा कहाँ जाये ?

इन का भगवान् भी अच्छा है मजीरा सोचता, किन्तु उन का अपना भगवान बेहतर था। ठाक अफ़सर के भगवान के पास भी करामात थी। उस ने उस की खोयी हुई नज़र लौटा दी थी, लेकिन उस के अपने ओराबागा का जादू कुछ और ही था। और फिर इन के भगवान को रिझाना कितना मुश्किल था! मजीरे का भगवान् हंडिये का घूँट पा कर खुश हो जाता, मुँहमाँगी मुराद बख्श देता।

विष्णुपुर में आज सुबह से वर्षा हो रही थी। सारा दिन वर्षा होती रही। बस्ती में जहा बिरहोर कबीले के खानाबदोशों को बसाया गया था एक क्षण के लिए पानी नहीं रुका था। एक सुर मेंह पड रहा था। बादल उमड उमड आते थे।

उस के कोठे में जहा मजीरा अपनी पत्नी की बनाई चटाई पर लेटा हुआ था टप-टप छत चूने लगा। एक ओर छत चूई और मजीरा चटाई उठा कर दूसरी ओर हो गया। अपनी मर चुकी पत्नी की याद उस की चटाई को वो हमेशा छाती से लगाये रखता था। एक क्षण ही गुज़रा होगा कि मजीरा जहाँ आ कर लेटा था वहा भी छत टपकने लगी। मजीरा बुडबुडाता हुआ तीसरी नुक्कड में जा लेटा। मुश्किल से उस की आँख लगी थी कि पानी की धारियाँ उस के मुँह पर उस के माथे पर पडने लगी। सटपटा कर उठे मजीरे ने देखा—सारा कोठा चू रहा था। पक्की खपरैल वाली छत जगह-जगह पर टप-टप कर रही थी। बाहर पानी कम पड रहा था अन्दर ज़्यादा। और खीज कर मजीरा अपने कोठे के बरामदे में आ गया।

रात के अँधेरे में उस ने देखा उस के कबील के बाकी लोग भी अपनी घर-वालियाँ अपने बच्चों समेत अपने अपने बरामदे में निकल आये थे। सब की छतें चू रही थी। और परेशान नज़रों से मजीरे की ओर वे देख रहे थे। चन की ईंटों की बनी सारी की सारी बस्ती चू रही थी। यू छत का चूना बिरहोर कितना बुरा मानते थे! और अभी रात ढेर बाकी थी। मजीरे की समझ नहीं आ रही थी, कबीले वालों की समझ नहीं आ रहा थी, वे क्या करें। बरामदों में खडे हवा का कोई तेज़ झोंका आता और बौछार सारी अन्दर आन पडती। इधर से उधर उधर से इधर। लोग अत्यन्त परेशान थे। वर्षा जमे रुकने का नाम न ले रही हो।

मजीरा सोचता, शुक्र है उस का ओराबागा तो आराम में होगा। अमन्ताथ

के पास के गांव [illegible] बाहर [illegible] एक बूंद भी नहीं टपक सकती थी। मजोरे मन ही मन उस कुम्भ को बनाता था। उस कुंभ में पानी का एक कतरा तक नहीं आ सकता था। मंजोरे का पैसा उस का आशीर्वाद आराम में पला था और इधर उस के उपासकों का मन [illegible] हो गया था।

मंजोरा सोचता किसी अफसर का ध्यान उस पर भी था। इसलिए अफसर को तो मर्जी थी ओराबोंगा का भी [illegible] में [illegible] कर लिया जाए किंतु मंजोरा नहीं माना था। ओराबोंगा कभी कुम्भ का केस [illegible] सकता था। और आज मंजोरा आशीर्वादों भी [illegible] में यूं भीग रहा होता तो क्या कहीं मुंह दिखाने के लायक न रहता।

'मरंग गोमके' बाप दादों में जब बौछार बरामदे में सरक कर आ कर पड़ती तो बिरहोर मंजोरे का ध्यान करते। कभी 'मरंग गोमके' कह कर, कभी 'दादा' कह कर उस को पुकारते। उस के बचपन से कई लोग तो उसे 'मति' के नाम से जानते थे। मति — पशोत का [illegible]। ऊपर ओराबोंगा और नीचे मति, और बिरहोर सोचते उन पर कभी कोई मुसीबत नहीं आ सकती थी। जंगल में कहीं भी आ जाते, सांप और शेर उन का रास्ता छोड़ देते। बन्दर, खरगोश और गिलहरियां आ आ कर उन के जाल में खुद-ब-खुद फंसती रहतीं। क्या किसी भूत प्रेत [illegible] उन की टहल [illegible] नहीं छोड़ा था।

काला रंग मनाता बच्चे गोल गुफल आग धरती पार। अब बिजली चमकती उस के प्रकोप से सारे बिरहोर डेरे मंजोरा गहरी चिंता में खोया हुआ था। सामने रस्सियां बांटने की मशीन धुलता धुलता तक पानी में डूब गयी थी। नाहीं मजार। म शीन को मचान को कोशिश की नाहीं उस के टह के और किसी का ख्याल आया। मचान बेकार पड़ी रहती था लेकिन रस्सियां वो अपने हाथों से ही बांटते थे। सरकारी कर्मचारी कह-कह कर थक गये, उन की किसी ने न सुनी। लोग कहते, 'मशीन की बनायी रस्सियां इतनी पक्की नहीं होतीं।' मजोरा कहता, "रस्सियां मशीन बना देगी और बिरहोर अपने हाथों का क्या करेंगे?"

पानी लगातार पड़ रहा था। और मजोरा सोचता—वे कब तक यूं बरामदे में खड़े रहेंगे। अभी तो ढेर सारी रात बाकी थी। मजोरा सोचता—शायद उस ने ग़लती की थी सरकार का कहना मान कर। जंगलों का अपना जीवन तज कर वे यूं बस्ती में आ बसे थे। शायद उन्होंने ये गलती ही की थी। एक ग़लती उन के किसी बुजुर्ग से पहले हुई थी। आदिवासी चार भाई थे। घोड़ों पर चढ़ कर एक बार शिकार को चले। चलते चलते अत्यन्त घने जंगल में जा निकले। अचानक एक भाई के घोड़े की टांग बेरी के एक गुच्छे में उलझ गयी। वो घोड़े से उतर उस की टांग छुड़ाने लगा, इतने में बाकी तीन भाई आगे निकल गये। वो दिन और आज का दिन, बिरहोर जंगल-जंगल भटकता अपने भाइयों की तलाश कर रहा है और उस के मां जाए मुंडा, संथाल और खड़िया कहीं बहुत आगे निकल गये। बिरहोर अभी तक उन तक पहुंच नहीं पाया।

और एक गलती अब मजीरे से हुई थी। मजीरा सोचता—उस ने नाथ टहा को सलाह ली थी। शेर का टहा, नरमा टहा चतकोर टहा—सब की यही मन्शा थी कि अपने देश की सरकार का कहना मान लेना चाहिए। और फिर सरकार ने उन को जमीन दी थी, बैल दिये थे, हल दिये थे, नये इंट सीमेंट के घर बना कर दिये थे। साथ नदी बह रही थी। चार कदमों पर हाट लगता था। जंगल कोई दूर नहीं था। और उन्हें क्या चाहिए था? गलती कैसे हुई?

नहीं, नहीं, नहीं। मजीरा सर मारने लगा। उस से गलती हुई थी। उन का जंगल का जीवन उन से छिन गया था। आजाद पंछियों की तरह उड़ान लगा कर सारा-सारा दिन पेड़ों के पत्तों में छिपे रहना, गिलहरियों की तरह आकाश तक ऊंचे दरख्तों पर चढ़ जाना और शहद के छत्ते उतार लाना। घने से घने जंगल की छाती को चीर कर उस में से कन्दमूल ढूंढ लेना। बदमस्त पहाड़ी नदियों के साथ टक्कर लेना। आदमी के लहू के प्यासे जंगली जानवरों को काबू कर लेना। पहाड़ों के साथ दोस्ती करना। चट्टानों के साथ साझापन बनाना। झाड़ियों से, खन्दकों से रिश्ते जोड़ना।

झक्कड़ का एक तेज झोंका आया और पानी का जैसे परनाला मजीरे पर आन पड़ा हो। वह ठिठक गया। बौछार कबीले के बाकी लोगों पर भी जा कर पड़ी। और फिर एकसुर हो कर उन्होंने पुकारा—"मरग गोमक!" बिजली की चमक में मजीरे ने देखा, उन की आंखें वहशत में फटी जा रही थीं।

हर कुनबे के लिए पक्के खपरैल का घर, हर घर के लिए पांच एकड़ जमीन, हर घर के लिए बीज, हर घर के लिए गाय, हर घर के लिए मुर्गियां मुर्गे, और फिर घर के हर आदमी के लिए गुजारा भत्ता। बस्ती के लिए एक कुआं, एक स्कूल, एक दवाघर और पक्की सड़क। और उस पर दौड़ती हुई लारियां। एक बार मजीरा एक लारी में बैठा था। उसे लगा जैसे सड़क के किनारे पेड़ उड़े चले जा रहे हों, पहाड़ घूम रहे हों। और फिर जब मजीरे की नजर जाती रही थी, कैसे शहर के बड़े अस्पताल में चीरा दे कर उन्होंने इस की आंखें फिर बना दी थीं। उस दिन उस ने माना था—हमारा भगवान भी है, लेकिन तुम्हारा बाबू लोगों का भगवान बड़ा कारीगर है।

किन्तु नहीं कोई कसर कहीं जरूर थी। इस बस्ती में जब से वे आये थे, सोमे की बेटी खो गयी थी, सुक्करे की पत्नी पराये देश के किसी आदमी के साथ भाग गयी थी, बुधुआ और कई बिरहोर बीमार रहने लगे थे। जंगल में रस्सियां बनाने वाली बूटी खत्म होती जा रही थी। उस के कबीले के कई लोग कर्ज में जकड़े पड़े थे। और काबुली मकरूज बिरहोरों के बारह बारह रुपये के हनुमान आठ आठ रुपये में खरीद कर ले जाते थे। और फिर जंगल के अफसर कैसे उन पर हुक्मरानी करते थे। ये करो, ये न करो, यहां से गुजरो, यहां से न गुजरो। हर पेड़ को काटने के लिए पूरे पचास रुपये पास देने होते थे। पैसे भर कर भी इजाजत नहीं मिलती थी। दफ्तर के चक्कर काट काट कर टांगें भी रह जाती थीं। मजीरा सोचता, अब उन की बनायी रस्सियों को

मजीरा कहां जाये?

दाग उतने नहीं मिलते थे। उन के बनाए रास्तों में बरसातों में भार हो गये थे। कोई याद था, उन्हें सरल साफ-साफ रास्ते में चलते थे—अब तो रास्ते भी मजीरे के काम नहीं देता था। जो घोंघे उन्हें [illegible] होता था मरना होता जा रहा था, जो कोई उन्हें बचानी होती उन को मन। मन्दा होता जा रहा था। मजीरा सोचता कोई खबर यहाँ उतर [illegible] थी।

पानी बरस पड़ रहा था। बिजली चमक रही थी। बादल गरज रहे थे। और हर बार बादल गरजते अन्धेरे बरामदे में से बिरहोर 'मरंग गोमके' कह कर उसे पुकारते। और मजीरे को उनकी पुकार तड़ातड़ गालियों की तरह छाती में आ कर लगती। मजीरे को कुछ समझ नहीं आ रहा था। मजीरा जानता, उस का ओराबोंगा नायक नाराज हो गया था। हाँ उस का ओराबोंगा नाराज था। अगर ओराबोंगा चाहे तो बादलों की क्या मजाल की कि यूँ बरस जाय। ओराबोंगा आंधी और तूफान को बाँध सकता था। हर पात और हाथी ओराबोंगा का लोहा मानते थे। ओराबोंगा चाहे तो जंगल भरपूर रहते थे। मधुमक्खियों के छत्तों में शहद नहीं कम होता था।

और मजीरे के मन में पता नहीं क्या आयी—अन्दर काठ की दीवार पर लटके कई वर्ष पुराने कोट को निकाल कर उसने पहन लिया। यह कोट उसने कभी नहीं पहना था। मजीरा इस कोट को तब पहनता जब मति बन कर उस का भूत और भविष्य के मामले सुलझाने होते या नगर हाट में जा कर उसे किसी झगड़े का निबटारा करना होता था या फिर जब कोई बड़ा अफसर उसे बुला भेजता था। या एक बार तब पहना था जब शहर का एक ऐनक वाला बाबू इस की तसवीर उतारने आया था।—मजीरे ने कोट पहना और बिजली फिर चमकी और बिजली की इस चमक में मजीरे ने देखा सामने बरामदे में औरतों की पीठों पर टँगे बच्चे सहमे चुप थे। मर्दों की उँगलियों के साथ लगे बालक ऊँघ रहे थे। बौछार की मार से आतुर बिरहोर औरतें ठिठुर रही थीं और मर्द यूँ दाँत पीस रहे थे जैसे एक और क्षण और वे सारी की सारी बस्ती को तहस नहस कर देंगे।

टखना-टखना तक कोठों के अन्दर पानी भर गया था। बार बार मजीर को अपना जंगल का जीवन जैसे याद आ रहा था। सामने खड़े बिरहोर बार बार उसे 'नाया', मति' और मरंग गोमके कह कर पुकार रहे थे। और मजीरा सोचता उन के बनाये कुम्भ में कभी पानी का एक छींटा तक नहीं जा सकता था। सारी उमर वो जंगल में रहा। आदिकाल से बिरहोर जंगल में रह रहे थे कभी किसी बिरहोर के कुम्भ में पानी की बूंद नहीं गयी था। आँधियाँ आती रही, झक्कड़ चलते रहे सावन बरसते रहे। और इन बाबू लोगों के बनाये काठ के कमरे थे जैसे अन्दर तालाब बन गये हों। न आगे के लिए, न पीछे के लिए। अब बिरहोर कहाँ जाय? यूँ छतों का चूना कितना अशुभ था।

बादल वसे के वैसे गरज रहे थे। बिजली वैसी की वैसी चमक रही थी। और बिजली की चमक में इस बार मजीरे ने देखा, जैसे बिरहोर मर्दो के हाथ में पकड़े 'टांगे' बेकार हो रहे थे। उन के कंधों पर उठाये फावड़े गेंतियाँ जसे कूद-कूद रहे हों। बिरहोर औरतों की उठाई खुर्पियाँ और तेने जैसे बल खा रहे हों। मजीरे को लगा आज की रात तो वो कुछ कर बैठेंगे। बस एक इशारे की इन्तजार में थे।

मजीरा सोचता, इन बाबू लोगों का भगवान् कैसा था। खुद बुला कर बसाये लोगों को ठौर नहीं सकता था। यूँ जलील कर रहा था।

और मजीरे को याद आया जब वो खुद अपने पाँवों पर खड़ा होने के काबिल हुआ तो पहली परीक्षा उस की कुम्भ बनाने की हुई थी। कितनी मेहनत से उस ने टह लिया और पत्तों का कुम्भ बनाया था। लेकिन जब पाहन ने उस पर पानी डाल कर देखा, पानी की एक बूँद किसी तरह अन्दर पहुंच गयी थी। मजीरे का सारा कुम्भ ढाह कर फिर बनाना पड़ा था। और तीस दिन पूरे प्रायश्चित्त करना पड़ा था। सात मुर्गों का उसे बलि देनी था। दस मटके हड़िया के आरागागा को चढ़ाना पड़ा था। यदि बिरहोर के बनाये कुम्भ में एक कतरा भी पानी का चला जाये तो देवता खफा हो जाता था।

और उस आदमी, जिस ने उन के लिए कोठे बनाये थे उस के लिए क्या सजा था? पक्की खपरलों का छतें परनाले की तरह चू रही थी। उस ठेकेदार के लिए क्या दण्ड था?

मजीरे के बनाये कुम्भ में एक छोटा पानी का चला गया था तो उसे दण्ड भरना पड़ा था। पूरे तीस दिन उसे प्रायश्चित्त करना पड़ा था। सात मुर्गे और दस मटके हड़िया के।

मजीरा सोचता वो जंगल में लौट जाय। अपने सारे बिरहोरों को ले कर फिर खानाबदोश हो जाये। मजीरा बड़ा असमंजस में था। न आगे के लिए न पीछे के लिए। मजीरा कहाँ जाय? और आँधी कहे जसे आज ही आज है। अंधकार कहे जसे आज ही आज है। मेंह कहे जसे आज ही आज है।

•

# औरत और इन्तजार

मेरी आदत है सड़क पर चल रहा मैं आँखें नीचे किये चलता हूँ। उस दिन पता नहीं क्या हुआ—पल पार कोने वाले घर के पास से गुजरते हुए मेरी नजर सामने गेट पर जा पड़ी। गेट में से तीन पहियोंवाली साइकिल चलाता एक बच्चा निकला। नीली आँखें सुनहले बाल। बच्चा बाहर निकला और किसी के हाथ आगे बढ़ कर गेट बन्द करने लगे। और गेट बस का वैसा खुला रह गया। हँसती हुई अखिया, गोरी गोरी लाल लाल ममकाने खेल रही मुह माथे पर। दाँत—मोतिया के दाने। हल्के हल्के सुर्ख होंठ—यो खुले हुए जस एक क्षण रुक जाने को कह रहे हों।

सहसा मेरी नजरें फिर धरती पर जा टिकी और मैं अपनी चाल चलता आगे निकल गया। सामने का मोड और फिर कचहरी, जहाँ मैं सारा दिन बैठा लोगों के मुकदमे सुनता हूँ।

सुबह हर रोज म समय पर घर से चलता हूँ कचहरी खुलने से पाँच मिनट पहले अपने काम पर पहुँच जाता हूँ। शाम को लौटते हुए चाहे देर हो जाये पर सवेरे मेरे निकलने में जहा तक सम्भव होता है कोई तबदीली नहीं होती। हर रोज़ मैं अपनी आँखें नीचे किये हुए उस कोर वाले घर के पास से वैसे ही गुजर जाता जैसे सड़क के और घरों के पास से।

प्राय उस घर की चहारदीवारी पर कपड़े सुखाने के लिए डाले होते। मैं हैरान होता कि वैसे व लोग सुबह सुबह कपड़ धो लेते थे। सलवारें, महीन चिटियो वाले पायच खुशबुओं स भर हुए रूमाल। एक बार यों ही अपने ध्यान जा रहा था कि म न देखा मेर कदमो में दूध सी सफेद एक अंगिया आन पड़ी। आप ही आप मेरे कदम रुक गये। झुक कर म अंगिया को उठाने लगा—यह सोचते हुए कि उठा कर चहारदीवारी पर रख दूँ कि मेरा हाथ जैसे काँपने लगा, मुझे झिझक सी आ गयी। अंगिया का वहीं का वैसा वहीं पड़ा छोड मैं तेज़-तेज़ कदम आगे निकल गया।

उस दिन कचहरी में अपना काम करते हुए मुझे कई बार उस अंगिया का ध्यान आया। जैसे चाँदी रंगे कबूतरों का जोड़ा पास पास सिमटा पड़ा हो। और म सोचने लगता, पता नहीं घरवाला ने अंगिया को सभाल लिया होगा कि नहीं।

उन दिनों मेरे पास एक अजीब मुकदमा आया हुआ था। एक अत्यन्त सुन्दर

बगाली जोडा तलाक माँग रहा था। लडका नौजवान था, खूबसूरत था, और बेहद अमीर पढ़ा लिखा, सुलझा हुआ, सलीके वाला। लडकी जैसे परी हो। देख देख कर भूख न मिटती। गोरी चिट्टी जैसे संगमरमर के बुत में किसी ने जान फूँक दी हो। अटूट यौवन। मैं ने लडके को अलग बुला कर पूछा—"आखिर उस लडकी में क्या दोष है कि तुम तलाक लेना चाहते हो?" वह लडकी में कोई दोष नहीं बता सका। मैं ने लडकी को अलग बुला कर पूछा—"लडके में क्या खराबी है कि तुम्हारी आपस में नहीं बन रही?" पर वह भी लडके में कोई खराबी नहीं बता सकी। फिर वे क्या एक दूसरे के साथ नहीं रह सकते? लडके को इस का पता नहीं था। लडकी को भी इस का पता नहीं था। उन के सगे सम्बन्धी, उन के दोस्त, सब उन को समझा चुके थे, किन्तु उन्होंने किसी की न सुनी थी। और अब वे मेरी किसी नसीहत पर कान नहीं धर रहे थे। केवल किसी का सुन्दर होना, किसी का निर्दोष होना काफी नहीं कि कोई अच्छी पत्नी भी हो सके। केवल किसी का अमीर होना नौजवान होना उसे अच्छा पति नहीं बना देता। मैं ने उस लडकी से कहा—"तुम इस लडके को छोड़ोगी, तो दस लडकियाँ इसे ब्याहने के लिए तैयार होंगी।" लडके को इस का ज्ञान था। मैं ने उस लडके से कहा—"तुम इस लडकी से अलग होगे, तो सैकड़ों लडके इसे ब्याहने के लिए उतावले होंगे।" लडके को इस का पता था। लेकिन पति पत्नी के रूप में वे अब एक दिन भी नहीं रह सकते थे। मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। क्या ही अजीब जोडा है यह!

अपने विचारों में उलझा उस शाम मैं कचहरी से लौट रहा था। आसमान पर बदलियाँ तैर रही थीं। ठण्डी मीठी हवा चल रही थी। हर पेड पत्तों और फलों से लदा हुआ था। एक भीनी भीनी सुगन्ध थी आसपास में। अपने ध्यान चलता मैं कोने वाले उस घर के पास पहुँचा कि हवा का एक तेज झोंका आया और चहारदीवारी की उस ओर खिले मोतिया की कलियाँ मेरे सामने सडक पर आ कर बिछ गयी। जैसे किसी ने फूलों की महीन चादर किसी की राह में बिछा दी हो। एक नशे में मेरे कदम डगमगा गये। उस रात और उस के बाद कई और रातें सोने के लिए लेटा, मुझे मोतिया की कलियों का उस तरह अचानक सडक पर आ कर बिछ जाना याद आ जाता और मैं कितनी कितनी देर उन्मत्त सा पड़ा रहता।

गरमियों के दिन थे। गरमी ज्यादा होती और आँधी चलने लगती। तूफान उमड़ आता। कई बार सारा-सारा दिन और सारी-सारी रात अक्खड़ चलता रहता। पेड टूट-टूट कर गिरते, कई जड से उखड आते कइयों की टहनियाँ टूट कर कहीं की कहीं जा पडतीं। कोने वाले उस घर के पास से गुजरते हुए मैं कई दिनों से महसूस कर रहा था, आजकल आँधी-अक्खड वाले दिनों जैसे फटी हुई चिट्ठियों के टुकडे बाहर सडक पर बिखरे हुए हों। कागज के बेशुमार टुकडे पुरजा-पुरजा किये हुए हर रोज आँधी उडा कर जैसे सडक पर बिखेर देती। और मैं हैरान होता, उस घर में कोई

किसी खिड़की में लगा था।

खिड़कियों के सुराख हो गये थे। मेरा अनुमान गलत नहीं था। फिर मैं ने देखा—कोठरी वाले उस घर के बाहर आँगन पर एक शीशा लगाया गया था और खिड़की के पास एक शीशा बाँध रखा था। शीशे को धु... भीगा भीगा जैसे टकटकी लगा के आँसू टपक गये हों। दफ्तर में उस दिन बिजली चली गयी। और बार-बार मेरा पसीना ... पड़ी ... पर आन पड़ता। जैसे किसी के आँसू टपक पड़ें।

ना हो अगर रिवाज ... में सोया ... एक दिन कोने वाले उस घर के पास से मैं गुजर रहा था कि मैं ने ... रजिया की आवाज आयी। माहिया का कोई बोल था।

उस से आगे एक ढाबा था। वहाँ भी रजिया पर ... गाना था। उस के आगे रजिया की दुकान थी वहाँ भी वही गाना था।

उस शाम काम से लौटा। तो फिर वही गाना सुनाई दे रहा था—बस्ती के पास में बस के अड्डे पर रेडियो की दुकान पर चाय के होटल पर पान वाले की दुकान पर। घर पहुँचा तब माहिया के बोल मेरे कानों में गूँज रहे। फिर रात को, सोने से पहले वही गाना दूर कहीं लाउडस्पीकर पर सुनाया जा रहा था। शादी का घर था शायद। बार बार वही माहिया के बोल। और अचानक मैं उदास हो गया। मेरी आँखें डबडबा आयीं।

उस रात बड़े जोर का तूफान आया बहुत आँधी और बादल। सारी रात मूसलाधार बारिश होती रही। अगली सुबह हम ने देखा सामने नाले का पुल बह गया था। बस्ती के हम सब लोग परेशान हो गये। नाले का पुल बह गया था और दूसरे रास्ते से सड़क पर पहुँचने के लिए दो फर्लांग का चक्कर काटना पड़ता था।

पुल को तो बनते बनते ही बनना था। हम बस्ती के रहने वाले एक दिन दो दिन खीझे फिर हम ने दूसरी राह चलना शुरू कर दिया। फिर भी पुल के बन जाने की प्रतीक्षा हम लगी रहती। छोटे छोटे बच्चे, सामने दिखाई दे रही सड़क पर इतना लम्बा चक्कर काट कर पहुँचते थे। एक साल, दो साल, तीन साल—कई साल बीत गये नाले का वह पुल न बन सका। नाले के एक ओर कमेटी की सीमा थी और दूसरी ओर बोर्ड की। कमेटी वाले कहते—छावनी वालों को पुल बनाना चाहिए। छावनी वाले कहते—कमेटी वालों को बनाना चाहिए, पिछली बार वे बना चुके थे। कमेटी वाले कहते - क्योंकि पिछली बार छावनी वालों ने पुल बनाया था, इस बार भी उन्हीं को बनाना चाहिए। आखिर यह मसला मेरे पास आया। कोई समझौता न हो सका। इस मामले में कई साल और बीत गये।

बस्ती के लोग, सड़क का जल्दी का रास्ता भूल भी गये थे कि पुल फिर बन गया।

उस सुबह आसमान उजला उजला था। आसपास धुला धुला था। हर चीज साफ़-सुथरी। मैना का एक जोड़ा, कभी हमारी मुँडेर पर आ बैठता, कभी नीचे आँगन

# मुण्डू

मुण्डू के हाथ में से नाश्ते की प्लेट गिर कर टुकड़े-टुकड़े हो गया है। मुण्डू सिर से ले कर पांव तक कांप गया है। उस की गरदन सहसा झुक गया है जैसे कि ऊपर से उसे थप्पड़ पड़ रहा हो। शायद किसी ने देखा ही नहीं। प्लेट का गिरना शायद किसी ने सुना ही नहीं। और मुण्डू की जान में जान आती है। किन्तु नहीं, जब जल्दी जल्दी वह प्लेट के टुकड़े संभाल रहा होता है, उस की निगाह साथ वाले कमरे में पड़ती है, बीबी सामने दीवान पर बैठी बिट बिट उस की ओर देख रही है। बीबी ने प्लेट का गिरते भी देखा है, उस का टूटते भी सुना है।

लेकिन बीबी ने उसे कहा कुछ नहीं। शीशे की प्लेट थी, गिर गयी, टूट गया।

मुण्डू सोचता है, शायद साहब डांटेंगे। जब चाय के लिए मेज़ पर बैठें—एक प्लेट कम देखेंगे तो शायद साहब उस पर खफ़ा होंगे। पर नहीं। साहब से तो शायद किसी ने ज़िक्र ही नहीं किया। मेज़ पर बैठ पति-पत्नी हर रोज़ की तरह नाश्ता कर रहे हैं, साहब नाश्ता कर रहे अपनी किताब पढ़ रहे हैं, बीबी नाश्ता कर रही अपनी किताब पढ़ रही है। बीच में पति कोई बात करता है, पत्नी हाँ या न में जवाब देती है, पत्नी बात करती है, साहब सिर हिला कर जवाब दे देते हैं और बस।

मुण्डू सोचता है, पीछे उस के घर, उस से यदि मिट्टी का कुल्हड़ ही टूट जाता, उस की सौतेली मां सारा आंगन सिर पर उठा लेती। एक बार मिट्टी का शकोरा उस के हाथ से टूट गया और इधर उस की मां की पांचों की पांचों उंगलियाँ उस के गाल में आ धंसी, उधर उस के बाप की लात उस के कूल्हों पर आ पड़ी थी। तोबा! तोबा! वह तो अधमरा हो गया था।

मुण्डू को इस घर में नौकर हुए तीन दिन हो गये हैं। उस के मामा ने कहा था, दफ्तर से लौटता हुआ उसे मिल जायेगा। लेकिन वह नहीं आया। साहब खुद घर शाम को इतनी देर कर के लौटते हैं, चपरासी को कहाँ छुट्टी मिलती होगी!

तीन दिन हुए, उस के मामा ने अपने अफसर के यहाँ मुण्डू को नौकर रखवाया है। पहले वह एक बनिया के यहां नौकर था। आटे-दाल की मण्डी में उस की दुकान थी। मामा कहता, साल छह महीने तू हमारे सरकार की खिदमत कर, उन को खुश कर, फिर उन के पांव पड़ कर तुम्हें दफ्तर में भरती करवा दूँगा। सरकारी नौकरी

मिल गयी तो जन्म सफल हो जायेगा। पहले एक साल, दो साल नौकरी कच्ची रहगी, फिर पक्की हो जायेगी।

जितना अच्छा मुण्डू काम करेगा, उतनी जल्दी मालिक खुश होंगे, उतनी जल्दी उसे सरकारी नौकरी दिला देंगे। एक बार सरकारी नौकरी लग गयी तो फिर मजे ही मजे। फिर चाहे मुण्डू लोगों को नौकर रखवाया करेगा, जैसे अब उस का मामा करता ह।

लेकिन वह उसे मिलने क्यों नही आया। तीन दिन हो गये ह, मुण्डू सोचता ह, उस का मामा उसे मिलने क्यों नही आया ?

तीन दिन से मुण्डू से किसी ने बात नही की। तीन दिन से उस के कानों में बस कुछ इस तरह की आवाजें पड रही ह

"मुण्ड चाय रख दो।'

"मुण्डू एक चम्मच लाना।'

'मुण्ड बरतन उठा लो।"

"मुण्डू देखना बाहर अखबार आया कि नही।"

और हर रोज बाहर अखबार पडा हुआ होता ह। मुण्डू अखबार उठा, साहब या बीबी के सामने ला रखता ह। मुण्डू सोचता ह अखबार न आया होता तो वह इतना तो वह सकता—सरकार अखबार अभी नही आया। अखबार वाले ने आज पता नही क्यों इतनी देर कर दी। मैं बाहर सडक पर जा कर देखता हूँ। कहीं हमारा अखबार वाला बीमार हो न हो गया हो। यह अखबार वाले

जिस घर में वह पहले नौकर था वहाँ कितनी बातें किया करता था! तोबा! तोबा! उस की बातें क्या बातें तो ललाइन करती थी। कभी जो उस की जबान तालू से लग जाये। सारे दिन बोलती रहती। अगर मुण्डू काम अच्छा करता तो उस के काम की बड़ाई करती रहती। अगर उस से कोई गलती हो जाती तो उस की निन्दा शुरू कर देती। मजाल ह कभी माफ कर दे कभी भूल जाये। सारा दिन खुद सफा होता रहती रात को लाला जी से डाट पिलवाती। मजाल ह उस से घर का कोई नुकसान हो जाये उधर मुण्डू से कोई गलती हुई, इधर थप्पड उस के मुह पर आ पडता। खसम खाणा रण्डी छाडणा, मत्था सडया इस तरह की गालियाँ ललाइन की जबान पर हर वक्त रहती थी। चाहे मुण्डू अच्छा काम कर चाहे बुरा, ललाइन गाली जरूर देती।

और मुण्डू क यह नये मालिक ह, पति-पत्नी आपस म ही मुश्किल से बात करते ह, उसे कौन मुँह लगाये ? सारा दिन रेडियो चलता रहता ह, बीबी कभी कुछ कभी कुछ कोई न कोई काम करती रहती ह। मजाल ह रडियो की आवाज ऊँची हो जाय, बीबी के कानो तक पहुँचती ह और बस! सुबह शाम खबरों के वक्त रेडियो जरा ऊँचा होता ह लेकिन खबरें तो वह अँगरेजी में सुनते हैं। और फिर यह पति-पत्नी कितना धीमे बोलते ह। आपस में बात कर रहे, मुण्डू को इन के होंठ हिल रहे दिखाई देते ह और बस!

मुण्डू सोचता है, उस का मामा क्यों नहीं आया? यदि उस का मामा आ जाता। यह कह तो गया था मैं शाम को आऊँगा। और आज तो दिन हो गया है। शाम हो गयी है। बत्तियाँ जल गयी हैं। सब लोगों के दफ्तर बन्द हो गये हैं। साहब आ गये हैं। अपने कमरे में बैठे पढ़ रहे हैं। बीबी मशीन पर बैठी कुछ सी रही है।

मुण्डू का जी जैसे बेचैन हो रहा हो। उस का मन करता है, गिरबान में हाथ डाल कर अपने कुरते को लीर लीर कर दे उस का साफ़ रंग का कुरता। तोबा! तोबा! सुबह हो तो उस ने पाया है।

और फिर मुण्डू देखता है, सामने दीवार पर बूढ़ा तिलचट्टा एक पुराने छकड़े की तरह घिसटता घिसटता शिकार की तलाश में है। मुण्डू एक तिनका उठा कर तिलचट्टे को छेड़ने लगता है। कभी उसे पीछे से धकेलता है कभी आगे से जा रोकता है। कितनी देर यूँ ही तिलचट्टे के साथ खेल कर रहा है। फिर सामने एक चीटी चल रही दिखाई देती है। तिलचट्टा सहसा चौकन्ना हो जाता है बिजली की तेजी से वह चीटी को पकड़ने के लिए लपकता है। मुण्डू ने अचानक उस के सामने तिनका ला रखा है। और तिलचट्टा तिनके की नोक के साथ टकरा कर नीचे फ़र्श पर औंधा जा पड़ा है।

तिलचट्टा फ़र्श पर औंधा पड़ा है। अत्यन्त विकलता में हाथ पाँव चला रहा है। लेकिन वह सीधा नहीं हो पा रहा। मुण्डू तिलचट्टे को देख देख कर खुश हो रहा है। कितनी तेजी से वह हाथ पाँव हिलाता है। जैसे आटे की मशीन का इंजन चल रहा हो। तेज बहुत तेज! जितना तिलचट्टा परेशान हो रहा है उतना मुण्डू खुश होता है। लेकिन फिर अचानक उस का अंग अंग सिहर कर रह जाता है। तिलचट्टा जैसे तड़प रहा हो। और मुण्डू तिनके से तिलचट्टे को एकदम सीधा कर देता है। तिलचट्टा पुराने छकड़े की तरह घिसटता घिसटता एक कोने की ओर चला जाता है। तिलचट्टा पटड़े के नीचे छुप गया है। मुण्डू को दिखाई नहीं दे रहा।

और मुण्डू मुड़ कर सामने गोल कमरे की ओर देखता है। साहब अपनी कुरसी पर बैठे पढ़ रहे हैं। बीबी अपनी कुरसी पर बैठी पढ़ रही है। कब नौ बजेंगे और वह उठेंगे। बीबी रसोई में आ कर खाने को खुद गर्म करेगी। मुण्डू उसे मेज पर खाना लगाने में मदद करेगा। और फिर चुपचाप पति-पत्नी खाना खायेंगे। खाना खा रहे, शायद उसे आवाज़ आयेगी

"मुण्डू मेज पर नमक नहीं।"

मुण्डू पानी खतम है।'

या बीबी को कभी खाँसी आ जायेगी। कैसे सलीके से वह मुँह पर हाथ रख कर खाँसती है। परसों यूँ खाँसी थी, उस का मुँह लाल सुर्ख हो गया था।

लेकिन नौ कब बजेंगे! अभी तो बस सात ही बजे हैं।

और मुण्डू देखता है एक चितकबरी बिल्ली चुपके से आयी है और सोने के कमरे

में पलग के नीचे छुप गयी ह। मुण्टू के जसे जान में जान आ गयी हो। वह उकड़ूँ हो कर बिल्ली को ढूँढ़ने लगता ह्। दुबकी हुई एक पाये से लग कर बैठी है। मुण्टू एकटक बिल्ली को देख रहा ह। बिल्ली जसे मुण्टू को घूर रहा ह्। कितनी देर यूँ ही गुजर जाती ह। मुण्टू फश पर उकडूँ बठा बिल्ली को देखता जा रहा है। और फिर मुण्डू बिल्ली की आवाज निकालता ह्। अपने गाँव में वह बिल्ली की आवाज निकाला करता था। कुछ देर, और बिल्ली उसे जवाब देती ह—म्याऊँ! मुण्डू फिर बिल्ली को बुलाता ह। बिल्ली जसे पहचान गयी हो, यह तो मुण्डू ह, उस के साथ मजाक कर रहा है। अब वह जवाब नही देती। मुण्ड एक बार फिर कोशिश करता ह। फिर बिल्ली की आवाज निकालता ह। बिल्ली छलाँग लगा कर बाहर बरामदे में चली जाती ह। मुण्डू दौड कर उस के पीछे हो लेता ह। बिल्ली सामने लॉन में स होती हुई मेंहदी की वाड में छुप जाती ह।

निराश मुण्डू रसोई में लौट आता ह। फिर पटरे पर बठ कर सोचने लगता ह—उस का मामा क्यों नही आया था। उस का मामा आये तो उस के साथ वह ऐसे लड़ेगा, ऐसे लड़ेगा कि रहे साइ का नाम! मुण्डू सोचता-सोचता अपने होठों पर जबान फेरने लगता ह। अपने मन ही मन शिकायतों का अम्बार इकट्ठा कर लेता ह।

लेकिन मामा तो नही आया। जो अभी तक नही आया वह अब क्या आयेगा? शायद सुबह आ जाये। नहीं, सुबह को उसे दफ्तर जाने की जल्दी होती ह, सुबह नही आयेगा। फिर कल शाम का इतजार। तोबा! तोबा! पूरे चौबीस घण्टे।

और मुण्डू अपने सिर को दोनों हाथों से जकड कर जसे किसी गहरी सोच में डूब गया होगा।

आधा घण्टा, घण्टा डेढ घण्टा दो घण्टे बीत गये ह। मुण्डू जसा का तसा बठा ह। अधजगा अधसोया। और फिर दूर किसी गली में एक कुत्ता भौंकता ह। और मुण्टू अचानक कुत्ते की आवाज निकाल कर ऊँचा ऊँचा भूँकने लगता ह।

"क्या हो गया?'

'क्या हो गया?'

गोल कमरे में से बीबी दौडी हुई आती ह, साहब आते ह। और मुण्टू घबरा कर छल छल आसू रोने लगता ह। "कुछ नही, कुछ नही, कुछ नही।" वह यह कहे जाता ह और रोये जाता ह। कुछ नही कुछ नही, कुछ नही—' कभी साहब की ओर देख कर कहता ह—"कुछ नही, कुछ नही" कभी बीबी की ओर देख कर कहता ह—"कुछ नही कुछ नही।' "कुछ नही कुछ नही कुछ नही' कहता हुआ जी भर कर बोल लेता ह।

मुण्डू सोचता है, उस का मामा क्यों नहीं आया? काश उस का मामा आ जाता। वह कह तो गया था मैं शाम को आऊँगा। और आज तीन दिन हो गये हैं। शाम हो गयी है। बत्तियाँ जल गयी हैं। सब लोगों के दफ़्तर बन्द हो गये हैं। साहब आ गये हैं। अपने कमरे में बैठ पढ़ रहे हैं। बीबी मशीन पर बैठी कुछ सी रही है।

मुण्डू को जैसे बुखार हो रहा हो। उस का मन करता है, गिरेबान में हाथ डाल कर अपने कुरते को लीर-लीर कर दे, उस का साफ़ सादे का कुरता। ताज़ा! ताज़ा! सुबह ही तो उस ने धोया है।

और फिर मुण्डू देखता है, सामने दीवार पर बूढ़ा तिलचट्टा एक पुराने छकड़े की तरह घिसटता घिसटता शिकार की तलाश में है। मुण्डू एक तिनका उठा कर तिलचट्टे को छेड़ने लगता है। कभी उसे पीछे से धकेलता है कभी आगे से जा रोकता है। कितनी देर यूँ ही तिलचट्टे के साथ खेल कर रहा है। फिर सामने एक चींटी चल रही दिखाई देती है। तिलचट्टा सहसा चौकन्ना हो जाता है बिजली की तेज़ी से, वह चींटी को पकड़ने के लिए लपकता है। मुण्डू ने अचानक उस के सामने तिनका ला रखा है। और तिलचट्टा तिनके की नोक के साथ टकरा कर नीचे फ़र्श पर औंधा जा पड़ा है।

तिलचट्टा फ़र्श पर औंधा पड़ा है। अत्यन्त विकलता में हाथ-पाँव चला रहा है। लेकिन वह सीधा नहीं हो पा रहा। मुण्डू तिलचट्टे को देख देख कर खुश हो रहा है। कितनी तेज़ी से वह हाथ पाँव हिलाता है। जैसे आटे की मशीन का इंजन चल रहा हो। तेज़, बहुत तेज़! जितना तिलचट्टा परेशान हो रहा है उतना मुण्डू खुश होता है। लेकिन फिर अचानक उस का अंग अंग सिहर कर रह जाता है। तिलचट्टा जैसे तड़प रहा हो। और मुण्डू तिनके से तिलचट्टे को एकदम सीधा कर देता है। तिलचट्टा पुराने छकड़े की तरह घिसटता घिसटता एक कोने की ओर चला जाता है। तिलचट्टा पटड़े के नीचे छुप गया है। मुण्डू को दिखाई नहीं दे रहा।

और मुण्डू मुड़ कर सामने वाले कमरे की ओर देखता है। साहब अपनी कुरसी पर बैठ पढ़ रहे हैं। बीबी अपनी कुरसी पर बैठी पढ़ रही है। कब नौ बजेंगे और वह उठेंगे। बीबी रसोई में आ कर खाने का खुद गर्म करेगी। मुण्डू उसे मेज़ पर खाना लगाने में मदद करेगा। और फिर चुपचाप पति-पत्नी खाना खायेंगे। खाना खा रहे, शायद उसे आवाज़ आयेगी

'मुण्डू मेज़ पर नमक नहीं।

"मुण्डू पानी खत्म है।"

या बीबी को कभी खाँसी आ जायेगी। बस सलीके से वह मुँह पर हाथ रख कर खाँसती है। परसों यूँ खाँसी थी, उस का मुँह लाल सुर्ख हो गया था।

लेकिन नौ कब बजेंगे! अभी तो बस सात ही बजे हैं।

और मुण्डू देखता है एक चितकबरी बिल्ली चुपके से आयी है और सोने के कमरे

में पलंग के नीचे छुप गयी है। मुण्डू के जैसे जान में जान आ गयी हो। वह उकड़ूँ हो कर, बिल्ली को ढूँढने लगता है। दुबकी हुई, एक पाये से लग कर बैठी है। मुण्डू एकटक बिल्ली को देख रहा है। बिल्ली जैसे मुण्डू को घूर रही है। कितनी देर यूँ ही गुज़र जाती है। मुण्डू फर्श पर उकड़ूँ बैठा बिल्ली को देखता जा रहा है। और फिर मुण्डू बिल्ली की आवाज़ निकालता है। अपने गाँव में वह बिल्ली की आवाज़ निकाला करता था। कुछ देर, और बिल्ली उसे जवाब देती है—म्याऊँ! मुण्डू फिर बिल्ली को बुलाता है। बिल्ली जैसे पहचान गयी हो, यह तो मुण्डू है, उस के साथ मज़ाक कर रहा है। अब वह जवाब नहीं देती। मुण्डू एक बार फिर कोशिश करता है। फिर बिल्ली की आवाज़ निकालता है। बिल्ली छलाँग लगा कर बाहर बरामदे में चली जाती है। मुण्डू दौड़ कर उस के पीछे हो लेता है। बिल्ली सामने लान में से होती हुई मेंहदी की बाड़ में छुप जाती है।

निराश मुण्डू रसोई में लौट आता है। फिर पटरे पर बैठ कर सोचने लगता है—उस का मामा क्यों नहीं आया था। उस का मामा आये तो उस के साथ वह ऐसे लड़ेगा ऐसे लड़ेगा कि रहे साईं का नाम! मुण्डू सोचता-सोचता अपने होंठों पर ज़बान फेरने लगता है। अपने मन ही मन शिकायतों का अम्बार इकट्ठा कर लेता है।

लेकिन मामा तो नहीं आया। जो अभी तक नहीं आया वह अब क्या आयेगा? शायद सुबह आ जाय। नहीं, सुबह को उसे दफ्तर जाने की जल्दी होती है सुबह नहीं आयेगा। फिर कल शाम का इन्तज़ार। तोबा! तोबा! पूरे चौबीस घण्टे।

और मुण्डू अपने सिर को दोनों हाथों से जकड़ कर जैसे किसी गहरी सोच में डूब गया होगा।

आधा घण्टा, घण्टा, डेढ़ घण्टा दो घण्टे बीत गये हैं। मुण्डू जैसा का तैसा बैठा है। अधजगा, अधसोया। और फिर दूर किसी गली में एक कुत्ता भौंकता है। और मुण्डू अचानक कुत्ते की आवाज़ निकाल कर ऊँचा ऊँचा भूँकने लगता है।

"क्या हो गया?"

"क्या हो गया?

गोल कमरे में से बीबी दौड़ी हुई आती है, साहब आते हैं। और मुण्डू घबरा कर छल-छल आँसू रोने लगता है। कुछ नहीं, कुछ नहीं, कुछ नहीं। वह यह कहे जाता है और रोये जाता है। कुछ नहीं कुछ नहीं कुछ नहीं—" कभी साहब की ओर देख कर कहता है—'कुछ नहीं, कुछ नहीं" कभी बीबी की ओर देख कर कहता है—"कुछ नहीं, कुछ नहीं।' कुछ नहीं कुछ नहीं कुछ नहीं' कहता हुआ जी भर कर बोल लेता है।